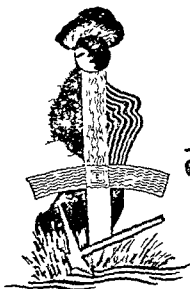




# त्याग का भोग







# त्याग का भोग

इलाचन्द्र जोशी

३१२८

**लोकभारती प्रकाशन,**

१५-ए महात्मा गांधी मार्ग इलाहाबाद-१ .

३१२८

लोकभारती प्रकाशन  
१५ ए महात्मा गांधी मार्ग  
इनाहाबाद-१ द्वारा प्रकाशित

•

द्वितीय संस्करण

मार्च १९६७

•

कापीराइट

इलाचंद्र जोगी

मूल्य १२५०

आवश्यकता महसूस होने पर पुष्पन का नाम बदलन की प्रथा महाभारत-काल से ही चली आ रही है। महाभारत का नाम उमक रचयिता ने प्रारम्भ में जय रखा था फिर 'भारत' रखा और अन्त में उन भी बदल कर महाभारत रख दिया। तुलसीदास के वार में भी कहा जाता है कि उन्होंने पहले अपनी प्रमुख कृति का नाम भाषा रामायण रखा था, पर समयान्तर में कुछ सोचकर उन बदलकर 'गमचरित मानस' रख दिया। रवीन्द्रनाथ ने भी अपनी कुछ प्रारम्भिक पुस्तक के नाम बाद में बदल दिये थे।

नामों के बदले जाने की इस परम्परा के बावजूद मुझे अपना इस उपन्यास के नये संस्करण में उसका नाम बदलने में कुछ नकोच हा रहा है। नकाच का कारण केवल इतना है कि मेरी रचनाओं के जो प्रेमी इस कृति को जिप्सी नाम से पढ़ और जान चुके हैं वे इस नये नाम से शायद संतुष्ट न हों। मैं उन्हें केवल शेक्सपियर की इस बात से सात्वना दे सकता हूँ कि 'गुलाब को यदि सुलाब' कहा जाय तो उसकी गंध और उसके रूप में कोई अन्तर नहीं आयेगा। यह नया नाम (त्याग का भोग) मुझे नायक की विभिन्न चन्द्रजालपूर्ण गति-

त्याग का भोग





## पूर्वकथा

उन वय में गरमिया में मन्गूरी गया हुआ था—अकला । तिन हाटल में मैं ठहरा हुआ था वहाँ मैं देहरादून की तरफ का विस्तृत दृश्य स्पष्ट दिखायी देता था । एक दिन मैं दापहर का खाना खाने के बाद कुछ देर घूम खाने के इरादे से बाहर बरामदानुमा खान में एक आगम-कुर्सी पर बठा हुआ देहरादून की ओर मुह किये हुए नीचे दूर तरफ फैल हुए टालुवाँ विस्तार का दृश्य देखने में तल्लीन था । देहरादून में मन्गूरी तक माटर की जा मटक मपगति में चक्कर खाती हुई नीचे में ऊपर का चती जाती थी उस पर चलते वाली माटरों बच्चा के गिराना की तज़्ज़िस्तार दे रही थी । दूर, राजपुर के पान, छाट-छाट पहाड़ी लत मीटिया की तरफ नीचे से ऊपर का अन्तार बाधे हुए थे । कुरुर पतिधा का अत्रिराम अन्न-स्वर चारा आर के एकांत पहाड़ी वातावरण का एक निगली, माहक वेल्ना में मग्न कर रहा था । महता पीछे से तिमि ने मग खान मग करत हुए कहा— 'नमस्कार । '

मैंने धूमकर दसा ता एक सज्जन तिनको आनु प्राय तीन और पेंतीस के बीच की हागी और जा नीचे लकलाट का चूडीया पाजामा और ऊपर सफेद कमीज के ऊपर कत्यर का की गरम बनिबाइन पहने थे, प्रेमपूर्वक मुस्करा रहे थे । उनमें मरा कर्द पूव परिचय न होने से उनका वह प्रेमभाव मुझ कुछ विचित्र-ना लगा । मैंने शिष्टाचारपूर्वक उनकी

“क्षमा काजिया, मैंने आपका नहीं पहचाना। आपका शुभनाम ?”

‘मरा नाम नूपेन्द्ररजन है। बुलढाहर तिले म रहता हू। हमा बदली के इरासे आज ही यहाँ आया हू।’

“बधा प्रसन्नता हुई आपका परिचय पाकर। पर क्या आपने मुझे पहचान कर नमस्कार किया था ?”

“मैंने पहचान कर ही आपको नमस्कार किया है। एक अजीब सी मुसकान मुझ पर भनकाते हुए मेरे नव-परिचित मित्र बोले।

पर यह संभव क्या हो सकता है ?”

हाटल व टपलर म होटल के निवासियों की जो सूची लगी रहती है उसमें मय नाम बल नाम मैंने कीतूहनवा पर डाले व। उनमें एक नाम के सम्बन्ध में मरा लिखम्पी लगी। मनजर स पूछा। उनमें वार का नम्बर और जलिया बता दिया। आपका ठीक उसी नम्बर के कमरे का भाग बठा टपकर श्री आपके वर डड बाल

‘ठीक ह ठीक है त्रिगणिय। पान वाली बुर्की ल लीजिये।’

घातुक मजनन—उप श्री जनन—न बुर्मी खीच ली और मेरी बगल में बठ गय।

“कल्पि मन्गी का पहाडी वातावरण आपको क्या पसंद आया ?”

मुझ यह स्याद वन्त प्रिय है श्रीयुत रञ्जन बाल— पिछले कुछ वर्षों में मैं गन्धिया म कम व कम एक महीने के त्रिये यहाँ अवश्य चला आता हूँ

और धीर धीर हम दोनों क बीच काफी घनिष्ठता हो गयी। साक्षि क प्रति रञ्जनजी की विशेष रति का परिचय मुझे मिला। मैंने दगा कि वह कवन एक साधारण समझाही नहीं बल्कि बला-ममन भी है। हालांकि उन्होंने कभी एक मन्त्री भी निरकर किमी पत्र म नहीं आया था। लिखने के प्रति उनकी यह विरक्ति मुझे और अधिक आश्चर्य लगी। मेरी जा जो कहानियाँ या उपवास उठोने पड़े ये उनका नायकों के चारित्रिक विशेषण सम्बन्धी बाला म वह

काफी देर तक मुझे उलझाये रह। जब साहित्य-वर्षा कुट  
 हीनी पड़ने लगी तब वह वाले—' बलिये कहीं टहला जाय।  
 यहाँ बड़े-बड़े क्या कीरियेगा ?'

3

मैं दापहर म धूमन का आदमी नहीं था। केवल शाम का एक दार  
 अनेक हवाखोरी के लिये निकल पड़ता था। हाटल के निवासियों ने मेरी  
 घनिष्ठता केवल बाहरी बोलचाल तक ही सीमित थी। उस दिन पहली  
 बार मुझे एक साथी मिला जिसने मुझे दिन हद तक अपनी आर खींच  
 लिया कि दापहर का टहनन का प्रस्ताव भी मैं टाल न सका।

अपने अपने कमर म जाकर बपड़े पहन कर हम दोनों निरद्वेष  
 भ्रमण के इरादे से बाहर निकल पड़े। जब हम लाग ऊपर बड़ी मडक  
 पर पहुँचे तब दाना ने मिलकर इस बात पर विचार लिया कि किम् आर  
 निकल जाय। अन्त मे यह तय हुआ कि इस समय लघार बाजार की  
 सर की जाय, गान का माल की आर चलें। प्राय दो फनींग तक की  
 चौड़ तय करने पर सड़क के बायें किनार पर विताती की कुट  
 खुनी दुकानें पाम-पास मजायी हुई दिवायी दा, कुट निम्नी लडकिया उन  
 दुकाना का मञ्चालन कर रही थी। मर मित्र एक 'दुकान' के पास खड हा  
 गय और बड गौर स वहा सजायी गयी प्रत्येक छाटी से छाटी चीज का  
 निगमण करने लग। सस्त किस्म की छुरिया, बकिया, मुद्-तागा, सिन्दूर  
 की पुटियाँ, छाटा-छाटी चम्मचें अलुमिनियम की बनी हुई चाय की  
 छरियाँ, बच्चा का खेलाने के लिये बन हुए लकड़ी के रङ्गीन लट्टू,  
 आदि एसी चीजें वहाँ सजायी हुई थी जा स्पष्ट ही मेरे मित्र के सिमी  
 विषय काम की नहीं थी। जिस दुकान के पास हम लाग खडे थे वहाँ पर  
 बठी हुई लडकी मूरत-गकल से कुछ-कुछ ईरानी सी लाती थी। उनकी  
 उम्र पास-पास बप से अधिक न हागी। उनकी आश बटी बच्चल लाती  
 थी और वह बडी उत्सुकता से रञ्जनजी की आर दग्य रही थी। रञ्जनजी  
 ने नीचे मुञ्ज कर एक छोटी-सा बची उठा ली और उनका दाम पूछन  
 लग। लडकी ने अचान्त उसाहित हाकर जा दाम बताया वह स्पष्ट ही  
 बाजार की दर म दुाना था। पर रञ्जनजी न बिना मोल-माल बिय

ही उसे मुहमाँगा दाम दे दिया और वही जेब में जालकर उहाने मुझमें आग बदन का नकल किया। लम्बा पीछे से यानी—'बाबूजी यह बड़ियावाला चाकू भी खरी लीजिये !'

'कल खरीदेंगे,' पीछे की आर न देखकर रजनजी चले।

जब हम लागे कुछ आग घंटे ताँ में कहा— आपन कची यहाँ खरीद कर वनी भूल की। आग चलकर किसी वनी दुकान में आपका इतना बड़गुना अच्छी कची इतना ही दामा में मिल जाती। और यह कची आपक किस काम आयगी मैं नहीं नमना। नाखून तक इसमें नहीं बट्टा।

आप ठीक कहते हैं, पर चूनि मैं दुकान पर खरा हा गया था, इसलिए कुछ-कुछ खरीदना लाजमी था।'

मैं फिर इस नबध में कुछ न बाला।

दूसरे दिन फिर रजनजी ने दापहर का टहलन का प्रस्ताव किया, उस दिन भी हम लागे लघोर की आर निकल पडे। रजनजी ठीक उमी दुकान पर खडे हो गये जहाँ वह पिछले दिन खडे हुए थे। उनके खडे होने ही वही चबन-बबभाव ईरानी लडकी बड़ी फुरता में एक चाकू हाथ में उठाकर बोल उठी—'बाबूजी यह लीजिये वह चाकू जिस आपन खरीदन को कहा था।

रजनजी उसकी वह हडबनी देखकर कुछ धग्गा तक मर मर मुन्कराने रहे। मैंने देखा, उनकी उस सुगभीर मुस्वान में एक अट्टम्फुट धग्गा और मामिनता छिपी हुई थी। बिना किसी बहन के उहाने वह चाकू ले लिया और मुहमाँगा दाम दे दिया। इसके बाद वह मर हाथ पकड कर आग घंटे गये। वह चाकू स्पष्ट ही उनका बिना भी काम का न था। उनका हत्या लडकी का बना था और फल एकदम बुरा था। छान छान बच्चा के खेनन के काम का था। पर आन मैंने उस नबध में काइ प्रान उनमें नहीं किया। तब तक मर आग यह बात विनकुल माफ हा गयी थी कि वह उस दुकान में काइ चीज लिया उपया गिना की दृष्टि में नहीं खरीदन है, बकि कोई बिनाप मनानाव हा उहे उस दुकान पर ठहर जान के निय प्रेरित करता है। पर वह मनाभाव क्या हा मकता है ? क्या उस खानाबदाना ईरानी लडकी की नाराजिक

मुन्दरता का उमम कोई सम्बन्ध है ? क्या उनके समान

५

साहित्य-कला ममत्त और जीवन के गहरे अनुभवा से

शिक्षा प्राप्त (जसा कि उनकी वाता से पना चलता था) व्यक्ति भी इस तरह के माये मनाभावा से परिचानित हा सकता है ?

उनी रात का डार्डिना हम म रञ्जनजी के साथ ही भाजन करने के बाद जब म अपन कमरे म जाकर आराम करन का विचार कर रहा था तब भी उहान मुझ नही छोडा और बोले—“आपके कमरे म कुछ गपगप की जाय । अभी जल्दी है । अभी से सोकर क्या कीजियगा !”

म कवल गिण्टतावर उनके प्रस्ताव का विरोध न कर सका अथवा उस निन में बहत थका हुआ था और गपशप करन की न ता मुझम शक्ति ही रह गयी थी न प्रबन्धि ही ।

कमर म पहुँच कर ठडी हवा से बचने के लिय भीतर से किवाड फेर-कर मैं अपने रिस्तर पर लिहाफ क भीतर दुबक गया—कवल मुह खोल रहा । रञ्जनजी पास ही एक साफा पर आराम से बठकर सिगरेट फूकत लग ।

मेरा ‘मूड’ खराब हो गया था और उसी खीझ की मन स्थिति मे मेरे भीतर दबा हुआ व्यङ्ग्य बरबत्त उभर उठा । सहसा मैंने ईरानी लडकी की दुकान की चर्चा छेडते हुए कहा—‘जा चाकू आज आपन खरीदा था उसम आप क्या काम ले सकग मैं ममभा नही !’

रञ्जनजी न केवल मद् मद् मुस्कराते हुए सिगरेट स एक कग ली । उम प्रश्न ना कोई प्रभाव उन पर न पडत दखकर मैंने अपनी जवान को और आधिक् सान पर चढाते हुए कहा—“उस ईरानी लडकी के प्रति आप रेडे मदय मालूम हाते है । कल कौन सी चीज खरीदने का विचार है—चाम की टगनी ?”

रञ्जनजी ठठाकर हँस पडे । जब उनका वह हाम्यभाव ठठा पडा तब मैंने व्यग और परिहास का भाव त्यागकर सहज भाव स कहा—“मैं बहुत उसुक हूँ यह जानन क लिय—”

“दि म उम ईरानी लडकी से चाकू और कची क्या खरीदता है ?”

६

यही बात है न ? यदि आपका बुतूहन इस सम्बन्ध में सचमुच इन कदम चला गया है तो मैं उसका निवारण करने का तैयार हूँ।

किन्ना जम्बा है, मुझ मुनात में कोई आपत्ति नहीं है।

- पर एक बात है—आप चुपचाप मुनात जायें बीच में जोड़ प्रश्न करके मुझे टाकें नहीं !”

मैंने सूचित किया कि मुझ उनका नाम मज़ूर है। उनके बाद रज्जुन जी ने अपना किन्ना मुनात आरम्भ किया। किन्ना बग़ दिलचस्प था। सारी रात बीत गयी पर वह समाप्त न हुआ। उनके बाद कई दिना तक वह किन्ना चला। जब भी हम दाना अन्नपात पाते हैं उनसे उनही चीज़ें खाया की आग बग़ान का अनुरोध करता रहता। उनसे उस लम्बी-गन्तान का भी भरमक उठा के गन्त में अन्न परिच्छेदों में लिपिबद्ध कर रहा हूँ।

(पन्ने) (प्रा) ०००००० ११२२२२२

५

मसूरी में उस दिन जिस ईरानी जिप्सी लडकी की  
दुकान में मैंने चाकू खरीदा उसमें मेरी कोई खास  
दिलचस्पी नहीं थी। पर वह एक ऐसी लडकी की

याद मुझे अक्सर दिलाती रहती है जो कुछ ही वय पहले तक उसी स्थान  
पर उसी की तरह विसाती की दुकान खाले रहती थी और वसी ही  
बचल और दीठ थी। उम्र भी उसकी प्रायः उतनी ही थी जितनी ईरानी  
लडकी की। फिर भी दोनों की आदृति प्रकृति में बहुत अंतर था। ईरानी  
लडकी के मुख पर एक ऐसा स्थापन छाया हुआ है जो मेरे मन को बर  
बस पीछे का ढकेलता है, पर उस लडकी के मुख से एक ऐसी स्नाय,

सरस और मरल सहृदयता का भाव टपका पड़ता था जो जिमी भी पथ  
भूले हुए पथिक की अपनी ओर खींचता था और बिना कुछ बोल ही  
उसे सात्वना देता था। विगुह नारीक दृष्टि से भी दोनों में बहुत अंतर

था। ईरानी लडकी का चेहरा कुछ सवा है, पर जिस लडकी की बात  
में कहना जा रहा है, उसका मुह कुछ गोल था। उसकी आंखें कुछ छाटी  
थीं और अपनी सरलता के भीतर ही किसी अज्ञानित रहस्यलोक का  
आभास छिपाये हुए थी। ईरानी लडकी की नाक लवी है और उसका

सिरा एकदम तीका है। पर उस लडकी की नाक अपसावृत छोटी और  
सिरे पर गोलाई लिय हुए थी। ईरानी लडकी के मुख की अभिव्यक्ति से  
मेरे मन में यह विश्वास जगन लगता है कि वह जन्म-जात अपराधिनी

८ और बुर-बमिणी है। पर जिस लड़की का विस्सा में कहने जा रहा है उसकी और एक भूलक देखने से ऐसा बाध हान लगता था कि उपनिषत्कार ने गुद्ध अपापविद्धम की कल्पना उसका समान किसी लड़की का चहरा देगकर हा का होगी। ईसा की माता मरी व सत्र म इमाइ कविया न जिस इम्मेकपुलेट कमेपान की बात कही है उसका पहला अनुभव मुझे उसी लड़की का देखने पर हुआ।

वह लामा स्त्रिया का मा लहंगा पहने रहती थी और उड़ी का तरह फिर पर एक विषय दग का बपडा बांधे रहती थी। पर उसका आकृति मे यह विश्राम नहीं होता था कि वह लामा जाति की था सन्ती है। उगना और छोटी शक्य थी और नाक भी किसी बदर छाया और गान थी पर इस हद तक नहीं कि उसे मगोल जातीय कहा जा सक। मुझे पूरा विश्राम है कि यदि वह साठी पहने होती तो उगके पूणत भारतीय हान म किसी को रचमाय भी मदेह न होता।

मैं उस मान पहरी बार मसुरी आया हुआ था। एक दिन या ही टहनत ए जप में ठीक उसी स्थान पर पहुँचा जहाँ वह ईरानी लडकी बठ रई थी तब महमा मरी दष्टि उस लामा वेपधारिणी चहकी पर जाकर ठहर गयी। उमके अमाधारण रूप रङ्ग न मुझे इस बदर आव पित किया कि मैं उसकी दुकान के पास जाकर ठहर गया। लडकी न ताकर की तरह तीव्र किन्तु म्निग्ध और मधुर स्वर म कहा—

बानूना क्या चाहिये ?

मेरा हाथ दरबग एक चाकू पर चला गया। यह छ आने का गारू है मे त्राणिक बाकूनी। इसम कम पर आपका इस लादन की किनी भी दुकान पर गहा मिलगा।" किन्तु हिंदी म बिना किती किन्ती उच्चारण क लडकी ग कहा। उस लाहन म जिप्पी (लाना-विष्णु) वर्णिया की चार-पाँच दुकानें और लगी हुई थी। मने वह गारू न लिमा और उगके वा दूमरी चीने दपान गगा। जिस तरह की धाजें बहो था उनन म किनी भी गान थीज म मरी काइ कि य किन्तु नही नहा हा गवनी थी। पर मुझे नरकी मे माने करण का य गन दूना था। दूमरी धार सिद्धु का एक बंद पुडिया पर मेरा हाथ रक



गया। तत्काल लटकी बोल उठी—“यह बहुत मगहूर ६  
 मिदूर है, बाबूजी, ले लीजिये। बीबीजी का यह  
बहुत पसंद आयगा। यहां की नव श्रीरत्नें यही मिदूर खरीदती हैं।”

मैं लडकी से कम कहता कि मेरे घर में कोई ‘बीबीजी’ नहीं है, मेरा  
 विवाह ही नहीं हुआ है।

वह कहती चली गयी— दूमरी तरह के मिदूर जब मांग में भर  
 जान हैं तो उन्हें मिर में दब हान लगता है एसा मैंने सुना है। पर  
 इन मिदूर के बारे में अभी तक कोई गिफायत सुनने में नहीं  
 आयी है।

मैंने मौका पाकर कहा— ‘तुम्हें क्या मालूम कि मिदूर मांग में भरी  
 जाना है? हिंदू श्रीरत्नों के यहां के रीति रस्मा की जानकारी तुम्हें क्या  
 हा गयी? तुम तो तिब्बती हो न?’

उठती मुस्करायी। उन निरच्छल मुसकान की माहकता का कारण  
कान में मैं अममथ हूँ क्योंकि मैं कोई कवि नहीं हूँ। वह वाली—“मैं  
तिब्बती नहीं हूँ। मेरा जन्म यही हुआ है और हिंदू धर्म ही मैं बडी  
हूँ।”

मैंने पूछा—

“पर तुम यह तिब्बती पागान क्या पहनती हो?”

“इतना कि मेरा बाप तिब्बती था।”

और माँ?

‘माँ यही की थी। राजपुर में उनका जन्म हुआ था।

राजपुर मसूरी के नीचे एक छाया का पहाड़ी स्थान है। मेरा कौतू-  
 हन उसका सवध में घटने से बचाव करा गया। मैं और भी बहुत-सी  
 बानें पूछता और जानना चाहता था पर बीच सड़क में दुकान खानकर  
 बंजनी लटकी से उनके जन्म, कुल और जीवन का सवध में अधिक  
 बानें करना अशामन जानकर मैं अनिच्छापूर्वक वहां से उठकर  
 जान लगा। दा कदम आगे बढ़ा हूँगा कि लडकी पीछे से दीदी आयी  
 और मुझे याद दिलाती ऋड बोली—“आप यह मिदूर नहीं ले गये  
 बाबूजी। समझोच मैंने मिदूर की पुडिया उनके हाथ से ले ली और ज

दाम उमन मागा वह दखर में चला गया। एक बार इच्छा हुई कि मिट्टर की उम पुडिया को नीचे खड्डु म फेंक दूँ। पर न जान किन अनात कारण से मैं रह गया और पुडिया को बाट की जेब में डाल कर अतमने भाव से लथौर बनार की ओर बना। मन में एक अजीब सी बेचनी ममा गयी थी—ऐसी बचनी जसी जीवन में दा थी एक बार अत्यंत प्रामाधारण परिस्थितियां में ही ममन हाती है। ; दूर, ५७५

पटना बेचन चार ही वष पूव की है। पर चार वष पूव मर मन और गरीर में जा स्फूर्ति थी वह आज कल्पनातीत सी न गयी है।

तब मैं अपने का पूण युवा अनुभव करता था। मैं नमस्त सामाग्य उत्तरदायित्वा में रति था मेरा स्वास्थ्य भी अच्छा था। पहा पहाती वार आया आया था। पहाड का गुभ्र नमुग्जन प्राटनिक वातावरण और माय ही अतन दावपी नर-नारिया म घिरा हुआ और रगमय वातावरण मितवर मर मन म जीवन के एक नय ही रन की धारा तरगित कर रह थे। अपनी एमी मन जिति म जत्र उन लडकी को मैं पहना वार दता तब उम नय रम म नी एव अनापी मयन निया आरभ हो गयी और मैं समझ ही न पाया की मेर भीतर की कौन रहस्यमयी प्रवृत्ति इतन त्ति तक निप्रिय अयम्या म निमन पडी रन के बाद आज महमा किन प्रामाधारण नी प्रेरणा म परिपूण विस्फाट क माय उमर उठी है। न जान वर रिस्पोट मुक वहाँ तारर पत्रबगा।

दूगरे त्ति टीर उगी समय में उम लन्वी की दुवान पर पहुँचा जिम समय विद्यन त्ति पहुँचा था। मुझे दखन ही उलाम में उमका गुदर पीना-ना अहरा तमनमा उठा—कम म कम मरी आँखा को एमा ही लगा। आइय बावूजी आइय। बीबीनी का वह मिट्टर पमद आमा या नहीं ? उमन कहा।

मैं उनके उम प्रन का क्या उत्तर दता। पर बुद्ध ता कहना ही था। बाना—'मिट्टर अच्छा था।' और फिर अपनी के महारे नीचे मुक्कर दुवान पर मत्री हुई बीजा को दलने लगा।

मेरे उत्तर में लडकी का उत्साह स्वभावतः दुगुना बढ़ गया। उसने उल्लास भर स्वर में कहा—“श्रीर क्या चाहिये, बाबूजी।”

अनमन भाव में मरा हाथ एक छोटी सी पुस्तिका पर गया। किसी सस्ते प्रेस में छपी हुई उम पुस्तिका के आवरण पृष्ठ पर बड़े बड़े अक्षरों में छपा हुआ था—“डाकुआ का सरदार।”

लडकी भट वान उठी—“बड़ी अच्छी किताब है, बाबूजी, इस खरीद लीजिये। इनमें डाकुआ के एक बड़े बहादुर सरदार की कहानी है जो गरीबों का मदद किया करता था।”

मैंने उम पुस्तिका को खरीदने के उद्देश्य से घाएँ हाथ में रख लिया। उसके बाद एक दूसरी पुस्तिका पर हाथ लगाया। वह भी उसी प्रेस में छपी हुई मालूम हानी थी। ऊपर बड़े बड़े अक्षरों में नाम छपा था—“नीलखा हार।”

लडकी पहले की ही तरह सहज भाव से बोली—“इसमें बहुत अच्छी कहानी है। एक राजा एक गरीब किसान की खूबसूरत लडकी को प्यार करने लगा था। उम लडकी से शादी करके उसने उसे अपनी पटरानी बना दिया और नौ लाख अशकियों की कीमत का एक जडाऊ हार उसे भेंट किया—”

इस वार मैंने उत्सुक दृष्टि से उसकी ओर देखा—यह जानने के लिये कि प्यार का वान करते हुए उसके मुँह पर कोई नया रंग आता है या नहीं। एक विशेष प्रकार की चमक का एक बहुत ही हलका—प्रायः अव्यक्त सा—आमान मुझे उसकी आँवों के कोने में झलकता दिखायी दिया। मैं कह नहीं सकता कि वह चमक उसकी बात से किसी भी अंश में सवधित थी या नहीं।

मैंने पूछा—“क्या तुम पढ़ना जानती हो?”

उत्साहित होकर उसने कहा—“हाँ बाबूजी, मैंने छठे दर्जे तक आय कया पाठगाला में पढ़ा है।”

मेरे भीतर जो तूफानी भाव रह रहकर हिलकोर उठे थे, उहे बाहर तकनिक भी प्रकट न होने देने के लिये मैं पूरा प्रयत्न कर रहा था। आम

मडक पर उसने पास अधिक देर तक बटे रहना भी शोभन नहीं था, विशेषकर जब दूसरे कुतूहली ग्राहक मर पीछे और घात दाग म खटे थ। इमलिय उन दिन भी उनस अभिन बातें न करके मैं उन दो पुस्तिकाओं क दाम उस केर उठ खग हुआ और खर दिया।

उन दिन दिन भर और रात भर मैं अगात हय स यह सोचना रग नि किन उपाय मे उन अपना निकट मपन म लाया जाय। समस्त मोनानि बधना ग रहित मर मुवा प्राणा म जो रामानी रङ्ग पूरे प्रबण न चोना आ था उनन एक विचित्र सूक्त मर मस्तिष्क को द दी।

२

दूसरे दिन मैं सध्या को लघौर के घाम पाम चकर लगाता हुआ उस अगसर को प्रतीभा करना रहा जब जिस्की खिपी अपनी दुकान उठाकर गन के निय दनग दूदन जाती हैं। सदन की बत्तियाँ जलत ही मैंन दया कि वह लखी भरना सामान उठात की तयारी करन लगी है। उन समय बाइ प्राण्य बनी पर नहा था। मैं कुछ ही दूर पर कुछ दर तक घानता की स्थिति म खग रहा। घान म प्रबण घटा ग नागी द्विचर म पुत्रारा पाकर मैं उनक पाम पहुँच गया। मडक का बनी क मरा म मुम पहचान कर वह बोली—“बाबूजी नमस्न !”

मैंन कहा— नमस्न ! क्या दुकान उठाकर जा रही ग ?

श्री बाबूजी अर देर पर जाकर दाल रोटी का जुगन करेगी। घानता बाईं बीच खानिय क्या ?

मरा मर के निय मैं द्विचर। उसके बाद मैंन वह प्रणाय पग कर श शय जिगके मवध म प्राय ३० पटा ग मैं निरतर विचार कर रहा था। मैंन कहा— मैं मुम्हारी दुकान की कुन चीजें एवभाय खरीना

चाहता हूँ। तुम कुल चीजा का दाम जोड़ लो। मैं दे दूँगा।  
पर एक शत है। तुम्हें इन सब चीजा को मेरे यहाँ—होटल  
में—पहुँचाना होगा, क्या तुम अभी पहुँचा सकती हो ?”

१३

क्षण भर के निय लडकी स्तब्ध खड़ी रही—आश्चर्य से, अत्रिदवासे  
से या किसी दूसरी हिचक से, मैं कह नहीं सकता। पर दूसरे ही क्षण  
वह सहज भाव से वाली—“अच्छी बात है बाबूजी, चलिए, मैं अभी  
आपके साथ चलती हूँ।”

मैंन कहा—“तब चलो।”

उसने कुल सामान उनी कपडे में लपट लिया जिममें सजाकर  
वह बचा करती थी, और फिर उसे अपने वाएँ कंधे पर झुलाकर वह  
बोली—‘चलिए।’

मैं आगे चलने लगा और वह पीछे से मेरा अनुसरण करती  
हुई चलने लगी। मेरे मन में तरह-तरह का भावनाएँ उठ रही थी।  
यदि होटल में किसी को भी मेरी इस खामखयाली का पता चल जाय  
तो बात किम कदर बट सकती है, यह विचार भी मेरे मन में उठा।  
और फिर उस लडकी का अपने यहाँ घुलाकर यदि मैं उसके जीवन के  
सम्बन्ध में अपने कुतूहल का निवारण कर भी लू तो तब किम ? एक  
वार इच्छा हुई कि लडकी को कुछ रुपया देकर मेरे सामान के सन्त से  
हो वापस भेज दूँ। पर न जान प्राणा की कौन अदम्य आकांक्षा मुझे  
दुम्साहसिकता की ओर अधिकाधिक टकेलती चली जाती थी। -

होटल में सजने नीचे वाली मजिल में मैं रहता था। मेरे पास दा  
कमर थे, जिनमें से एक रमाई के काम के निय लिया गया था—बदलि  
में होटल का ही खाना खाता था। अपने कमर का ताला खोल कर मैं  
भीतर प्रवेश किया और बत्ती जलायी। मेरे अगल-बगल के सहवानी  
सभी टहलने गए हुए थे। इसलिये कुतूहली आला का भय—कम में कम  
उस समय के लिये—जाता रहा। मैं लडकी को जो अभी तक बाहर  
खड़ी थी, सम्बोधित करके कहा—“चली आओ।”

विजली की बत्ती के प्रकाश में मैंने देखा, लडकी कुछ सहमे हुए पग

म भीतर आयी। मैं उसका छाटा-ना बाभा अपने हाथ  
म ले लिया और पासवाली मेज पर रख दिया।

मैंन कहा—'कुन चीजो का हिसाब लगा ला। मैं रुपया गिन  
दूंगा।'

पत्नी ने अपना खाता और चीजा को गिनने लगी। गिनने के बाद  
वाली—“कुल ५५ चीजें हैं।”

“कितना दाम हुआ ?” मैंने पूछा

'अब इतना हिनाम मुझमें न हा सकेगा। आप जा ठाक समझें,  
दे दे।

मैंन अपना बटुआ खान कर उसमें स बीस नाट दस-रुपय क निकाले।  
उह लम्बा को बमान हुए कहा—“इह गिन ला।

पत्नी प्रायः कांपत हुए हाथा स गिनत लगी। गायन इतना रुपया  
एक-दुसरे उमन जीवन म पहले नही देखा था। जब वह गिन रही थी  
तब मैं बड़ गौर से उमके मान की तरह पीले और मुदर मुख की और  
देखना ला। मैं दब रहा था, उमके मुल का पालापन धीरे धीरे सलाई  
म बल्लना जा रहा है। क्या वह अथमद की पहना घट का प्रभाव था ?  
या कोर दूमरी ही अतर्भावना उन रुपया क ममग न उमके भीतर जग  
रही थी ? मैं कह नती सकता।

जब वह गिन चुकी तो उमने एक विचित्र दृष्टि स मरो और देखा।

१०० बडन का पन्नि वान बल्व के प्रकाश म ध्यान पहनी वार मैंने  
उतर मुन की वह अभिव्यक्ति दगरी जिसमें सन्त-स्वाभाविकता नही  
थी। मैंन इस बात पर भी ध्यान लिया कि पत्नी वार उम दरने पर  
तो 'बुद्ध धर्मापविद्धम' याती अपना मर मन म जगी थी वह निर्भ्रान्त  
नती थी। उमकी दाना घांजा क निचन भागा म, नाक के सिर के  
दाना छांम म और आंठा के दोनो तिनारा पर उम ममय का मुद्रा परि-  
स्तुत हा उठी थी उमसे मरे मन क बदन भीतर अज्ञानि भय की एक  
सहर शीड गयी—यद्यपि मैंन इस बात पर भी गौर किया कि वह अभि-  
व्यक्ति ममान्तक रूप म गम्माहक थी।

मैंन बुद्ध महम हुए स्वर म पूछा—“गिन लिया ?

उमने दबी हुई आवाज म उत्तर दिया—“जी हाँ !”

१५

“कितन हैं ?” मैंने पूछा ।

उसन उसी धीम स्वर म उत्तर दिया—“दा सी हैं ।” और तत्काल, सहमा अपनी आवाज म तीखापन भरती हुई वह बोली—“पर इतने रुपय तो बहुत हैं, बाबूजी ! इतने रुपय लेकर मैं क्या करूँगी ?”

मैंन कहा—“तब तुम कितना रुपया अपनी कुल चीजो का आरती हा ?”

‘ज्यादा मे ज्यादा तीस चालीस रुपया ।’

मैंन कहा—“पर मैं इनना कम दाम देना अपनी इज्जत के बाहर की बात समझता हूँ । मैंने जो कुछ दिया है ठीक ही दिया है । तुम इन रुपयो का जस चाहो खर्च कर सकती हो ।”

लटका फिर उनी स्तंभ और गभीर दृष्टि मे मरी आर दखती रही जिनमे मेर भीतर एक कारणहीन भय की अनुभूति जगा दी थी । वह सरल, म्निग्ध, सहृदयतापूर्ण, मधुर मुस्कान, जिसन मुझे पहली ही दृष्टि मे अपनी ओर खींच लिया था, एकदम गायब हो गयी थी । पर आश्चर्य की बात यह थी कि उमका वह एकदम बदला हुआ नया रूप मुझे उसके पिछले रूप से कुछ कम आकर्षक नहीं लगा, बलिन और अधिक मोहक मानूम हा रहा था ।

महमा मुझे जमे कार भूती हुई बात याद आयी । मैंन कहा—“पर तुम खटी क्या हो ? बठ जाओ ।

वह मरी ओर से दृष्टि न हटाकर धीरे से वगलवाले साफा पर बठ गयी, मैंने देखा कि उसके मुख से वह भयानकता धीरे धीर विलीन हान लगी थी जिसन कुछ समय के लिये शरत्काल के हल्क, उडनशील अस्थायी काले बादल की तरह उसकी सहज, मरल अभिव्यक्ति का ढक लिया था, और फिर म स्वाभाविक सौंदर्यपूर्ण अकलुप भाव उसके मुत पर उभरन लगा था ।

कुछ क्षणो तक कमरे मे समाटा रहा । सहसा काले बादल से मुक्त पूरणचंद्र की तरह उसका चेहरा खिल उठा । बडी ही प्यारी मुस्कान मुख पर झलकाती हुई वह बोली—“अच्छा बाबूजी, यह बताइये कि

आपने इतना रुपया मुझे क्या दिया और इतनी सब चीजें मुझे क्या खरीनी? आप न तो काइ ध्यापारी हैं—क्याकि अगर आप ध्यापारी होते तो इतनी कम कीमत की चीज का इतना रुपया न दते। और न आप कोई गरीब दहाती किसान या गन्गाली मजदूर हैं जिन्हें चोजा के ठीक ठीक दाम नहीं मासूम रहते। य चाजें आपके किन्ही काम मे आ सकेंगी यह भी मैं नहीं साचती। तेल भरत के टिन के कुप्पा मे आप क्या करेंग? बच्चा के खेलन की गालियाँ आप के किम काम की? फिर भी आपने सब चीजें खरीद ली हैं। मेरे बुद्ध समझ मे नहीं आता बाबूना।'

उमके प्रश्न मे मुझे लगा जस उमके निहट्टे जीवन मे पहली बार दृढ़ का दादा घुम आया, उसके स्वाभाविक रूप से मरल और मुलक हुए मन मे पहला चार उलभन की गोट पड गयी। मैं उत्तर मे बुद्ध न घाला। उमकी परेगानी का तनिव भी दूर करने का प्रयत्न मैं न कर रिया। जानबूझकर दुष्प्रतापूर्वक मैं केवल मद मद मुक्काना दुआ चुप हा रहा। बुद्ध शणा के लिए कमर मे एक रन्ध्रमय पन्नाटा छाया रहा। उमके धाद मैंने घटी का दटन देवावा। होटल का एण नीकर तत्काल उपस्थित हो गया। मैं उमसे एक ट्र मे चाय और दो व्यक्तियाँ के लिए बुद्ध ताजा बना दूरे चारें तान का आदान दिया।

तन्वी चुप था। उमकी विभ्रात मीन दृष्टि जमे भर ज्वरी व्यक्तित्व का आन्तरण चीरकर भीतर की वास्तविकता का पता दगात के लिए धधार और घणात हा रही थी। पर अचन प्रयत्न मे विजय हात के कारण उमकी विवतता और अधिक बन्ना जानी थी गता अनुभव मैंन दिया।

गन्नाटा नग करत हुए मैंन दंत ही धीमे स्वर मे पूछा—“तुम्हारा नाम क्या है?”

मुभन नी धीमे और महमी आवाज मे वह बोला—  
मरिया।

नाम ता दन्त ही आछा है मैंन दहा—‘तुम यही—तो यही हा?’



“बच्चरखाने मे एक छोटी सी कोठरी है उसी मे रात काट लेती हैं।” १७

“तुम्हारे माँ-बाप ?”

“पाई नहीं हैं।”

“तुम प्रकली हो ? काइ माइ बहन भी नहीं ?”

‘नहीं।’

“तुम्हारा आदमी ?”

इस वार लडकी कुछ चौकी। “कौन आदमी ? कमा आदमी ?”

‘मरा मतलब है, तुम्हारी गादी’

महया वह खिलखिला उठी—उन बिहारी की तरह। हँसी का दौर जब कुछ शांत हुआ तब बानी— ‘आपका मतलब समझ गयी। मैं प्रकली हूँ, मरा काइ आदमी नहीं है।’ और फिर उसी सानम बोली— अच्छा, अब मैं चलती हूँ, वाबूजी। दर हा गयी, मुझ दूर जाना है। कहकर उठन लगी।

अर बठो ता सही। चाय आ रही है। चाय पी जाओ और खाना भी यहाँ खाकर जाओ। अभी जल्दी क्या है। एक दिन कुछ दर ही सही।”

इनन म नौर चाय ले आया। “बठो, बँठा।” मैन दुगना जार देकर लडकी से कहा।

वह कुछ देर असमजस में खड़ी रही। मैन जब फिर एक वार आग्रह किया तो बठ गयी। व्याय ने उसके आग एक मेन लगाकर एक प्याले में चाय बनाकर रख दी और चाप बटलेट, सलाद और टुरी कांटे स युक्त एक प्लेट भी वही पर रख दिया। सिरका, नमक, पिप्पी हुई गान मिच आदि की छाटी दाटी शीशिया भी एक बतन में सजाकर रख दी। स्फटिक के गिलास में पानी और घोवी के यहाँ से ताजा घुला हुआ एक भाइन भी एक कान पर रख दिया। उसी तरह मेर लिय भी उमने सब चाजें मजाकर रख दी। लडकी वह सारा आडवर देखकर कुछ देर तक चकित अवस्था में निश्चन बठी रही। कभी वह भेज का दखती थी कभी मेरी

घर । मैं छुरी-काँटे से चाप काटते हुए उससे आग्रह भरे स्वर में धीरे से कहा— 'साधो !'

उमन छुरी-काँटा धीरे से हटाकर अलग रख दिया और हाथ से एक-एक टुकड़ा काटकर खान लगी । खानी हुई वह सहमी हुई दृष्टि से मरी घर देखती जाती थी ।

मैं उम डाँस बँधाने के उद्देश्य से कहा— 'बड़े-बड़े टुकड़े मुँह में डालो । इनमें छोट टुकड़ा में क्या काम चलगा । अभी तो खाना मँगाया ही नहीं । और मैंने होटल के नौकर से पूरा 'बोम' से खान के लिये कहा ।

जब खाना आया तब वह मक्काच त्याग चुकी थी । बड़ी बतबतलुफी के साथ उमन खाना आरम्भ कर लिया । स्पष्ट ही वह भूखी थी । स्वायम्भुव पर प्लेट खाना चला गया और वह मरी और तनिक भी न देखकर उहूँ साफ करती चली गयी । मैं बसल दृष्टि-निभाने के लिये उसका साम धन का स्वागत रचता रहा ।

जब अन्तिम बीर के बाद एक गिलास पानी पीकर उमन अपना हाथ साफ किया तब मैंने कहा— 'अभी तुम्हें और खाना पड़ेगा । मीठा चिनि भी बाक है ।

उफ ! खाने का चुकी हूँ । बड़ा भूख लगी थी, बाबूजी । सब मानिये पिछन कई चिनि मैंने आधा पेट खाकर ही रह जानी थी । कभी कभी तो मार आलस के मैंने रात में खाना बनाती हूँ नहीं भूखी सो जाती हूँ । आज भी अगर आप खाना न खिलाते तो मैं घर जाकर दिना साथ ही मर जाती । पर आपन आज बहुत खिला दिया ।'

जब थोड़ा चिनि आया तो उम भी उसने बड़ी पूर्णता से साफ कर लिया । और फिर चिनि-चिनि-कर हंस पडा । बोली— 'भौचता थी कि अब पेट में जगह नहीं है । पर वह अब भी मैंने खा गयी ।'

मैंने कहा— 'और मँगाऊँ ?'

'न न, न' अब नहीं । अब अगर एक टुकड़ा भी मैंने लाऊँगी तो मर जाऊँगी । कहकर वह चुर्मी पर ग उठ खड़ी हुई । स्वाय

न उसके हाथ धुलाये और एक माफ तोलिया हाथ पोछने के निये दे दिया। १६

जब वह हाथ पोछ चुकी तब हाथ जाटती हुई बोली—“धन-बाबूजी, नमस्ते ! अब जाती हूँ। आपका बहुत—बहुत—बधाई !”

मैं हँसी न राक सका। उसने बताया था कि उसने छठे दर्जे तक पढ़ा है और किम्से-कहानियाँ की पुस्तकें भी वह कभी-कभी पढ़ लिख करती थी, यह भी उसने बताया था। अपने उस सीमित ज्ञान-काय-कृतज्ञता प्रकाशन के निये सदावली टटोलते हुए उसे स्पष्ट ही बकटिनाई से एक शब्द मिल पाया था—‘बधाई !’ धन्यवाद के बजाए उसने अनजाने में मुझे जा बधाई दी वह क्या भविष्य में सफलतापूर्ण होगी ? मैंने अपने अंतमन में यह प्रश्न किया।

मैं उठ खड़ा हुआ और पलट्टे में मैं भी उसके प्रति हाथ दिये। मुह से एक शब्द भी मैं न बोला। जब वह जान ली तो उसकी दृष्टि में एक विशेषता मैंने पायी। मुझे लगा कि एक भी उदासी भरी उत्सुकता उसकी छाती, किंतु कटारी की तरह तीखी आँखों में बरबस छा गयी है। वह मरा भ्रम हो सकता है। यह संभव है कि चूँकि मरा मन उसकी आँखों का उसी रूप में देखना चाहता था, इसलिये मेरी आँखों ने जानबूझकर उन भ्रम का सत्य मान लिया। पर वास्तविकता चाह जो भी रही हो मरिया के चले जाने के बाद उसको वह (कापनिक अथवा वास्तविक) उदात्त दृष्टि रह रह कर मन में एक अप्रूप अनुभूत चुनना पड़ा करने लगी। और—आप विद्वान् बरें या न बरें—जब मैं बती बुभाकर साने के उद्देश्य से पलंग पर ले गया तब उसकी ‘बधाई देने के समय की मरन सोहादपूर्ण मुख मुद्रा का पाद करते हुए मेरी आँखों से दो बूंद आँसू टपक पड़े।

दूसरे दिन मैं कुछ जल्दी ही फिर उसी सड़क पर चक्कर लगाने के इगदे में बाहर निकला जहाँ मनिया दुरान बिछाया करती थी पर मरी निराशा का जिज्ञाना न रहा जब मैंने देखा कि और सभी जिप्नी स्त्रियाँ वहाँ पर दुकान विधाय बठी हैं केवल मनिया नहीं है। यह मोचक कि गावद अभी जल्दी है और उमक दुकान मालने का समय अभी नहीं हुआ है और सम्भवत कुछ देर बाद वह भी पहुँचगी मैंने अपने गपनी कुछ पय लिया। कुछ देर तक इधर उधर चक्कर लगाने के बाद मैं फिर उसी स्थान पर पहुँचा। पर मनिया तब भी नहीं आयी थी। हताश हावर मैं फिर लौट बना। बसन्त बस रोड से हावर लाइब्रेरी बाजार गया। वहाँ कुछ देर एक बेंच पर बटा रहा। उमक बाद फिर पल्ल लघीर की धार बन पया। निश्चित स्थान पर पहुँचने पर मैंने लया मनिया का कार्द बिट वहाँ न था।

मेरा हृदय धक से रह गया। कारण क्या हो सकता है इस सम्बन्ध में तरल-तरल की कल्पनाएँ मेरे मन में उठने लगीं। इस बात की और मेरा ध्यान भी नहीं गया कि उसकी कुछ चाजें मैं खरोद खुना हूँ, और नय निर मे दुकान जमान के लिए समय चाहिये।

फिर मैंने माचा, रात में कुछ अधिक खा जान के कारण क्या यह बीमारता ना नहा हा गयी है? यदि एसी बात है तो उमकी परिचया करना मेरा कतव्य है। पर वह रहती कही है? मुझे अपनी इस भूषता पर बहद पछतावा हुआ कि मैंने उमके मकान का नजर नहद पूछा। जो जिप्नी स्त्रियाँ वहाँ बठी हुईं था उह उमका हाल और पता निश्चय ही माधूम होगा यह माचकर मैंने स्टार्ट बजार कर उनमें एक में पूछा—  
‘निम्ननी सृगा पटन हुए जा तहवी बन तब मही बटा करती कि यह ध्यान क्या ना आयी?’

‘हम पता नहा है। यहा रगार्द में उमने उतना दिया।’

मैंने फिर एक बार माच्य बजार—‘यह रहता कही है?’

‘उमका उहगा पतान वाली जिगा सड़की के निच एक सूत-सूट

धारी बाबू को इस कदर उत्सुक देखकर ग्राहको को निश्चय ही कुतूहल हो रहा होगा, यह सोचकर मैं अपने ही भीतर सिमटा जा रहा था।

२१

उत्तर मिला—“हम नहीं जानते, किसी दूसरे से पूछो।”

अब तो मेरी घबराहट का ठिकाना न रहा। अंतिम आशा पर तुषारपात होते दखल में समस्त सकाच त्यागकर दूसरी जिप्सी स्त्री के पास गया। उसने भी रुलाई से कहा कि उसे मनिया के मकान का पता मालूम नहीं है। एक एक करके सबसे मैंने वही प्रश्न पूछा—अगल बगल के ग्राहकों की कुतूहली आँखों की तनिक भी परवाह न करके। पर कोई फन न हुआ। अंत में एक लड़की ने बताया कि मनिया खच्चरखान में रहती है। मुझे भी याद था कि मनिया ने खच्चरखाने का उल्लेख किया था। पर खच्चरखान में वहाँ उसे ढूँढा जाय।

अंधेरा हो चला था। मैं अपने होटल में वापस चला गया। उस दिन मुझे जुकाम ने पकड़ लिया। संभवतः मेरी मानसिक गिरता ही मेरी उस अस्वस्थता का कारण रही हो। दूसरे दिन उसी जुकाम ने इन्फ्लुएन्जा का रूप धारण कर लिया। होटल का मनेजर भला आदमी लगा। उसने तत्काल एक योग्य चिकित्सक को बुलाया और नौकरों को आदेश दिया कि मेरी परिचर्या में कोई त्रुटि न रहने पावे। प्रायः एक सप्ताह तक मैं ज्वर का स्थिति में विस्तर पर पड़ा रहा। उसके बाद धीरे धीरे आराम का क्रम आरम्भ हुआ। पूरे चक्कर में प्रायः दो सप्ताह का समय लग गया।

ज्वर-जनित दुबलता की स्थिति में मनिया बार-बार मुझे याद आती रही। जब मैं पूर्णतः स्वस्थ होकर बाहर टहलने योग्य हुआ गया तब मनिया की कोई स्मृति ही जस मेरे मन में नहीं रही। कुछ अद्भुत और अस्वाभाविक स्वप्न ऐसे हात हैं कि नींद टूटने पर उनकी याद करने की चटा करण पर भी वे किसी तरह याद नहीं आते केवल उनकी एक अत्यन्त अस्पष्ट—प्रायः हवाई—अनुभूति मनोवातावरण में अदृशता रूप से विचरती रहती है। ठीक वैसे ही अनुभूति बीमारी से स्वस्थ होने के

बाद मनिया के सम्बन्ध में मरे भीतर शेष रह गयी थी। उसके अनिश्चित उमकी कोई स्मृति मरे मचेत मन में नहीं थी। उस बीमारी के बाद मेरा मन उसे पहले में भी स्वस्थ और मनन हा उठा। विपुल जीवन की जा आकाशाएँ और अनुभूतियाँ इधर कुछ समय से मरे बदन भीतर रुद्ध पड़ी हुई थी उनके द्वार जस एक एक परक खुलने लग थ और उन द्वारा से हाकर जीवन के विविध पहलुओं में सम्बन्धित जा व्यापक और विराट् दृश्य मरी भीतरी आँखा को निर्वाही दे रहे थे उनमें कहीं भी मनिया के लिये कोई स्थान न था।

केवल एक ही मत्ताह मुझे अन्तर्लोक के अद्भुत शक्तिशाली लक्ष्मी ने प्रस्फुटित, जीवन और जगत् की कल्पनाओं में सम्बन्धित उन अनीम प्रसारित महान् दया में रमे हुए जाता हागा। पर वह एक सप्ताह मुझे एक विराट् मुग के बराबर लगा। जम कई शताब्दियाँ उस एक मत्ताह के अर्थ में सिमट कर एकाकार हो गयी थी और उन पूरी शताब्दियाँ में मैं पृथ्वी के साधारण जीवन से बहुत दूर चला गया था और उहुत ऊँचा उठ चुका था।

उसी मानसिक स्थिति में मैं एक दिन नाश्ता कर चुकने के बाद प्रातः-अमण के लिये निकल पडा। लक्ष्मी के बाद जब होटल वापस आया तब प्रायः बारह बज चुके थे। ज्याही मैं नीचे के हिस्से में (जहाँ मेरा कमरा था) बरामदानुमाँ दाखान में पहुँचा त्याही मीन त्सा, मनिया अत्यन्त उत्तम और व्याकुल दृष्टि से नीचे त्तरादून से आन और यहाँ को जान वाली मोटरो की आर देख रही है। उनके मुख के भाव में इनका परिवर्तन हा गया था कि यदि उमका निश्चयी सहैगा और फिर पर सँधा हुआ बपडा न होना तो मैं उम पहचान ही न पाता। चहरे में एक लगा कि वह हम यीच बहुत ही दुबल हो गयी है जस वह भी मेरी ही तरह किसी बीमारी में अग्नी प्रभा उठी हो।

मनिया को देखने ही जमे किसी न मुझे सत्काम जीवन की ऊँची उठान में पृथ्वा की मिट्टी पर साकर पड्य लिया। मैं बिजली के-म द्रुत पगा में उसके पास पहुँचा और धीमे किन्तु मुग्ध स्वर में उमके बान के पास जाकर मैंने पुकारा—“मनिया !

अभी तक वह एकदम अनमन भाव से नीचे की ओर मुह किये हुए थी। मेरी आवाज सुनकर उसे जन विजली की चिनगारी सहसा धू गयी। चौंकर उसन मरी और देखा। कमे आश्चर्यजनक रूप से अवोधगम्य उमकी वह मोन, गभीर और उदाम दृष्टि थी। मैंने आशा की थी कि मुझे देखते ही उसके मुख पर परिपूर्ण उल्लास की चमक आ जायगी। क्याकि इतना ता म्पट ही था कि वह उस हीटन मे—और ठीक मर कमर के पास—केवल मुझ से ही मिलन के इरादे से आयी हुई थी और मेरे कमरे म ताला बन्द देखकर इतनी देर तक वह निश्चय ही केवल भरा ही इत्तजार कर रही होगी। पर मुझे देखने पर भी उसके शीण, रक्तहीन, धुनी हुई चादर की तरह सफेद मुख पर जब मैं न तो हृष और उल्लान का तनिक आभास देखा और न किसी प्रकार के मवाच या लाज की ही रगीनी की कोई भलक पायी तब मेरे आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा। मैंने मर्महित होकर देखा कि उसकी छोटी-सी आखा की उम रहस्यमयी दृष्टि म केवल गहन विपाद की गहरी छाया ही नहीं घिरी हुई है, केवल एक जट निश्चेष्टता ही वर्तमान नहीं है, बल्कि जीवन और जगत के प्रति—और मभवत मेरे प्रति भी—एक मार्मिक रूप से तीखी घणा का भाव भी सम्मिलित है। उस भरपूर दुपहरी का मुझे ऐसा लगा जैसे कोई प्रेतात्मिका छाया मेरे किसी अनात अपराध के लिये मुझे अभिगत करन के इरादे स किसी रहस्यमय लोक से सहसा आ धमकी हो। मैं भयभीत होकर सोचने लगा कि मेरा वह अपराध क्या हो सकता है? अतर्जोवन लोक की गहराइया, समुन्नत चोटियो और विराट प्रसारा म मैं जा पिछले कुछ दिना से विचरण कर रहा था क्या उमी की प्रतिक्रिया के रूप म वह अभिगापदायिनी प्रेतात्मा अभ्यन्तर लोक के किसी अजातित नियम क्रम से मेरे पास आयी थी? क्षण भर के अन्तर म मेरे मनोवाना-वरण म इस प्रकार की अद्भुत भाव-तरंग उठकर तत्काल विनीन भी हो गयी।

मेरा सचेत मन, स्थिति की यथायता को यथाय ही रूप मे ग्रहण करके, यथाय ही उपाया द्वारा मुलभाने के लिए तत्पर हो उठा।

मैंने कहा—“मनिया, तुम यहाँ क्या खड़ी हो ?  
चला भीतर चलें ।” और यह कहकर मैं कमरे का ताला

खोलने के लिये चला गया ।

जब ताला खोल चुका तब मैंने देखा मनिया तब भी वहाँ पर  
पत्थर की भाव-मूर्ति की तरह खड़ी थी । अत्यन्त लिप्त होकर मैं फिर  
उमड़ पास गया और व्याकुल आग्रह भर स्वर में उससे फिर एवबार  
भीतर चलने के लिये प्रार्थना की । मर अगल बगल के महवामी अच्छा  
तमाशा जानकर हम दोनों की घोर दृष्टि रहे थे । पर उनकी परवाह  
करने के लिये मर पात्र अवकाश नहा था ।

इन बार मेरी व्याकुल प्रार्थना का प्रभाव मनिया पर पड़ गया  
और वह धीरे-धीरे निर्विचार और उदामीन पगा में मरे साथ मरे कमरे की  
घर बड़ी ।

भीतर जाकर मैंने उम एक सोफा पर बैठने को कहा । जब वह बठ  
गयी तब मैंने बालू की ओर के पर्दे को ठीक तरह से दोना और स खींच  
दिया जिससे कोई भी भाग चुका न रहे ।

४

जब मैं भी इनमानान से उसकी सामनेवाली कुर्सी पर  
बठ गया तब मैंने अत्यन्त गम्भीर भाव में प्रश्न  
किया—‘इतने दिनों तक तुम यहाँ रही ? जहाँ तुम  
दुःखान मान कर बठ करती थी वहाँ भी तुम नहा थी और पृथ्वी पर  
भी गुम्हार मवान का पता मैं न लगा पाया । मैं बहुत चिन्तित था ।

मनिया कुछ देर तक उगी निर्विचार, ममच्छेरी और भयानक रूप  
में गम्भीर दृष्टि में मरी घर दृष्टि करती रही । उसके बाद महमा उसके  
दाहिने ओट के ऊपर एक घण्टबत्त गा बने गया, जो स्पष्ट ही तीव्र ध्वनि  
की मुद्रा का दानक था । अपना मोन मग करती हुई वह भीजे-म, किटु



ना भरे स्वर में, बोली—“तो तुम क्या मेरी सारी दुकान खरीद चुकने के बाद भी यह उम्मीद कर रहे थे कि मैं फिर 'आई' दुकान खोलकर बढूंगी ?”

२५

जिन इतमीनान से उसने आज पहली बार मुझे 'आप' के बदले 'तुम' खानाम से सम्बोधित किया था, और कौन समय हाता तो वह मुझे नन्दचय ही प्रिय लगता। पर उनकी दिन दहलान वाली व्यगात्मक मुद्रा के बाद उन सम्वाधन में मैं भीत ही हुआ, प्रमत्त नहीं।

अकपट आश्चय से मैंने पछा—“क्या ? तुम्हीं न ता कहा था न कि बिना रुपया मैंने दिया था वह तुम्हारी कुल चीजा की कीमत से कहीं अधिक था। क्या उन रुपया न तुम और ज्यादा चीजें खरीद कर दुकान खोलने खाल मरनी थी ?”

“तुम्हारे वे रुपय !”—एक एक गद में कटुता घोलती हुई वह जाती—“तुम निश्चय ही यह समझ रहे होगे कि उतन ज्यादा रुपये मेरी चीजा के लिये मुझे देकर तुमने एक गरीब के ऊपर बड़ी भारी दया की है। उनका बड़ा दानी समझ कर तुम मन ही मन फले नहीं ममाते हो। पर मैंने कभी तुम्हें किसी तरह का दान चाहा था क्या ?”

मैं कुछ भी न समझकर अत्यन्त भ्रान दष्टि में उनकी ओर ताकता रह गया। आंतरिक पीड़ा का अनुभव करता हुआ बोला—“पर तुम्हें आज हो क्या गया है मनिया ? आज तुम इस अनाखे ढग से क्यों बातें कर रही हो ? मुझमें यदि गलती हुई है तो तुमन उसी समय क्या नहीं बता दिया ? मैं तो समझता था कि तुम अपनी इच्छा से, अपनी खुशी से, वे सब चीजें मर हाथ बेच रही हो। यदि तुम्हें उह बचना नहीं था तो तो तुमन क्या तुम मेरे साथ खुशी-खुशी हाटल मचानी आयी थी ? मैंने ज़रदस्ती से वे चीजें तुमसे छीनी तो नहीं थी, तब ?”

उसका हृदय दुखान की तनिक भी इच्छा न होने पर भी मेरे गदों में निश्चय ही रुतता प्रकट हो रही होगी, यह मैं समझ रहा था। पर उनमें ऐसी अस्वाभाविक परिस्थिति में मुझे डाल दिया था कि बिना रुतता के अपनी बात समझान में मैं अपने का अममय पा रहा था।

मरी घात से उसके मुख का मार्मिक अभिव्यक्ति म  
 तनिक भी कमो नहीं आयी, बल्कि वह और अधिक तीव्र हो  
 उठी। एसा लगता था जैसे वह मेरे अंतर के भी अंतर को चीर चीर कर  
दृष्टन के नियम प्राणपण म प्रयास कर रही है पर उस प्रयाम म सफ़ल न  
 हाकर, व्याकुल त्रिगुणा से छटपटाती हुई अधिकाधिक लीक उठती है।  
 मेरे प्रश्न का काँ उत्तर उमने नहीं दिया। बवल एवटक मेरा धार  
 पूरती रही।

उसकी दृष्टि के उम तीव्रपन की आँच महन न कर सकन के कारण  
 मैं सहमा उठ खडा हुआ और भीतर जाकर वही गठरी उठा लाया  
 जिममे उसकी दुवान की सभी चीजें अभी तक ज्या की त्या रखी हुई थी।  
 गठरी का यथागति गांत भाव से धीरे से उमके आगे रखते हुए मैंने  
 कहा—“मुझे मरी गलती के लिये क्षमा करो। यह लो इस गठरी म  
 के सब चीजें बैसी ही पड़ी हुई हैं जिह मैं तुमसे खरोदा था।”

मनिया न गठरी खालकर एक बार बड गौर म उन चीजो की ओर  
 गेगा। और फिर सहमा प्रचड आवेग से एक एक चीज का उठाकर  
 उमने भीतर क कमरे का धार पटक-पटक कर फेंकना आरम्भ कर  
 दिया। मैं भयभीत होकर बवल बहता रहा— मनिया ! मनिया ! यह  
 लुप्त क्या कर रही हो ? तुम्हें क्या हो गया ह ? पर उमने कानो म जैसे  
 मेरा एक भी शब्द नहा पहुँचा। वह उसी क्रम से चीजा को फेंकती  
 चनी गयी।

जब सब चीजा का फेंक चुकी तब सहमा शना हावा से अपना  
 मुह ढाँपकर माफा प हृथ पर अपना निर रखकर पफक पफक कर  
 बेअस्थियार रान लगी। इस तरह की परिस्थिति मे मुझे इसके पहले  
 कभी वाला नही पडा था, और किम उपाम म उम गात किया जाय, मरी  
 नमस्क ही म नही आता था। मरी परेगानी इस बात म अधिक बढ़ी  
 हुई थी कि उमक हिम्टीरिया के दोरे का काई मगत कारण ही मेरी  
 जानकारी म नही था।

मेरी बुद्धि न उम मकट की अवस्था म जब तनिक भी साय दन मे  
 श्चार कर दिया तब मेरी धन प्रयत्ति मेरी महायता के लिये आगे बढ़ी।

समे प्रेरित हाकर मैं मनिया के विलकुल पास बठ गया  
 और उसकी पीठ पीछे से थपथपाता हुआ पुचकार भरे शब्दों  
 उसे सात्वना देने की चेष्टा करने लगा ।

२७

कुछ देर तक वह मेरा 'दुलार' सहन करती रही—नमवत मनाच  
 ण । पर शीघ्र ही मेरा हाथ हटाकर वह उठ बठी और अपने निर पर  
 बैठे हुए कपडे के छार में चुपचाप आँसू पोछने लगी ।

मैंने कहा—“मैं बहुत दु बित हूँ, मनिया, मेरे कारण तुम्ह इस  
 दर कष्ट उठाना पडा ।” वह फिर भी कुछ न बोली । उसे अपन आप  
 ही शात होने का अवसर देना श्रेयस्कर समझकर मैं फिर चुप हा रहा ।  
 घटी बजाकर मैं नौकर का बुलाया और चाय लाने का कहा ।

मनिया आखें पाछती चली जाती थी । आँसू यद्यपि भरी भाति  
 पुछ गये थे, तथापि वह कपडे से आँखों के कोनों को माफ करती जाती  
 थी । मैं दखा, रोन के कारण इसके मुख पर इतनी देर तक धिरी  
 हूइ भारी भयावनी—प्राय हिसक—और यगात्मक छाया जस धुल  
 गयी थी, और अब उसका वही सुदर, सहज, नरल सौहादपूर्ण नप  
 निखर आया था जिसने पहले दिन पहली ही दष्टि म मुझे एक अलौकिक  
 जादू के से आकर्षण में बरवस अपनी ओर खीच लिया था ।

चाय आयी । हम दोना के बीच में एक मेज लगाकर 'व्वाय ने  
 'दू' उठा कर रख दिया । मैं क्षण भर के लिये डरा कि कहीं मनिया  
 होटल के प्याला और तस्तरियो को भी पटक न दे । पर तत्काल ही  
 अपनी उम निमूल आगका पर मैं मन ही मन हँसा । दोना प्याला म चाय  
 डालते हुए मैं मीठी चुटकी लेन के इरादे से कहा—“कहीं इन प्यालों  
 का भी पटक न दना मनिया । ये होटल की चीजें हैं ।”

मैंने पुलकित हाकर देखा, इस बार मनिया की आँखा म एक  
 अत्यत मधुर मुसकान भलक उठी । कुछ देर तक वह जैसे अपन को  
 बरवस रावती रही पर बाद में अधिक न रोक पायी और खिलखिला-  
 कर हँस पडी । उसकी उम कारणहीन छुतहा हँसी का ऐसा प्रभाव  
 मुझे पर पडा कि मैं भी अकारण ही ठठाकर हँस पडा । और कुछ देर  
 तक हम दोना मिलकर हँसी की ऐसी फुलझडियाँ और पटाखे छाडते

रहे कि भगल बगल के कमरा स लाग हमारे कमरे के बाहर भाकर इकट्ठा हो गये—पदों पर पडन वाली छाया-मूनिया मे मैंने यह धनुमान लगाया । हसना बंद करके मैं अपनी आंखा मे हथ क भासू पाछन लगा ।

जब मनिया एक धूट चाय पी चुकी, तब मैं अपने मुँह की ओर प्यारा बगलते हुए बोला—'सचमुच आज तुम्हारा रा डग बखर मैं बचन बबरा उठा था ।'

उनका मुख फिर एक बार गभीर हो आया पर इस बार की गभीरता तनिक भी भयावनी नहीं थी बल्कि दयनीय ही थी । वाली— मैं जब वहाँ आयी थी तब तुम्हारे ऊपर मन ही मन बहुत विगडी हुई था । और सच पूछो तो तुमन मेरी दुकान उजाडकर मुझे कहीं जा न रखा । 'उद' ! बहकर उमन अपनी दादा भावें मूद नी और एक लकी साँस लायी ।

पर क्या ? तुम मुझपर इस तरह का अनायास—और गलत—इतनाम क्या लगा रही हो । जब कि तुम्ही ने मुझे बताया कि मैंने तुम्हारी चीजा न ज्यादा दाम चुनाय है ? मैं समझा नहीं । मनिया, और तब स सोच रहा है कि बात क्या है । तनिक समझाया तो सही ! बडे ही सिद्ध स्वर मे मैंने कहा ।

मनिया न भाँच तोल दी थी । पर भाँच खालन पर भी वह जमे कुछ भा नहीं दख पा रही थी । अपनी दोना छोटी-छोटी पुतनिया को एक प्रजीर डग न ऊपर की धार घुमानी हुई यह जम किमी दूमरी हा पुनिया स पढ़ी गयी थीं वहाँ का प्रत्यष्ट धायाभाम किमी अनाय कारण मे उमे समकल बडा ही भयावना लग रहा था । उनकी भाँच की दन प्रमिष्यति दरार मेरा हृदय फिर एक बार शून्य उठा ।

मैंने फिर कहा—

'मनिया, कुछ बताया तो गही ! मुझमे सब बातें साफ-साफ कहने मे तुम्हें क्लिभक क्या हा रही है ?'

इस बार मेरी बात जमे उगके भीतरी खानों मे पहुँची । फिर एक

बार लबी साँस भरकर वह बोली—“मैं तुम्हें कसे समझाऊँ !

२६

मैं खुद भी नहीं समझ पा रही हूँ !”

“फिर भी ”

“यह भूतकर भी न समझना कि मुझे तुम्हारे रूपया से तनिक भी मोह था, पर किस्सा यह है कि तुमन उस दिन जो रूपये मुझे दिये थे उह मैंने अपने घर—खच्चरखाने के एक छोट से गद मकान की एक छाटी-सी गद्दी और अफेरी काठरी में—पहुँचने पर अपने निरहान विस्तर के नीचे दबाकर रख दिया था। रात में मुझे बहुत दूर तक नींद नहीं आयी। तरह तरह की बातें मेरे मन में उठती रहीं। मुझे लगा कि उन रूपया में ही कोई खराबी है—कुछ जादू टाना किया गया है, क्योंकि जब जब मैं सब कुछ भूलकर सा जाने की कोशिश करती तब-तब वह—हकर तुम्हारी ही याद मुझे आने लगती और मैं बेचैन हो उठती। तब आकर मैंने रूपया की उस पोटली को अपने निरहान से हटाकर पतान रख दिया—विस्तर के नीचे खटिया की मूज को बसने वाली रस्सी पर। और तब मैं बेखबर सा गयी। मुझे बहुत दूर में मरी आँखें खुली। तब रूपयो की मुझे कोई याद नहीं थी, और तुमम मिलने की बात भी मैं त्रिलकुल भूल गयी थी। रोज की तरह मैं चाय के तय चूल्हा जलाने के इरादे से उठी, और तब मैंने देखा कि बाहर का दरवाजा खुला है। मैं घबरा उठी। साचन लगी कि क्या किसी ने रात में दरवाजा तोड़ राला ? या मैं ही दरवाजा बंद करना भूल गयी ? हो सकता है, रात में खच्चरों के कारण मैं इस हद तक बेखबर हो उठी थी कि दरवाजा बंद करना ही भूल गयी हूँगी। दरवाजे के पास बाहर जाकर मैंने देखा वही कुछ भी टूटा हुआ नहीं था। अचानक मुझे उन रूपयो की याद आयी जा तुमने मुझे दिये थे। मैं दौड़ी हुई खटिया के पास लौटी। विस्तर उठाकर पतान में देखा पाटली गायब थी। उसी क्षण मरी नजर नीचे गिर हुए कपडे पर पड़ी जिसमें रूपया बंधा था। कपडा खुला हुआ पड़ा था और एक भी नोट उमम नहीं था। मैंने दरवाजा बंद कर रक्का। कुछ दूर तक मुझे जैसे काठ मार गया। मैं घड़ी की बही खिंची रही। जब चक्कर आने लगा तो धम्म से खटिया पर

बठ गयी, और सोचने लगी कि यह सब किस समय हुआ । बहुत सोचने पर मेरे मन में यह बात आयी कि चोरी रात में नहीं बल्कि सुबह ही हुई होगी । पोटली खटिया की रस्सी के बीच की गाली जगह के नीचे से रात में गिर गयी होगी, और मुझे दरवाजा खुला कर कोई आदमी भीतर घुसा होगा और मुझे गान्गी नदी में मोई हुई दखकर और नीचे एक पोटली गिरी हुई दखकर उमने उमने उठा लिया होगा । कुछ लोग धनसुधा होते हैं, और बिना दूधे ही जान जाते हैं कि किस चीज में रपया छिपाया गया है । पाटना खानकर रपया निधानकर चार कपडा वही छोड़ गया होगा । कपडा क्या छाड़ गया मैं कह नहीं सकती । गायद वह कोई हँमोड रहा होगा । भरी मम्मक में नहीं आया कि क्या किया जाय । अपनी धवराहट की हालत में मैं सीधे कोत-वाली में गयी । धानेश्वर ने जाँच के लिये दो वास्टेबल भेज दिये । मुझमें पूछा गया कि मरे यहाँ किन किन लोगों का आना-जाना अक्सर रहता है । मरे यहाँ मकान मालिक और उमकी स्त्री जा ऊपर की मजिल में रहते थे, कभी कभी आया करते थे और कभी-कभी पान ही टिन में एक छोटे में गैड में रहनवाला, सड़का पर परवर गाडनवाला एक पहाड़ी मजूर विलम के लिये या चून्हा जलान के लिये आता माने आया करता था । इन तीनों के सिवा और किसी का आना मरे यहाँ नहीं था । मैंने पुलिस के आम्बिया को यही बताया । मजूर उस समय अपने गैड में नहीं था, गायद काम पर चला गया था । इनलिये पुलिसवाला ने मकान मालिक की तलाशी लेनी शुरू कर ली । मकान मालिक है धरम दुष्ट और कमीना भी । इनलिये पुलिसवाला न जब उसे तंग किया तो पहल तो मुझे खुशी ही हुई । पर बहुत ज्यादानी की जाने लगी तो मुझ उम पर तरस आया । मैंने बाम्बला के पाँव पकडकर यह प्रार्थना की कि उम छोड़ दिया जाय और बहा कि मुझ पर रपया के लिये कोई निशान नही है । पर वास्टेबल या ही छाड़ने वाले नही थे । मकान मालिक में कुछ खबर ही उठाने उम छाँटा । मुझे चोरी का सब मजूर पर ही शक था । पर मकान-मालिक का दुग्गा देखने के बाद मैं यह नहीं चाहती थी कि उस पर बाँगी तरह की मार

पड़े। इसलिय मैंने दोना बान्ठवला से कहा कि अब वे अपनी तलाशी बंद करें और मजूर का किसी तरह भी परेशान न करें। मैंने उन्हें यह धमकी दी कि अगर वे लाग मजूर को तग करेंगे तो मैं पुलिस के बड़े-बड़े आफिस के पास उनके घूम लेने की गिफायत करूँगी। मरी धमकी से हो चाह और किसी सबब से हो, पुनिसवाला न फिर मजूर का तग नहीं किया। मरा रुपया गया सा गया, उसकी मुझे उतनी चिंता नहीं थी। मैं जानती थी कि मुझे भूलो मरना पड़ेगा, पर उनके लिये मैं सन समय तयार रहती हूँ। पर जा एक नयी आफिस मेर मिर पर टूट पडी जमे मैं बुगी तरह घबरा उठी। आदमिया के चल जाने के बाद मकान-मानिक न अपना बदला चुकाने की ठान ली, और मुझे उनी दम मकान खाता करन को कहा। जा बाबा सा मामान मर पाम था उसे उठा-उठाकर वह बाहर फेंकन लगा। मैंन फिर पुनिस म गिफायत करने की धमकी दी, पर उसन एक न सुनी। उसकी जबदस्ती के आग हार मानकर मैं दाना हाथो न माथा थामकर बाहर बठ गयी। दिन भर मैंन न कुछ खाया न कुछ पाया, न मैं कही गयी। बाहर खनिया पर या ता बठी रही या लेटी रही। रह रहकर तुम्हें और तुम्हारा रुपया का कोमन लगी। मेरा इतन वर्षों मे जमा-जमाया कारोबार, जिसकी बदौलत मैं बिना किसी की मुहताज हुए अपन दा जून के खान का बदोवस्त बड़े आराम से कर लेती थी और अपनी गरीबी म भी मुकी और निश्चित थी, तुमने अपन पैना और भीठी भीठी बाना के बलपर एक ही दिन म उजाड दिया। यह कितना बडा अत्याय तुमन किया, जरा साचा सा मही ”

कहल-कहने मनिया की आँवा म आँसू उमड आय, हालाकि उनके ओठा पर हँसा थी। वह बडी बडी बूदें गिराती जाती थी और पोंछनी नहा थी। मैं एकांत मन से उसका किस्सा सुन रहा था। उसकी अन्तिम बात से मेरे मन का बडी भाँसिक चोट पहुँची। मैंने कहा—“पर तुम्हारा वह रुपया अगर खा गया है तो उसके लिय तुम इतनी चिन्तन क्या हा। मैं उससे दुगना रुपया तुम्हें मभी दता हूँ। इन्हें लो और फिर

से दुकान खोला और अपने उनडे हुए कारोबार को जमाया। यह कहकर मैं अपने बटुवे से रुपया निकाल लया।

उनके मुख पर एक मार्मिक व्यंग भरी मुस्कान धीरे धीरे एक छार न दूसर छार तक फन गया। वाली— 'हूँ! तुम क्या यह साचन हा कि मैं अब भा दुकान खाल सकती हूँ? तुम अब दो सौ क्या दो हजार रुपया भी दा तो मर किमी काम के नहा। मरा जी उचाट हा गया है और अब इस जावन म मैं न दुकान खाल पाऊँगी न और किना काम म मरा जी लगगा।

तब तुम क्या करन का विचार करनी हा?' मर मुह स बरबस प्रश्न निकल पडा।

इस बार वह खुलकर मुस्करायी। बिना लेगमात्र व्यंग के, महत्व प्रमत्त भाव स बोली— 'भीख माँगूगी। यही काम मेर लिय आसान पड़ेगा— मया गराब, साचार का एक पमा दा। भूखी हूँ, दा तिन न कुछ नही खाया। भावान तुम्हारा भला कर। यही कहती हई मरका पर घूमा करेगी। और वह खिलखिला कर हँस पडी।—

उमन एन नाटकीय ढंग म निखारिया की नकल उतारी थी कि मुन्ना भा हँसी फाय बिना न रही। पर तरफान मरी हँसी रक गयी। एन कपना म मैं आनक्ति हा उठा कि कही सचमुच वह जानबूझकर अपने का उन असहाय स्थिति म न डाल द। अचत तभीर भाव म मैंन कहा— तुम एम तरह का बात क्या सोचती हा, मनिया। मेरा दिना दुसा रुपया स्वाकार करन म तुम क्या भीख माँगन मे अधिक धन्यजन समझता ना।

इन बार उनका चेहरा सहना समझना उठा। मेरे प्रति उनका जो प्य इतनी दर तक दबा हुआ था वह जने पूर का न उभर उठा। नीचे उतर न जाना— तुम मरे कौन लगने हा जा मैं तुम्हारा नि दुसा रुपया स्वाकार करे। उम मैं भीख माँगूंग तब मैं न ता मन्ति। जाउ न क टुलानगतिन जा कुछ महोने कामा पर चलन फिरत गहा। को सच बचकर इनातगरी म अपनी उतर करनी थी और तिन पर



अपनी खाम मेहरवानी दिवाने के लिए एक वावू ने मारी 33  
 दुकान खरीद ली। तब मैं सभी भिखमगा की बराबरी में आ  
 जाऊँगी और किमी की खास मेहरवानी का काई मवान नहीं रहगा।  
 जैसे सभी भिखारिया की ओर लाग कुछ टुकड़े फेंक दते हैं वैसे मरी धार  
 नी कुछ टुकड़े फेंक ही दोगे, और इस बात का विचार नहीं करोगे कि यह  
 मनिया दुकानदारिन है या काई और। भीख मागन के सिवा अब मेरे  
 लिय और कोई चारा नहीं रह गया है, यह तुम सब मान ला।'

एक ऐसा रामाचक, पारलौकिक भाव उसकी शून्य दृष्टि में मना  
 गया था जो किमी उदामीन दगाव को भी हिराये बिना न रहता। उनकी  
 उन अनोखी दुराग्रही मनोवृत्ति को ठीक से समझ पाने में अपन को  
 निपट असमर्थ पा रहा था। क्या वह इस दृष्ट का छाट नहीं पानी  
 थी कि यदि अब उसे दो हजार रुपया भी मिल जाय तो भी वह  
 दुकान नहीं खोल सकगी, और क्या उसका दिमाग के नीचे यह ज्ञान  
 जम गयी थी कि भीख मागन के सिवा और काई चारा उनके त्रिय नहीं  
 है, जब कि वह निश्चय ही जान गयी होगी कि मैं हर तरह में उसकी  
 आर्थिक सहायता के लिय तयार हूँ? किम प्रकार के निरासे पागलपन  
 की वह निराली धुन थी, जिसने उसके मन का शिक्का की तरह जकड़  
 लिया था? मैं साच-साचकर परेशान था। मुझे लगता था कि वह उन-  
 जान में ही इस बात के लिय अपन जीवन की बाजी लगाय करती है कि मर  
 अन्तमें मैं यह विश्वास जमा दे कि मैं उनकी सारी दुःखान खरीदकर  
 उसके प्रति धार घातक और अक्षम्य अपराध किया है और अपन उस  
 अपराध की तीव्र अनुभूति में भगी आत्मा अब समय अनह्य ग्लानि और  
 परित्याप का भावना में दग्ध हानी रह। पर उस प्रकार की मानसिक  
 प्रतिहिंसात्मक भावना की सफलता में उसका अबचतन मन किम सम्भव-  
 मया प्रवृत्ति की तुष्टि करना चाहता है? उनकी अद्ध मुक्त चेतना में  
 यह भी जान गयी थी कि वह जय मन्वुच निम्ब और निराश्रित अन्ध-धा  
 में दर-दर भीख मागनी जाँगी और 'बाबा, इस गरीब नाचार का एक  
 पमा दे दो कहती हुई, निपट अनाथ और असहाय की-सी अवन शान  
 और कर्ण पुकार लगानी हुई मसूरी की आम मडका में फिरती रहगी,

और कही न कही मर सामन से होकर भी मुजरेगी, तब निश्चय ही मेरे भीतर अपन अपराध की ज्वाला और अधिक तीव्रता से धधक उठेगी। यह ठीक है कि सचेत रूप से वह कभी इस तरह की बातें नहीं साच सकती थी और उसके स्वभाव में साधारण विज्ञान प्रकार के कपट का कोई लक्षण भी वर्तमान होगा, ऐसा मैं नहीं साचता था, पर साधारण से साधारण और दखन में भोजे मनुष्य के स्वभाव की उपरी परत के बहुत भीतर असाधारणता और अस्वानाविकता कस भयावन, जटिल और उलझे हुए रूप में वर्तमान रह सकती है जीवन की साधारण परिस्थितियाँ में इसका अनुमान लगाना कठिन है और केवल असाधारण परिस्थितियाँ में ही इन बातों का आरंभ लागू का ध्यान जाता है— इस तरह का तर्क मनियों की समझ में न आनेवाला हठधरिता से मर मन में उठन लगा।

यह बात पूरी समझ में आ गयी कि उसके मन की उस टट्टी प्रवृत्ति का विज्ञान प्रकार का तर्क में सीधा चर सक्ना असंभव है। इसलिये उस तरह का वाद प्रयोग करने का इरादा मैंने छोड़ दिया। उनका विस्तार का गूँथ का पत्रडर मैंने पूछा— 'जब मकान मानिस न तुम्हें जबरन बाहर निकाल दिया तब क्या फिर किसी दूसरे मकान की तलाश तुममें नहीं थी? क्या इतने जिन तब रात में भी तुम बाहर ही पड़ी रहो ?

'नहीं। नाम की जब मजूर आया तो मैंने उसने पाँच पड़ कर प्रायना की कि तब तक मर रहने का कोई दूसरा ठिकाना नहीं हो सकता तब तब वह मुझ अपन 'गड क एन विचार पर पड़े रहने द। मैंने उससे उपयुक्त गाय जान की बार्द बात नहीं बतायी। पहले तो वह आना कानी करने लगा, पर बाद में मरे बहुत रात धीरे पर वह राजा हो गया। इतनी रातें मैंने उसी दाड में बितायी हैं।

मैंने घटी बजाकर नौकर को बुलाया और उसे दो आदमियाँ के लिये पूरा खाना ले आने का आदेश दिया। जब खाना आया तो मनिया का मुरझाया

का मुख जमे बरबस खिल उठा। भोजन के प्रति उसके भूखे प्राण किसी तरह भी उदासीनता प्रकट न कर सके। उसकी अभिमानी प्रकृति भूख आग पराजित हो उठी। यह स्पष्ट था कि मजूर के यहाँ उसे भरपेट भोजन नहीं मिला था। मेज पर परासा लगत ही उसने एक बार ललचनी हुई आखों से विविध यजनो की ओर देखा और फिर मेरी ओर खने लगी। मैंने जब कहा—'गुद करो।' तब वह तश्तरियों पर दूट पड़ी। मैं उसका साथ अत तक देते रहन कं लिय थोड़ा थोड़ा करके खाता रहा। होटल के नौकर को मैंने आदेश दिया कि जितनी भी चीजें बनी हुई नमूने के लिये थोड़ा थोड़ा सभी मे से ले आवे। मैं भोजन के लिये मनिया का उत्साह बढ़ाता हुआ प्रत्येक नयी चीज का चखते रहने के लिये उससे आग्रह करता जाता था। जब मुझे पूरा विश्वास हो गया कि उसे भरपूर वृत्ति हो चुकी है, और उसका निषेध आंतरिक है, तब मैं आग्रह कहना छोड़ दिया। पानी की अंतिम घूट पीकर हाथ धो चुकने के बाद मनिया सोफा पर अधलेटी अवस्था में बठ गयी। बोली—“आज उस दिन से भी ज्यादा पेट भर गया है जिस दिन मैंने पहले पहल यहाँ खाना खाया था। क्या करती, भूख जो लगी थी। इतने दिनों तक एक जन चना और गुड़ खाकर पानी पीती रहा हूँ। बल से मैं तुम्हारे इस होटल में नहीं आऊँगी। यहाँ शतान का डेरा है। क्या सोचकर मैं यहाँ आधी थी, पर शतान ने मुझे सब कुछ भुला दिया। मैंने सोचा था कि तुम्हें खून बसकर गालियाँ दूँगी, कड़ी-कड़ी बातें सुनाऊँगी और धिक्कार कर लौट चलूँगी। पर पहले तो तुम्हारी चाय न और तुम्हारे खाने न मुझे ललचा कर मेरी मति ही फेर दी है, और अब मुझे कुछ याद ही नहीं आता कि तुमने मेरा क्या बिगाड़ा था। लाओ एक सिगरेट भी मुझे दो। अब यही क्यों बाकी रह जाय। इसे पीने से गायब पेट कुछ हलका हो जाय।” मुझे सिगरेट जलाते हुए देख कर वह उठ बठी।

मुझे यद्यपि आश्चर्य नहीं होना चाहिय था, क्योंकि निष्पी लड़कियों

को बीड़ी सिगरेट पीते हुए मैं कइ बार देखा था, फिर भी मनिया न जब सिगरेट माँगी तब मरे मन का एक हनकी नी टस पहुँची। मैं उमे सिगरेट की घोर एक न्यामलाई जला कर उसके मुह के पास ले गया। जब सिगरेट जल गयी तब एक लम्बी कण साचकर वह फिर साफा पर भाषा सेट गयी।

कुछ देर तक हम दानो मीन भाव से घुमा निजालते रह। केवल दोना के भीतर अलदय म उठने वाली चिन्ता-सरग कमरे के बद्ध बाता बरए म अलदय ही रूप से एक-दूसरे से टराना हुइ एक बएनातीत अमौतिक स्पदन उत्पन्न कर रही था। उस मनानरगजाल के मामिक प्रभाव से छुटकारा पान के लिये मैं मीन नग चिया। एक बात की जिनासा पिछने कई जिना से मरे मन म थी। मन पूछा— तुमन बताया था कि तुम्हारा बाप निब्वता था और तुम्हारा माँ यही बी थी। यह कस गभव हुआ ? निब्वती लोग तो अपनी हा जाति विरादरी म गादी-य्याह किया करते हैं

यह ठीक है। पर मनी निब्वती इद्वर के यहाँ लखा बरक नही घाते कि के दूसरा जाति वाला के साथ गादी-य्याह करगे ही नहीं। ना भी हा, जिस निब्वती के घर माँ गयी थी, उसका स्वभाव कुछ दूसरा हा तरह का था। जब वह अपनी जाति विरादरी जाना के साथ रहता था तब भी उसका हलमन बाहर के साथ ही ज्यादा रहता था—एना मरी माँ न मुझे बताया था। हर साल जाइ के जिना म जय बर निजत से घाता था तब वह राजापुर म भी जीवू (मुधित घाम) गचरा यगी, खबर गाय के दूध का मुताया हुआ पनार आदि चीजें यचन लाया करता था। माँ भी उत्तम जीवू खरीना करणाया। माँ का कहना था कि यह जवान था और बडा रोगीला। उम पर गान भण्डाना करगे कम दामों पर भोग म ज्यादा जीवू के जिना कहना था। माँ भा तब जवान थी विपना थी, अचना थी। ना तान-वान छान छान पहाना गन पनि के बाद उमन हिना म भाय के उही म गना करक वह अपना गुजर किया करनी था। गान-बडान दाल माँ के स्वभाव के पीछेगन की बने तारोफ किया करते थे। न उनका जिना म घर था न जिना से जाना। बरन

अपने काम से मतलब रखती थी। पर उस रंगीले तिब्बती ने उम पर खास मेहरबानी दिखा दिखाकर अपनी मीठी-मीठी वाता से उस पर न जाने क्या जादू फेर दिया कि एक दिन माँ गाँव छोड़कर उसके साथ भाग निकली। पहले वर्ष वह उसे अपने साथ तिब्बत ले गया। वही मैं पदा हुई। मा का कहना था कि तिब्बती लामाग्रा के बीच म रह कर कुछ महीनो तक वह दिन रात रोती रही। पर बाद में उसने अपना जी कडा कर लिया। दूसरे वर्ष जाटा में जब मेरे माँ वाप लौटकर गढवाल आय तब मैं दो महीने की बच्ची थी। मैं ठंड से अकड कर रास्ते में ही क्या न मर गयी इस बात का मा को बड़ा आश्चय था। मेरा बाप ममूरी जाना चाहता था पर मा ने इसलिये मना कर दिया कि वहा अपन पहचान के लोगो के बीच म वह नहीं रहना चाहती थी। गरमियाँ म वाप मा को और मुझे साथ लेकर तिब्बत को लौट जाना चाहता था। पर मा न कहा कि वह वहाँ जाने से गन्धे म फासी लगा कर मर जाना पसंद करेगी। बाप ने बहुत हठ किया, डराया धमकाया पर माँ उस से मस न हुई। आखिर वाप को भी श्रीनगर—गन्वाल—ही बस जाना पडा। दूसर घुमक्कड तिब्बतियो से थाक भाव पर तिब्बती चीज खरीद कर उसन श्रीनगर म एक छोटी-सी दुकान खोल दा। पर उन चीजा से कुछ विशेष आय नहीं हुई। इसलिय उसने धीरे-धीरे परचून की दुकान खाल ली। छ वर्ष तक हम लोग श्रीनगर में रहे। मुझे वहा की बहुत ही घुमली-मो याद है। उनके बाद फिर ममूरी चले आय। तब तक मा के मन से अपन जान-पहचानी आदमिया का सकोच दूर हा चुका था। ममूरी म भी मेरे वाप ने परचून की ही दुकान खोली, और वहा आय श्रीनगर से चौगुनी बढ गयी। माँ का कहना था कि ममूरी आन पर हम लोग बडे सुख के दिन बिताने लग थे। जबल एक ही भारी दुख मा को था। मेरे बाद दो बच्चे हुए थे और वे दाना ही पदा होने के कुछ ही महीने बाद जाते रह। और फिर माँ बच्चा नहीं हुआ। मैं माँ-बाप की इकतीती लडकी थी, इसलिये बडी तुलारी थी। बाप मुझे बहुत प्यार करता था। मैं उससे 'बब्बा' कहा करती थी। दुकान स छुट्टी पाते ही वह कभी मुझे अपने सिर पर

बचाकर नचाता था, वभी अपनी पीठ पर रखकर अतोखी  
 तब म निचली गाना गाकर खुद भावन लगता था। वभी  
 मा लगा की एक ऊँची निचली टोपी गिर पर जल कर एक मरु  
 जाता हुआ नाचता और गाता था। मैं हमते हैमत लाट पाट हो  
 जाती। वह मुझे भी निचली नाच-गाना मियां नचा। रात म वर मुझे  
 निचली बिम्म मुनामा करता था। माँ का यह सब अच्छा नहीं लगता  
 था। वह नहीं चाहती थी कि मुझम निचलीपन की धू भी आव। इस  
 लिय उसने मुझे घाय कवा पाठगाला म भरती करा दिया। पर मरा मन  
 पढ़न म बिलकुल नहीं लगता था और दिन भर कवा म गेने रत्न की  
 इच्छा होती थी। घरमर मैं पाठगाना न भागकर बच्चा के पास दुपान  
 चली जाती। भग्मर माँ का मानुम न होन दती। पर जब वभी माँ को  
 पता चल जाता कि मैं पाठगाना न भाग आवी हू तब मुझ पर बड़ी  
 मार पडती। पाठगाला म पूर दा वष बीतन पर मुझे घररा का पान  
 हो पाया। पर बाद म मरा जा स्कूल की पढाई म गने ला और  
 पाँचवी बणा तब मैं बराबर पाम हानी चली गयो। छठी बदा म मैंने  
 पाँव रमा ही था कि एक एसी घात पट गयो जिसन मुझे वही का  
 न रता।

मैं तमय हारर एवांत मन मे उसके विगन जीवन की स्मृतियाँ मुन  
 रहा था। जब वह रकी तत्र मर मुह से भरवम एक उम्बी सौस निबल  
 गयो। मैं चाहता था कि वह उमी मन स्थिति म और कुछ समय तक  
 घपन को नूती रू। उमरी मिगरेट मतम हो चुकी थी और नेप टुबडा  
 उमने फँ लिया था। मैंने तकाव एन दूसरी मिगरेट उगकी घोर  
 मझायी। यह बोनी— यम अब मैं न पीऊँगी।

मैंने अपनी मिगरेट जलायी। 'हाँ ना फिर क्या हुआ? यह क्या  
 घटना थी जिसका त्रिप तुमन अभी किया?' एक वग सावन हुए  
 मैंने कहा।

वह टीक से बठ गयो। उसके मुप पर एन घोंघेरी-सी छाया फिर  
 आयी थी। बहने लगी— बच्चा के पाम जाडा म घरमर शूत-मे  
 निचली भाकर घट्टा जमाया करते थे। बच्चा उनम घाव भाव म निचली

घोनें खरीदता था। तिब्बती भाषा में न जाने क्या बातें के

३६

लोग करते। मैं देखती थी कि मा को उन तिब्बतियों का

आना तनिक भी नहीं आता था। मरे आगे वह बड़बड़ाती थी और

कहती थी—‘इन भूनों में न मालूम किस जनम में मेरा पिंड छूटगा।’ पर

बाबा के आगे वह उन लोगों के खिलाफ एक गज भी नहीं बोलती थी।

उम वष बच्चा से मिलान वाले तिब्बतियों के दल में एक जवान तिब्बती

लडकी भी आयी। मैं देखती थी कि बाबा बड़े प्यार से बड़ी मीठी मीठी

बातें उसने करता था। लडकी भी उसकी बातों के उत्तर में कभी लजाती

हुई मुस्कराती थी और कभी खिलखिला उठती थी। बाबा क्या कहता

और लडकी क्या उत्तर देनी, यह मैं नहीं जानती, क्योंकि मैं तिब्बती

भाषा नहीं समझती थी। पर दोनों के हाव भावा पर मैं उड़ी दिलचस्पी

से ध्यान देती रहती। तब मैं करीब बारह वष की हो चुकी थी, और

दुनिया की बातों को थोड़ा थोड़ा समझने लगी थी। पर उम लडकी के

भाष बाबा की मीठी मीठी बातों का कोई दूसरा अर्थ मैं नहीं लगा

पायी। मैं सोचती थी कि जिस तरह बाबा मेरे साथ दुनार नरों बातें

करता है वैसे ही उस लडकी से भी करता होगा। उम लडकी की उम्र

सप्तरह बठारह वष के करीब रही होगी। जो भी हो, उन दोनों के बीच

इस कदर टैलमेल बढ़ गया कि वह लडकी समय-समय पर अकेले ही बाबा

के पास आने लगी। यहाँ तक कि उसने न सिर्फ दुकान ही न बल्कि

हमारे घर के भीतर भी आना शुरू कर दिया। हमारा मकान दुकान में

ही मिला हुआ था। नीचे दुकान थी और ऊपर मकान। मा निश्चय ही

ऊपर से लडकी का दुकान पर आना और खास ढंग से मुस्कराना देखती

रही होगी। उसने लिये वह बाबा को बीच बीच में मुस्काराते हुए ताना

दती थी। बाबा भी हँसने लगे थे। पर जब लडकी ने हमारे घर के

भीतर भी सुबह शाम, मौके-बमोके आना शुरू कर दिया, और बाबा के

साथ तिब्बती भाषा में उसकी खुसर-फुसर चलने लगी, और दोनों के

मुस्कराने, खिलखिलाने और ठाँकर हँसने का नियम-सा बन गया, तब

मा के मन में उस बात का कुछ दूसरा ही असर पड़ा। मा तिब्बती भाषा के

कुछ शब्द समझती भी थी। पता नहीं, उसने क्या देखा, क्या सुना और

क्या समझा। पर मैं देखती थी कि तब से उ  
लेकर नित्य माँ और बच्चा के बीच चलचल  
के ताने से बात गूँथ होती। बच्चा हमी म बात को ट  
रता। माँ की सीम और बढ़ जाती। बच्चा तब बड़े  
ममान-बुमान लगता। पर बच्चे-बढ़ते बात यहाँ त  
दाना के बीच गालीगलौज और कभी-कभी हाथाप  
जाती। राज नाम का यही मिलमिला रहता। पर -

बाई पत्र देखन म न आता, क्याकि लडकी का घर म आना-जाना उसा  
तरह जारी रहा। लडकी के आन पर बच्चा पिछले दिन की मारी बातें  
मून जाना और दानो के बीच फिर हूँगी-खुंगी की बातें गुरू हो जाती।  
उम लडकी का दमत ही मेरा बलजा धक्का रह जाता क्याकि मैं माँ  
और बच्चा के बीच हान वाली बाई भी बात भूल न पाती थी।

एक दिन मैं न साफ तपजा म बच्चा से कह दिया कि अगर अब  
दूगर दिन न वह लडकी फिर आयी ता या तो मैं गुन घुरी स अपना गला  
बाट डानूगी या उम लडकी का ही गला बाट कर उमका काम तमाम  
कर डानगा। माँ की वह प्रतिना सुनकर बच्चा पर क्या असर पडा मैं  
कह नहा मन्ती पर मैं दहन उठी। बच्चा के पाँवा पर गिडगिडा कर  
मैंने रात हूए बच्चा— बल म उम लडकी को घर म आने क निय मना  
कर दो बच्चा। अच्छा अच्छा कह कर बच्चा ने लडकी का दरवाजे  
स भीतर तपा आन दिया। उमका हाप पत्त कर उमे मन्त पर कुछ दूर  
तक पत्त का आया फिर वापस आया आया।  
उम दिन म या लडकी फिर न दुवान म आयी न मवान म। पर एक  
नयी बान पत्त हा गयी। तब मे बच्चा पत्त बाहर रहने लगा। रात मे  
घारह एक बज ब पत्त कभी घर न लौटना। कभी-कभी दिन म भी दुवान  
न गायब रहना। एसा पत्त कभी नही दगा गया। माँ की बेचनी बहुत  
बढ़ गयी। उमका स्वभाव गरदम बदल गया और उमम चिडचिडापन  
आ गया था। वह अब मुमम भी सब ममय भिन्न कर बोलती थी।  
दिन भर या ता रोना रहती, या अपने आप बहबडाया करती, या लडकी  
पर लडकी न जान क्या माचा करती। बच्चा के घर आन पर दोना



निय चखचख और गानीगलोज होती रहती थी। दोनों ऐसी विकट गालियाँ मुह से निकालते थे कि मुझे कान बंद कर लेना की इच्छा होती थी।

४१

६

“एक दिन तग आकर बच्चा ने यह घमकी दी कि ‘मैं तबत चला जाऊँगा और मनिया को भी अपने साथ लेता जाऊँगा। इस बात से मा आग-बवूना हा गयी। वाली— तू अभी चला जा, मुझे तरी इतनी भी परवा नहा है। पर मनिया को तू कैसे ले जाता है यह मैं देख लूगी। मनिया तेरी कुछ भी नहीं लगती। उसे घर से बाहर ले जाने का कोई अतिनयार तुझे नहीं है। तेरे जैसे भकुआ की मर्दानगी मैं बहुत दख चुकी हूँ। उमकी आवा स आग के शोले निकल रहे थे और वह दातो को किटकिटा रही थी। उसना बना भयावना रूप मैंने पहले कभी नहीं देखा था। उवा पहले तो सचमुच डर कर दो कदम पीछे हट गया, पर बाद में उसके मिर पर न जान क्या भूत सवार हुआ उसन मा के भाटे पकट पकड कर उसे बुरी तरह पीटना शुरू कर दिया। मा भी पलट में उसके हाथ को दाता से काटने की कागिश करती हुई उसके मुह का अपने तेज नाखूनो से उधेडती गया। मैं असहाय-मी रोती हुई दोना के पाँव पकड कर शात होन की प्रायना करती रही। बडी मुश्किल से दाना एक-दूसर से अलग हुए।

‘उसी रात की बात है। मैं बिना कुछ खाये पिय सायी हुई थी और बह बडे भयानक सपन देख रही थी। अचानक एक चीख सुनकर मैं नीद से चींच उठी। बसा भयकर गद मैंने कभी नहीं सुना था। जब घबराकर मैं रोती हुई उठ बठी तो बच्चा के कमर से पहली चाख से भी विकट कराह सुनने में आयी। ‘क्या हुआ बच्चा, क्या हुआ ?’ कहती हुई मैं घाडे मार-मार कर रोने लगी। पर न बच्चा ने मेरी बात का कोई जवाब दिया न

माँ ही कुछ वाली । मैं धररा कर और भी ऊँची आवाज म  
 रा रागी । चीप्पा एनदम बंद हा गया था और म<sup>न</sup> राने  
 की आवाज ही तारा घोर गूज तर मुझे डरा रही थी । इतने म<sup>न</sup> मैंने अपने  
 कमरे के छुप खड़े म<sup>न</sup> अपनी गलिया के पास किसी के फुमफुमान की  
 आवाज सुनी । मुझे लगा कि निश्चय ही कोई भूत आ गया है । मैं बड़े  
 जोर की चीख मारी । तिम मैं भूत ममझे बठी थी उमने तत्कात् अपन  
 हाथ स मेरा म<sup>न</sup> बंद करके फुमफुमाते हुए कहा— चुप कर ! चुप कर !  
 बाद गुन लगा । मैं तेरे बच्चा के पट म<sup>न</sup> छुरा भाकर उमवा काम  
 तमाम कर डाता है । म<sup>न</sup> तल हम दोना रात ही रात कही निरन प<sup>न</sup>,  
 तहा ता मुनह हात हात पुनिस हम घेर लेगी । चत जल्नी कर !

'सच माना माँ की यह बात सुनकर मुझे कुछ आश्चर्य नहा हुआ ।  
 पर मरी धरराहट मोगुना ब<sup>न</sup> गयी । मैं उमका हाथ पकड कर कहा—  
 'माँ, माँ क्या तुम गचमुच माँ हो ! कोई भूत तो न<sup>न</sup>ी हो ?

'चुप ! चुप ! माँ ने फिर मरा मुह बंद करत हुए फुगफुमाकर  
 कहा— 'न<sup>न</sup>ो ! अभी निरल चलो !'

मरा रोना न जान कहीं गायब हो गया था । मिर स लेकर पाना  
 तब मिटरना दूद मैं भी फुग फुन करके वाली— इग छधेरी रात म  
 हम नाग घर छाडकर कहीं जायेंगे ! मुमसे मार जाडे और डर के  
 बिसर छा<sup>न</sup>त नही बनना । और मचमुच मेने दात अपन प्राप रिटबिग  
 रह के— गाडे न या डर स मैं कह नही सकती ।

'माँ न मरा हाथ ताच कर बिसर से मुझे बरजोरी उठाया और  
 मेरा बाना म धोनी—'पगली, पुनिस वाले आवेंगे ता तू कहा की न<sup>न</sup>  
 रह जायगी । मुने अपन लिय तनिक भी डर नही है पर तेरी क्या दुनि  
 हागी तू नही जाननी । चत उठ । एक खादर मिर पर टाल ले दम !'  
 मैं बटगुानी की तरह बिना कुछ सोचे-ममझे एक खादर मिर पर  
 टाल ली । माँ मरा हाथ पकड कर बाहर ले जाने लगी । जब मैं बच्चा  
 स कमर स पाम पहूरी तब छंधर म ही उग धार भावनी हुई धीरे म  
 माँ म बापी— क्या बच्चा गचमुच मर गया है, माँ ? माँ तीभकर एनदम  
 दर्वा हुई आवाज म बानी—'हाँ, हाँ, पगली, चनी चत ! यात करो

का समय नहीं है।' और मुझे वह सीनिया के नीचे घसीटती-  
हुई सी ले गयी।

४३

“बाहर आकर मैं चुपके से वहाँ—‘क्या मकान पर बाहर न ताला नहीं लगायागी? कोई चोर आकर सब कुछ चुरा ले जायगा। अपने उम भाले प्रश्न पर आज मुझे हँसी आती है।’ और मनिया इतना कहकर हँसती हुई भी रा पड़ी।

मरी दुपहरी में वह प्रयत्न अनुभूत जीवन का जो लोभहृषक विवर्ण सुना रही थी, वह मुझे आधी रात में कही गयी मृत की कहानी की तरह लग रहा था। मर पावा का माग खून सचमुच जम गया था। लगता था कि वे पाव मर नहीं हैं, बल्कि मरे असली पावा से बंधे हुए एक एक मन के दा पत्थर हैं। चार-पाँच ऋतु के जमीन पर मारन के बाद तब जमे हुए रक्त का मचार आरंभ हुआ।

मनिया जब अपनी आँखें पोंछ चुकी तब मैं पूछा—‘उस आधी रात में तब तुम्हारी माँ तुम्हें कहीं ले गयी?’

अपने दाहिने हाथ को सोफा की दाहिनी बाह पर ठीक तरह से अड्डाकर वह अपने विगत जीवन के रामाचकर अध्याय का छूटा हुआ मूत्र फिर से पकड़ कर कहने लगी—

“विजली को रोशनीवानी सड़क को छोड़कर मा भरा हाथ पकड़कर पिछवाड़े के रास्ते से एक कच्ची सड़क पर ले गयी, जहाँ तारा की रोशनी के सिवा और कोई रोशनी नहीं थी। कुछ दूर जाने के बाद वह मुझे पश्चिम की ओर नीचे जानेवानी एक ऊबड़-खाबड़ पगडंडी में ले गयी। वह ऐसा विकट रास्ता था कि तनिक भी पाव फिसलने पर कम से कम तीन सौ गज नीचे खड़ में जाकर ही बर्द ख सकता था, जहाँ चबनाचूर हड़ हड्डी-पसलिया का कही नाम विगान मिलना भी मुश्किल था। पर वह बदरा की सी मफाइ से संभल कर चल रही थी और बसी ही पुर्ती से। वह बसकर मेरा हाथ पकड़े थी और मैं उसी के सहारे कठपुतली की तरह चली जा रही थी। क्या अनय हो चुका है और आगे क्या हाने वाला है, इसकी कोई चिंता उस भाग-दौड़ में मेरे मन में नहीं उठ रही थी।

‘तीन मी गज की उतराई पार कर चुकने के बाद जब हम नीचे की बच्ची सड़क पर पहुँचे तब माँ दक्षिण की ओर मुझे खांच ले गयी थी। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। कोई कुत्ता तब वहीं नहीं भ्रम रहा था। हम लोग बेतहाशा चले जा रहे थे और तन-बदन की सुध हम नहीं थी। चलते चलते जब हम साग एक पहाड़ी गाँव के पास पहुँचे तब माँ धीरे से बोली—‘अब चिंता की कोई बात नहीं। अब हमने मसूरी का अहाता पार कर लिया है।’

माँ के मुँह में यह सुनकर कि अब चिंता की कोई बात नहीं है, मैंने एक नयी साँस ली। बकर-पर्यटकों पर बड़ी तेजी से चलते रहने से मेरे पाँव छिन्न हो गये थे। मैंने माँ से कुछ दूर आराम करने के लिए कहा। एक स्थान पर चीड़ के तीन चार पड़ पाए पाम पाम सड़े थे। उन्हीं के नीचे मैं घूमने से बच गयी। माँ कुछ दूर आगे बढ़ी सी खड़ी रही। मैंने उसका हाथ ताककर उस भी बिठाया। मैं बहुत थका हुआ था। तब माँ बठ गयी तब मैंने उसकी गाँव में अपना मुँह छिपा लिया। तब तब में भागने की हानसी में बच्चा का बात एकदम भूनी हुई थी, माँ की गाँव में मुँह छिपाने ही जब फिर उसकी याद आयी तब मैं आधी रात में उस सन्नाटे में बरतना मुहार मार कर रो पड़ी— बच्चा ! बच्चा ! माँ तुमने क्या कर डाला ! मेरे बच्चा के पास मुझे पहुँचा दो ! अब मैं क्या अपने बच्चा का मुँह देखूँगी ! बच्चा ! बच्चा ! माँ बहुत थकाकर चुप ! चुप ! बहनी रंगी पर मैं त्रिमी तरह भी चुप न हो पाया था। माँ ने अपने गिर का बपड़ा उतार कर मेरे मुँह में उस ठूँक कर मुझे चुप किया। मैं बच्चा के तब पकड़ती रही। उगव बच्चा न जान क्या माँ गयी।

जब माँ ने थकाकर दूर मुझे जगाया तो मैंने दया कि वो पट चुकी थी। माँ ने मेरा हाथ ग्राह्य कर हडबडायी हुई आवाज में पीछे से कहा— ‘उठ ! उजाता होने के पहले ही हमारे गाँव में पहुँच जाना है। जानो फिर क्या पट। कुछ दूर चलने पर हम मोटर की गडक पर पहुँच गये तो सीधी बरतना की ओर गयी है। उम्मी रास्ते में हाँस उतर की ओर चलते रहे। रात में कुछ पहने एक गाँव में पहुँचे। मामूले दुआ कि वहाँ माँ की पहचान के कुछ लोग रहते हैं। त्रिमी आत्मी के घर माँ मुझे ले गयी

उसने और उसके परिवार वालों ने हम लोगों की बड़ी  
खानिरी की। दिन भर और रात भर हम वहीं पड़े रहे।

४५

मुझे वहाँ भी सब समय यह चिन्ता लगी रही कि न जाने पुलिस वाले  
किस समय माँ वहाँ पहुँच जायें।

“दूसरे दिन एक माटर बस पर सवार हो गये, जो चकराता जा रही  
थी। मैं अपने साथ काफी रुपया बाँध लायी थी। इतने बर्षों से उसने  
जो कुछ जमा कर रखा था वह सब साथ ले आयी थी। माटर का  
किराया त्त हाँ मैं और माँ ने भी मिलितरी की सी बर्दी पहन हुए एक  
आदमी का बड़े गौर से देखा—कहीं वह बदले हुए भेष में पुलिस का  
आदमी तो नहीं है? चकराता पहुँचने तक मेरा कलेजा धक धक करता  
रहा। माँ का भी निश्चय ही वही हाल था।

चकराते में मैं के एक सगे भाई रहते थे। वह जगलात में चौकी  
दारी के काम पर नौकर थे। उन्हीं के यहाँ हम लोग रहने लगे। माँ ने  
अपने भाई का बताया कि किसी आदमी ने माँ का खून कर दिया है,  
इसलिए वह भाग आयी है।

“माँ बहुत ही शर्मिली और उदास रहती थी और रात में अकसर  
भयानक सपना देखकर नींद में ही चिल्लाने लगती थी। मैं बार बार  
‘माँ! माँ!’ कहकर उसे जगाती रहती थी। हम चकराता पहुँचे करीब  
दो हफ्तें हुए जागे। एक दिन माँ ने मामा को रुपया की सारी पाटली  
सहज दी और बानी—‘भयानक मैं बहुत बीमार हूँ और मेरी जिन्दगी का  
कोई ठिकाना नहीं है। न जाने किस क्षण दम बंद होकर मेरा काम तमाम  
हो जाय। मैं छाकरी अब तुम्हारे ही शरण में हूँ। इसकी दखल करके  
रहना। और वह फूट-फूटकर रो पड़ी। उसके बाद मुझे गले लगाती हुई  
बोली—‘तू बड़ी शर्मिली है, मैं क्या कहूँ, मैं कभी एक दिन कलिये  
भी तुम्हें प्यार न करने वाली। राज भिडकती रही। मुझे माफ करना,  
मिठियाँ। और फिर रो पड़ी। मुझमें भी रहा न गया तब मैं भी फूट  
पड़ी। ‘माँ! माँ!’ के मिवा और कोई बात मेरे मुँह से नहीं निकलती  
थी। मुझे फिर किसी दुःखटना की शका होने लगी थी।

“शाम का मामा ने मुझमें आटा सानने के लिये कहा। माँ कुछ देर

“होन मो गज की उतराई पार कर चुबने क बाद  
हम नीच की बच्ची मडल पर पहुँच तब मो दगिग की ।  
मुझे सींच ले गयी थी । नाग आर मप्राटा छाया टूपा था । काइ नु  
तब रटा नहा मूक रग था । हम लाग बरगुणा चन जा रह थे ।  
तन-बदन का मुष हम नगी थी । चरने चरन जव नम नाग एक पह  
गाँव क पाम पहुँच तब मो पीर म बागी— अर बिना की का  
नहा । अब हमने ममृग का अशाना पार कर लिया है ।

मो क मूँ म यह मुनकर कि अर बिना की काई बान नगी  
मैन एन नगी मीम थी । बकर-यस्यग पर वही तजी न चरन रग  
मर पीर टिन गय थ । मैन मो म कुछ नर आगम करन क तिर क  
एक नान पर चीर क नीन-चार पह पाम-पाम खे थ । उहाँ के  
मैं धम्म न दठ गयी । मो कुछ दर अनमनी-मी नगी रग । मैन उ  
हाय नाबकर नम मी टिटाया । मैं उटून चक गयी थी । नर मो  
गदा न मैन नमकी गाँव म अपना मूँ दिया लिया । तर तर म म  
की नगी म बदा का बान एनदम मूनी दूइ थी मो का गद म  
छिपान न जव फिर उतकी याद आयी तब मैं आधी रात क नम  
म बरगम गुनार मार कर रा पनी— उवा ! बदा ! मो मुनन  
कर नाग ! मर बदा क पाम मुन पचा दा ! अद मैं कम अपन  
का मूँ दमूगी ! बदा ! बदा ! मो बट्ट घरराकर चुन ! चुन  
बन्ग रग पर मैं दिमी तरह भी चुन न हा पाती था । मो न  
निर न कपटा उत्रार कर मर मर म नम टून कर मुन चुन लिया  
बन नर तब फफनी रहा । उमर बान न जान कर ना गया ।

जव मो न धक्का नर मुझे जगाया ता मैन नवा कि पा फ  
थी । मो न मर हाय सींच कर हबगयी नूई आवाज म पीठे म क  
उ ! उतारा हात क पन्न नी दूमर गाँव म पहुँच जाना है । दाता  
चन नटा । कुछ दूर चरन पर हम मात्र की मडक पर पहुँच गय जा  
चकगता का आर गयी है । नमा राम्ने स हाकर ऊपर की आर  
रग । आपहर म कुछ पहन एक गाँव म पहुँच । मातूम टूपा कि वही  
की पट्टान क कुछ नाग रग है । तिम आदमा के घर मो मुने ते

उसने और उसके परिवार वालों ने हम लोगों की बड़ी

४५

खातिर की। दिन भर और रात भर हम बहा पड़े रहे।

मुझे बहा भी नव समय यह चिंता लगी रही कि न जाने पुलिस वाले किम समय नाचे वहाँ पहुँच जायें।

“दूसरे दिन एक माटर बस पर सवार हो गय, जो चकराना जा रही था। मैं अपने साथ काफी रुपया बाँध लायी थी। इतने वर्षों से उसने जो कुछ जमा कर रखा था वह सब साथ ले आयी थी। माटर का किराया नेत हाँ मैंने और मैं ने भी मिलिटरी की-सी बर्दी पहन हुए एक आदमी का बड़े गौर से देखा—कहीं वह बदले हुए भेस में पुलिस का आदमी तो नहा है? चकराता पहुँचने तक मेरा कलेजा धक-धक करता रहा। माँ तो भी निश्चय ही वही हाल था।

‘चकराते में मैं के एक सग भाद रहते थे। वह जगलाते में चौकी दारी के काम पर नौकर थे। उन्हीं के यहाँ हम लोग रहने लग। माँ ने अपने भाँ का बनाया कि किसी आदमी ने बारा का खून कर दिया है, इनामिय वह भाग आयी है।

माँ बहुत ही अनमनी और उदाम रहती थी और रात में अकसर भयानक अपना दम्बर नींद में ही चित्तलाने लगती थी। मैं बार-बार ‘माँ! माँ! कहकर उसे जगानी रहती थी। हम चकराता पहुँच करीब दो हफते हाँ हाँगे। एक दिन माँ ने मामा को रुपयों की सारी पाटली सहज से आगे धारी—‘भया मैं बहुत बीमार हूँ, और मेरी जिन्दगी का कोई ठिकाना नहा है। न जाने किम क्षण दम बंद होकर मेरा काम तमाम हो जाय। यह छाकरी अब तुम्हारे ही शरण में है। इसकी देख बाल करते रहना!’ और वह फूट फूटकर रो पड़ी। उसके बाद मुझे गले लगानी हुई बारी—‘तू उन्नी अभागिन है, मैं क्या करूँ, मैं कभी एक दिन के लिये भी तुम्हें प्यार न करूँगी। रोज भिन्नकती रही। मुझे माफ करना, विन्या। तू फिर रो पड़ी। मुझमें भी रहा न गया और मैं भी फूट पड़ी। ‘माँ! माँ!’ के सिवा और कोई बात मेरे मुँह से नहीं निकलती थी। मुझ फिर किसी दुःखटना की गवा होने लगी थी।

“गाम तो मामी ने मुझसे आटा मानने के लिये कहा। माँ कुछ देर

स दिग्यायी नहीं दे रही थी। सोचा कि पानी लाने या घोर किसी काम से गयी होगी। मैं घाटा सान कर हाथ धो रही थी कि अचानक मामा घबराये हुए आय और मामी मे बोले—'अनव हो गया—भवानी मोटर से दब गयी' भरी माँ का ताम भवानी था। मेरे हाथ से लोटा भद्र ने नीचे गिर पडा और मैं माँ। माँ। बहती हुई पागला की तरह बाहर का दौड पडी। मामा मुझे रोवना चाहा, पर मैं घबका देकर भाग बड गयी। मामा और मामी भी मेरे पीछे दौडे आय। सारे गाँव म गार मच गया था और लोग सन्ध की ओर दौडे चला जा रहे थे।

"भीड को चीरकर लाग के पाम जाकर मैंने खला—न घाँस की जगह पर घाँस थी न नान की जगह पर नाक। तोपडी से गूदा बाहर निकल गया था, और पेट म अतडियाँ भी। मैं कुछ भेर ता पागला की तरह एकटक लाग की ओर दबनी रनी। उसके पार मुझे चक्कर भान लगा और मैं वही पर बहानी की हालत म गिर पडा।

"बाद म पता चला जि मा मडक क कितार एक पेट की छोट म छिप हुई लडी थी। जब मोटर पूरी खतार म मसूरी की तरफ से चली गयी थी तब माँ न अचानक टीक इजिन क सामने अपन पो गिरा दिया

माँ के मरने के बाद मैं करीब तीन बप चकराते म मामा के ही रही। मामी का व्यवहार अच्छा नहीं था। दिन भर वह मुझे किसी न किसी काम मे जोने रहनी। कभी मैं चक्की पीसती कभी धान कु कभी दूर से पानी लाती कभी लकडी बाटती कभी मेन मे काम क पर खाने को आधा पेट भी मुझे नहा मिनता था। मामा क छिप थाडा ता चना और गुड मुझे दे जाते थ मामी अगर देख प एक काड मच जाता। सब समय वह मुझे डाँटती फटकारती रह

'तीमरे बप मैं एक दिन भागकर मसूरी चली आयी। व महीन मैंन सबको की मरम्मत के काम म लग हुए मजदूरो के म करके किसी तरह गुजर की। पट काटकर मैं कुछ कुछ पसे बचा जब कुछ रुपये जमा हा गय तब मैंने विमाती की दुवान



विचार किया। तब से मैं यही काम करती आ रही थी,  
 और अब वह भी वनम ही गया लाइय, अब एक  
 निगरट दायिमे ।”

४७

①

मैंने उन एक मिगट दी। मैं उन जलान जा  
 रहा था, पर उमने मेज पर स दिपानलाई उठाकर  
 स्वयं जला लिया। उसने बाद वह माफा के बगल  
 बाने बीच पर जाकर, उसकी बांह पर निर रखकर लट गयी और  
 अत्यन्त उदासीन भाव से पीन लगी, जम उसने अभी एक बहून ही साधा-  
 रण किस्मा मुझे मुनाया हा। पर मरी त्राँखा के आगे एक मसूची दुनिया  
 का नक्शा घूम गया था। जम एक सपूर्ण यह पिंड मर जा। प्रत्यक्ष रूप  
 म अपने ममस्त हलके और गहर रङ्गा के साथ अपने धुर पर एक बार  
 पूरा चक्कर लगा गया हा। एक अपूर्व-कल्पित रोमाचकर अनुभूति मरी  
 ममन्त नानद्विया म सुरसुरा रही थी, और अद्भुत रात्रि का-मा एक  
 दुःस्वप्न मरी विन्मय विभ्रान आत्मा (भारीरिक् और मानसिक दाना) म  
 घनीभूत हा उठा था। कुछ देर तक स्तब्ध दष्टि स सामन बीच पर लेटी  
 हुए उन रहस्यमयी नारी को सहज-स्वाभाविक मुद्रा म निगरट पीत हुए  
 दकता रहा, जा जीवन के भयकर मे भयकर, असाधारण मे असाधारण  
और जटिल से जटिल अनुभवा का भी अत्यन्त सहज और माधे रूप में,  
निश्चिन्त और निर्विकार भाव में, परिपूर्ण आत्म विश्वास के साथ ग्रहण  
करने की आशी हो चुकी थी। कुछ ही समय पहले उमे मिगट पीने की  
इच्छुक बनकर मरे मन का ठेस पहुँचा थी, पर अब उसकी जीवन-व्या  
सुनने के बाद मुझे लगा कि जिस लडकी का जीवन एसी विकट और  
अस्वाभाविक परिस्थितिवा ने होकर गुजरा हो, और जा जीवन की सारी  
अस्वाभाविकता अथवा असाधारणता को सपूर्ण स्वाभाविक और साधा-

रण रूप से स्वीकार कर चुकी हो, वह चाहे मिगरेट पीय,  
चाहे सराव, चाहे सड़का पर भीख मांगे, चाहे महता :

राजरानी हानर रह—उसके तीव्र धारा धौत स्फटिक की चट्टान के  
समान स्वच्छ तथापि दृढ़ स्वभाव पर न तो किसी भी 'धच्छी या बुरी  
आदत का और न किसी सभय या भ्रमभव परिस्थिति का काइ म्थार्य  
प्रभाव पड सकता है ।

जब मैं किसी दूसरी दुनिया के घरातल से एक दूसरे ही परिप्रेण  
म उमे देत रहा था तब वह भी अपनी पार्थिव आँसो को मेरी आर एक  
टव गडाय हुए न जाने किम निराले लोक की मार्मिकता भरी तीव्र अन  
भेदिनी दृष्टि से मुझे देख रही थी ।

कुछ समय के लिये एक अलौकिक रूप से रहस्यमय सनाटा म चार  
और के पार्थिव वातावरण म छा गया । ममस्त पार्थिवता चेतना के  
एक अपूर्व अनुभूत स्तर के अतल मे ऊपर उठ आन पर उसक नीचे  
तत्काल के लिय तसे एकदम दब गयी थी । वह नयी अनुभूति नयावह  
थी या सुख इमका कोई भान न मुझे उम समय हो रहा था, न इम  
समय माद करने पर ही उसका कुछ अनुमान लगान म मैं समर हू ।  
समवत वह इन दोनों प्रकार की अनुभूतिया के परे थी ।

मैं चेतना के उस अमाधारण स्तर की अपार्थिव अनुभूति म रहा ही  
हुया था कि महमा मनिया उठ बठी और अधजली सिगरेट को राखदानी  
म फेंक कर वाली— अब मैं चलती हू । तुम्हारे साथ बठे-बठे सारा दिन  
गप गप म ही बीत गया "

गप गप । अपन जीवन के मर्मतिक अनुभवा का पूरी चमक न दह  
कते हुए अगारा की तरह मरे आग रखन पर—जिनकी आँच स अभी तक  
मेरी आत्मा भुगत रही थी—उह वह कबत गप गप बता रही थी ।

मेरी पार्थिवता तत्काल लौट आयी । मुझे याद आया कि मन उसे  
नि मवल कर िया है—जमी कि उसकी धारणा है और वह धारणा  
बढ़मूल हो चुकी ह यह भी निश्चित है । तुम दो मी क्या, दा हतार  
रूपया भी मुझे दा तो भी मैं अब दुकान नहा खोल सकती ।' उसने कहा  
था । तब क्या उमक इम विचित्र हठ के प्रति आत्म-ममपण करक मैं उने

छोड़ दूँ। “बाबा, कोई गरीब, लाचार को एक पता दे दो। भगवान तुम्हारा भला करे!” और क्षण भर के लिये <sup>४६</sup> 3/28 मेरी भीतरी आँखा के आगे उसका वह निस्सवल, निस्सहाय रूप, वह मम विदारक दयनीयता और निपट दीनता भरी म्लान मुख छवि प्रत्यक्षवत् नाच गयी। अतल-यापी वेदना की एक तीव्र हिलोर से सेरा हृदय सिहर उठा। “न ! न ! यह संभव नहीं हो सकता ! चाहे मुझे उसके हठ के निवारण के लिये अपने प्राण ही क्या न देने पड़ें, मैं कभी उसे इस अर्किचन अवस्था में और आत्म निपीडक मानसिक स्थिति में नहीं जाने दूँगा” अपने मन से मैंने कहा। और तत्काल, जान बूझा से, एक ऐसा अद्भुत आत्मिक बल, एक उदात्त स्फूर्ति मेरे भीतर जाग पड़ी, जिसने इतने देर तक की मेरी उस मानसिक जड़ता को पल म विलीन कर दिया जो मुझे उसके प्रबल हठ के आगे एकदम नि शक्त बना रही थी और जिसके कारण अपने विरोध में सफल होने का आत्म विश्वास ही मुझ में नहीं जग पा रहा था।

वह नयी स्फूर्ति पाने पर मैं कुछ देर तक स्थिर और गभीर दृष्टि से उसकी ओर देखता रहा। उसके बाद सहसा अत्यन्त दृढ़ता के साथ बोला—“देखो मनिया, तुम अब कहीं नहीं जा सकती !” यह कहने के बाद भी मैं परिपूर्ण आत्म विश्वास भरी और आभ्यन्तरिक आदेश से प्रेरित दृष्टि का उसी सुगभीर निश्चलता के साथ एकटक उसकी ओर गडाय रहा।

मनिया कौच पर से उठने जा रही थी, सहसा मेरी वह असाधारण मुद्रा देखकर और असाधारण ही आदेश सुनकर वह कठपुतली की तरह वृथ गयी, और स्कूल में गुरु के कठोर आदेश से अस्त भोली बालिका की तरह तन्मय भाव में मरी ओर देखनी रह गयी। उसने एक शब्द भी मुझ से नहीं निकाला। न ‘क्या?’ कहा न ‘किसलिय?’ बस जस मेरे अगले आदेश की प्रतीक्षा करती हुई वह अपनी ममस्त चानेन्द्रिया का मेरी ओर केंद्रित किय स्तब्ध सन्नम से मौन बठी रही।

आज उस दिन की उस घटना पर जब मैं एकांत भाव में विचार करता हूँ तब मुझे ऐसा लगता है कि हिप्नोटिज्म की जा बला वास्तविक

रूप से प्रभावोत्पादक सिद्ध होती है वह विनीचे सिंसाये  
स आयत्ताधीन नहीं होती, कुछ विनिष्ट बाह्य नियमों के

यथास्वपालन से वह सन्धे रूप में फीट नहीं होती। प्रत्येक व्यक्ति के  
जीवन में कुछ विनियम प्रमाधारण क्षण ऐसे आते हैं जब अतश्चेतना का  
वाह्य विनियम मुक्त भाग सहसा स्वतः जागरित हो उठता है और उस उदात्त  
प्रवृत्ति में वह इच्छित व्यक्ति पर जसा भी प्रभाव डालना चाहता है  
उसमें निश्चित रूप से सफल होना है तब जो भी आदेश उसके भीतर से  
निकलता है उस प्रमाण करने की शक्ति विनीचे विरले ही योग निष्ठ  
व्यक्ति में होना ही।

कुछ देर बाद जब मुझे यह विश्वास हो गया कि मरी सत्य जाग्रत  
अन्तर शक्ति का परिपूर्ण प्रभाव उस पर पड़ चुका है तब मैं और अधिक  
दृढ़ता भरे आवाज में कहा— तुम आज से यह न सोचना कि तुम अपनी  
इच्छा से जहाँ चाहो जा सकती हो। तुम्हारा मन इस समय से एवदम  
मग्न हो चुका है यह जान लो। मैं तुमसे जसा करण की वहीगा  
वसा तुम्हें करना होगा। मेरा साथ छोड़ कर अब तुम तब तक नहीं जा  
सकती जब तक मैं स्वयं तुमसे जान को न हूँ। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता  
हूँ कि मेरे साथ तुम्हारा कोई अनिष्ट नहीं होगा और तुम मुझ से  
रहोगी।'

वह उसी क्षण, विस्मित और आत दृष्टि से मरी आर टकटकी  
घाँघ हुए थी जसे मर अवध में उस कोई एक नया अलहाम — एक नय  
पान की प्रेरणा हुई हो। आज तक वह मुझे जिस दृष्टि से देखती जा  
रहा थी, वह उस समय जसे मूलतः बदल गयी थी। स्पष्ट ही मेरे  
व्यक्तित्व के सतत रूप का कोई वर्णना ही इतने दिना तक उसा नहीं  
की थी।

हम दोनों की आँखें लड़ रही थी जसे इस बात की होठ लगी हो  
कि वीन, किराना कितनी गहराई से जानने की अतरीण समझना रस्ता  
है। मैं निश्चिन्त आत्म विश्वासपूर्वक यह जानता था कि उस लड़ाई में  
प्रकृत मरा विजय निश्चिन्त है—व्यक्ति में विजय पा चुका हूँ।

कुछ देर बाद मनिया की आँखें मूढ़ मर और स्निग्ध हासागम से

उज्ज्वल हो उठी। जस अमावस्या की गाढ़ अधकारमयी  
कालराशि के बाद—जिसके सम्बन्ध में निद्राविहीन आँवो  
को यह विश्वास ही नहीं होता कि वह कभी बीतेगी— पूव दिशा में  
 उपा की नवाज्ज्वल रेखा का प्रथम प्रभास फूट पटा है। उसकी पुलकित  
 पलकें झुंझ गयीं और आधी मुद गयी। वह सहसा मर पास आकर बैठ  
 गयी और मेरे कंधे पर वनक लुफी के साथ अपना दाया हाथ रख कर  
पुचकार नरे स्वर में बोली—

“क्या तुम सबमुच यह साच रह ५ कि मैं तुम्हें छाडकर चली  
 जाऊंगी? मैं अगर इस समय चली भी गयी हाती तो भी तुम्ह न छोडती।  
तुममें निश्चय ही मेरा पूव जम ना काई नाता है, यह मैं पहली बार  
तुम्हें दबते ही समझ गयी थी। तुम अगर मुझ छोडना भी चाहो तो  
 भी मैं तुम्हें नहीं छाड सकती।” उसकी आँव प्राय पूरी मुद गयी और  
 उसन मर वायें कंधे पर अपना निर रख लिया। कस सहज सुखद, स्निग्ध  
स्नेहजन से सदीप्त उसका वह सहज ममपणील स्पर्श था— अपने मूड-  
 मद ताप से एक की तरह जमे हुए हृदय का भी पिघला दन वाता।

मेर मन में उसा के मुह से सुनी हुई उस घटना का चित्र सजीव हो  
 रहा था जब वह अपनी हत्यारी मा के माथ आधी रात में भागत क  
 बाद अत्यंत थकित अवस्था में मा की गाढ में लेटकर मा गयी थी। क्या  
 आज भी वह उसी तरह की थकान का अनुभव कर रही थी? उस दिन  
 तो निश्चय ही उसने वना की हत्यावाली घटना केवल उसके शरीर  
 या मन को ही नहीं, बल्कि उसकी आत्मा को भी थका दिया होगा।  
 क्या आज भी उसका शरीर, मन और आत्मा तीनों थकित हैं? उस  
 दिन उसके बच्चा की हत्या हुई थी, तब क्या आज भी किसी की हत्या  
 हुई है? ठीक है। आज भी निश्चय ही किसी की हत्या हुई है। क्या  
 आज उसके पिछले जन्म की हत्या नहीं हुई है? पर बच्चा की हत्या  
 के बाद एक विभीषिणमयी, मसानक अनुभूति में उनका जीवन विषम  
 बन गया था, और आज? आज क्या उनका जीवन मृतमय बनन जा  
 रहा है? सगममर की सुंदर मूर्ति की तरह उसकी मृत छवि ही और  
 देखना हुना मैं कुछ समय तक इसी तरह के विचारा में मग्न रहा।

सहसा मेरा ध्यान इस बात की ओर गया कि वह मचमुच सो गयी है। मैंने मोचा क्या यह वही सुपुमावस्था है जिसे अंगरजी में कहते हैं हिप्नोटिक स्लीप ? मैंने उसे हिलाया डुनाया पर वह नहीं जगी। दोना हाथों से उने महारा इने हुए मैं कौच पर से उठा और उसके बाद मैंने उसे धीरे से उमी कौच पर चित्त अवस्था में लिटा दिया। उसके बाद अपनी समस्त गुप्त योगिन शक्तियाँ को पूरा प्रयत्न से जगाकर मैंने अत्यंत दृढ़ और गभीर वाणी में, आत्म के स्वर पुकारा—“मनिया !

वह उसी सोयी हुई अवस्था में बाल उठी—‘हाँ’

“मैं कौन हूँ ?

‘रजन बाबू !’

धीरे कीर्त समय होता तो इस बात पर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहता कि उसने मेरा नाम कसे जान लिया। पर चूँकि उस समय मेरी मानसिक स्थिति असाधारण स्तर पर पहुँची हुई थी इसलिए मैंने अत्यंत सहज रूप में उसके उत्तर का ग्रहण किया, और उमी गभीरता के साथ प्रश्न करता चला गया—

“सच बताना मनिया, तुम क्या मुझे चाहने लगी हो ?”

मैं तुमसे बहुत डर गयी हूँ। तुम मुझे मायात् काल की तरह लगते हो। मेरी रह तुम्हें देखकर काँप उठी है। मैं तुमसे छुटकारा चाहती हूँ, पर छूटने का कोई उपाय खोज नहीं पाती। मुझे बचाओ ! मुझे बचाओ !’ और वह उमी सम्मोहन की निद्रावस्था में ही पफ्फ पफ्फ कर रोने लगी।

उसका यह उत्तर ऐसा था जिस मुनक् साधारण अवस्था में मैं हतबुद्धि हो गया जाता। पर मैं पहल ही वह चुका हूँ कि मैं उस समय मन के असाधारण स्तर पर पहुँचा हुआ था।

मैंने अपने मन को ऐकमोय भावना की ओर केन्द्रित कर अपने स्वर में धीरे अधिक दृढ़ता और गभीरता भरते हुए आदेश प्रकृत कहा—

“तुम्हें छुटकारा तभी मिलेगा जब मैं चाँगा। मैं चाहे तुम्हारा काल हूँ चाहे धीरे कुछ पर हर हालत में मैं तुम्हारा प्यार चाहता हूँ। आज से

यह जान ला कि मुझे प्यार करन के निवा तुम्हारे जीवन की

५३

और कोई सायकता नहीं है। मुझे प्यार करो, उसी मे डूब

जाओ और उसी मे अपनी सारी जिंदगी को खपा दो, बस ! बोलो,  
करोगी मुझे प्यार ?”

“हाँ !”

“फिर बोलो कि मुझे प्यार कराओ और खुश रहोगी ?,,

“हाँ प्यार करूँगी और खुश रहूँगी ।”

“अब तो मैं काल की तरफ नहीं लगना हूँ ?”

“नहीं ।”

“तब नींद से उठ बैठो ।”

और वह सचमुच तत्काल उठ बैठी—आखें मलती हुईं । आखें मल चुकन के बाद उसन मेरी आर दबा—कसी निश्चल प्यार मरी मृदु मुम कान डमकी अलमायी आखा म, उमक आठा पर उसके गाला के इद-गिद, उमकी ठुही की पणिया म खिल उठी थी । फिर एक वार उमने आखें मली और उमके बाद अँगडार्ड लेन लगी । रात भर की नींद के बाद की महज स्वाभाविक निद्रिलता कीभी वह अँगडार्ड बडी ही मादक, बडी हों माहक लग रही थी । जम्हाई लेती हुई वह बोनी—“मैं क्या कई घन्टा स सोया हुइ थी ? आपन मुझे जगा भी नहीं दिया । अच्छी गँवार निकली मैं जो इतना दर तक यहा सायी रह गयी ।” और फिर एक वार प्यार स लवालव छनकती हुइ आग्रा से मेरी ओर देखकर वह खिल चिन करक हँस पडा । कमी कोमल, कमी तरल हँसी थी वह । मेर पुनक्तिन हृदय म एक अप्रूप हृप हिलार उमड उठी । तत्काल मैं कौच पर डमकी वगल म जाकर बैठ गया । वह अपन दोना प्यारे-प्यारे हाया से मेरे मिर के बाल महलान लगी । उसके बाद दासों हाय स मेरी ठुटी पककर मरी आखा म इम तरह दखन लगी जैसे शीने में अपना मुह देख रही हो । कुछ देर तक एकटक दखते रहन के बाद पुचकार मेरे स्वर म बोली—“तुम बहुत ही भले हा । बडे प्यारे । मुझमे नाराज ता नहीं हो न ?” और फिर मरी भौही के ऊपर अपनी कोमल-कोमल उँगलिया फरन लगी । -

मैं उसकी पीठ पर हाथ फेरन लगा, जमे अज्ञान म उमे दिलासा बना होऊ, घबराहट की मनोदशा म उनको ढाढम बंधाता होऊँ हालांकि उस समय उमकी किमी भी धान न या हाव भाव से किसी भी प्रकार की घबराहट का लगेमात्र चिह्न प्रकट नहीं हो रहा था ।

पीठ पर हाथ फेरते हुए मैंने मृदु मन्द मुम्कराते हुए कहा—“इस समय नो तुम मुझे बहुत भना आदमी बता रही हो पर अभी कुछ ही समय पहले, नींद की हालत म तुम क्या कह रही थी जानती हो ?”

अत्यंत उत्सुकता और कुछ कुछ उल्लास से उसने पूछा—“क्या ?”

“तुम मुझसे कह रही था कि मैं तुमसे बहुत डर गयी हूँ—तुम मुझे साक्षात् काल की तरह लगत हो ।”

यह खिलखिला उठी—एक हलके विस्फोट के-से स्वर मे—ठीक जिस प्रकार दियासलाई के डिब्बे म दियासलाई जलाने पर शब्द होता है । खिलखिलाती हुई वह बोली— आप क्या सच कहते हैं ? हँसी तो नहीं करते ? क्या सचमुच मैंने नींद म इस तरह की बात कही थी ?

“विश्वास मानो मैं सही बात कह रहा हूँ ।

“अच्छा ! यह खूब रही ! और वह फिर खिलखिला उठी ।

“तुम्हें क्या बिलकुल याद नहीं आता कि तुमने नींद म क्या क्या कहा ?” मैंने पूछा ।

“नहा । मैं तो ऐसी गान्धी नाद मे सोयी थी कि मैंने नींद म कुछ भी कहा होगा, इस बात पर मुझे विश्वास ही नहीं होता ।

‘तुम्हें क्या किसी प्रकार का सपना देखन की-सी भी याद नहीं है ?’

“नहीं, मैंने कोई सपना नहीं देखा । मैं तो बेगबबर सा गयी थी । इधर कई दिना से रात मे अच्छी तरह नींद नहीं आयी इसलिये शायद यहाँ मुझे ऐसी गहरी नींद आ गयी ।”

ऐसे भोले भाव से उसन यह बात कही कि मुझे उसके ऊपर तरम आने लगा । मैंने कहा—“अच्छा, एक काम करो । मुझे लगता है कि तुम्हें सचमुच नींद की बड़ी जरूरत है । खलो, उस कमरे मे चल कर म तुम्हारे आराम से सोने का प्रबंध किये देता हूँ ।”



मैं सो चुकी हूँ, अब नहीं सोऊँगी ।'

'मेरी बात मान लो । तुम्हारे लिये इस समय आराम बहुत जरूरी है । कुछ देर भीतर पलंग पर आराम से सो जाओ । तुम्हारी इतने दिनों की सारी थकावट हवा हा जायगी ।' और मैं उसका हाथ पकड़ कर हीले से म्बिचने लगा । बच्चों की तरह एक बार 'न ।' कहने पर भी वह उठ खड़ी हुई । मैं उसे दूसरे कमरे में ले गया जो उम कमरे में मिला हुआ था जहाँ हम लोग अभी तक बठे हुए थे ।

५

मेरे पलंग पर रेशमी गद्दा बिछा था जिम्के भीतर रुई के स्थान पर किसी बिडिया के बहुत मुलायम और घुने हुए पर भरे हुए थे । चादर भी रेशमी ही थी, और परो स ही भरे हुए तकिये का भालरगार गिलाफ भी रेशमी ही था । उस पर मैंने धीरे से मनिया को लिना दिया । उपर से साटिन का लिहाफ ओढाता हुआ बोला—"अब तुम दा-तीन घंटे एकदम निश्चित होकर सो जाओ ।"

मैं देख रहा था, उसकी आँखें फिर से अलमान लगी थी । उमने कहा—"तुम खडे क्यों हो ? तुम मेरे सिरहाने बँठकर मेरे मिर पर हाथ रख रही तब मुझे नींद आयगी ।"

मैं बठ गया और उसके सिर पर हाथ रखकर उसके कइ दिना से रुखे पडे हुए बालो पर धीरे से अपनी उँगलिया फेरन लगा । कुछ ही देर बाद वह गाढी नींद में सो गयी । गहरी साम लेने के कारण उसका सारा गरीर जैसे हिल रहा था । मैं कुछ देर तक गौर से प्राय चुम्बक के से आकषण से, उसके मुख की वह सात सुप्त छवि देखता रहा । मैंने 'नात' कहा ? पर निम्न निपीडन की-सी जो अंधेरी छाया उसके निद्रित, मौन,

म्लान और करण मुख पर पड़ी हुई थी उससे शांति की  
 संभावना का अनुमान कैसे किया जा सकता था ! मेरे पास  
 निकल आया । वह निदारुण रूप से म्लान छाया बता रही थी कि निखिल  
 मसार में घबेली वह निपट अनाथ और असहाय लड़की जिन घोर  
 आतंककारी और लोमहृत्पक अनुभवा के बीच में अग्रसर हुई है वे कुछ  
 ऐसी वज्र की-सी लकीरें उसका जीवन में खींच गये हैं जो कभी मिट नहीं  
 सकती । चाहे वह रोगी गद्दा और मलमली तकिया पर ही क्या न लेटी  
 रहे उन वज्र रेखाओं से वह सदा बंधी रहूगी और उन्हें बांधकर उन  
 पारवाने आनंद और प्रकाशमय जीवन की अनुभूतियों को वह कभी छू  
 तक नहीं सकती—एक वज्र अभिगाप से वह घिरी हुई है । उसके मुख  
 की उम सुप्त अभिव्यक्ति का दसकर ऐसा अनुमान मेरी अतः प्रान न  
 क्या लगाया मैं कह नहीं सकता । पर उस समय मुझे यह बात वज्र  
 मणि के प्रकाश की तरह सुस्पष्ट लगी ।

मैं वहाँ से उठ नहीं पाता था । उसके मुख पर से मेरी आँखें हट  
 नहीं पाती थी । वह प्रगाढ़ निद्रा में मग्न थी, किंतु उसके कपाल की  
 नम पलकों का स्नायु-तंत्र घाटा की त्वचा जैसे किसी अगात अनु  
 भूति से प्रतिपल नयी नयी चेष्टाओं के साथ चालित हो रहे थे । कभी  
 वह अपनी भाँहा का सिबोडनी थी, जिस किसी निमग्न पीडा से कराहना  
 चाहती हो कभी उसके कपाल की नसें एक त्रिकोण के रूप में उभर  
 उठती थी कभी उसने ओंठों के इद गिद घणा की-सी रेखा घिर आती  
 थी और कभी समस्त मुख पर भय और आतंक की अनुभूति अभि  
 व्यक्त हो उठती थी । स्पष्ट ही उसके मन में अतल में, और उस  
 अन्तल के भा नीच ऊपर और अगल-बगल के स्तरों में दबी हुई भूत  
 बतमान और भविष्य की सहस्रा भावनाएँ स्वप्नों के रूप में उभर-उभर  
 कर उसके समस्त सुप्त अथवा अनि चेतनशील व्यक्तित्व को तीव्र रूप से  
 आदानित कर रही थी । पर उन असह्य स्वप्नानुभूतियों में से एक भी  
 अनुभूति एमी नहीं थी जो कभी एक क्षण के लिये भी उसके मुख पर  
 आस्य की भनक ला देती । मैं उसी भनक की आशा में एकटक उसके  
 प्रार देख रहा था, पर उसका कोई सूक्ष्मतरंग चिह्न भी मुझे नहीं दिला

देता था। सोने के पहले वह किस कदर खिलखिलाती रही थी। कभी स्निग्ध मुस्कान उसके मुख पर छापी हुई थी। पर सोने के बाद वह न जाने कपूर की तरह कहीं विलीन हो गयी थी, एक लघुतम क्षण के लिये भी उसके कोई नाम निशान मुझे नहीं दिखाई देता था। उसके निद्रित जीवन की जो अस्फुट अभिव्यक्ति उसके मुख पट पर प्रतिपन्न बदलते हुए रूपांश प्रनिफलित हाती चली जा रही थी उसे देखकर मैं पहले तो आतंक की अनुभूति से मिहरता रहा। पर बाद में एक निस्सीम कुरुणा की भावना मेरे प्राणों के एक छोर से दूसरे छोर तक उमट उठी और मेरी हल्की आँखों में वरबम आँसू छूटने लगे। उन आँसुओं का पाछे बिना ही मैं और कुछ देर तक निपट अश्रु मनस्क भाव से उसकी सिरहाने बठा बठा न जान क्या साचता रहा। उसके बाद उठकर बाहर के कमरे में चला आया और कोच पर लेट लेट मानवीय अति चेतना से सम्बन्धित कोई एक अंगरेजी पुस्तक पढ़ने का प्रयत्न करने लगा। पर एक आध परिच्छेद पढ़ते-न पढ़ते मेरे आग यह बात स्पष्ट हो गयी कि उस पुस्तक में अति-चेतना व सम्बन्ध में खोज की चाहे किन्ती भी बड़ी-बड़ी, भारी भरकम यातें विद्वान् लेखक न लिखी हों, वे मेरे उस प्रत्यक्ष अनुभव के आगे एकदम फीकी और निस्सार पड़ जाती हैं जो मैं अति चेतना, उप चेतना अथवा अर्ध-चेतना के सम्बन्ध में उस दिन मनिया के विगत जीवन की असाधारण घटनाओं का विवरण सुनकर और उसका असाधारण व्यवहार और आचरण देखकर प्राप्त किया है।

पुस्तक में कुछ ही पन्ने पढ़ने के बाद मेरा जो ज्वर गया। आज के सारे घटनाचक्र के कारण मैं यो ही थकावट मालूम करने लगा था। उस पुस्तक की नीरस बातों ने मुझे और अधिक थका दिया। मेरी आँखें भपने लगीं। केवल दो मिनट के लिये मैं साया हुआ कि मुझे लगा जैसे कोई गला फाट फाड़ कर अत्यन्त आतंस्वर में मुझे पुकार रहा है। तन्नास मेरी आँखें खुल गयीं और मैं हडबडाता हुआ उठा। उठते ही सीधे भीतर के कमरे में गया, जहाँ मनिया सोयी थी। देखा वह अभी तक बचकर सोयी हुई है। उसके मुख पर वही मौन म्लान छाया घिरी हुई थी। मैं फिर एक बार चुपचाप उसके सिरहाने बठा गया। मेरी

म्लान और कर्ण मुख पर पड़ी हुई थी उससे गति व  
सभावना का अनुमान वस किया जा सकता था। मेरे आँ  
 निकल आये। वह निद्राएण रूप से म्लान छाया बता रही थी कि निद्रि  
 मसार म अकेली वह निपट घनाय और असहाय लडकी जिन घो  
 आतकवारी और लोमहपक अनुभवा के बीच म अग्रसर हुई है वे पु  
 ऐसी वज्र की-सी तयोरें उसके जीवन म खीच गये हैं जो कभी मिट न  
 सकती। चाह वह रेगमी गहा और मखमली तबिया पर ही क्या न ले  
 रह, उन वज्र रेखाभा से वह सप्त बंधी रहगी और उह घाघकर उ  
 पारवान खानद और प्रकाशमय जीवन की अनुभूतियों का वह कभी  
 तक नहीं सकती—एक वज्र अभिगाप से वह घिरी हुई है। उसके मु  
 की उम मुख अभिप्रति का दरकर एसा अनुमान मेरी अत प्रना  
 क्या लगाया मैं कह नहीं सकता। पर उस समय मुझे यह बात बज  
 मणिके प्रकार का तरह सुस्पष्ट लगी।

मैं वहाँ स उठ नहीं पाता था। उनके मुख पर से मेरी आँख  
 नहीं पाती था। वह प्रगाण निद्रा म मग्न थी, किन्तु उसके कपाल  
 नमें पलका का स्नायु-तंत्र छोटी की बचा जैसे किसी ध्यान का  
 भूति म प्रतिफल नयी-नयी चेष्टाया के साथ चालित हा रह थे। क  
 वह अपनी भाँहा को सिंकाडती थी, जैसे किसी निमम पीडा से बराह  
 चाहती हा, कभी उसके कपाल की नय एक त्रिकोण के रूप म उ  
 उठता थी कभी उसके छोटा के इद गिद घणा की-सी रेखा घिर था  
 थी और तभी समस्त मुख पर भय और आतक की अनुभूति आ  
 व्यक्त हा उठती थी। स्पष्ट ही उसके मन के अतल म और उ  
 अतल के भा नीच ऊपर और अगल-वगल के स्तरों म दबी हुई भू  
 वतमान और भद्रिप्य की सहस्रा भावनाएँ स्वप्ना के रूप म उभर उ  
 कर उसके समस्त मृत अथवा अति चेतनगील व्यक्तित्व को तीव्र रूप  
 आनित कर रहा थी। पर उन असम्य स्वप्नानुभूतियों में से एक  
 अनुभूति ऐसी नहीं थी जा कभी एक क्षण के लिये भी उसके मुख  
 हार्य की भलक ला दती। मैं उसी भलक की आशा में एवटक उस  
 धार देख रहा था, पर उसका कोई सूक्ष्मतम चिह भी मुझे नहीं दि

देता था। सोने के पहले वह किस कदर खिलखिलाती रही थी। कसी म्निग्ध मुस्कान उसके मुख पर छापी हुई थी। ५७

पर सोन के बाद वह न जाने कपूर की तरह वहाँ विलीन हो गयी थी; एक लघुतम क्षण के लिये भी उसके कोई नाम निशान मुझे नहीं दिखाई देता था। उसके निद्रित जीवन की जो अस्फुट अभिव्यक्ति उसके मुख पर प्रतिपन्न बदलत हुए रूपों में प्रतिफलित होती चली जा रही थी उस देखकर मैं पहले तो आतंक की अनुभूति से सिहरता रहा। पर बाद में एक निस्सीम वरुणा का भावना मरे प्राणा के एक छार से दूसरे छोड़ तक उमड़ उठी और मरी रखी आखा में बरबस आसू छनक आये। उन आँसुआ का पाछे बिना ही, मैं और कुछ दूर तक निपट अथ मनस्क भाव में उनके सिरहाने बठा-बठा न जाने क्या माचता रहा। उसके बाद उठकर बाहर के कमरे में चला आया और बीच पर लेट-लेट मानवीय अति चेतना में सम्बन्धित कोई एक अँगरेजी पुस्तक पढ़ने का प्रयत्न करने लगा। पर एक आध परिच्छेद पढ़ते-न पढ़ते मेरे आगे यह बात स्पष्ट हो गयी कि उस पुस्तक में अति-चेतना के सम्बन्ध में खाम की चाह कितनी भी जग-बड़ी, भारी भरकम बातें विद्वान लेखक न लिखी हैं, वे मेरे उम्र प्रत्यक्ष अनुभव के आगे एकदम फीकी और निस्मार पड़ जाती हैं जो मैंने अति चेतना, उप चेतना अथवा अथ चेतना के सम्बन्ध में उस दिन मनिया क विगत जीवन की असाधारण घटनाओं का विवरण सुनकर और उनका असाधारण व्यवहार और आचरण देखकर प्राप्त किया है।

पुस्तक के कुछ ही पन्ने पढ़ने के बाद मेरा जो ऊन गया। आन के सार घटनाचक्र के कारण मैं या ही थकावट मालूम करने लगा था। उन पुस्तक की नीरस बातों ने मुझे और अधिक थका दिया। मेरा आँखें भपन लगी। केवल दो मिनट के लिये मैं मोया हूँगा कि मुझे लगा जैसे कोई गला पाड-पाड कर अत्यन्त आतस्वर में मुझे पुकार रहा है। तस्नाल मेरी आँखें खुल गयी और मैं हडबडाता हुआ उठा। उठते ही सौध भीतर के कमरे में गया, जहाँ मनिया सोयी थी। देखा वह अभी तक बदनवर सोयी हुई है। उसके मुख पर वही मीन म्लान आया धिरी हुई थी। मैं फिर एक बार चुपचाप उसके सिरहाने बठ गया। मेरी

श्रीवें उसके मुख की उस करुण छाया की ओर से हटना भी नहीं चाहती थी। बीच-बीच में वह नोद ही मैं अभी मिसक उठती थी और अभी धीमे स्वर में एक कराह उसके मुह से निकल पड़ती थी।

प्रायः आधा घंटा मुझे उसी अवस्था में बड़े हुए हो गया होगा। मन्मा उमने एक चौख मारी, और उसके बाद दूसरी और फिर तीसरी। मैं उसका हाथ हिलाते हुए उमका नाम ले लेकर पुकारने लगा। तब वह जमी। क्षण भर के लिय बहून ही डरी हुई आँखों से उसने मरी ओर देखा। मैंने कहा— मनिया कोई सपना देखा था क्या ? इस तरह चौख क्यों रही थी ?

ता क्या वह सपना था ?' प्रायः फुसफुमाती हुई मनिया बानी।

'हाँ मनिया वह सपना था। क्या देखा तुमने सपना ?'

लेट ही लटे तनिक मेरी ओर सरकती हुई मनिया केवल बोली—  
उफ !" और मेरा दाहिना हाथ अपने हाथ से धीरे से पकड़ती हुई मेरी ओर बड़े गौर में देखने लगी—जस किमी भूले हुए आदमी का फिर से पहचानने की कागिग कर रही हो। उसके माथ पर चमकन वाली पमीने की बूँदों पर पश्चिम की धार की खिडकी के लाल शीशे से हाकर सूर्य का प्रकाश पड़ रहा था जिससे ऐसा मानूम होता था जैसे रक्त की बूँदें टपक रही ह। उस प्रकाश में उसकी भ्रात आँखों की दृष्टि और अधिक भयावनी लग रही थी। क्षण भर के लिय मुझे लगा कि मरी सारी हिप्नोटिक कला उलटे भरे ही ऊपर आधमण कर बठी ह। मारे घबराहट के मैं बोल उठा— मनिया तुम इस तरह मैं मेरी ओर क्या देख रही हो ? तुमने क्या सपना देखा, यतानी क्या नहीं ?

नहा तुम वह नहीं थे ! —एक दीघ निश्वास पेंवती हुई वह बोली— तुम वह हो ही नहीं सकते ! तुम इतने प्यार हो ! और मैं भी तुम्हारे माथ ऐसी बेरहमी का बर्ताव नहीं कर सकती ! तुम तनिक और इपर सरक आधो !

मैंने बसा ही किया और मनिया ने मेरे घुटने पर अपना सिर रख दिया। उसके बाद मेरा हाथ अपने माथे पर रखती हुई बोली—“तुम क्या राजा हो ?

—“नहीं ता ! मैं एक मामूली आदमी हूँ । पर तुमन ऐसा क्या पूछा ?”

“नहीं, तुम जल्द राजा हो !” अपनी रहस्यमयी दृष्टि को मेरी ओर गड़ाये हुए वह वाली,—“एक ज्योतिषी लामा ने एक बार मेरा हाथ देखकर मुझमें कहा था—“तुम्हें जिंदगी में एक न एक बार एक राजा मिलगा, जो तुम्हारे ऊपर बड़ी दया दिखायेगा, पर—पर—”

“पर क्या ?” मैं यद्यपि ज्योतिषियों की बातों की महत्व देना मूर्खों का काम समझता था, तथापि यह जानने के लिये मैं अत्यन्त अधीर हो उठा कि मनिया के ज्योतिषी ने उसमें पूरी बात क्या कही थी । उसकी अधूरी बात से मैं अत्यन्त अधीर हो उठा था ।

“कुछ नहीं । वह एक अनपढ़ ज्योतिषी था । पर उसने कहा था कि—‘जि जन्म राजा में तुम्हारा व्याह होगा’ ।” कहते ही वह एक विचित्र ढंग में खिलखिला उठी । और फिर बोली—“बड़ा मूख ज्योतिषी था वह । मैं तब भी उसकी बात सुन कर खिलखिला उठी थी । तब मैं बहुत छोटी थी ।”

मुझे लगा कि उम अनान और अदृष्ट ज्योतिषी की आत्मा जसे तत्काल ही मेरे भीतर प्रविष्ट हो गयी । जसे उम ज्योतिषी की प्रेरणा से ही मेरे मुँह से उमी क्षण यह निकल पड़ा—“उस ज्योतिषी की ही बात सच होगी मनिया, मैं तुम्हारे साथ व्याह करूँगा ।” और कहते ही मुझे अपनी प्राणों किसी दूसरे की-सी लगी ।

मनिया तत्काल हड़बड़ाती हुई उठ बैठी । खिड़की के शीशे में आने वाला लाल प्रकाश इस समय परिपूर्ण रूप से चमक रहा था । निश्चय ही स्वयं उमके भी मुख की लालिमा उम रक्तभा के साथ घुल मिल गयी थी । पर उमकी वह अपनी लालिमा क्या प्रकट करती थी ? नववधू की-सी लजा ? क्रोध ? या प्रतिहिंसा ? मैं कह नहीं सकता ।

“तुम क्या सच कह रहे हो ? तुम क्या सचमुच मुझमें व्याह करोगे ?” एक अनापे स्वर में उसने प्रश्न किया ।

पर उसके प्रश्न का उत्तर देने के पहले मैं सहसा पलंग पर से उठा और पीछे पश्चिम की ओर की उस खिड़की को मैंने खोल दिया, जिसकी

लाल गिड़की का प्रकाश मेरे मन में एक अजीब घबराहट और भ्रांति का भाव उत्पन्न कर रहा था। गिड़की खोलते ही सारा वातावरण ही बदल गया, और हम दोनों के बीच की अब तक की मारी वातें एक सहज स्वाभाविक रूप में मेरे सामने आयीं। लाल प्रकाश के हट जाने से मनिया के मुख की रक्त रजित आभा भा बिलीन हो गयी, और उसके जिस रूप के सम्बन्ध में एक क्षण पहले मेरे मन में यह गंका होने लगी थी कि वही वह प्रतिहिंसात्मक ता नहीं है, उसके सम्बन्ध में मेरी भ्रांति पल में मिट गयी। अपने शक्ति मन के उस अस्व-रूप अम पर मुझे मनह्रां मन हूँसी आयी। मैं देखा मनिया को किंगोरी-कुमारी की-सी निष्पाप मुख छवि एक अदृशिमिस्मय की भावना में विमृग्ण हो उठी है। उसकी धनुष की सी भौंह अक्षय कुछ अधिक टेढ़ी हा गयी थी और उसकी काली बरोनियाँ तन कर कुल खी-सी हो गयी थी। पर कुन मिलाकर उसके विस्मित मुख की तत्कालीन अभिव्यक्ति में श्रेय या प्रतिहिंसा की अपेक्षा दीनता की ही भावना अधिक प्रकट हानी ।।

जब मैं आश्चर्य से हट गया, तब बोला—'मैं सब कह रहा हूँ मनिया। और उसका मन की प्रतिनिध्या जानने के नियम में अधीर हो उठा।

वह कुछ देर तक मोन दृष्टि से मरी और देखती रही। धीरे-धीरे धीरे—उसके मुख पर सब वह दानता भरी भ्रांति के वादन हट और तब फिर एक बार उसका चेहरा सहज स्निग्ध मुस्कान से बिल उठा—वह प्यारी मुस्कान जिसके लिये मैं इतनी देर तक अपना नवस्व निष्का-र करन की प्रतीक्षा में बठा हुआ था।

उसी मुस्कान को और अधिक परिस्फुट करती हुई वह प्रायः किल बते हुए स्वर में बोली— अब मैं समझी कि क्या तुमने मरी सारी दुकान लूट ली, क्यों मेरा इतने बरसा से जमाया हुआ कारोबार उजाड़ दिया। तुम बड़े दुष्ट हो। और उसने अपनी दाता बाहें मेरे गन पर टाल दी।

इतने में किसी ने दरवाजा खटखटाया। हाटल के नौबर न बाहर से



चिल्ला कर कहा—“दावूजी, चाय आयेगी ?”

६१

मैंने पलंग पर ही से कहा—“जल्द आयगी, जायगी कहाँ ?”

मेरा उत्तर सुनकर मनिया खिलखिला पत्नी और हँसते हँमत लोट-पोट हो गयी ।

मैं भी हैमता हुआ धीरे से उठा और बाहर वाले कमरे में जाकर दरवाजा खोल दिया । ‘ब्वाय’ को आडर दिया कि चाय के साथ कुछ टास्ट और आमलेट भी लेता आवे ।

६

उम दिन रात में बड़ी देर तक मुझे यह शक बनी रही कि मनिया न जान किम क्षण अपना रूप बदल डाले और मनक में आकर फिर कहीं चल देने

का हठ न कर बैठे—हालांकि इस प्रकार की गवा बहुत देर पहले ही निमूल मिट्ट हा चुकी थी । प्रायः बारह बजे तक मैं उसे इधर उधर की बातों में भुलाने की काशिश करता रहा । जब मन नेवा कि वह काफी थक चुकी है, तब उमसे उसी पलंग पर लेट जाने के लिये आग्रह किया जिम पर वह दिन में सो चुकी थी । वह बिना रचमान आपत्ति के वही जाकर आराम में लेट गयी । और मेरे आश्चय का ठिकाना न रहा जब मैंने देखा कि लेटने के कुछ ही देर बाद वह सो गयी । दिन में काफी देर तक सोते रहने के बाद भी उसकी नीद में तनिब भी कमी नहीं आयी थी । मैं माचा कि इसके पहले न जान कितनी रातें उमन निद्राहीन अवस्था में बितायी हागी ?

उमके कमरे की पत्नी की जलता हुआ छोडकर मैं चुपचाप बाहर के कमरे में चला गया और वही गरम ड्रेसिंग गाउन के ऊपर एक बवल सपट कर एक कौच पर लेट गया । मैं भी बड़ी थकावट मालूम कर रहा

था। मनिया की नींद का छूट का सा प्रभाव मुझ पर भी पड़ा और मैं भी बहुत जल्दी सा गया।

दूसरे दिन मनिया कुछ देर से उठी। पर जब उठी तब वह तरा-ताजा दिखायी दी। उसके मुख की रमयता बहुत बढ़ गयी थी और साथ ही रक्त और मांस में भी जस पहले से कुछ बढ़ि हो गयी थी। एक सहज-मुदर स्निग्धता और सलोनापन उनकी बाँखों में, गालों पर और ओठों पर छाया हुआ था। उठते ही सहज भरत स्वर में बोली— मैं कहती न थी कि तुम्हारे इस कमर में शतान का डेरा है! उसी शतान ने मुझे यहाँ इस कदर बाँध लिया है कि अब यहाँ से हटने की इच्छा ही नहीं होती। और तुम्हारे इस पत्र पर ता शतान ने खास तौर से धपना जाल बिछा रखा है। इसे छोड़ने को जा ही नहीं करता। कब दिन से मैंने इस पर सादा गुरू किया था अभी तब यही मडी हुई हूँ। पता भी तुमने मुझे यही बतलवा दिया। सचमुच यह एक अच्छा समाग है। अच्छा तुम्हारा क्या समाग है? शतान अपने जाल में लागा का फँसाता है या नहीं?

एक भोले ढंग से उसने यह प्रश्न किया कि मुझे उस पर तरस धान लगा। पर तत्काल वह भाव खाम में बदल गया। मन ही मन कड़वी घूट का तरह अपनी उत्तेजना का पी जान की चेष्टा करते हुए मैंने कहा— 'तब तुम क्या सचमुच केवल गता के बंधन से अपने को न छुड़ा पान के कारण ही यहाँ टिकी हुई हो? मेरी ममता क्या कोई चीज नहा है? क्या तुम सचमुच मुझसे घणा करती हो और मुझे अपना कार समझती हो तब कि तुमने कल दिन में नींद की हालत में कहा?'

निश्चय ही मर भीतर की बदना मेरे मुख पर छलक आयी होगी। मनिया तत्काल उठ खड़ी हुई और मेरे कपाल पर हाथ फेरनी हुई परम स्नेह भाव से बोली— अगर तुम्हारी ममता मुझे खींच न लायी होती तो एक क्या सौ गतान भी मुझे तब बाँध सकत थे। निश्चय मर मैं गतान की बडी गती और कुल्लि वारन्तानिया का सामना करती आयी हूँ। गतान अपना काम करता चला गया मर मैं अपना। इतलिये सच

जानो, मैं उमसे तनिक भी नहीं घबराती हूँ। मैं तो यो ही ६३  
 बक रही थी। उठो, बाहर के कमरे में चलें। तुमने चाय  
 मगायी या नहीं ?” और वह बच्चों की तरह पुचकारती हुई मेरा हाथ  
 पक़्कर मुझे बाहर ले गयी।

उन दिन भी मैं बाहर न निकल सका। दापहर का खाना खा चुकने  
 के बाद मनिया अलसान लगी, और उसी मुलायम गद्देदार पलंग पर लेट  
 गयी, और लेटने के कुछ दर बाद सो गयी। मैं भी कोई चारा न देख-  
 कर बाहर के कमरे में कौच पर लेटे लटे एक पुस्तक पटना रहा। मुझे  
 एक जल्गी काम से बाहर जाना था। मनिया के नियम में कुछ कपडे खरी  
 दना चाहता था। पर उसे छोडकर जाने का साहस मुझे नहीं हुआ।  
 कहीं जङ्गल की वह चिडिया क्षणिक अवकाश पाते ही फिर उडकर  
 जङ्गल ही में न चली जाय। फिर दूसरी बार उसे बाधा न जा सकेगा,  
 यह निश्चित धारणा मेरे मन में जम चुकी थी। फिर मेरे मन में यह  
 तन उठा—“यदि वह स्वेच्छा से बंधे रहना नहीं चाहेगी तो उसे बल-  
 पूवक बाध कर ही मैं बचा करूँगा ?” पर मेरा अतमन जानता था कि  
 यह अत्र कही जायगी नहीं, भले ही कसी ही आत्मा मेरे मन में क्यों न  
 उठे।

तीसरे दिन जब हम लोग सुबह का नाश्ता कर चुके तब मैं अपने  
 भीतर की मारी कमजारी भाडकर उससे कहा—“मैं कुछ समय के लिये  
 बाजार जाता हूँ। तुम इसी पलंग पर आराम करना।” और मैं सच-  
 मुच बाहर निकल पडा। कपडे की प्राय सभी फशनेबुल दुकाना की खाक  
 छान चुकने के बाद मैं चार साडियाँ चुनकर खरीदी। उनमें एक साडी  
 आममानी रङ्ग की, बनारसी रेसम की—काम की हुई थी,—एक शाति-  
 पुरी, एक ढाका की और एक मद्रासी थी। साथ ही कुछ 'रेडी मेट  
 स्नाउज और 'जपर', पेगीकोट और अडरबियर खरीद। दो जोडे सबसे  
 नय फगन के नेडीज सल और चार जोड मोजे भी खरीद। रुब,  
 पाउडर क्रीम, 'रिपम्टिक', 'हयरपिस', 'रिवन तेल, एसेस, कधी  
 आदि शृङ्गार प्रताधन की प्राय सभी आवश्यक और अनावश्यक चीजें  
 खरीदकर मैं होटल का लौट चला। होटल में अपने कमरे के दरवाजे पर

पहुँचन तक मेरे मन मे यही खटका बना था कि कही मनिया भाग न गयी हो। जब उमने मेरे खटपटाने पर दरवाजा खोला तब मेरे जा म जी आया। उमकी सजल मुस्कान भरी आँखा मे मने देखा कि वह भी उतनी ही—बन्कि गायद अधिक—उत्सुकता से मेरी बाट जोह रही थी।

मने जब छोट वडे सभी बडल उसके हाथो मे दे दिय तब वह कौतू हल से उह दखने लगी। “इनमे क्या है ? उसन पूछा।

मने कहा—‘खोजकर देवा !’

और उसन एक एक करके सभी बडला को धोलना आरम्भ कर दिया। उसके आश्चय की सीमा न रही जब उसने दखा कि साडो, ब्लाउज से लेकर फ्यर पिस और ‘रिचन’ तक की विविध वस्तुएँ उनमे भरी पडी है। पहन तो उसने परिहास के स्वर मे कहा—“आज भी तुम क्या किसी की पूरी दुकान ही खरीद लाये हो ?’ पर यह प्रश्न करते ही तत्काल उमका मुख अत्यन्त गभीर हा आया। वह स्तब्ध, किन्तु प्रश्न भरी, दृष्टि मे मेरी ओर देखती रह गयी।

मेँ उस दृष्टि मे घबरा उठा। बोला—“क्या हुआ ? तुम अचानक इम तरह गम्भीर क्या हो उठी हो ?

उसने फिर भी मेरे प्रश्न का कोई उत्तर नही दिया और गमी निश्चल दृष्टि मे निनिमग्न भरी ओर देखती रही।

‘तुम किस सोच मे पड गया मनिया ? बताती क्या नही ?’

‘मेँ समझ गयी कि तुम ये सब चीजें क्यों लाय हो।’ और वह धीरे-से अपना पाँवा को पीछे की ओर सरकाकर घम से कौच पर बठ गयी।

“क्या समझा तुम ?”

मेरी दुकान की बीजा का बदला चुकान के लिय तुम ये चीजें लाय हो !’

मेँ “हो ! हा ! करके ठठठा मारकर हस पडा।

‘तुम क्या पागन हुई हो मनिया ? मने कहा—“मेँ तुम्हारी तरह पनी झुझवाला भादमी नही हूँ कि इतनी दूर तक की बातें सोच सकूँ।

य चीजें मैं तुम्हारे इस्तेमाल के लिये लाया हूँ। तुम क्या ६५

यह साचती हो कि मेरे साथ रहने पर भी अब तुम यही

निवृत्ती लहंगा और यही भला कुरता पहन रहागी और यही भाइन  
निर पर डाल रहोगी ? अब तुम्हें ममूरी की फंगननुन वेडिया की तरह  
रटना होगा। शाम को हम-नुम नाथ-नाथ हवागारी के नियम निकवेंगे।  
तब तुम्हें दबकर लाग आपस में बानाफूसी करेंगे—'यह दना, नपान  
का महारानी बली आ रही हैं, जार उनके मात्र उनका प्राडवेट मेनटग  
है।' हा हा हा ! अच्छा मजाक रहेगा !'

मनिया भी बरबस हँस पटी। पर तनाल ही मुह फुलाती हुई  
बोली—'तब तुम इस 'अच्छे मजाक' के नियम ही मुझे फंगेनुन पहनावे  
में दबना चाहते हो न ?'

मैंने पहली बार उनकी मार्मिक दृष्टि में एक ऐसे तीखे 'यग का  
आभाम पाया जिसने मुझे यह मुझाया कि वेबन तीन ही दिन के भीतर  
एक मूलगन परिवर्तन उसके स्वभाव में आ गया है। जिस कापन्कि या  
वास्तविक गानान की बात बह हँसी में कह रही थी तब क्या उमी न  
उमके भोले हृदय में तब तरह का दाव पेंच भर दिया है ? क्या यह सम्भव  
है कि 'प्रेम' या उसी में मिलती-जुलती कोई प्रवृत्ति इतनी जल्दी असा  
मार्मिक व्यक्तित्वा को सासारिकता का पाठ पढ़ा सकती है ?

प्रकट में मैंने कहा—'क्या तुम यह विश्वास करती हो कि मैं किसी  
भी क्षण में तुम्हें एक तमांगा बनाना पसंद करूँगा ? तुम तो आज  
वाल का खाल निकालन लगी हो ! चला, उठा ! जरा एक बार पहन  
कर देखो तो मही, तुम्हें यह आममाना रंग की बनारसी सानी कसी  
जँचती है।' और मैं बड़बड़ मस माटी निकालकर उममें उमे लपेटना  
आरम्भ कर दिया।

वह खिल खिल करके हँसन लगी और झपटाती हुई बोली—'हटा,  
मैं नहीं पहनूंगी ! मुझ गरम लगता है !'

'पगली ! गरम किस बात की ? तुम क्या काई चारी कर रही हो  
या डबकी ? शाम को इतनी औरतें फंगन के 'यारे-न्याने' रेंगा में रेंगी हुई  
आती हैं, उनके बीच में शरम के लिये गुञ्जाइग कहीं रह जाती है !'

आज मैं तुम्हें बिना साड़ी-सॉडिल पहनाने और अपने साथ पुमाय मानूंगा नहीं। उठो, मैं एक बार देख लूँ कि तुम्हें साड़ी पत्रती है या नहीं।" कहकर मैंने बलपूर्वक उसे खड़ा किया और उसके सिर से झाड़न हटाने के लिए उसके कुरते और लहंगे के ऊपर ही साड़ी पहनाने लगा। वह बार-बार इस तरह खिलमिलानी और छटपटाती थी जब उसे कोई गुदगुदा रहा हा। अंत में जब मैं किसी तरह उसे साड़ी पहना चुका तब मैंने मन आश्चर्य से देखा कि वह सचमुच रानी की तरह लगने लगी। केवल एक माड़ी किसी के व्यक्तित्व में इस कदर कायापलट करन की समर्थता रखती है इस जानकारी से मैं चकित रह गया। मैं उस एक पूरे आकार वाले गीत के पास ले गया। उसने जब उसमें अपना प्रतिबिम्ब देखा तो अपना बदला हुआ रूप देखकर वह हँसते हँसते नाट-भोट हो गयी। जब हसी का दौरा समाप्त हुआ तो वह सहमा अपभासित गभीर स्वर में बोली— लो रत्ना अपनी साड़ी मैं नहीं पहनूंगा। और सचमुच उसने उसे उतार कर मर आगे पटक दिया। मैंने देखा कि उसके द्वारा वह नया रूप धारण कर लिया है। मैं अपना-ना मुँह लेकर रह गया। स्पष्ट ही मेरे मुख के भाव से मेरी पीड़ा उससे छिपी न रही। अपने स्वर में यथामभव कोमलता भर कर वह बोली— अभी जल्दी क्या है। गाम को एक बार फिर पहन कर लेवूंगी। अभी इसमें भाव रख दो।

मैं बड़ा अधीरता से सत्या का प्रतीक्षा करता रहा। जब समय आया तब मैंने फिर उसमें आग्रह किया। पर उसने फिर अपना पिछला रूप दिखाना आरम्भ कर दिया और उसके द्वारा वह के आगे मरी एक न धनी। मैं हार मान कर, और मुँह लटकाकर एक कुर्सी पर बैठ गया। मेरे मुख का वह भाव देखकर वह भी मेरे पास आकर बैठ गयी और अनुभव के स्वर में बोली— 'मैं तुम्हें पाँवा पडती हूँ मुझ से साड़ी पहनाने के लिए न कहो। और इसके लिए कुछ बुरा भी न मानो।'

स्पष्ट ही वह मेरी पीड़ा को खूब समझ रही थी, पर अपने स्वयं सत्कार को इतनी जल्दी उग करन में वह, चाहत पर भी, गाम का असमय पा रही थी।

मैंने ख्वाई के साथ कहा—“मैंने कुछ बुरा नहीं माना

६७

है। पर तुम्हारा हठ सचमुच बड़ा अनोखा है। यदि तुम मेरे कहन पर एक बार पहन ही लेनी तो इमसे तुम्हारी—इ—तुम्हारा क्या विगडता मेरी समझ में नहीं आता।” मैं कहन जा रहा था—“इमसे तुम्हारी इज्जत म बट्टा न आता।” पर तत्काल मैं यह सोचकर सँभल गया कि इस व्यग की मामिकता वह सहन न कर पावेगी।

“म जानती हूँ मेरा कुछ नहीं विगड सकता, पर साडी पहनते ही न जान मुझे कसा लगने लगता है। जैसे मेरे मां वदन में कचुएँ सुर-सुरा रहें हो।” और वह मुस्करा दी। पर उस मुसकान में अकथनीय करुणा भरी थी।

मैं उस दिन फिर आग्रह नहीं किया पर मेरे मन का भाव बहुत विगड चुका था और चाहत पर भी फिर मैं उससे महज प्रसन्नता से नहीं बाल पाया।

दूमरे दिन भी उसक प्रति मेरा व्यवहार रूखा रूखा सा रहा—हालाकि मैं अपने मुख पर प्रसन्नता और आवाज में मीठापन लाने की बहुत कागिश कर रहा था।

गाम की चाय पी चुकन के बाद जब मैं अनमन भाव से सोफा पर बठ कर एक सवाद पत्र उठाकर पढ रहा था तब वह भीतर चली गयी। जब काफी देर हो चुकी तब मैं या ही भीतर गया। पर मनिया कमरे में नहीं थी। गुमलखाना खुला था। मैं तनिक शकित मन से कुतूहलवश भीतर की आर भाँवा। मेरे आदचय और हृप की सीमा न रही जब मैंने देखा कि वह गुमलखाने के बटे शीशे के सामने वही साडी पहने खडी है जिसे मैंने पिछले दिन उसे पहनाया था, और एकात मन से अपना प्रतिबिम्ब देख रही है। मैं एक बार सोचा कि चुपचाप लौट चलूँ, पर मेरे भीतर की दुष्टता की विजय हुई और मैं धीरे से, दब पाँवा, गुमलखान में पहुँचकर सहसा उसके पीछे खडा हो गया। मुझे देखने ही वह ऐसी चाकी उस किसी महान अपराध में वह पकड ली गयी हा। एक अस्पुट गद मुह में निकाल कर उसन विजली की-मी पुर्ती के अपना मुह साडी के अचल से ढँक लिया। उस समय वह ठीक

ठेठ मारवाड़ प्रदेश की महिलाओं की तरह ला रही थी।  
उस दृश्य से मेरी प्रकृति की इतना दिना तक की दबी हुई

चपलता उभर आयी। मैंने कहा— "सच मानो, तहें व ऊपर तुम्हारा  
यह आना और यह घूषट बहुत जच रहा है। नम चा तो इमा वेप  
म तुम्ह माल पर घुमा लाऊँ।"

'जाओ!' कहकर उमने मुझे एक हलका-सा धक्का दिया और  
उमी घूषट की अवस्था म दौडती हुई भाग निकली। पतंग पर जाकर  
वह लोट पोट हो गयी और मारे हँसी की फुरिया व उमका य् हाल  
या त्रि मुझे लगा तमे घूषट के भीतर उमका दम नी घुट गया।

वह दिन भी या ही—परिहास मे—बीता, और मैं उन नाडा और  
संडल म घूमने चलन के लिये राजी न कर सका। पर मैं देर रहा या  
कि उमके भीतर बडी गहराई म नीव डाले हुए मक्वारा के पापाग दहने  
लग हैं।

अत म जल्दी ही एक दिन ऐमा आया जब मैं उसे नय वप म, पूरे  
साज शृङ्गार के साथ अपने साथ बाहर निकलने के लिये राजी कर  
सका। वह मरे लिये किनन उतमाह और उल्लास का दिन था। यह ठीक  
है कि वह सडला का ठीक सं न चला मक्न के कारण कई दार गिरते  
गिरते बची थी पर उसन सारी बात का एक अच्छे विनोद के रूप मे  
ग्रहण किया था।

३०

एक दिन मैं दोपहर का गाना गा चुकन के  
बाद आराम करने की तयारी कर रहा था। मनिया  
भी भीतर के कमरे म आराम कर रही थी। सहसा  
किसी ने "ठक् ! ठक् ! ठक्" करके बाहर मे दरवाजे का पीगा छट  
खटाया।



"कौन है।" मैं लेंटे नी लेंटे खींक के साथ कहा।

६६

बड़ी गिप्ट और धीमी आवाज में किसी ने कहा—

"नरा बालिय। एक जरूरी काम है।"

मैं उठकर दरवाजा खाला तो देखा कि होटल के मैनजर मिस्टर पट्टाना खड़े हैं। थड्डानी साहब बोलचाल में बहुत सम्य और गिप्ट थे। चश्मा लगाय हुए वह बड़े सवाने गम्भीर स्वभाव के और भले आदमी लगते थे। उनके शिष्ट व्यवहार के कारण ही उनका होटल मुझे बहुत पसन्द आया था। पर आज उह आकस्मिक रूप में, असमय में, स्वयं आकर मेरा दरवाजा खटखटान की नौबत क्या आयी वह कौन-सा ऐसा जरूरी काम था पडा जिसकी सूचना होटल के नोकर द्वारा नहीं दी जा सकता थी, यह सोचकर मेरा मन कुछ गकिन हा उठा।

'रहिये, आपन कस कष्ट किया?' मैं पूछा।

वह बहुत ही धारे, बड़ी ही मीठी आवाज में, अत्यंत शालीनता के साथ गये—"आपने कुछ प्राइवेट बातें करनी हैं। क्या आप मेरे साथ मेरे कमरे में चलन का कष्ट कर सकेंगे?"

मैं कहा—'आप भीतर चले आये। मेरा कमरा एकांत है। आपका जा कुछ कहना हा वही कह लीजिये। आपके कमरे में जाने की क्या आवश्यकता है।'

वह प्रेमपूर्वक मुस्कराय—कुछ रहस्यमय रूप से। बोले—"क्षमा कीजिये। जिस विषय में मैं बातें करना चाहता हूँ, उसकी चर्चा आप के कमरे में नहीं चनायी जा सकती। आप तनिक कष्ट करें—सिर्फ दो मिनट के लिये।

मैं दत्ता कि मरी आंगका निर्मूल नहीं थी। मैं बाहर चला आया, थड्डानी साहब मुझे अपने कमरे में ले गये। भीतर में किवाड फेरकर उहान बड़ी आब भगत के साथ बिठाया। मरी थार सिगरट और दिया-सलाई बढ़ाते हुए वह स्वयं भी बठ गये।

मैं सिगरट जलाने हुए कहा—"आपको क्या कहना है, कहिये?"

'मुझे आपसे केवल एक प्रार्थना करनी है,' बड़ी ही नम्रता से थड्डानी साहब बोले—"बान यह है कि—आप बुरा न मानियेगा—

जिस लडकी को आपने अपन माथ रखा है उसकी वजह से मेरे दूसरे किरायेदार बहुत भडक उठे हैं । ”

मेरे सिर से लेकर पाँव तक जम आग जग गयी । मैं काफी उत्तेजित स्वर में कहा— ‘आपके किरायेदार जायें जहनुम में—मुझे उनसे क्या करना है । मरी ‘प्राइवेट वार्तों में बिना तरह का भी हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार न आपको है न आपके किरायेदारा को, समझे मिस्टर थडानी ।’

मैं शीघ्र से वापस लगा था ।

अरे ! अरे ! आप तो उन्जित हा उठे हैं ! अभी तो आपन पूरी बात सुनी तक नहीं ! मरा मतलब वह नहीं था जा आप समझे हैं ।’

‘तब क्या था आपका मतलब ? बड़े म्चे स्वर में मैं पूछा ।

मैं आपका यह बात लेना चाहता हूँ कि जिस लडकी को आपने अपने माथ रखा है वह तमाम मसूरी में वदनाम है ।

वदनाम है ? दाता को प्राय पीसते हुए मैं कहा ।

जी हाँ ! माफ कीजियेगा अभी आपका उसकी पूरी हिस्से मालूम नहीं है । उसकी मा भी एक बदचलन औरत थी । यहाँ तक कि अपने एक प्रेमी की खातिर उसने अपने हसबन्ध तक का खून बर डाला ।”

मैं स्तब्ध था । तब क्या मनिया न मुझमें हत्या का जो कारण बताया था वह एकदम झूठा था ? असली वान उसने जानबूझकर मुझसे छिपाई होगी ! पर जब उसने मेरे बिना पूछे ही इतना बता दिया कि उसकी मा ने उसके बच्चा की हत्या की थी तब इतनी बात ही वह क्यों छिपाती ? निश्चय ही उसे अपनी मा के अभिचार का कोई हाल मालूम नहा था नहीं तो वह अवश्य ही बिना किसी दुराव के सब-बुद्ध बता देती । यह हो सकता है कि उसकी मा का कोई गुप्त प्रेमी रहा हो जिसके थारे में स्वयं मनिया भी बुद्ध नहीं जानती ।

मैंने पूछा— आपको कैसे मालूम है कि उसकी मा का कोई प्रेमी था ?

“हूँ ! हूँ ! हूँ !”—एक विचित्र ढंग से मुझ-राते हुए थडानी साहब बोले—मुझे मसूरी में प्राय तीस साल गुजर चुके हैं । मैं यहाँ के एक

एक वाशिदे का हाल राई रता जानता हूँ । १५४४

७१

मेहू के क दाने हैं, इसकी खबर मुझे रहती है । उसका वह प्रेमी मेरा मित्र था । उसका नाम ध्यानसिंह है, वह अभी जिंदा है ।”

मेरा कपेजा धक से रह गया । तब क्या सचमुच मैं एक ऐसी लडकी से घनिष्टता बढ़ायी है जिसकी मा हत्यारी होने के अतिरिक्त व्यभिचारिणी भी थी ? तब क्या वास्तव में उमन अपने प्रेमी के कारण अपने पति की हत्या की ? सोच सोचकर मेरा माथा खराब हान लगा । अपनी स्त्री और क्रोध मुझे किसी न किसी पर उतारना था । मैं मनजर पर ही बरस पड़ा था । वही मुझे अपना नवसे बड़ा शत्रु जान पड़ा, क्योंकि उसी ने मेरे आगे वह अप्रिय सत्य—यदि वह वास्तव में सत्य था तो—उद्घाटित किया था ।

मैंने गरजकर कहा— 'दक्षिण मिस्टर थड्डानी, उसकी मा चाहे कसी ही थयो न रही हो, उम लेकर लडकी पर छीट बसने का कोई हक आपका नहीं है । लडकी के सम्बन्ध में जिस तरह की बात आपन कही है उसे मैं व्यक्तिगत अपमान समझता हूँ । मैं हर महीने नियमित रूप से आपके बिल चुका दिया करता हूँ । आपका केवल इतने ही से मत्सलव रखना चाहिये । इसके सिवा किसी भी दूसरे विषय पर मुझसे कुछ कहने की गुस्ताखी आपको नहीं करनी चाहिये । समझे ? '

“जी, मैं समझ गया हूँ” तब भी विचलित न होकर थड्डानी साहब वाले—“पर आपका इन बात का यान रखना चाहिये कि केवल आप ही मेरे किरायेदार नहीं हैं । एक किरायेदार के लिये मैं अपने बाकी सभी किरायेदारों को नाराज नहीं कर सकता । मैं एक विजनसमन' हूँ । इस होटल की बदौलत, ही दा रोटियाँ कमाकर मैं अपना और अपन घरवाला का पेट पालता हूँ । अगर मेरा होटल बदनाम हो जाय, किरायेदार होटल छोड़कर चल दें, और दूसरे किरायेदार हाटल की बदनामी सुनकर यहाँ आना बंद कर दें, तो मेरा क्या हाल होगा, क्या इन बात पर आपने कभी सोचा है ?”

“किसी किरायेदार ने आपसे कुछ कहा है ?”

“आपके भगल-बगल वाले कमरा में रहनेवाले किरायेदारों की यह

निवायत है कि आप दिन रात एक आचारा लडकी को (जुन लागो न ता वेइया कहा है) अपन कमरे म बंद रखते है, और समय असमय उमस हूंमी मजाक की बातें करते रहते हैं, निसस उनगी गानि म बाधा पहुँचती है ।'

मैं भन्ना उठा—' आप और आपके किरायदार बड़े कमीन हैं । एस नीच यक्तिया न साथ रहना पाप ह । अब आप रहन को भी कहें तो मैं नहीं रहगा । आज आप अपना बिल भेज दें । मैं आज ही चला जाऊँगा । और मैं तमब कर उठ खड़ा हुआ ।

नहीं गही मैं तो आपके समान खर स्वभाव का किरायदार पावर अपन ना धर मानता हूँ । आप बड़े गौक से रह । पर उस लडकी के सम्बन्ध म चूकि मुझे बहुत-सी बातें नित्य सुनने को मिलती हैं, इसलिय मैं आपका आगाही द दी । दमक अलावा मर भी दा जवान लडकियाँ हैं बिापर इन तरह की आचारा लडकी का बुरा प्रभाव पड सकने की संभावना है । चाहे कितना ही युग क्या न मानें, मैं साफ लपजों म आपन कहूँगा कि आपने एन बदवार और घूत लडकी का अपने साथ रखा है जो किसी भी दिन आपके साथ विश्वासघात कर सकती है ।'

गट अप ! मने अत्यन्त उत्तेजित स्वर म कहा— अगर धर तुमने जवान हिलायी ता उस खीच लूँगा ।' और मैं दरवाजे की तरफ मुड गया । दरवाजे का हैंडल पूरी ताकत स पकडकर मैंने उसे खाला और बाहर निकल गया । एक अत्यन्त विरस अनुभूति मे मरी सारी आत्मा तित्त हा उठी थी ।

अपने कमरे म जाकर मैंने जानना चाहा कि मनिया जग गयी है या नहीं । मैं भीधे भीतर चला गया । वह अभी सोयी थी । एक सोम्प शान और करण भाव उसके निद्रित मुख पर छाया हुआ था । उसे देखते ही पल म मरे मन की सारी तित्तता विलीन हो गयी । मैं सोचन लगा कि यदि मैं कोई चित्रकार होता और उसके मुख पर जो भोलापन उस समय विभासित हा रहा था उम रेखाया और रगो म अंक पाता तो दुनिया का दिखावर पूछना—' ए दुनियावालो ! सच बताओ, क्या ऐसा भाव कभी किसी बदवार और घूत लडकी के मुख पर खिल

सकना है ?" मुझे मनेजर की नीचता पर रह रहकर शोध  
आ रहा था। मैंने निश्चय किया कि जितनी जल्दी हो  
सकेगा उस होटल को छोड़ दूँगा।

७३

जब मनिया साकर उठी तब मैं उसे रचमान  
सकेत भी नहीं दिया कि मनेजर ने मरी किम तरह  
की बातें हूँ। वकि मैं स्वयं भी उन बातों को  
मूल जान का प्रबल प्रयत्न करने लगा। मनेजर की बातों से मेरे मन में  
जितना बुद्ध भी खटका पदा हुआ था उसके प्रायश्चित्त की भावना भी  
मनेजर जार मारत लगी और मन निश्चय किया कि जल्दी से जल्दी  
मैं उसमें विवाह कर लूँगा।

मध्याह्न मैं उसे घुमान ले गया। मुझे लगा कि धीरे धीरे मनिया  
नय पहनाव की आदी होती चली जा रही है और गाम को टहलना  
उम अच्छा लगन लगा है। वाटकर कपड़े बदलकर, खाना खाकर जब  
हम दाना इधर-उधर की बात अगत हुए भोजन पचा रह था तब मैंने  
सहमा विवाह की चर्चा छोड़ दी। मैं स्पष्ट गद्दा में कहा—“मनिया,  
अब हम दोनों का विवाह जल्दी ही हो जाना चाहिये।

‘कब?’ सहज भाव में अतमाय हुए स्वर में उसने कहा।

‘जब तुम कहो।’

‘मैं तो चाहती हूँ कि कल ही हा जाय।’

“पर इसने पहले हमें यह तय कर लेना चाहिये कि किम विधि में,  
किम प्रथा के अनुसार विवाह करना ठीक रहेगा।’

“विधि और प्रथा में कुछ नहीं समझती। पर हिन्दू लोग जिस तरह  
से विवाह करते हैं उस तरह से मैं पसन्द नहीं करूँगी।’

“क्यों?’ अत्यन्त आश्चर्य से मैं पूछा।

“मैं बौद्ध हूँ। मैं चाहुंगी कि कोई बौद्ध पुरोहित

७४

घाबर हम लोग के ब्याह म मत्र पढे।”

‘तुम बौद्ध हा ? यह कैसे ?’

“कस क्या ? मेरा बाप बौद्ध था बनीलिये मैं भी बौद्ध हूँ।

“पर तुम्हारी माँ तो हिंदू थी ?

उससे क्या हुआ। मैं अपन बाप का ही धर्म मानती हूँ।

पर तुम्हारी माँ से तुम्हारे बाप का ब्याह तो नहीं हुआ।’

‘यह तुमस किसने कहा ?’

‘तुम्हारे न तो कहा था कि यह बिधवा थी और भागकर तुम्हारे बाप के साथ चली गयी थी।’

“तो इनम क्या हुआ ? मेरा बच्चा धर्म के मामने म बडा बट्टर था। उसने निम्बत जाकर एक लामा को बुलाया। उसने मत्र पत्रर दाना का ब्याह किया था। मेरी माँ न ही मुझे यह बतया था। मरा बच्चा नित्य हाथ म माला लेकर मनि पम हूँ—मनि पम हूँ। जपा करता था। मरा नाम मनिया उमन इमी मत्र के पहल गद की ब्याद पर रखा था।

“अच्छा यह बात थी। पर तुमने मुझे बडी बठिनाई म गल दिया।’

“कसे ?

“मैं बौद्ध पुरोहित कहाँ स लाऊँ ? इनके बलावा तब मुझे भी बौद्ध बनना पडेगा।’

‘तो हज क्या है ?’ अत्यंत सरल भाव से मनिया ने कहा।

“हज कुछ नहीं है। पर क्यों हम लोग इन धार्मिक पचडो म पडें ? क्या एक भीसे तरीके से गदो न कर लें ?’

“वह कौन तरीका है ?”

सिबिलमरिज। ब्याह का यह तरीका बट्टर आसान है। तुम भी यह मान लो कि तुम कोई धर्म नहीं मानती हा और मैं भी। बस, ब्याह की रजिस्ट्री करा लें। उसके बाद अपन मित्रों को दावत देकर खुशी मनावें।’

एकदम पीका पड़ गया। अत्यन्त दुःखित भाव से वह बोली—“यह तुम कसी बात कर रहे हो? क्या जागजो लिखा-पढी से कभी व्याह हो सकता है! इतने पटे निबे और ममभदार होने पर भी तुम इस तरह की बातें कर रहे हो!”

उत्तर में मैं कुछ नहा बोला और हताश भाव से बीच पर लेटकर एक मिगरेट जलाकर पीन गया। विवाह के लिये जा उल्लाह मरे प्राय-श्चित्त की भावना से विकल, भावुक हृदय में जार मार्गन गया था वह एकदम ठंडा पड़ गया।

दूसरे दिन सुबह होते ही मैं मकान की तलाश में निकल पड़ा। बहुत खोजने पर भी वही खाली मकान का पता न लगा सका। अतः मैं एक भूते आदमी ने बताया कि अमुक नाम में एक स्थानीय साप्ताहिक-पत्र अंगरेजी में निकलना है, उसमें खाली मकानों का विज्ञापन छप रहे हैं। मैंने वह पत्र खरीदा। ‘दु लेट वाले सभी विज्ञापनों को पढ़ चुकने के बाद केवल तीन मकान अपनी सुविधा की दृष्टि में मुझे जेंचे। होटल वापस जाकर मैंने खाना खाया, और आधा घंटा आराम किया। उसके बाद मनिया का माथ लेकर मकान देखने निकल पड़ा। तीनों मकान देखने के बाद मनिया को जा बंगला पसंद आया वह शहर के केंद्र में दूर, एतान स्थान में—बालोगन्ग के पास—था। बंगला काफी अच्छा था, और कमरे भी उसमें काफी थे। मुझे भी उसकी एकांत स्थिति पसंद ही आयी।

वस जगह एकदम एकांत भी नहीं थी, हमारे बंगले के पास ही एक दूसरा बंगला था, जिसमें एक एंग्लो-इंडियन महिला रहती थी। उन्हें जब मालूम हुआ कि खाली बंगले में कोई किरायेदार आये हैं तब वह पड़ोसी का धम निभाने के नाते हम लोग के पास चली आयी। वह अथेड थी और आँखा में चश्मा लगाय हुए थी। सिर के बाल आधे पक गये थे। उन्होंने मुझसे पूछा कि ‘बंगला कसा पसंद आया। मैंने कहा कि ‘बंगला बहुत अच्छा है, पर एक ही सराबी यह है कि शहर से दूर है।’

काम चलाती रही है। इसके अलावा और कोई भी विनोप  
व्यजन पकाना वह नहीं जानती।

फलत में पाकशास्त्र की एक अंगरजी पुस्तक के सहार में स्वयं  
भोजन बनाने में सहायता देने का नियम बना लिया। रोटियाँ नौकर बना  
लेता था, पर विशेष व्यजन हम दा जन मिलकर बनाते थे। भला ही  
मिमेज रातिसन का कि वह बचारी हमारे यहाँ आकर कभी तो विनोप  
व्यजना के नुस्खे बता जाती थी और कभी स्वयं नमून के तौर पर अपने  
हाथ से पकाकर खिला जाती थी। कोई अंगरेज महिला अपने हाथ से  
खाना बनाने का तयार हो सकती है, यह कल्पना स्पष्ट ही मनिया न  
नहीं की थी। वह आश्चर्य और सभ्रम के साथ मिमेज रातिसन की  
पाककला देखती रहती थी।

एक दिन जब हम दाना खाना खा रहे थे तब मनिया न मुझमें  
पूछा— क्या मिमेज रातिसन अपने घर पर भी अपने ही हाथ से खाना  
बनाती है

‘जहर बनाती होगी। क्यों?’

‘मम हाकर भी वह ऐसा करती है? क्या कोई नौकर उसके यहाँ  
नहीं है?’

मैं हसी न रोक सका मैंने कहा— मेम हान से क्या हुआ? क्या  
तुम यह समझती हो कि उसके पेट की और हमारे पेट की बनावट में भी  
कोई अंतर है? श्रव उस भी लगनी है और हमे भी। अच्छा खाना खाने  
की गौकीन वह भी है और हम भी। तब जब हम अपने हाथ से खाना  
पसंद करते हैं वह क्या नही बना सकती? उसमें और हम में सिफ इतना  
ही ता अंतर है कि उमका चमड़ा अधिक गोरा है और वह अंगरजी  
बोलती है, जबकि हमारा चमड़ा कम गोरा है और हम हिन्दी  
बोलते हैं।

‘बस, सिफ इतना ही अंतर है? मनिया न प्रश्न किया। उसे मेरी  
बात पर जैसे विद्वाम ही नहीं होना चाहता था।

मैंने कहा—‘नही ता और क्या!’

‘पर उ हैं देखते हो मुझे डर क्या मानूँ हान लगता है? सिन्विया



का देवत ही मैं इस कदर क्यों सजुचा जाती हूँ? उसकी बड़ी

७६

बहन जूलिया को देखते ही मेरा कलेजा क्या घडकने लगता

है? मुझे लगता है कि वे लाग हमस बहुत ऊँचे पर हैं। तभी ता वे हम हिन्दुस्तानियो पर राज करते हैं।”

“वे बडे नहीं हैं,” मनिया के वचकान प्रश्न का उत्तर कुछ गभीरता के साथ देते हुए मैं कहा—“यह ठीक है कि हम हिन्दुस्तानिया न अपन बाया और विचारा से अपने को छाटा बना रखा था, पर अब समय न पलटा चाया है। अब हम लोग समझन लग हैं कि अपन का उनगे नीचा समझना हमारी कितनी बड़ी भूचना थी। और यह समझन का फल यह हुआ है कि अंगरेजा के मन मे यह विश्वास जम गया है कि वे अब अधिक हम दग न नहीं रह सवत।”

“उनके चले जान पर कौन राज करेगा?” चम्मच स चावल मुह न डालत हुए मनिया ने पूछा। वह अभी तक काटे का प्रयाग ठीक से नहीं सीख पायी थी, पर चम्मच स चावल घाना सीख गयी थी।

“तब हमार नेता लाग राज करेग।

‘तब साट साहब कौन हाग’

“हमारे नेता।”

“ता क्या हमारे नेता लाग अंगरेजो का दखकर विलकुल नहीं घरान?”

‘विलकुल ही नहीं घवराते होंग ऐसा तो मैं नहीं समझता। क्योंकि अब भी जब ठाग्रेसियो के बीच न काइ अंगरेज चला जाता है तो उसी की आवभगत वे लोग सबसे ज्यादा करते हैं। और जब वे लाग विलायत जाते हैं ता विलायती पोशाक पहन बिना उन्हें घनी नहा मिलता—व अभी तक यह मोचते है कि विलायत न हिन्दुस्तानी पोशाक न उन्हें दखकर वर्ण के लाग गँवार समझेग। अंगरेजी खूब अच्छी बोल और लिख सवना व अपनी सारी विद्या और बुद्धि का चरम फल मानते हैं।”

‘तब तुमन क्यों कहा कि अंगरेज लोग हिन्दुस्तानिया न बडे नहीं हैं?’

“पर सभी नेता तो ऐस नहा हैं। महात्मा गांधी जय विनायन गय

काम चलाती रही है। इसके अलावा और कोई भी विशेष व्यंजन पकाना वह नहीं जानती।

फलत मैन पाकशास्त्र की एक अँगरेजी पुस्तक के सहार में स्वयं भोजन बनाने में सहायता देने का नियम बना लिया। रोटियाँ नौकर बना लेता था, पर विशेष व्यंजन, हम दो जने मिलकर बनाते थे। भला हो मिसज रालिंसन का कि वह बेचारी हमारे यहाँ आकर कभी तो विशेष व्यंजनों के नुस्खे बता जाती थी और कभी स्वयं नमून के तौर पर अपने हाथ से पकाकर खिना जाती थी। काई अँगरेज महिला अपने हाथ से खाना बनाने का तयार हो सकती है यह कल्पना स्पष्ट ही मनिया ने नहीं की थी। वह आश्चर्य और सभ्रम के साथ मिसज रालिंसन की पाककला देखती रहती थी।

एक दिन जब हम दोनों खाना खा रहे थे तब मनिया ने मुझसे पूछा—'क्या मिसज रालिंसन अपने घर पर भी अपने ही हाथ से खाना बनाती है ?'

'जरूर बनाती होगी। क्यों ?'

'मम होकर भी वह ऐसा करती है ? क्या कोई नौकर उसके यहाँ नहीं है ?'

मैं हसी न राक सका मैन कहा— मम होने से क्या हुआ ? क्या तुम यह समझती हो कि उसके पेट की और हमारे पेट की अनावट में भाव कोई अंतर है ? भूख उस भी लगनी है और हम भी। अच्छा खाना खाने की शौकीन वह भी है और हम भी। तब जब हम अपने हाथ से बनाया पसंद करते हैं वह क्यों नहीं बना सकती ? उसमें और हम में सिर्फ इतना ही ता अंतर है कि उसका चमड़ा अधिक गारा है और वह अँगरेजी बोलती है जबकि हमारा चमड़ा कम गारा है और हम हिंदी बोलते हैं।

वस सिर्फ इतना ही अंतर है ? मनिया ने प्रश्न किया। उसे मेरी बात पर जैसे विश्वास ही नहीं होना चाहता था।

मैंने कहा— 'नहीं ता और क्या !'

'पर उ हैं देखते ही मुझे डर क्या मालूम होना लगता है ? सिचिया

का देवत ही में इस कदर क्यों सजुचा जाती हैं? उसकी बड़ी बहन जूलिया को देखते ही मेरा कलेजा क्यों घटवने लगता है? मुझे लगता है कि वे लोग हमन ग्रहुत ऊँचे पर हैं। तभी ता वे हम हिन्दुस्तानियो पर राज करते हैं।”

७३

“वे बडे नहीं हैं,” मनिया क वचनान प्रश्न का उत्तर कुछ गभीरता के साथ देत हुए मैं कहा— ‘यह ठाक है नि हम हिन्दुस्तानिया ने अपन कार्यों और विचारा से अपन का छाटा बना रखा था, पर अत्र समय न पनटा चाया है। अब हम लाग नमन्न लगे हैं कि अपन का उनमे नीचा समझना हमारी कितनी बड़ी मृवना थी। और यह समन्न का फन यह हुआ ह नि अंगरेजा के मन म यह विश्वास जम गया है नि व अब अधिक इस दग म नहीं रह सवते।

“उनक चले जान पर कौन राज करगा?” चम्मच स चावल मुह म डालत हुए मनिया न पूछा। वह अभा तन काटे का प्रयाग ठीक से उहीं सीख पायी थी, पर चम्मच स चावल खाना सीख गयी थी।

‘तव हमारे नता लाग राज करें।’

‘तव लाट साहब कौन हाग।’

‘हमारे नता।’

‘ता क्या हमार नता लाग अंगरेजो का दखकर विलकुल नहीं घवरात।’

‘विलकुल ही नहीं घवराते हाग एमा ता मैं नहीं समझना। क्यकि अब नी जब काश्मियो के बीच म कादे अंगरेज चला जाता ह ता उसी की आवभगत वे लाग सबसे ज्यादा करते हैं। और जब व लाग विलायत जाते हैं ता विलायती पोशाक पहन बिना उन्हें धनी नहीं मिनता—व अभी तत्र यह सोचते हैं कि विलायत मे हिन्दुस्तानी पोशाक म उन्हें दखकर वहाँ के लाग गंधार ममभेंगे। अंगरेजी खूब अच्छी बाल और लिख सफना व अपनी सारी दिद्या और बुद्धि का चरम फल मानत हैं।”

‘तत्र तुमन क्या कहा कि अंगरेज लोग हिन्दुस्तानिया म बडे नहीं हैं?’

‘पर अभी नता ता ऐसे नहा ह। महात्मा गांधी जत्र विनायन गय

ये तब भी लँगोट पहन रहते थे । उनके पास सिर्फ अँगरेज ही नहीं बल्कि दुनिया भर के नामी गोरे आते रहते थे ।

पर वह उनसे उसी तरह पैस आते थे जिन तरह एक साधारण हिंदु स्तानी से । और वे नामी गारे उनक दशा से अपने को कृताथ समझकर चापस जाते थे ।”

अच्छा अंगरजी पाशाक पहनन म तुम कोई दोष मानते हा ?

यह हमारी गुलामी की गिानी ह ।’

“तब तुम क्यों अंगरजी पाशाक पहनकर बाहर निकलते हो ?

इतनी देर तब मुझे याद ही नहीं था कि मैं स्वयं अंगरेजी पाशाक पहनन का आदी हूँ—अपनी तान्त्रिकता म मैं इस कदर डूब गया था ।

पर मैं लज्जित नहीं हुआ और बाला— मैं बस बहा कि मुझे गुलामी छूट गयी है । मैं भी तो उही हिन्दुस्तानियो म से हूँ जिनकी गुलामी आजादी की प्रतिज्ञा के बाद भा अभी तक छूट नहीं पायी ।

मनिया मरी इस स्वीकृति का एक अच्छा मजाक समझकर तिल खिलाकर हँस पडी ।

कुछ ही देर बाद अपेक्षाकृत गभीर भाव म बानी— कुछ भी हो, तुम्हारी यह सिल्विया बडी प्यारी लडकी ह । जूलिया के लाल-लाल बाल, लवा सा मुह और बीच म उभरी हुई नाक देखकर तो सचमुच डर लगता है, पर सिल्विया को देखकर गने लगाकर, जी भरकर प्यार वर लन की इच्छा हाती है । क्या हाती है या नहा ?

मैं एकांत दृष्टि से उसकी आर दखन लगा—कहीं वह व्यग म या शरारत से ऐसा नहीं कह रही है । बहन गौर से देखते रहन पर भी मुझे उसके मुख के भाव म व्यग या शरारत का लेश भी नहीं दिखायी दिया । सहज भोलापन अपन विगुडतम रूप म उसकी आखा म छलक रहा था ।

उसके उस भीचे प्रश्न को टालते हुए मैं बहा— उसमे कौन-सा ऐसा विशेष गुण तुमन पाया है जिससे तुम उस पर इस कदर लट्टू हो गयी हो ?

“उसमे मुझे सभी गुण ही गुण दीपते हैं । एक तो वह दखन म बहुत सुंदर लगती है । उसकी आँखें नाली और कजी नहीं, हमी लागो

की तरह सफेद और काली हैं। उसके सिर के बाल भी ८१

आमरी ही तरह काले हैं—लाल, भूरे या सुनहर नही।

उमके चेहरे का रंग भी बहुत चटकता हुआ गारा नही है। वह बहुत कम बोलती है, और जितना कुछ भी बोलती है, बहुत ही धीमी और मोठी आवाज में, और उसका मुस्कराना कितना अच्छा लगता है। वह जूनिया की तरह ढीठ और बहमा नही है। तुमने क्या नही किया कि तुम्हारे सामने वह किस कदर लगाने लगती है? और जब तुम नही होते तब वह मुझसे कस प्रेम से बातें करती है, जैसे मैं उमकी कोई सहली होऊँ। हिंदी भी बहुत अच्छी बोलती है—अपनी मा की तरह 'टुम टुम' नही करती। सचमुच बड़ी ही प्यारी लडकी है यह मिल्विया।"

उमकी आँखें पुलकाच्छ्वाम से सजल हा आयीं। मैं उमकी उम डनी हुई भावुरता के प्रति अपनी समवेदना प्रकट करने के इरादे से कहा—“हा, तुम ठीक कहती हो। सचमुच वह बहुत अच्छी लडकी है।”

कुछ देर तक वह खाना बंद करके उसी रोमांचित भाव से शून्य दृष्टि से मेरी आर देखती रही। फिर, जब अपने-ही आप में, खाली—‘कभी-कभी मर मन में यह इच्छा उठने लगती है कि मैं उसी के यहाँ नौकर हो जाऊँ और चौबीसा घंटे उसी की सेवा करती रहूँ। ऐसी इच्छा कभी मेरे मन में उठती है, मैं नही जानती क्योंकि मैं तुम्हें भी एक मिनट के लिये नही छोड़ना चाहती—छाड़ ही नही सकती यह मैं तुमसे सच कह रही हूँ।

“यह मैं जानता हूँ मनिया, कि तुम अब मुझे छोड़ नही सकती।” मैंने उसकी भावमग्नता दूर करने के उद्देश्य से कुछ उँची आवाज में कहा।

“तब क्या मरे मन में इस तरह की बेवकूफी जगती है?” प्रायः अद्वैतभावस्था में मनिया खाली।

“किस तरह की बेवकूफी?”

“यही—चौबीसा घंटे मिल्विया की नौकरी करने की इच्छा?”

“वह कुछ नहीं, वह तुम्हारा मोह है। वह जल्दी ही हट जायगा।

थ तब भा लँगोट पहन रहन थे । उनके पास सिफ अँगरेज ही नहीं बल्कि दुनिया भर के नामी गोर आत रहत थे । पर वह उनस उसी तरह पदा आते व जिस तरह एक साधारण हिन्दु स्नानी से । और व नामी गोरे उनक दगावे से अपने का वृत्ताथ समझकर वापस जाते व ।'

अच्छा अँगरेजी पागाव पहनन म तुम कोई दोष मानते हा ?'

'यह हमारी गुलामी का चिह्नाना ह ।

तब तुम क्या अँगरेजी पागाव पहनकर बाहर निकलत हो ?

तनी देर तक मुझे याद नी नही था कि मैं स्वय अँगरेजी पागाव पहनन का आदा हूँ—अपनी ताजिबता म मैं उस कएर डूब गया था ।

पर मैं नजिबत नही हुआ थीर बागा—'मैंन कब कहा कि मुममे गुलामी हूँ गयी है ? म भी तो उही हिन्दुस्तानियो म से हू, सिन्धी गुलामी आजादी की प्रतिज्ञा क बाद नी अभी तक छूट नही पायी ।'

मनिया मरी इस स्वीकृति का एक श्रद्धा मजाक समझकर गिन विनाकर हँस पडा ।

कुछ ही देर बाद अपेशाकृत गनीर नाव म बोली—'कुछ भी हो, तुम्हारी यह सिन्धिया बडी प्यारा लडकी है । जूलिया के लाल-नाल बाल लबा सा मुह और बीच म उभरी हुह नाव दखकर ता सचमुच डर लगता है पर सिन्धिया का दखकर गल लगाकर जी भरकर प्यार कर लन की दच्छा होनी है । क्या होती है या नही ?'

म एकात दष्टि से उसकी ओर दखन लगा—'कहा वह व्यग म पा गरारत स एसा नही कह रही है ? बहुत गौर से दखने रहन पर भी मुझ उसक मुख के भाव म व्यग या शरारत का लेश भी नही टिपायी गिया । सहज भोलापन अपन विशुद्धनम रूप म उसकी आँखो म छनक रहा था ।

उसक उस सीधे प्रश्न का टालने हुए मैंन कहा—'उसम कौन-सा एसा विगप गुण तुमन पाया है, जिसस तुम उस पर इस कएर लट्टू हो गयी हो ?

'उसम मुझे सभी गुण ही गुण नीलत हे । एक ता वह दखने म बहुत सुंदर लगती है । उसकी आँखें नीली और कजी नही, हमी सागा

की तरह सफेद और काली हैं। उसके सिर के बाल भी हमारी ही तरह काले हैं—लाल, भूरे या सुनहरे नहीं।

८१

उसके चेहरे का रंग भी बहुत चटखता हुआ गारा नहीं है। वह बहुत कम बोलती है, और जितना कुछ भी बोलती है, बहुत ही धीमी और मीठी आवाज में, और उसका मुस्कराना कितना अच्छा लगता है। वह जूलिया की तरह ढीठ और बेहया नहा है। तुमने क्या नहीं किया कि तुम्हारे सामने वह किस कदर लजान लगती है? और जब तुम नहीं होते तब वह मुझसे कैसे प्रेम से बातें करती है, जस मैं उसकी कोई सहली हाऊँ। हिंदी भी बहुत अच्छी बोलती है—अपनी मा की तरह 'टुम टुम' नहीं करती। सचमुच बड़ी ही प्यारी लडकी है यह सिल्विया।"

उसकी आँखें पुलकाच्छन्नाम से सजल हो आयीं। मैं उसकी उम डनी हुई भावुकता के प्रति अपनी समवेदना प्रकट करने के आद से कहा—'हा, तुम ठीक कहती हो। सचमुच वह बहुत अच्छी लडकी है।"

कुछ देर तक वह खाना बद करके उसी रोमांचित भाव में दृष्टि से मेरी ओर देखती रही। फिर, जैसे अपने ही आप से, बोली—'कभी-कभी मेरे मन में यह इच्छा उठने लगती है कि मैं उसी के यहाँ नौकर हो जाऊँ और चौबीसा घंट उसी की सेवा करती रहूँ। ऐसी इच्छा क्या मेरे मन में उठती है, मैं नहीं जानती क्योंकि मैं तुम्हें भी एक मिनट के लिये नहीं छोड़ना चाहती—छोड़ ही नहा सकती, यह मैं तुमसे सच कह रही हूँ।"

"यह मैं जानता हूँ मनिया, कि तुम अब मुझे छोड़ नहीं सकती। मैं उसकी भावमग्नता दूर करने के उद्देश्य में कुछ उंची आवाज में कहा।

'तब क्यों मेरे मन में इस तरह की धक्कणी जगती है?' प्रायः अद्वेषतनावस्था में मनिया बोली।

"किस तरह की धक्कणी?"

"यही—चौबीसो घंट सिल्विया की नौकरी करने की इच्छा?"

"वह कुछ नहीं, वह तुम्हारा मोह है। वह जल्दी ही हट जायगा।

शायद यह उभी गुलामी की गैप निशानी है, जिसके जादू स इतन वर्षों तक हिन्दुस्तानिया ने अँगरेजों की अधीनता चुगी-खुगी म्बोहार की है। और यह भी सम्भव है कि इस जादू में गौर चमड़े और विदगी वाली का भी बहुत कुछ हाथ है।

जाओ, तुमको सभी वाता में हसी की सूझनी है।' पूरे होग में आकर और गायद अपनी 'बबकूफी पर मुस्करा कर मनिया बोली।

"नहीं, मैं हसी नहीं करता मन कहा पर मैं तुमसे यह कहना चाहता हूँ कि तुम्हारा वह मोह आसानी से दूर हो सकता है। तुम मित्रिया की नौकरी करने की बात इसलिए सोचती हो कि तुम उसे सब समय अपने पास देखना चाहती हो। एक उपाय हो सकता है जिससे सब समय ता नहा पर तिन में कम से कम दो-तीन घंटा वह तुम्हारे पास रहे सकता है।

वह किस तरह ?

'तुमने बताया कि तुम्हारे मन में उमकी नौकरी करने की इच्छा या बबकूफी उत्पन्न हुई है। पर अगर उठ वह तुम्हारी नौकरी करने को राजी हो जाय तब तुम्हारी इच्छा पूरी होगी या नहीं ?

"यह देखा तुम फिर हँसी करने लग। अपनी प्लेट को सामने से हटाती हुई वह बोली।

मैंने कहा— मैं सच कहना हूँ मनिया। अब तुम भगवान की कृपा से इस स्थिति में हो कि मित्रिया का आसानी से अपने यहाँ नौकर रख सकती हो—अगर तुम चाहो तो। तुम अभी तक अपने को एक अनाथ, खानाबदाग लम्बी समझन की आदी हो। इस विचार को अपने मन से जड़ से उखाड़कर फेंक दो। मैंने एक दिन तुमसे खेल में कहा था कि तुम्हें लोग भूटागी रानी समझन लगेंगे। अब तुम सचमुच अपने को रानी समझा करो।

वह विनम्रता उठी। हसते हँसते बोली— मैं अपने का रानी समझू ! मैं—रानी ! हि हि हि ! मित्रिया मेरी सेवा करेगी हि हि हि हि !

मुझ पर भी उसकी उस रोके न रुकन वाली हँसी का छुनहा प्रभाव



पडे बिना न रहा । मैं भी बरबस हँस दिया । इस प्रकार जो बात मनिया के मन की बहान गहुराई से भावाद्देग के रूप में बाहर निकली थी उस स्वयं उमी ने हँसी में टाल दिया ।  
पर मैं हँसी में न टाल सका ।

१३

उम दिन मैंने उम बात की कोई चर्चा फिर नहीं चनाया । पर तब से मैं अपने अवसर की प्रतीक्षा में रहने लगा । एक दिन जब मैं गपशप के इरादे से मिमरा रात्रिसन के यहाँ गया तब बात ही बात में उन्होंने बताया कि उनकी दाना लडकियाँ 'मार्कोटग' के लिए शहर गयी हैं । मिसेज रालि 'मन बड़े ही सीधे और सहृदय स्वभाव की महिला थी । अपने घर का रात्रि गती हाल मुझे बचान में उनके मन को उसे बड़ी तसल्ली मिलती थी । उम दिन एकांत पाकर उन्होंने मुझमें छपनी गरीबी का रोना आरम्भ कर दिया । बाला—'मिस्टर रालि'मन मुझे बड़े सबट में छोड़ गये हैं । जितना रुपया बचा था वह सब इस निगोड़े 'काटेज' में लग गया । 'काटेज' न बनवाती तो क्या करती, आखिर रहने को एक जगह चाण्डिय या नहीं ? मिगय पर रहना पड़ता । कम में कम उनमें पैसे तो मैंने बचा ही लिये । पर खान पीने और कपड़े लतों के लिये भी तो कुछ चाहिये ! इतने वर्षों तक मैं त्रिहायत कजूसी से रहकर किसी तरह काम चलानी रही । लडकियाँ को भी पढाया लिखाया । पर अब आग नहीं चढ़ पाता । खच की तगी से मैंने मिस्त्रिया की पडार्न अधूरी ही रहने दी । क्या करती ! अपने ममाज के लागा से भी मैंने मिलना-जुलना छोड़ रखा है । इसीलिये मैं यह एनात जगह पसद भी की थी । तुम देखते हो, मैं अपने घर से कभी बाहर नहीं निकलती । तुम भले चादमी हो, इतनिये कभी-कभी तमम मिल लेती हैं । मरी ममझ में नहीं आता कि

अब आग मेरे दिन कैसे बटेंगे। गरीबी की वजह से नहीं लड़कियों की शादी नहीं हो पाती। जब लड़कियाँ अपने समाजवालों के साथ हलमल बढ़ायें तभी तो वही शादी का तुक बठ सकता है। पर समाज में हलमल बढ़ाने के लिए पसा चाहिये—अच्छे अच्छे कपड़े पहन रहें, दिन में कम से कम दादा जाड़ी कपड़े बदलती रहें, पूरे साज शृङ्गार के साथ अप टू डेट पगल में रहें तभी तो मर्दानों की निगाह में जग्नू सकती हूँ। और मद भ्रा एसा-वसा नहीं चाहिये। कई लाफर जूलिया और मिल्लिया के साथ शादी का प्रस्ताव कर चुके हैं पर मैं उन सब का दुतकार दिया है। एरा-मरो से शादी पगल में न होना ही अच्छा। जूलिया तो अब ओल्ड मेड बनने जा रही है। शादी नहीं हुई पर अभी से पुडडी लगन लगी है। लड़कियाँ चाहती हैं मसूरी से बाहर—किसी बड़े शहर में—कलकत्ता या बम्बई में—तब और वहाँ वहाँ न-वही नौकरी मिल ही जायगी। जूलिया तार का काम मोपना चाहती थी, पर मैं इस बुद्धिपति में अब न तो लड़कियों का साथ एग प्लिन के लिए भी छोड़ सकती हूँ, न स्वयं अपना यह काटेज छोड़कर मसूरी से बाहर जाना चाहती हूँ। मर मन में यह अथविश्वास घर कर चुका है कि मसूरी से बाहर पाव रखत ही मेरी मृत्यु हो जायगी। और मैं अभी मरना नहीं चाहती—जीवन के प्रति अभी तब इतना प्रेम माह मर मन में बना हुआ है हालाँकि मरी उम्र पचास में ज्यादा हो चुकी है। अजीब हालत है मरी, मि० रजन, मैं क्या बनाऊँ। बेचारी लड़कियाँ मर कारण परगल हैं। वे मुझे बहुत चाहती रही हैं, पर अब मैं दग्नती हूँ कि धीरे धीरे उनके मन में मेरे प्रति विद्रोह जगन लगा है। और यह स्वाभाविक भी है। मैं अपने मुखनापूण हठ से उनका रास्ता रोके बठी हूँ। जवान लड़कियाँ हैं उन्हें जिन्दगी में साथ बनना चाहिये। पर मेरी वजह से बेचारियाँ विवग हैं। धीरे धीरे अब हम लोगों के भूखा मरने तक की नीमत आ रही है, पर अब भी मैं अपने घर पुन्नु स्वभाव के कारण उन्हें छुट्टी नहीं दे पाती। अभी-अभी जी चाहता है कि 'काटेज' बच डालूँ और वही समते किराय के भवान में जाकर रहूँ। इस धाय में कम से कम कुछ बप मेरी जिन्दगी के कट ही जायेंगे। फिर भगवान मातिक हैं।

हैं। पर यह भी जानती हूँ कि मेरे शरीर की जो हालत इधर बन रही है, उसमें अधिक दिन अथ मैं नहीं जी पाऊँगी। मेरे मरने के बाद ही मरी लडकिया का पूरी स्वतन्त्रता मिल सकती है—वचारी लडकियाँ !”

और उनकी आवा से टपाटन आसू निकलन लग। चश्मा उतारकर वह अनन गउन से उस पाठन लगी।

उहें किस तरह सात्वता दी जाय, मरी ममक मे नहीं आया। महसा मुझे एक प्रेरणा हुई। मैंने पूछा—“आपका कितना रुपया इस ‘काटेज को बनान म लगा था ?

उहान बहा—‘जब मैं इसे बनवाया था तब सस्ती का जमाना था। फिर भी करीब वारह हजार रुपया मेरा इसमे लग गया था।”

“आज अगर आप इस वचना चाह तो कम से कम कितना रुपया आप चाहती ?”

“पचीस हजार से कम पर इसे बेचना का कोई अय ही नहीं रह जाता।’ जा दिनों का भाव देखते हुए उस काटेज के त्रिये पचीस हजार रुपया अधिन था, यह मैं जानना था। पर उस समय, न जाने किम प्रेरणा से, मेरे मन पर आर्थिक त्याग का भूत सवार हो गया था। मिसेज रालिंसन की बरुणा भरी रामकहानी न मुझे बहुत प्रभावित किया था मदेह नहीं, पर केवन वही एक कारण रही था। जो भी हा, मैं वान उठा—“देखिय मिसेज रालिंसन, आप पहले अच्छी तरह सोच-विचार लीजिय कि आप काटेज को बेचना पसन्द करेंगी या नहीं। यदि आप चाह तो मैं इसे उनन ही दामों पर खरीदन को तयार हूँ जितना आपन चाहत है

स्पष्ट ही मिसेज रालिंसन इसके लिय तयार नहीं थी। वह मुझे एक बहुत ही साधारण म्थिन का आदमी समझे बठे थीं, और गायद उनकी यह धारणा थी कि किराये के सस्तेपन के कारण ही मैंने शहर का माह त्याग कर बानागज म मवान लिया है। इसलिये जब उहोंने मेरे मुह से इस तरह की वान सुनी तो उनके आश्चय का ठिकाना न

रहा । विस्मय से आँखें फाट फाटकर मेरी आँखें देखती हुई बोली—“क्या तुम सचमुच काटेज खरीदने के तयार हो ?

परिहास तो नहीं कर रहे हो ?”

मैंने कहा— मैं कभी यो भी किसी में परिहास नहीं करता फिर आपके समान सयानी महिला के साथ परिहास करने की बात मैं कैसे सोच सकता हूँ ? मैंने जो कुछ कहा है उसमें आप पक्का बात समझ लीजिये । आप पहले अपना मन टटान लानिये । इसके अलावा इस सम्बन्ध में मैं एक सुविधा आपका और दूँ मक्कान खरीदने के बाद भी इसके एक हिस्से में आप अपनी लक्ष्मिया सहित बिना खिराय के रह सकती हैं

मिसज रालिसन अत्यन्त मनानिवेशपूर्वक मेरी बात सुन रही थी । सहसा एक उच्छ्वास उनके मुँह से निकल पड़ा । उन्होंने कहा— ‘श्री मि० रजन तुम सचमुच बड़े ही उदार आदमी हो । मैं इस बात पर लक्ष्मियों से सलाह करूँगी और शीघ्र ही तुम्हें बताऊँगी । यदि लक्ष्मियाँ राजी हो जायें तो फिलहाल के लिये मेरा एक वस्तु बना सकता हूँ ।’

इसके बाद वह मेरी प्रशंसा के पुल बाधता चली गयी । मैं उनकी ओर से आँखें हटाकर पाम ही काटेज के गमने पर खिन्न हुए पट्टनिया पर दृष्टि गड़ाय चुप बसा रहा ।

जब वह चुप हो गयी तब मैंने साहस बतारकर कहा— आज मैं एक विनोद प्रार्थना के लिये आपके पास आया था ।

‘क्या बात है कहते क्यों नहीं ?’

‘मैं इधर कुछ दिना से सोच रहा था कि यदि मिल्विमा मन्डिया को अँगरेजी लिखना, पटना और बोलना सिखाने के लिये राजी हो जाती तो मैं बड़ा उपकार मानता । यदि वह तीन घंटे रोज पढ़ा सके तो मैं उसे १०० रु० महीना देने को तयार हूँ ।’

मिसज रालिसन के लिये यह दूसरा महाविस्मय था । आँखें दृष्टि से मेरी ओर देखती हुई वह बोली— ‘क्यों नहीं ! क्यों नहीं ! वह जरूर पढ़ायगी । वह ज्यादा आयेगी क्योंकि मैं उसे इस काम के लिये राजी

कराऊंगी। यह तो बहुत अच्छा काम है। तुम बड़ ही  
सज्जन श्रीग दयालु हो, मि० रजन। भगवान निश्चय ही  
तुम्हारा बना करेगे।" उनकी आँखें कृतज्ञता से डबडबा आया।

८७

१४

उस दिन मिसेज रालिगन के यहाँ से चले आने  
के बाद मैं यही सोचता रहा कि ताब म आकर मैं  
जो प्रस्ताव उनके आग रने हैं व वहाँ तक उचित ह  
और जो सौदा मैं करना चाहता ह उसमे मुझे क्या लाभ ह। पचीस हजार  
रुपय की कोई बात नहीं थी। इतना रुपया मैं आसानी से दे सकता था  
मेरी इस्टेट की वार्षिक आय का वह एक चौथाई हिस्सा भी नहीं था। प  
एक जरा सी बात पर बीस हजार रुपया भावुकतापान पानी म फेंक देना  
वात मुझे उस भावुकता का आचम समाप्त हा जान के बाद कुछ जँच ना  
रही थी, क्योंकि यह निश्चित था कि मिसेज रालिगन का वह काटेज मे  
किमी बाम का था। मैं जानता था कि पचीस हजार रुपया उस पर ख  
करने की अपेक्षा उतना ही रुपया और लगाकर किसी अच्छी जगह क  
नया बँगला बनवा लेना अधिक लाभकर था। उन दिनाकी स्थिति को देख  
हुए वह बँगला दस हजार म अधिक के योग्य नहीं था। तब मैं जानबूझ  
क्या मिसेज रालिगन को मुह मागा दाम देने का वचन दे दिया ? भा  
जता की भी एक सीमा हानी चाहिये। मैं भाचने लगा कि ये ऐंग  
इंडियन महिलाएँ कितनी बड़ी मायाविनी होती हैं। मुझे एकान  
पाकर मिसेज रालिगन न किम प्रकार रोना धागा आरम्भ कर वि  
था। वह निश्चय ही पहले ही ताड गयी हागी कि एक मोटा अस  
उसके पटोस मे आ फँसा है। मेरे प्रस्ताव से उसने जा आश्चम प्र  
किया था वह निश्चय ही वृत्रिम था। उसने अपने परिवार का जो क  
चिट्ठा मेरे आग खोल दिया था उसमे भी निश्चय ही उसकी चाल

कसे भोलेपन के माथ उसने मेरी दया उभाड़कर मुझे बव-  
बूढ़ बनाया । इसी तरह के तक मेरे मां मे उठने लग ।

दूसर दिन मैं यह सोचकर मिसेज रातिसन के यहाँ दोपहर को गया कि उनमे वह दूंगा कि पिछले दिन मैंने काटज खरीदन की जो बात कही थी वह याही नाव म आबर कह दो थी और घसल मे खरीदने लायक मेरी स्थिति है नहीं ।

तब मैं काटज के दरवाजे पर पहुँचा तब सित्त्विया वरामदे म खडी थी । मुझे देखकर वह मनजज भाव से मुस्करायी । उने देखते ही मैं अपने उन सार तर्कों का भूल गया जा काटेज न खरीदन के पक्ष म मेरे मन म उठे व । वन्कि मुझे इस बात पर मन ही मन शक होने लगा कि मैंन मिसज रातिसन के आगे एक उदार प्रस्ताव रख कर बहुत ही सराहनीय काय किया है । सित्त्विया न उसी मवोच भरी मुस्मान के साथ बहुत धीमी आवाज म कहा— गुल मारिग । ' और फिर भीतर चली गयी । उसके भीतर जान क बाद ही मिसेज रालिसन बाहर चली आयी और अत्यन्त प्रसन्न भाव स उहाँन मरा स्वागत किया । जूलिया भीतर से ही अपनी स्वाभाविक रखी दृष्टि से शक रही थी ।

जब हम लोग भीतर गय तब मिसेज रातिसन न बडे आदर से मुझे बिगया । स्वय भी बठती हुई वह बोली— ' मैंन सित्त्विया को तुम्हारे आफर की बात बतायी थी । वह राजी है । कयो सित्त्विया तुम मिसेज रजन को पनाओगी न ?

सित्त्विया भिर हिलाती हुई बहुत धीमी आवाज म बोली— 'हाँ ।'

मैंने कहा— तब ता बडी प्रसन्नता का बात है । आज ही से पढाना शुरू कर दीजिय ।'

आज ही तो इमन अपना विचार इस सम्बन्ध म स्थिर किया है । अब कल स पढायेगी ।'

सित्त्विया उसी कमरे के एक कोने म दाम की एक कुर्सी पर छुपचाप बठ गयी थी । पर जूलिया दूसर कमरे क दरवाजे के पास खडी थी और एक विशिन्न दृष्टि स मरी ओर दल रही थी । उसकी उम दृष्टि से जानूसो के से परीक्षण का भाव व्यक्त होता था । और उसकी आँखो का

वह स्थापन । उनकी ओर दृष्टि पड़ते ही एक अत्यंत ८६

अप्रिय अनुभूति में मेरा सारा मन तिक्त हो उठा ।

“मैंने भी अपना माइड मेक अप कर लिया है, मि० रजन ।”  
मिनाज रालिमन ने कहा ।

“किस विषय पर ?” मैं जूलिया की ओर से दृष्टि हटाकर अन-  
मन भाव से पूछा ।

“काटेज की विनी के सम्बन्ध में ।”

मरी सारी अयमनस्कृता पल में भग हो गयी । जूलिया की ओर  
दृष्टि पड़ने से काटेज खरीदने के सम्बन्ध में मेरा सारा उत्साह जाता  
रहा था ।

उम दिन की अपनी मूखतापूर्ण भावुकता को फिर मन ही मन बुरी  
तरह शमन लगा । पर अपनी बात को पकटने का न तो मुझे साहस ही  
हुआ न एसा मेरा स्वभाव था ।

अपनी अनिच्छा को भीतर ही भीतर दबाते हुए मैंने कहा—“यह  
भी उन्त अच्छी बात आपन बतायी । तब आप काटेज बचन के लिये  
तयार हैं ?”

“हां । मैंने खूब सोचकर दया है इसके सिवा मेरे निय और कोई  
दूसरा चारा नहीं है ।”

‘तब ठीक है । मैं एक हफ्ते के भीतर ही काजूनी निवा पनी हो  
जाने के बाद रुपये दे दूंगा ।’

इनके बाद कुछ ही देर में वह और रहा । घर लौटने पर मैंने  
मिनिया का सब बातें वना दी । और यह भी सूचित कर दिया कि मिन्विया  
कल से उसे पढाने आयगी और प्रतिदिन प्रायः तीन घंटा उनके साथ  
रहगी । यह सुनकर वह बहुत बह दुःख हुई । पर जब मैंने उसे बताया  
कि मिन्विया को मैंने सौ रुपया महीना पर तय किया है तब पहले तो  
उम बच्चा विस्मय हुआ और बाद में वह कुछ सोच में पड़ गयी ।

मैंने पूछा—“तुम क्या सोच रही हो ?”

“मैं सोच रही हूँ कि मेरे लिये तुमने जो सौ रुपया साहवार खर्च

६० करन की बात सोची है उतना सब रुपया तुम पानी में फेंक  
जा रह हो ।”

‘तुम ऐसा क्या भोच रही हो’

‘मैं आखिर कितना पढ़ पाऊँगा ? और मेरे पढ़ने से नाम क्या  
हागा ?’

लाभ क्या हागा यह अभी मैंने तुम ममक पाओगी तब ही दना  
पाऊँगा । मान लिया जाय कि तुम कुछ भी न पढ़ पायीं ता भी मित्रिया  
प्रतिनिधि तीन घण्टे तुम्हारा साथ दगी अनका मृत्यु क्या कुछ नया है ?  
तुम्हारी इच्छा मित्रिया के साथ रहने की थी मैंने ऐसा प्रस्ताव कर दिया  
है जिसमें वह काफी समय तक तुम्हारे साथ रह सकेगी इसका नियम  
अगर महीने में १०० २० खर्च करना पड़े ता क्या अधिक है । मित्रिया  
एक गरीब माँ की लड़की है अगर उससे रुपया माहवार मिल जाता  
है तो वह तुम्हें क्या खल रहा है ?”

क्या सचमुच मित्रिया की माँ गरीब है ? अकृत्रिम आश्चर्य में  
मनियाने कहा— बँगला तो उतना दान बढ़िया है । जिनके पास अपना  
निजी बगना हा—और वह भी बनना सुन्दर—वह कस गीत हो  
सकती है ? और उन लोगों का रत्न-महल भी तो ठाठदार है ।

मैं मुन्दराया— गरीब से गरीब अँगरेज—या ऐंग्लो-इण्डियन—भी  
ठाठ में रहना जानता है । रही उनके निजी बँगले की बात । अभी  
तक मैंने तुम्हें बताया नहीं पर यह बात तय हो चुकी है कि वह अपना  
बँगला भर हाथ बच देगी ।”

“क्यों ? उमी विस्मित भाव से मनियाने पूछा ।

इसदिय कि उनके पास अपने गुजारे के लिये और काइ जरिया रह  
नही गया है ।

‘कितने रुपये पर वह बच रही हैं ?’

‘पचीस हजार ।’

‘पचीस हजार !’—आखि पाठकर मेरी आर देवती हुई मनियाने  
चोली— ‘और तुम इतना रुपया देकर उसे खरीदने जा रहे हो ? क्या  
तुम्हारे पास इतना रकमा है ?’



'न हाता तो में खरीदने को तयार ही क्या होता ?'

६१

'पचीस हजार ! तब तो तुम बहुत बड़े सेठ हो ! मैंने तो कभी ऐसा सोचा नहीं था । पर उम मकान का लेकर तुम करोगे क्या ?'

मुझे उमका आश्चय और कुतूहल दखकर बड़ा रस मिल रहा था । मैंने कहा— 'किराया देकर रहने से क्या यह अच्छा नहीं है । अपना निजी बगले में रहा जाय ?'

'हां, हा, यह तो अच्छा ही है,' मन ही-मन कुछ माचती हुई वह बोली— 'पर पचीस हजार रुपया ! कितना होता है पचीस हजार रुपया ? एक कमरा पूरा भर जाता होगा उतने रुपयों से क्या ?'

मेरी हँसी रोके नहीं रखनी थी । मैंने कहा— 'पचीस हजार रुपया जरूर कुछ ज्यादा है । पर इतने से एक कमरा नहीं भरता । एक बड़े कमरे के भीतर उतने सब रुपय समा सकते हैं—अगर एक एक रुपय के हिस्से में उड़ा रखा जाय । नहा ता बड़े-बड़े मोटा में वे एक बटुके में भीतर आ सकते हैं । और मैं तो मिसेज रालि-मन को न नोट दूँगा न रुपये, मैं तो दूँगा चक ।'

'वह कसा हाता है ?' स्पष्ट ही उमका कुतूहल बढ़ना चला आ रहा था ।

वह एक कागज का टुकड़ा होता है जिसे बक वाले छपाए रहते हैं ।'

'पचीस हजार रुपये से और उस कागज के टुकड़े से क्या सबंध ?'

'मैं उम पर लिख दूँगा कि मिसेज रालि-मन को पचीस हजार रुपये दे दिये जायें ।'

'ता इमसे क्या हुआ ? मिसेज रालि-मन क्या इनके न मान जायगी ?'

'मान क्या नहीं जायगी ? वह कागज का टुकड़ा बक में दिवान से उसे पचीस हजार रुपया मिल जायगा ।'

इतनी दरवाद मनीया यह समझी कि मैं उसके साथ परिहास कर रहा हूँ, और अभी तक मैंने जितनी भी बातें उसे बताया हैं व सब

अवास्तविक हैं। हँसती हुई बाली—“हटो, तुम्हारी हँसी करने की आदत कभी दूँगी भी या नहीं? मैं अपने सीधे स्वभाव में इतनी देर तक तुम्हारी सब बातों को सच मानती आ रही थी। वक़्त में क्या सब समय दानखाता खुला रहता है जा तुम्हारे कागज़ के टुकड़े पर लिख लेने से मिस्रज रालिम्नन को वहाँ पचीस हजार रुपया भिन्न जायगा। हँसी छाड़ो, सच बताओ तुम पचीस हजार में बेंगला खरीदन की जो बाग़ अभी बनायी है वह क्या सही है?”

मैंने अपने मुख पर से परिहास और वृत्रिमता का आवरण पूरे तौर से हटाने का प्रयत्न करते हुए कहा—‘मैंने त्रिलकुल सच बात तुम्हें बतायी है मरिया मैं बगला खरीद रहा हूँ—पचीस ही हजार में। इतना रुपया तुम इसलिये ज्यादा समझे बठी हा कि तुम्हारा पाम सौ रुपय की भी पूजा कभी नहीं रही। मैं जो दा सौ रुपया तुम्हें दिया था वही तुम्हारे लिये इतनी भारी रकम हा गया थी कि तुम उस सौमाल ही न पाया। पर दुनिया में सभी लोग तुम्हारी तरह नहीं हैं। ऐसे भी लाग हैं जो लाखों रुपया रोज़ कमाते हैं और उनका खर्चा भी उसी हिमाव से होता है अगर वे एक एक रुपया गिन करके खर्च करें तो सारा दिन गिनते गिनते बीत जायगा। इसलिये होता यह है कि वक़्त में उनका रुपया जमा रहत हैं। वक़्त वान अपने नाम से खास तरह की धनी हुई छोटी टाटी काँपियाँ छपाये रहते हैं। उन्हें चेक-बुक कहा जाता है। जिसका रुपया वक़्त में जमा रहता है उस जितने रुपया की जरूरत होती है वह उनी काँपी में से एक पन्ना फाड़कर उसमें लिखकर अपना दस्तखत कर देता है। वक़्त में उसके दस्तखत का नमूना रहता है जिससे कोई दूसरा आरमी नकली दस्तखत बनाकर रुपया न खींच ले जाय। उन पन्ने को—जिसे चेक कहते हैं—दख़्कर वक़्त बाल उतना ही रुपया उस आरमी को द देते हैं या उसके नाम जमा कर देते हैं जिसका नाम रुपया पान वाले की जगह पर लिखा रहता है। मैं अभी तुम्हें दिवाता हूँ कि चेक किस तरह का होता है।

मैं उठा और अपने बक़्त से चेकबुक निकालकर उस दिवाया। वह आंत भाव से उसे देखती रही, कुछ समझी नहीं। मैंने कहा—“अब

देखो, मैं इसमें मिसेज रालिन्सन का नाम लिखकर यह भी लिख देना हूँ कि उन्हें पचीस हजार रुपये दे दिये जायें।" श्रीर मैंने लिखकर उसे दिखा दिया।

६३

मैंने कहा—“अब अगर यह चेक मैं मिसेज रालिन्सन को दे दूँ तो उसे उम्र तक मैं पचीस हजार रुपये मिल जायगा जहाँ से यह चेक चला है।”

वह उसी स्तब्ध दृष्टि में मेरी ओर देखती रही। कुछ देर बाद एक लंबी साँस लेकर बोली—“तुम्हारा कितना रुपया बैंक में जमा है?”

“मुझे ठीक याद नहीं है। पर कई लाख रुपये होंगे।

“इतना रुपया तुम्हारे पास कहाँ से आ गया?”

“मेरे पिताजी बहुत बड़े जमींदार थे। उन्हें लोग राजा कहते थे और मुझे और मेरे भाई को कुँवर। मैंने अपना नाम के आगे में कुँवर पढ़ा दिया है पर हमारी जमींदारी के लोग अब भी मुझे कुँवर ही कहते हैं। पिताजी के मरने पर हम दो भाइयों के बीच उनकी जायदाद बँट गयी। मरनाइ ने, जो मुझसे बड़ है, अपना हिस्से की सारी संपत्ति उठा डाली। जो नकदी उनके हिस्से में आयी थी उसे खर्च कर डालने के बाद जमीन-जायदाद भी बँट कर खतम कर दी। पर मुझे जो कुछ मिला वह अभी तक बचा ही रखा हुआ है। हर साल मुझे जो लाख-दो-तीन लाख रुपया जमींदारी में मिलता रहा है उसे भी जाड़ना चला गया है।”

“मैं वार मरिया का जैसे कोई भ्राता नहीं हूँ—जैसे मेरी सारी स्थिति उसके आगे साफ हो गयी। तत्काल बोल उठी—“तब तुम भी अपना भाई की तरह उसे खर्च क्यों नहीं कर डालने? तुम्हीं तो कह रहे थे कि तिन लागा के पास बहुत रुपया होता है उनका खर्च भी उसी हिसाब से होता है। पर तुम्हारा खर्च बहुत कम है। जब लाखों रुपया तुम्हारे पास जमा है तब तुम इस तरह हाथ बाँध क्यों बैठे हो?”

चकित होने की वारी अब मेरी थी। उसके प्रश्न का आणव मैं

ठीक ठीक समझा नहीं। यह नहीं जान पाया कि वह व्यंग्य म कह रही है या स्वाभाविक सरल भाव से।

मन कहा— 'अभी तो तुम इस बात के लिये नाराज हा रही थी कि मैं सिल्विया को जा सौ रुपया महीन देन जा रहा हूँ वह पानी में फेंकन के बराबर है। और मिमेज रालिस्तन का बीस हजार रुपया दवर काटेज खरीदन की बात जब मैंने तुमस कही तब तुम्हारे जस रोगटे खडे हो गये। अब तुम इस तरह की बात क्या कह रही हा ?

"तब मुझे पता नहीं था कि तुमने लाख रुपये जाड रने हे। उतने रुपया स तुम बराग क्या ? तुमन अभी बताया कि हर साल तुम्ह लाख-सबा लाख रुपय भी धामदनी होती है। लाख रुपया बजन म कितना हाता है और उसस नितन बार भर जा सतत हैं यह मैं नहीं जानती। पर इतना जरूर जानती हूँ—जब मैं स्कू न म पडनी थी तभी मुझे बताया गया था—कि सौ हजार का एक लाख होता है। इतना रुपा हर साल तुम्हार नाम बक म अलग जमा होना रहता होगा। उमे छाकर पहले ही स जा रुपया तुम्हार नाम जमा है वह क्या सदा के लिये जमा ही रहगा ? उमसे बकवाला का कायग भल हा पर तुम्ह क्या लाभ होगा म नहा समझी। मैं यह भी नहीं समझ पाती कि कोइ आदमी केवल यह सोचकर ही खुग बस रह सकता है कि उसके णम बक म इतना रुपया जमा है— तब तक कि उस खच न किया जाय। णम बार उसकी आँवो म गभीरता परिपूण भाशा म छापी हुइ बी।

मन कहा— तुम ठीक कहनी हो मनिया पर ररया कस खच किया जाय इस बात का कोई आदाज ही मुझे नहीं है।' म मानता हूँ कि मरे इस उत्तर म भोजापन नरा हुआ था पर उस समय मने जनकर नहीं बकि अपन जान सहज भाव म ही बसा कहा था।

पर मनिया मेरा वह उत्तर मुफर रोक उठी। यानी— 'तुम्ह खच करन का अदाज नहीं है यह बडी घनापी बात तुमन बतायी। और, इसम भी कुछ सोचन-समझन की जरूरत है। वडा सोची-सी बात है कि जितना फाजिल रुपया तुम्हारे पास बचा है उसे गीवा म बाट दा।

अकेले के पास जितना स्पया बिना विनी काम

६५

डा है उतन से न जान जितन गरीबों का पट

इ भर सकता है। और गरीबी क्या चीज है, दा-अन के दिन  
ता सिना कठिन काम है, मह म आन तुम्हा मात्र उन पर  
ती हूँ। तुम्हा पाम आन के पहले तब म समझनी थी कि  
। का खाना जुटान क दिन गरीबों का जो पर्याप्त उजानों  
वह कोई दुख की नहा ब्रिद मुख की ही जान है, और आ-  
तानी म आदमा उनका न रह ता जीना ही दून या जय। म-  
गेद खटका नहीं था, पनवाता मे कारे डाइ उनी । मी और  
। महारा न रहन पर भी मर मन म मुख था, नताप ता। पर  
पाम आन के बाद ही मुझे पत्नी धार मातूम दृष्टा दि आउम  
त है, और यह भी मैं जाना दि एक पत्र के सिन में उउ दष्ट  
। रही थी, मर मात्र का दूनरी सत्किया आन भी उम उष्ट क  
र रही है, यह बात पहला मर मैं जानी। और आन उद तुमन  
। कि स्पयवान किम तरत् ताया स्पया प्रक म जमा रान दृ आ-  
नच करन की कोई जम्म ही —ह नहीं पटती त मी आन और  
जा है। मरी बुद्धि यह ना-एर चकरा रही है कि का इन पम-  
। म इतनी समझ नहीं है कि अपनी जरूरत म फालिग स्पया गव  
श म वाट दें। तुम अपन ही वा दवा। तुम पढ़े निव हा और विज्ञान  
मय समय मुझे एमी-एना धाने उनात रहते हा जिनम दुनिया भर  
जान भरा रहता है। पर अना तुमन बताया कि जा ताया स्पया  
एर पाम जमा है उस कम सच किया जाय यत् तुम जानत ही नथ।  
स्पया जरूरतमदों म बांगे ज मकता है, इतनी भी जान तुम्हा  
। म ममाया ही नहीं। तुमन ता तुम्हा नाइ उर अ-उ र  
हाने अपन हिम का गाग स्पया खच कर हाया माग जर्नि-  
यना बचकर उम भा खनम कर हाता। किम तरत् रान जिना था  
जान ?'

म दय था उमका वह प्राकृतिक और अप्रत्यागित भाषण सुनकर  
दमनिय जब उमन अनिम प्रान किया तब मुनउ मरु भर क सिद दृष्ट,

उत्तर ही न देते बना । दूसरे क्षण जब कुछ संभला तब बाला—  
‘जहाँ ऐयाशी म सब रुपया फूर दिया था—शराब म और

औरतो म ।’

“शराब म और औरता मे ‘हुम !’ और वह गौर से मेरी ओर देखन लगी, जस मेरे मुख की अभिव्यक्ति से यह जानना चाहती हा कि मेरे भाइ म और मुभम अतर वहाँ पर और कितना हा सकता ह । इसके बाद सहमा बाल उठी—‘पर जा नी हा तुमस वह अछ्छे रह । कम से कम इतनी समझ ता उनम रही कि जहाँ नुम्हारी तरह रुपया बक म बढ ता नहा रहने दिया, किसान-किसा के काम वह रुपया आया ता सही !’

उसके इस दृष्टिकोण से मैं मर्महित-भा हो गया । अपन गद्दा म काफी बटुना घालत हुए मैंन कहा-- अगर मुझे माजूम हा जाय कि मेरे इस तरह के आचरण स तुम्ह मुख मिलेगा तो बल से मैं नी यही काम गुरू कर दूँ—इसम कोई खावट मुझे न होगी । बाला तुम क्या यह चाहती हा कि मैं भी शराब म और औरता म रुपया उडा दूँ ?’

उसके मुख की मुद्रा ही एकम बदल गयी थी । उसकी आत्मा से प्रहुत दिन स सुप्त ज्वालामुखी के आकस्मिक विस्फाट की तरह एव एसी ज्वाला सी निकलने लगी थी, जिस दखकर मैं सहम गया । मर बटु प्रश्न वा उत्तर बटुतर रूप म देन क इराद से वह बोली— उडाओ ! उडाओ ! अपना सबस्व फक डाला चाह किसी तरह हा ! अगर शराबो मे तुम रुपया नही बाँट सकते हो त गुडा बढमागो और धूर्तों म ही उम बाट दो ! एक म जमा करके क्या करोगे ? जब तुम्हारे नीत जी बह रुपया किसी काम न आ सका ता मरने पर कस काम आ सवेगा ? इमलिय जैसे भा हो जल्दो खच कर डालो !’

किस बात से किस बात की चर्चा आ पड़ी थी ।

न जान आज मेरा कौन दुःख है जगा था, जिसने हम दोनों को अनावश्यक बातों की ओर प्रेरित कर स्निग्धरण को विषमय बना दिया था । मुझे लगा कि उसके मन के प्रतिदिन के सघमय जीवन की मचित राख के नीचे दबी हुई थी चिनगारी, किसी प्रबल तूफानी धक्के के कारण सारी राख के तन पर, तीव्रता से दहक उठी है । पर उस विद्वेष का मून मूनार है ? कुछ ही समय पूर्व उसने बताया था कि मेरे पास धान के उसके मन में किसी तरह का खटका नहीं था, पनवालों के प्रति तरह की दाह नहीं थी । इसका अर्थ स्पष्ट ही यह है कि भर निकट में आने से उसके भीतर पनवाला के प्रति दाह की भावना जग है, और उमी के कथनानुसार, आज तो उसकी आँखें और भी खुल हैं—अर्थात् वह विद्वेष भावना और अधिक मढक उठी है ।

मैंने कहा कि अब इस सम्बन्ध में बात को अधिक घटान से ऐसी । उत्पन्न हो सकती है जा अत्यन्त अशिष्ट तथा अप्रिय होने के साथ जान किस तरह की घटना में परिणत हो वठे । तिनकी चर्चा चल उतनी ही काफी अप्रिय वातावरण की सृष्टि कर चुकी थी । अपनी को बलपूर्वक पी जान की चेष्टा करत हुए बात को समाप्त करन हेतु मैंने कहा— 'ता यह बात तय रही कि मिमज रातिमन का न बीस हजार रुपये में खरीद लिया जाय और सिल्विया को सौ । माहवार दे दिया जाय ?'

'बीस हजार रुपया उन्हें बंगले के लिये दो और बीस हजार खरात सिल्विया को भी सौ क्या तीन सौ रुपया दो । अगर तुम्हारी समझ लाग सचमुच गरीबी में दिन बिता रहे हैं तो जितना रुपया भी उठक में उतना ही अच्छा होगा ।'

फिर क्या वह उमी व्यग और विद्वेष से प्रेरित हो रही थी ? उसकी तन में अभी तक उसी विचित्र प्रकार की ज्वाला दहक रही थी । ता वह रूप मुझे अत्यन्त अप्रिय और अगातिभारक लग रहा था । त अन्तर की सारी शक्ति को बटार कर अत्यन्त दुःखता के साथ मैंने

कहा—“मनिया, तुम्हे हा क्या गया है। आज तुम इस तरह तीतेपन से बातें क्या कर रही हो। जाओ, धूपचाप पलों पर लेट जाओ। तुम्हारे भीतर आज जो एक मूत जग उठा हुआ है उस मुला दो, नहा ता तुम्हारी तबीयत बहुत खराब हो सकता है। जाओ।—”

वह तत्काल कठपुतला की तरह उठ बठी—मेरी आर भय और आतिपूरण दृष्टि में देखनी हुई। और उमक बाद धीरे धीरे पग रखती हुई पतंग के पाम जाकर बरबन सी लेट गयी। मैं तत्काल उसके निकट जाकर उसके माथे पर अपना हाथ रख दिया और स्थिर तप। पहले से भी अधिक गभीर दृष्टि में उसकी आर दसता रहा। एक मिनट भी बीतते न बीतते उसने आँख बंद कर ली और वह गहक निद्रा में मग्न हो गयी।

उसकी उनी नींद की अवस्था में दब स्वर में उसे संबोधित करते हुए मैंने कहा—“मनिया, सब बताया यह जानकर कि मेरे पास बहुत सा रुपया जमा है, तुम्हें बचनी क्यों हुई ?”

नींद में ही मनिया बोली—‘तुम्हारे पास इतना रुपया जमा क्या है जब कि मैं मेरे माय की टाडकिया मर जान पहचान के नीकर चाकर, कुली मजदूर का माटी रोठिया जुटान में खटते-खटते यह नहीं जान पाते कि कब सुबह हुई और कब गाम आयी।’

“पर असली बात यह नहीं है। तुम अपने भीतर की कोई बात छिपा रही हो। याद करा और मुझे बताओ। मैंने दबतर स्वर में आदेश देते हुए कहा।

क्षण भर के लिय सन्नटा रहा। उमक बाद मनिया बोली—‘मेरी माँ के पास अगर इतना रुपया भी होता कि वह अपनी मुजर बिना जिम्मे के महारे कर सकती तो वह न एक तिबनी के घर जाती न बबा की हत्या की नीबत आती न वह खुद मार से खबर आत्मघात करती और न मैं इस दुनिया में अकेली मारी मारी फिरती हुई देवसी की जिन्गी जिनाती !’

एक एमा रिजनी नासा धन्वा मुझे लगा कि मैं सचमुच शाधा



कदम पीछे की ओर खिंच गया। उसके अन्तर्मन में अभी

६६

तक अपनी अनाथ और असहाय अवस्था की कटु अनुभूति  
वर्तमान है और अभी तक वह अपने का 'अकेली मारी मारी फिरती हुई,  
वेदनी की जिन्दगी बिताती हुई' समझती है। इस तान न ऐसा कठिदार  
काग मेरे इतने दिना तक गर्व से फूल हुए मन पर मारा कि मैं उम वेदना  
में नीतर ही भीतर कगल उठा। फिर भी अपनी उम मनोवैज्ञानिक परा-  
जय में हलाना नहीं हुआ। अपनी सारी भीतरी शक्ति का फिर नय  
सिर में बटारकर मैंने कहा—“देवा मनिया, आज न तुम अपने मन में  
यह गाठ बाँध ला कि तुम न अकेली हो, न दबसी की जिन्दगी बिताती  
हुई मारी मारी फिर रहा हो, बल्कि तुम्हारे साथ एक और आदमी भी  
है जो जिन्दगी भर तुम्हारे साथ दन की प्रतिज्ञा कर चुका है। तुम अनाथ  
नहीं हो तुम्हारे नियम अत्र किसी बात की भी काइ कसर नहीं रह सकती,  
क्याकि मर रहते रुपये-पैसे की काइ चिन्ता तुम्हारे लिये नहीं रह सकती।  
मेरा सब-कुछ तुम्हारा है।”

“पर मेरा सब-कुछ तब तक कैसे हो सकता है उम्मी नदी के  
हान्न में मनिया बोली ‘जब तक व गरीब लटकिया भी आराम की  
जिन्दगी बिताने लायक नहीं हो जाती तब तक साथ बैठकर मैं दुःखान  
किया करती थी, जब तक आदमियों का बान टान वाले गरीब रिक्ता-  
कुला भी दो जून भरपट रोटियाँ पाने और जिन्दगी की कुछ घड़ियाँ सुख  
में बिताने लायक नहीं हो जाते मैं चाहती हूँ कि अपने को सुखी  
मातृ और अनाथ आर अकेली न समझू। पर क्या कोई मुझे ऐसा सम-  
झन से राखता है? मरी क्या दगा होगी? कौन मुझे उबारगा? मैं क्या  
रूँ, कहाँ जाऊँ?’

और वह निसवन गया। यह स्पष्ट था कि मर हिप्पेटिज्म का वेदल  
आधा ही प्रभाव उसके अन्तर्मन पर पड़ा था, और उनका सचन मन  
आधा जाग्रत था। मैंने नाचा कि इस समय यदि मैं उनके अवचन मन  
पर पूरा प्रभाव डालन में असमर्थ रहा तो फिर दूसरा ऐसा अवसर  
आनाना संशय और शक्य नहीं मिल सकेगा। इनलिये मैंने ध्यानावस्थित  
होकर अपनी सभ्य चिन्तनियों का एनाल करके अतीत प्राय मूँटे हुए

दबतर शब्दों में कहा—“मनिया, तुम्हारा छटपटाना अब बेकार है, तुम मेरे पास से अब कहीं जा नहीं सकती। और किसी दूसरे की चिंता तुम्हें खा जायगी—तुम्हारे तन का, मन का और आत्मा की ही समूचा निगल जायगी। इसलिये तुम केवल अपनी चिंता करा और मेरी। आज तब तुम्हारे ऊपर जा कुछ बीनी है वह सब सपना था। उसे भूल जाओ। मैं तुम्हारे साथ हूँ और हर घण्टी रूना। मैं ही अब तुम्हारा सब-कुछ हूँ। इसलिये अबम चौबीसा घंटे तुम मेरी ही ध्यान करती हुई सुख से रहा करो। तुम मरी हो। मरी हो। मरी हो। मैं तुम्हारा हूँ। तुम्हारा हूँ। तुम्हारा हूँ। दया अब भूल न जाना। समझी ?

हिप्नोटिक निद्रा के भीतर से मनिया बोली—“हाँ समझी।”

“क्या ?

“मैं तुम्हारी हूँ और तुम्हीं मर सब-कुछ हो।”

“अच्छा अब उठ बठो।

और वह सचमुच उठ बठी। आँखें मलती हुई बोली—“कितनी दूर हुई मुझे सोय ? तुमने बातें करते करते मैं ऐसी सोयी कि दिन और रात की कोई खबर ही मुझ नहीं रही। तुम तब से यही बठ हो क्या ? क घंटे हो गये मुझे सोये ? चार पांच घंटा तो मैं कम से कम साथी हूँगी। तुमने मुझे अब तक जगा भी नहीं दिया। उमकी नलकती हुई आँखा में परि पूरा प्रेम का मानक रम जैसे छलक रहा था। “आघा मेरे पास आकर बठ जाओ, वहाँ क्या खडे हा ?” मर विह्वल दृष्टि से मरी आर देखनी हुई वह बोली।

मैं चुपचाप उसके पास जाकर बठ गया। उसने अपनी झलमाई हुई चाँहा का मेरे गले में डाल दिया और अपना निर मेरे कंधे पर रखना हुई बोली—“तुम बहुत ही भले हो, बड़े ही नेक हो। मुझे बहुत हा अच्छे लगते हो।”

मैं चुप रहा। अपनी हिप्नोटिक कला की एक अजीब-सी प्रतिक्रिया मेरे भीतर होने लगी थी। उसका आतिगन मुझे बहुत ही सुखद भावना हो रहा था सदेह नहीं, पर साथ ही इस बात की अनुभूति मेरे हृदय की

हवाटन लगी थी कि उसका वह सारा प्रेम विवशता-जनित १०१

है—नल ही वह विवशता स्वयं उसमें अनात हो। यदि हिप्पेटिज्म के प्रभाव से उम पूणतया मुक्त कर दिया जाय तो वह क्या उस हासन न भी, स्वेच्छा से मुझसे प्रेम करती? अपन पिछले जीवन के अनाधारण अनुभवों से जो विचित्र मनोप्रतियया उसके भीतर पड़ी हुई है व तब निश्चय ही उसके मुक्त प्रेम में भयकर रूखावट डालती। तब इस प्रेम का क्या मूल्य है जा हिप्पेटिज्म के प्रभाव से कुछ समय के लिये—कुछ दिनों के लिये ही महीं—उमकी उन मनोप्रतिययों के कृत्रिम उपाय से दवायान जान से, उभर उठा है? इसी तरह के विचारों में मेरा मन उलझ गया था जब कि वह मुझे प्यार करने और मेरा प्यार पाने के लिये मंचल रही थी।

जब मैं काफी देर तक चिन्तामग्न अवस्था में भौन और निश्चल बठा रहा तब उसने मर कपड़े से अपना सिर हटा लिया और मरी प्रार देखन लगी। कुछ देर तक एकटक देखते रहने के बाद चिन्तित स्वर में बोली—  
'तुम चुप क्या बठे हो? तुम्हारा चेहरा उदास क्यों है? क्या बात हो गया, बन्नामा?

उमके आगे यह प्रकट हो जाना कि मैं चिन्तामग्न और उदास हूँ मुझे अच्छा नहीं लगा। अपना भीतर कृत्रिम उमग भग्ने का प्रयत्न करते हुए मैंने कहा—  
'कुछ भी नहीं हुआ। तुम्हें कुछ देवकर मैं भी बहुत रूग हूँ मनिषा। निश्चय ही साबना है कि तुम मेरा माय बराबर मुझी रह सकागी या नपा।'

“क्या तुम्हारे मन में दम तरह का फूल की बात उठनी है?”

‘फूल की बात? तुमने ठीक ही कहा है। अब से इस तरह की बात मैं नहा साचा कर्नांगी। अच्छा, तुम अब उठी। हाय मुह धो लो। कपड़ बदल ला। आज गहर चर्ने। कई दिनों से गहर नाला पाने के कारण भी गायद भरे दिमाग में इस तरह की खुराफात पैदा हो रही है।’

मनिषा तत्काल उठ खड़ी हुई और पुनःपाने में चली गयी। मैंने उम दिन उम इस बात का ननिक् भी संकेत नहीं किया कि हिप्पेटिक निद्रा की अवस्था में उनसे किस तरह की बातें कही थीं और यह तो स्पष्ट था कि उम स्वयं उनमें से एक भी बात याद नहीं थी।

दूसरे दिन दोपहर में सिबिया सबसे कम कीमत पर नीचे मृदु मद मुस्कराती हुई आ पहुँची। उसका हाथ में एक छोटा सा बग था। हम दोनों का अनिर्वाण करने के बाद वह मनिया के पास बैठ गयी। मैं दूसरे कमरे में चला गया और एक कुर्सी पर बैठकर, एक पुस्तक हाथ में लेकर पढ़ने की चप्टा करन लगा। पर मरे कान बाहर की ओर ही लग थे। पहले ही अण से दोनों के बीच घनिष्ठ सौहाद की बातें हान लगीं। नम दोनों बचपन में ही एक-दूसरे से परिचित महेलियाँ हैं। शीघ्र ही दोनों यथागति धाम स्वर में बोलने लगीं और धीमे ही स्वर में बात बात में खिनखिलान भी लगीं।

प्रायः आधे घण्टे तक यही प्रेम चलता रहा। उसके बाद सिबिया ने कहा— अच्छा अब मैं तुम्हें अंगरेजी के अक्षर सिखाती हूँ। मैं एक किताब लाया हूँ। इसे जरा गौर से देखो। यह अक्षर, यह अक्षर का पहला अक्षर 'ए' है—फोटो के कैमरा के स्ट्रेण्ड की तरह यह 'बी' है—निरखे तराजू की तरह यह सी है—बोका बीच में आधा बट टुए बद्ध की तरह यह डी है—बिब की तरह यह 'ई' है—अनमारी की तरह यह 'एफ' है—झडे की तरह यह जी है—बगई की तरह यह एच है—सीढी की तरह यह आइ है—जड की तरह यह जे है—उलटी घड़ी की तरह

अक्षरों की गज्र बनाने का जो तरीका उमन अस्त्रियार किया था उससे मरी हँसी राके नहीं खना चाहता थी। मनिया का बार बार खिलखिला उठती थी। मुझे लगा कि मनिया का जो अण विमान नयी भाषा के सीखने में नहीं लग सकता और सिबिया का जो रूपया महीना भले ही बसे ही दे दिया जाय पर अब उनमें यह आना करना कि वह मनिया को कुछ सिखा सकेगी व्यय है।

पर कुछ ही मिनट बाद मैंने पदों की आँट से देखा कि मनिया हैमना छोड़कर अत्यन्त गम्भीर भाव में उन अक्षरों को देखित से एक कागज पर उतारने का प्रयत्न कर रही है। मुश्किल से चार पाँच अक्षर उसने लिखे होंगे कि फिर हँसी के दौर में उसे घर दवाया और अपन प्रयत्न की खिल्ली खाय ही उड़ाते हुए उमने लिखना छोड़कर जो हँसना शुरू

हमी के कारण निकले हुए अपन आसू पोत्रनी हुई वह बोली—“यह ली अपनी कितान और काफी । मुझमें यह सब कुछ न होगा ।”

“बाह वीवी, तुम यह क्या कह रही हो,” अत्यंत घबरायी हुई दृष्टि से मनिया की ओर देखनी हुई मिलिबिया बोली—“तुमसे क्या नहीं होगा ? एक ही बार के देखने से तुमने जा अक्षर उतारे हैं वे एम अच्छे हैं कि मुझे पूरा विश्वास है, तुम एक ही दृष्टन के भीतर निम्नना और पटना सीख जायागी ।”

“न, न, न ! मुझमें यह खेल न हागा । मुझे लिखाने-पढान के फेर में तुम न पडा । मैं समझ गयी हू कि सत्र बकार ह ।’ काफी का उठाकर दूर फेंकती हुई मनिया बोली ।

मैंने मिलिबिया के मुख की ओर देखा । ऐसा अज्ञान भाव उसके मुख पर अंकित हो गया था कि मुझे लगा जैसे वह अभी रा दगी । यह अनुमान लगाने में मुझे शर न लगी कि सौ रुपय की नौकरी हाथ से छूट जाने की आशंका न उभ भयकर रूप से उस्त कर दिया है । कुछ विशय सवट की घडियों में भय की भावना मनुष्य के दृष्टिगत स्वभाव पर तीव्र आपात करके उसे किस प्रकार चदन दती है यह देखकर आश्चय हाता है । मिलिबिया न घबराये हुए स्वर में कहा—“तुम बहन जन्दी लिख पढ लीगी । तुम्हारी बुद्धि बहुत तेज है । तुमने एत्र ही बार बतान पर ऐसे अच्छे अक्षर लिखे हैं कि देखकर मैं दन्न हू । मैं अभी बाबूजी का दिखाती हूँ । और वह मचमुच काफी उठाकर भीतर मर कमर में चली आयी । इसके पहले मैं कभी कल्पना भी नहीं कर सकता था कि मिलिबिया कभी सकौच त्यागकर स्वत मरे पाम आकर बातें करन का माहस कर सकती है ।

कमरे में आते ही काफी दिखाती हुई वह बोली—“दखिये मिस्टर रजन, कसे लवली अक्षर लिखे हैं आपकी वीवी ! गकित और कपित स्वर में बोलती हुई वह जो उत्साह प्रकट कर रही थी उसमें अस्वाभाविकता स्पष्ट परिस्पुट हो रही थी । मैं अक्षर देखे । वास्तव में अक्षर सही और सुंदर बन पडे थे ।

१०४ मैं उन्माहित होकर कहा— 'निश्चय ही ये बहुत अच्छे हैं।'

"पर आपकी बीबी कहती हैं कि उनक किये ये सब कुछ न होगा, और उन्होंने पढ़ने लिखने में कतई इनकार कर लिया है।" सिर्फ आसू निकलने की कसर थी—बाकी रात में और सिल्विया के घोलने में कोई अंतर मुझे नहीं दिखायी पता था।

मैंने दुगुना उत्साह प्रकट करने हुए उस दिलासा देने के इरादे से कहा— वह जल्द लिखेगी और पढ़ेगा भी। आप चिंता न करें मिस रालिंसन। मैं अभी उसे समझाता हूँ।" और मैं मनिया के पास चला गया। सिल्विया भी चुपके से मरे पीछे-पीछे हो ली।

मैंने कहा— 'मनिया, मुझे पता नहीं था कि तुम्हें सबकुछ इतनी जल्दी अक्षरों का पता हा जायगा और एक ही बार के बताने से तुम इतने अच्छे अक्षर लिख लगी। अब अगर तुम सीखना बंद कर दोगी तो इससे बड़ी भूल तमस और काई न हागी।

न न मुझे यह नहीं होगा। मुझे माफ कर दो ' प्राय गिड़गिड़ाते हुए उसने कहा।

उसका हठ देखकर मैं मन ही मन खींक उठा। सिल्विया पूर्ववत् रोनी-सा मूरत बनाय मरे पीछे चुपचाप खड़ी थी। मैंने उससे कहा— मिस रालिंसन अभी आप जायें। मैं इसे समझाता हूँ। बस आप अवश्य आवें। यह अगर पटना न भी चाह, आप प्रतिदिन नियमित रूप से इसक पास आया करें।' सिल्विया अत्यंत उदास भाव से चली गयी।

उसके चल जाने पर मैंने मनिया से कहा— 'तुम्हारी जिद मेरी समझ में प्रिन्कुन नहीं आयी। तुमने देखा नहीं, बेचारी सिल्विया रोनी हुई चली गयी।

'क्या! आश्चर्य से मनिया ने पूछा। उसने स्पष्ट ही सिल्विया के मुख के भाव पर ध्यान नहीं दिया था।

मैंने कहा— "इसलिये कि तुम्हारे न पढ़ने से उसकी रोजी बची

जायगी। सौ रुपया महीने का मीठा सीधा नुकसान होते  
देखकर वह बेचारी रोयेगी नहीं तो क्या करोगी।”

१०२

—“ओह, यह बात है।” अत्यन्त गभीर भाव से—प्रायः चिन्तामण  
सी—मनिया बोली—“तब तो सचमुच मुझसे बड़ी भूल हुई है। अगर  
बान ऐनी है तो कल मे मैं निश्चय ही निम्बना-पटना सीखगी। तब तो  
सचमुच य लोग बड़त गरीब हैं—तुम ठीक ही कहा था।” और वह  
गाल पर हाथ रखकर सोच में पड़ गयी।

“इतनी चिन्ता की कोई बात नहीं है” मैंने कहा—“तुम और मैं  
भय ही भूखा मरने लगे, पर य लाज कभी भूला नहीं मर सकत, पट  
पानन का दग अच्छी तरह जानत हैं—एक उपाय म मफन न हूण ता  
तकान दूसरा उपाय खोज निम्बलत हैं। फिर भी यह तन्त्री है कि  
मिन्विया स तुम पढो—ऐसा करन म हम लोगा की तरफ न कुठ सहा-  
यता उमे, उनके परिवार वाला का मिन जायगी।”

“अच्छा, ऐसा क्या नहीं करने कि मेरे बिना पडे ही उमे याही सौ  
रुपया माहवार द दिया करा।”

‘पर वह इस तरह के दान न स्वीकार नहीं करेगी। अँगरेजी  
परम्परा म पती हुई ढङ्की है। कोई न कोई बहाना इस दान के निये  
चाहिये।’

मनिया ने मेरे प्रस्ताव के प्रति अपनी मौन सम्मति प्रकट की।

दूसरे दिन दोपहर का मिन्विया फिर आयी। उसके सुन्दर मुख पर  
वही मौन उदास छाया घिरी हुई थी। मैं प्रमत्त भाव से कहा—“आइय  
मिन रातिन्सन। अब आप निम्बना भी पढायेंगी, मनिया का कोई आपत्ति  
न हागी।’

एक सलज मुसवान ने उसके मुख की सारी उदानी जसे धा दी।

उस दिन मनिया पूरी लगन से अपना पाठ सीखन म जुट गयी।  
उसने पूरी बणमाला छाप की बड़ी निम्बावट म लिख डाली। उसके बाद  
मिन्विया न उमी दिन उमे छोटी निम्बावट भी निम्बाना आरम्भ कर  
दिया। मनिया की दिलचस्पी बन्न लगी। उसने सोचा होगा कि हिंदी  
की तरह अँगरेजी मे भी बणमाला एक ही तरह की हागी। पर जब

उमने छोटी लिखावट में चित्र रूप देखा तो उमस पवगने के बजाय उमका कुतूहल उम नयी भाषा के प्रति जम और बढ़ गया। वह उसे भी जल्दी से जानी सीख डालने के अभ्यास में जुग गयी। उसके बाद सिखिया न जब उम बनाया कि वह छापे की लिखावट है, हाथ की लिखावट का रूप उसमें बगना हुआ होता है तो यह उन एक अच्छा विनाद मानूम हुआ और वह नग हाथा उम नये रूप से भी परिचित हान का अभ्यास करने लगी।

उस दिन में मनिया की तिनस्पदी बगती ही चली गयी और वह प्रतिदिन पूरे तान घट एकान मनायाग व साथ अंगरेजी भाषा का जान प्राप्त करन के उद्देश्य से जुटी रही। मुझ लगा कि जमे वह उम रहस्य मयी भाषा का जल्दी में जल्दी सीख डालन के लिये बहद उत्सुक हो उठी है जिसमें सिखिया मुझमें अपनी मा से और अपनी बहन से यानें दिया करती है। एक ही हफ्त के भीतर वह दो एक छोटे मोटे वाक्य ही फटी अंगरेजी में सिखिया से बोलने भी लग गयी। सिखिया का उत्साह भी बहुत बढ़ गया था और वह भी मनिया का अंगरेजी जान जदी में जदी बगान के उद्देश्य में अपनी सारी शक्ति लगा रही थी।

मनिया का एक नय शगल में सलीन दखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं माचा कि अपने दुखी जीवन में जो समाधारण रूप में भयावह अनुभव उन हुए उनके कारण उनका अतमन में विचित्र मनोभाव का झाल जान फलकर उत्पन्न गया है। उम अतमन से वह सज समन परे जान रहती है और उसे भूलना चाहने पर भी भूल नहीं पाती। पर इस नय शगल में यमन रहन पर वह निश्चय ही मन के मार्मिक भावा को भूत सकेगी।

जय सिखिया पगन आनी तब मैं बाहर निकल जाता था। या तो मिसेज रातिमन में गपगप करने चला जाता या गहर की ओर निश्चय टहलने निकल पगता।

सुबह में मभय मैं उसे एक या दो घटा नियमित रूप में हिन्दी पढाना आरम्भ कर दिया। हिन्दी वह अंगरेजी से भी दुगनी तेजी से सीखने लगी। बीच-बीच में आनवाले मस्कृत के कठिन वादा का अर्थ वह



मन ही मन जैसे रटती जा रही थी। एक बार एक शब्द का १०७  
 अर्थ मालूम हो जाने पर दुबारा बताने की जरूरत मुझे  
 कभी नहा पड़ी।

मई का महीना बीत ही चुका था। जून का महीना भी पूरा बीत  
 गया। वषा बड़ी तेजी से गुरू हो गयी। धीरे धीरे जुलाई भी बीत चला।  
 बाहरी विश्व के घनाधिकार में भीतरी विश्व के प्रकाश को और अधिक  
 तीव्रता से चमकाने की आवश्यकता आ पड़ी। और मनिया इसका पूरा  
 पूरा लाभ उठाकर अध्ययन में और अधिक मनोयोग से जुट गयी।

१०

मेरे मन में अब केवल एक ही बात की चिन्ता रह  
 गयी थी। मैं चाहता था कि मनिया से मेरा वैवाहिक  
 संबंध घर लौटने के पहले ही हो जाय। पर इसमें  
 सबसे बड़ी दबावट मेरे सामने यह आ गयी थी कि मनिया अपन को बौद्ध  
 मानती थी और स्वेच्छा से हिन्दू धर्म में दीक्षित होना नहीं चाहती थी।  
 मिबिल मरिज के लिये तो वह किसी भी हालत में तयार नहीं हो सकती  
 थी। एक दिन मैं उसके आगे फिर यह प्रस्ताव रखा कि वह हिन्दू धर्म  
 स्वीकार कर ले। मैंने कहा—“अगर आम समाज में तुम्हारी गुद्धि हो  
 जानी है तो फिर हम दोनों के विवाह में किसी तरह की भी कोई बाधा  
 नहीं रह जाती।”

पर ‘गुद्धि’ शब्द पर उसने आपत्ति प्रकट की। उसने कहा—“मुझे  
 तुम ‘गुद्ध’ क्या मानते हो, जो मेरी ‘गुद्धि’ की बात चलाते हो? बौद्ध  
 लोग हिन्दुओं से किम रूप में गिरे हुए हैं?”

“तुम मेरी बात का गलत अर्थ लगा रही हो,” मैंने कहा। “मेरा  
 तात्पर्य यह कनइ नहीं है कि बौद्ध लोग ‘गुद्ध’ हैं। पर जब किसी व्यक्ति  
 को दूसरे धर्म में ले लिया जाता है तब उसके लिये यह कहा जाता है कि

उसकी 'शुद्धि' हो गयी है। बोनचाल में बहुत स गन्द ऐसे उल जाते हैं जिनका मूल अर्थ से कोई संबंध नहीं रहता। 'शुद्धि' गन्द भी आजकल एक विशेष अर्थ रखता है जो मूल अर्थ से भिन्न है।"

"पर तुम इस बात के लिय इतना इठ क्या पकड़े बट हो कि मैं हिंदू बन जाऊँ ?"

"मैंने हिंदू धर्म का ठीका नहीं ले रखा है, और न मेरी यही इच्छा है कि हिंदू धर्म को मानने वालों की संख्या बढ़ती चली जाय। मैं तुमसे जो कहता हूँ वह सिर्फ इतना है कि तुम्हारे हिंदू धर्म स्वीकार कर लेने से हम दाना के विवाह में सुविधा हो जायगी। नहीं तो हम दोनों क लिये 'सिविल मरिज' ही एकमात्र उपाय रह जाता है। सिविल मरिज में वर और वधू दानों को यह स्वीकार करना पड़ता है कि वे कोई धर्म नहीं मानते। तुम यह स्वीकार कभी नहीं करोगी, यह मैं जानता हूँ।"

मनिया मेरी इस बात से बड़े सोच में पड़ गयी। कुछ देर बाद बोली— 'अगर मुझे धर्म बदलना ही होगा तो मैं ईसाई बन जाऊँगी— हिंदू किसी भी हालत में नहीं।'

"क्या, हिंदू धर्म के प्रति तुम्हारे मन में इस बदर घणा क्या है ?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

धमका नहीं है एक तरह का डर है। मेरे मन के भीतर से जिस कोई कहना है कि हिंदू धर्म को अपनाते ही मैं इस दुनिया में कहीं भी नहीं रह जाऊँगी।

मैंने देखा कि उसके भीतर जो भाव छायारहे दरी दृढ़ पड़ी हैं उनमें से यह भावका भी एक है। मैं बड़े सोच में पड़ गया। कुछ देर बाद मैंने पूछा—

"तो ईसाई धर्म तुम्हें पसंद है ? क्या ? उसमें कोई खास बात है क्या ?"

"हाँ। सित्विया ने बताया है कि अगर सच्चे मन से भगवान ईसा से प्रार्थना की जाय तो मनुष्य के सब पाप कट जाते हैं। उसने कहा कि अगर मैं अपनी माँ के लिये भी प्रार्थना करूँ तो उसने जो हत्या और

आत्महत्या की है उसका सारा पाप धुल जायगा और पर- १०६  
लाक में उसकी आत्म शांति से रह पायेगी।" अपनी  
सुंदर, छोटी-सी आँखों में एक पारलौकिक आभा-सी भलवाती हुई  
मनिया वाली।

"तो तुम अपनी माँ का किस्सा सिन्धिया से भी कह सुनाया  
है?" धीमे स्वर में मैंने कहा।

"हां। क्या इसमें कोई हाति है? सिन्धिया इतनी अच्छी लड़की  
है कि मैं उससे अपने मन की कोई बात छिपा ही नहीं पाती। इसके  
अलावा उसने मुझे यह ममभाया है कि जितने भी आदमिया से मेरी  
जान-बहचान है, उन सबके आग-अगर में अपनी माँ का किस्सा सुनाऊँ  
तो इसमें मर मन का बोझ बहुत हल्का हो जायगा, और साथ ही  
परलाक में माँ की आत्मा का भी गाँठि मिलेगी।"

सिन्धिया के स्वभाव के इस नये पहलू से परिचित होकर मेरे  
आश्चय का ठिकाना नहीं था। तो क्या वह कोई मिश्रित लड़की है?  
मनिया को पढ़ाना क्या उसी इसीलिये म्बीकार किया है कि वह उसे  
ईसाई धर्म की विगपता का पाठ पढाकर उसे अपने धर्म म स्वीक लेगी?  
रह रहकर मेरे भीतर शोध की भावना जगने लगी।

मैंने कहा— "अगर सिन्धिया ने तुमसे ऐसा कहा है तब तो वह  
बड़ी खतरनाक लड़की मालूम पडती है। तुम हर्गिज अपनी माँ की  
चर्चा किसी ने न चलाना। इससे तुम्हें कभी लाभ नहीं हो सकता,  
बल्कि परेशानी ही बडेगी।"

मेरी बात सुनकर मनिया अत्यंत शांत भाव से मुस्कराती जैसे  
जिमी बच्चे की नादानि से मेरी बात सुनकर प्रेम से हँस रही हो।  
वाली— तुम बिलकुल चिंता न करो। मेरी परेशानी बिलकुल भी नहीं  
बडेगी। सिन्धिया को तुम अभी नहीं जानते। वह बनी ही समझदार,  
दूसरो पर दया करने वाली और सबकी मलाद चाहनवाली लड़की है।  
वह कभी गलत सलाह मुझे नही द सकती।"

मनिया के दृढ़ विश्वास पर मैं दग रह गया। मैं यह साचकर हैरान  
था कि सिन्धिया ने कुछ ही सप्ताहों के भीतर कौन-सा जादू उस पर फेर

दिया ? क्या मेरी ही तरह वह भी किसी हिप्नाटिक बत्ता की जानकारी रखती है ? और मनिया के सरल और अनु-  
पल स्वभाव से परिचित होकर उसका अनुचित लाभ उठाने का  
कर रही है ?

फिर मेरे मन में यह तक उठा कि मुझे यह करने का क्या  
कार है कि सिल्विया अपनी हिप्नाटिक बत्ता में प्रयास में नाजायज  
श उठा रही है, जबकि मैं स्वयं इस अपराध का अपराधी हूँ ?  
दूसरे ही क्षण मुझे याद आया कि मैंने केवल इस उद्देश्य से मनिया  
प्रपन्न बनाने का प्रयास नहीं किया है कि वह मेरा आत्मतुष्टि  
के लिये मुझे प्रेम करे, बल्कि इसलिये कि मैं उसका भूके हुए, जीवन-  
प में पिस हुए और पारिवारिक दुःखटनामा की शान्ति में पीड़ित मन  
ठीक रास्ते पर लाना चाहता हूँ। और सिल्विया ? वह केवल इस  
क्षय में उम बहराना चाहती है कि ईसाई समाज में एक ईसाई की  
या और बढ़ जाय। ईसाई पादरियों को इस तरह का धाना में लिनना  
मिन्नता है इसके कई उदाहरण मेरे सामने थे।

पर इस तरह के तर्क से मेरे मन को तनिक भी शान्ति नहीं मिलती  
; और मैं रह रहकर अपने आपसे खीझ उठता था। सिल्विया को  
बहुत ही भयंकर रूप से धून नारी मान्य की इच्छा उठाने पर भी  
रा में विश्वास अधिक देर तक ठहर नहीं पाता था।

एक लम्बी साँस खींचते हुए हताश स्वर में मैंने कहा— 'मैं जिस  
लभन को सुनमाना चाहता था उस तुमने और अधिक उलझा  
देया, मनिया !

'कस ?

'मैं चाहता था कि जल्दी ही कोई ऐसा हल निकल आवे जिससे  
व्याह में कोई झूझट न रह जाय। पर अब तुमने ईसाई धर्म का अपनाने  
की बात बताकर एक नयी परेशानी मेरे लिये पैदा कर दी !'

'इसमें परेशानी की कौन सी बात है ? सहन भाव से मनिया  
बोली— 'जब किसी एक धर्म को अपनाना है ही तो ऐसे धर्म का क्या  
न अपनाना जाय जो मन को ज्यादा सन्तोष दे सके ?'

का मानना जरूरी है? क्या न हम लोग सब धर्मों को लात मारकर सिविल मरिज कर लें? मैं पूरी गंभीरता के साथ कहा।

मनिया अपने दाता से जीम काटनी हुई भयभीत भाव से बोली—  
“अब आपरे! ऐसी बात मूलकर भी न कहना। जिनी भी धर्म का सारा जव नहीं रहेगा तब जीकर ही हम लोग क्या करेंगे? यह साकता मरा सिगड ही चुका है, पर परलाक के निय ता कोई महारा रहन दो!”

एमा दयनीयता से उमने यह बात कही कि मुझे लगा जैसे किसी न मरे मम का एक झलभनाती टुट डुरी की नाक से डू दिया।

मैं देखा कि मनिया के मन के नीतर की जा मिट्टी है वह तल से मनुह तर एकमात्र धार्मिक उत्पादन के लिए ही उपयुक्त है। चाहे उष्ण भूत प्रेन, यश, दानव त्रानि का पूजा की भावना भर दी जाय, चाहे अवतारी पुष्पा की, चाहे दवा की। किसी न किसी रूप में उस भावना का अस्तित्व हाना ही चाहिये। उस भावना के प्रभाव में उसका मारा मनाक्षेन एकदम बजर और नाड हो जान की आशका है।

पर इन जानकारी से उस समन्या का कोई समाधान नहीं हो सकता था जा मरे सिर पर मजार थी। क्याकि यह निश्चित था कि अब अत्रिक समय तक विवाह का नहा टाला जा सकता था। मरे मामने केवल दो रास्ते थे। या तो जन्दी ही मनिया स मरा विवाह हो जाय, या फिर मैं उसका साथ मदा के लिए त्याग दूँ। क्याकि दिना किसी धार्मिक बंधन के मनिया मेरे साथ किसी प्रकार का निश्चित और धनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए तैयार न थी, यह मैं पहले ही जान चुका था।

उस समय मैं चुप हो रहा। पर जो तीका काँटा मेरे मन्त्रिष्व म गग गया था वह मुझे चन नहीं लेने दता था। तब मे चौबीसो घंटे मेरे मन में इसी बात का लकर उषेष्ट गुन चलने लगी कि एम सन्ट से उबरन का क्या रास्ता हो सकता है। यह म् पहली बार मर मन में उठा कि यदि मैं इसाद धर्म का स्वीकार कर ही चुता मम क्या हानि है? उस

हालत में आसानी से झूठ मिट सकता है, क्योंकि मनिया तो उस धम को अपनाव लिये तयार बठी ही है। पर

जिस धम पर मेरी तनिक भी आस्था न हो उसे आडम्बर के साथ अपनाना और अपन सगे-सम्बन्धियों और इष्ट मित्रों को सफाई देना फिरना या उनकी भूमिलित निंदा का गिंवार बनना, इसमें कौन सा तुक है ? एक अच्छे-खामे तमाश का पात्र बनकर परिहाम और 'दगवागिया' को महन करने का साहम क्या मुझमें है ? हिंदू धम पर भी मेरा विश्वास नहीं था, पर मैं उसे बाहरी तौर से यह सोचकर अपनाय हूँ था कि एक चीज जब परम्परा से चली आती है तो उसे चरने दो कौन उसे अस्वीकार करके सामाजिक झूठ अपने सिर पर मोल ले ! अथवा किसी भी सघप में पड़ने और किसी भी प्रकार के सामूहिक विरोध या प्रतिगध का सामना करने की प्रवृत्ति मुझमें कभी नहीं रही। अब यदि मैं एक परम्परागत धम का विल्ला त्यागकर किसी ऐसे धम के विल्ला का अपनाऊँ, जिसमें मेरी और भी कम श्रद्धा है, और उस अवाञ्छित परिघटन के लिये मैं जग हँसाई का पात्र बन तो इसमें बड़ी मूर्खता दूसरी क्या हो सकती है ? एक दूसरा रास्ता यह हो सकता था कि मैं चौब धम का अपनाता, पर जसा एक धम वसा ही दूसरा धम !

एक दिन मैं दोपहर को मिलिव्या के आने पर जा बाहर निकला तो शाम को ही घर चला। माल में एक परिचित सज्जन मिल गया था, उन्होंने 'यय' की बातों

में मुझे उलभा दिया और बलपूर्वक अपना यहाँ पकड़कर मुझे ले गया। उनकी क्षान्तिरदारी से मुक्त होने में देर हो गयी। किसी तरह उनसे पिठ छुड़ाकर घर पहुँचा। दरवाजा खुला था, मैं सीधे अपने कमरे में गया। मनिया वहाँ नहीं थी। मैं उसके कमरे की ओर बढ़ा। कमरा आधा

खुला हुआ था। मैं ज्या ही भीतर प्रवेश करन लगा त्वाही ११३  
 ठिठक कर खड़ा हो गया। मैं दखा, सिल्विया और वह एक  
 दूर के गने से लिपटी हुई हैं और दानो मुदी हुई आखा से टपाटप आनू  
 गिरा रही हैं। जस न जाने कितन जमा के बाद दो विद्युदी हुई प्रेमि-  
 काग्रा के बीच भाग्य के किसी अज्ञात चन से पुर्मिला हा पाया हो।  
 उन दाना की उस तद्गत और एकात अवस्था म किसी प्रकार का बिन्न  
 डालने का साहस मुझे नहीं हुआ। मैं तत्काल दब पाँव अपन कमर की  
 आर लौट चला।

प्राय पन्द्रह मिनट तक मैं चुपचाप बठा रहा। उसके बाद मैं न  
 खासना गुरु कर दिया। ग्वासी सुनन क बाद भी कुछ देर तक मनिया  
 नहीं आयी। जब आयी तब वह अपनी आखें पोछ चुकी थी। सहज  
 स्निग्ध मुसकान से मेरा स्वागत करती हुई वह बोली—“आज तुम वही  
 देर से लौटे।”

“हा एक मित्र मिल गये थे। उन्होंने राक लिया। तुम्हारी तजी  
 अत ता ठीक है? चेहरा कुछ उदाम ना लगता है।”

“तवीअत बिलकुल ठीक है। उदासी का कोई कारण नहीं है।”,  
 वदुत हा कामल और वदुत ही मधुर स्वर म मनिया वाली। उसके कठ  
 स्वर म ककशता कभी नहीं रही, पर आन की भी कोमलता और मिठास  
 भी पहले कभी नहीं रही।

“सिल्विया चली गयी?”

‘नहीं, आन वह अभी तक यहीं बठी रह गयी।’

“तब तो आज खूब पढाई हुई होगी।”

“नहीं, उमी सहज स्निग्ध मुसकान से और उमी कामल स्वर म  
 मनिया बोली—“पढाई तो ज्यादा नहीं हुई। पर वदुत-सी बातें हुई।

इतने मे सिल्विया मेरे कमरे म आकर, एक धार मेरी आर सलज्ज  
 मुसकान भरी दृष्टि से दखकर, बिना कुछ कह-मुने बाहर चली गयी।

“क्या बातें हुई?”

‘उसन बताया कि आदमी से प्रेम करन म जो कुछ सुख है उसे  
 साब गुना सुख है भगवान से प्रेम करन म।’

११४ "तब क्या वह तुम्हें यह बता गयी है कि किसी आदमी से प्रेम कभी न करना ?" मैंने शक्ति भाव से पूछा ।

'नहीं, उसका कहना है कि आदमी से प्रेम करो, पर आदमी के भीतर पहले भगवान का देस लो और उसे अच्छी तरह पहचान लो, तब तुम्हारा प्रेम भगवान के चरणों में ही अर्पित होगा।' उसके मुख पर वही स्थिर शांत मुसकान विराज रही थी। उसके मुख पर एक ऐसी सौम्य शांति झलक रही थी जसी मैंने पहले कभी नहीं देखी थी। एक उद्दीप्त भाव से उसका चेहरा जगमगा उठा था। मैं जन्म से ही नास्तिक रहा हूँ। किसी धार्मिक कारण से उत्पन्न भावुकता के प्रति मेरे मन में कभी श्रद्धा नहीं रही है। पर आज मनिया की भावुकता ने उसके धार्मिक सौम्य में एक अभूतपूर्व चेतना भरकर उसका जो उदात्त रूप मेरे आग रस दिया था उसकी उपमा मैं तनिक भी नहीं कर पाता था। उस श्रान्त रहस्यमयी चेतना की वास्तविक किरणें जैसे मेरे प्राणों के ऊपर छाय हुए जब अंबराध के अणु-परमाणु का ध्वस्त करके सीधे भीतर प्रवेश करती हुई एक मूलतः नयी अनुभूति को उभारने लगी थी। मनुष्य के भीतर भगवान के निवास की बात मेरे लिये कोई नयी जान कारी नहीं थी। इस तरह की बातों में कई बार पहले भी सुन और पढ़ चुका था। पर मनिया की भावुकता कोरी मिद्धातवादिता से बहुत ऊपर उठी हुई और बहुत गहराई में डूबी हुई-सी मुझे लगी।

फिर भी मेरे मन में एक बार यह व्यग्न करने की इच्छा उठी कि "तुम्हारे और सित्त्विया के बीच अभी कुछ ही देर पहले जो प्रेमभाव चल रहा था वह भगवान का प्रेम भगवान के प्रति था या मनुष्य का मनुष्य के प्रति? अपनी इस नीच प्रवृत्ति को दवाने में मैं बड़ी कठिनाई से सफल हो पाया। फिर भी परिहास करने में मैं न चूका—'मेरे भीतर तुममें भगवान पा लिया है या नहीं?'"

मेरे परिहासामक ढंग से तनिक भी विचलित न होकर मनिया उसी शांत भाव से बोली— मुझे विश्वास है कि मैं जल्दी ही पा चुकी। सित्त्विया ने जो कुञ्जी मुझे बताया है उससे कोई कठिनाई नहीं पड़ेगी।

"वह कौन-सी कुञ्जी है ?"



“वह तुम्हें वतान की नहीं है ”

११५

“पर मेरे भगवान से तुम कोई बात छिपा नहीं पाओगी, यह तुम जान लो ।”

मैंने सोचा था कि अब की निश्चय ही मनिया के भीतर से हँसी फूट पड़ेगी । पर मैं आश्चर्य में दखा, मेरे इतनी बड़ी परिहासिकता का भी प्रभाव उस पर नहीं पड़ा । सहज गम्भीर भाव से उसने कहा—“यह मैं जानती हूँ, और भगवान से छिपाने की कोई बात मेरे भीतर ही नहीं ।”

मैं सन्न था । कुछ क्षणों तक एकांत दृष्टि से उसकी ओर देखता रहा उसके बाद वाला—“तुम अभी तक खड़ी क्या हा ? बठ जाया ।

वह बठ गयी । मैंने नौकर को आवाज दी और चाय ले आने को कहा ।

उस रात मैं पलंग पर बहुत देर तक करवटें बदलता हुआ सोचता रहा कि सितिवया का ससग मनिया के लिये हितकारी है या नहीं । मैं स्पष्ट ही देख रहा था कि उसने मनिया के मन की बड़ी गहराई पर कब्जा पा लिया था । मन सोचा—“वह मनिया की भावुकता से पूरा लाभ उठाकर, उसके मन की मिट्टी का बड़े गहरे में खोदकर उसमें अपनी इच्छा के अनुसार बीज बोती चली जा रही है । और एक दिन जब वे बीज फल कर बड़े-बड़े पौदों के रूप में मनिया के सारे मन का छा देंगे तब फिर काइ युक्ति उन बीजा का माफ करने की नहीं रह जायगी । इसलिये अभी से सावधान होकर वतमान वातावरण को छोड़ कर वही दूसरी जगह चने जान में ही भलाई है ।” मैंने निश्चय किया कि मैं दूसरे ही दिन किसी दूसरे स्थान में एक नये बंगले की खोज करूँगा ।

यह निश्चय कर लेने के बाद मैं निश्चिन्त होकर सो जाने के इरादे से अपने गरीर में कबल अच्छी तरह लपट लिया । थोड़ी ही देर बाद सचमुच नींद आ गयी । प्रायः ढाई तीन घंटे तक मैं एक करवट सोया रहा । उसके बाद कोई एक विचित्र सपना देखने के बाद भरी नींद उचट

गयी। सपना कुछ डरावना था, पर ठीक क्या दखा था यह मैं नौद उचटत ही तत्काल भूल गया। श्रापि सुनत ही मैंने दखा कि मनिया क कमरे में बती जली हुई है। यह ज्ञानन क लिय कि उमकी तमीघत ता ठीक है, मैं उठा। उमके कमर क दरवाज क किवाड यों ही फर दिय गय थ। उन दोनो के बीच म शून्य गप रह गया था। उसी से भाफते हुए मैंने देखा मनिया नीचे पग पर एक गी पिछाकर घुटने टककर बठा हुई ह। उसके सामन एक छोटा सा गान ग्ना हुआ था, जो सगममर का बना हुआ सा लगता था। उमकी श्रांति मदी हइ थीं और उनसे निरंतर आमुमा का धारा यह रही थी। मैं उन दग्ध क लिये कतई तयार नही था हालांकि पिछने कुछ दिना से मित्रिया के ममग म रहने स उसकी मानसिक प्रगति क जो दष्टांत मरे सामने थे उह दखत हुए वह दश्य मुझे आश्चयजनक नही लगता चाहिये था। मैं दरवाज क बाहर ही पत्थर की मूर्ति-सा पडा रह गया और निनिमेष दष्टि स उम उम अपूव कल्पित रूप का दखता रहा। छटे-छठे मुझे पांच मिनट दस मिनट पन्द्रह मिनट, बीस मिनट और उसके बाद आघ घटा हो गया पर वह नहा उठी। अतीन्द्रिय पुलक स दिह्लल, अलीकिक प्रेम स गद्गद् अवस्था म एकांत ध्यान म मग्न बठी रही। मैं भी वसे ही पडा रहा, टन स मम न हुआ, जैसे किसी ने मेर पावा को कीला मे ठोक कर वही पर जमा लिया हो। पाँवो म भुज्जी चल गयी पर उसकी कुछ भी परवाह मुझे नहा था। उसी अवस्था म मुझे जब प्राय आघा घटा और बीत गया, और उमकी तद्गत अवस्था क भग होने का कोई लक्षण मुझे न दिनायी लिया तब मैं प्राय भनिन्धा स, चुपचाप दग्ध पाँव लौट चला।

पलंग पर लट लेट सांचन लगा कि मनिया कहाँ म कहीं गली जा रही है, और दिन पर दिन मुझमे कितनी दूर होती जा री है। यदि सुरत ही उसे उस नये माग स लौटाया नही जाता, जहाँ वः धात्मविस्मृत होकर किसी अपारिधिव शक्ति के प्रबल आकषण से वही तेजी-से अग्रसर हानी चली जा रही है, तो यह निश्चित है कि बहुत जल्द फिर उसके और मेर बीच म एक दुजध्य व्यवधान खडा हा जायगा। किन उपाय मे उस लौटाया जाय, मैं यही चिंता करने लगा। कुछ दर तक एकांत

मन से सोचने पर एक उपाय मुझे सूझ गया। मैंने निश्चय किया कि मुवह होते ही उस उपाय को काम में लाऊंगा।

११७

प्रायः दो घट बाद मनिया न अपन कमरे की बत्ती बुझायी, और लेटे ही ले, आवाज से मैंने अनुमान लगाया कि वह अपने पलंग पर जाकर लेट गयी है। उसके कुछ ही देर बाद मेरी भी आंखें लग गयीं।

दूसरे दिन मैं कुछ देर से उठा। मनिया पहल ही से नहा धाकर ड्राइंग रूम में बठ गयी थी और चाय के लिये मेरा इंतजार कर रही थी। मैं मिना हाथ मुह धोये ही बठ गया। मैंने देखा मनिया क मूह पर रात्रि जागरण जनित थकान का लेश भी बतमान नहीं है, बकि वह पहल का अपला क गुना अतिक स्वस्थ और सुंदर दिखाई देती थी। एक एसी अपूब नाज्जी उसके चेहरे पर भलक रही थी जिसका कोई आभाम मुझे इमने पहले कभी नहीं मिना था। जब से वह मेरे ससग में आयी थी तब से मैं बराबर उसके मुख पर विपाद और ग्लानि की एक स्थिर छाया देखता आ रहा था। यह ठीक है कि कुछ विशेष अवमरो पर उस स्थिर छाया के ऊपर साभ की पीली धूप का एक भीना आवरण भलक उठता था, पर वह आवरण सया के आलोक की तरह शीघ्र ही अस्तगत हो जाया करता था। किनु आज मैंने देखा कि स्थिर विपाद की बत् छाया स्थिर शाति में बदल गयी है और उसकी आत्मा की सारी ग्लानि जम धुल कर एक तरल, अमल, स्पटिकोज्वल आलोक में बदल गयी है। क्षण भर के दष्टिपात से मेरे मन में उसके उस नय रूप के प्रतिबिंब की यह प्रतिक्रिया हुई और तुरंत ही मेरे मन में त्रिजली की-सी चमक न यह तक उठा—जिस कारण से मनिया के व्यक्तित्व के बाहरी और भीतरी रूपों में इतना बडा और ऐसा स्वस्थ परिवर्तन हुआ है वह चाह कुछ भी हो, उपक्षणीय कदापि नहीं हो सकता। उसका प्रेरक चाह कोई भी हो, उम निरम्बार हो भाजन मानना कदापि यथोचित न होगा। और इम तक के उठते ही मेरे मन में उम अमन के प्रयोग की इच्छा डीली पड गयी जिनसे सम्बन्ध में मैंने पिछली रात निश्चय किया था।

मनिया मुझे बिना हाथ धोये ही चाय के निय बैठते देखकर मुस्करायी । एक दिन था जब मैं उभ दयनीय मानता था और इस बात की चेष्टा न रत्ता था कि

मेरे बड़प्पन के आगे उसके भीतर आत्मलघुता की भावना बलन न पाये । पर आज उसकी जो मुसकान परिपूर्ण आत्मविश्वास से प्रेरित हावर ध्यक्त हो रही थी उसके आग में स्वय अपन को लघु अनुभव करन लगा था और समुचित सा हो उठा । आज वह दयावती थी और मैं दयनीय था ।

“रात म तुम्हें नीद नहीं आयी थी ?” मेर प्याले म चाय डानत हुए उसी दयापूर्ण—तथापि ग्रहभाव से नूय—मुसकान का मुग पर भल कात हुए उमने पूछा ।

मैं अपनी प्रकृति की दुष्टता का चाहने पर भी दया न मका । ज्ञाना—  
“तुम्हारा अनुमान ठीक ही है । कल रात तुम्हारे कमर की बत्ता बहुत देर तक जलत देखकर मुझे दर से नीद आयी ।”

“अच्छा !” अत्यंत चिंतित भाव से वह बोली—“तब मैं आज से पिछवाड़े के कमरे म चली जाऊंगी । रात म मुझे अन्तर बत्ती दर तक जलानी होगी जिससे तुम्हारी नीद फिर खराब हो सकती है । यह कह कर उसने अपने प्याले म चाय टाली ।

“कयो ? बत्ती देर तक क्या जलानी होगी ?” बनने हुए मैंन पूछा ।

‘मुझे भी आजकल नीद कम ही आती है, इसलिय बीच-बीच म भगवान का ध्यान करने की इच्छा होती है ।

“बुद्ध भगवान का ध्यान ?” यह प्रश्न करते हुए मैं जान रहा था कि मरी दुष्टता नीचना की और बढ रही है ।

‘नही, प्रभु ईया का ।’ अत्यंत सरल भाव से उसने उत्तर दिया ।

‘तब क्या बौद्ध धम से तुम्ह विरक्ति हो गयी है ?’

“नही तो ! ऐसा तुम कयो सोचते हो ?

“इसलिय कि तुम भगवान बुद्ध का ध्यान करना छाकर धमा का ध्यान करने लगी हो । मैं तो समझता था कि बौद्ध धम पर तुम्हारी बडी घास्या है । मुमने मुझमे कहा था कि तुम बौद्ध धम त्यागकर हिंदू धम कभी स्वीकार नहीं करोगी । साथ ही मुमने यह जहर कहा था कि यदि

तुम्हें घम बदलना ही पड़ेगा तो तुम ईसाई धर्म स्वीकार करोगी । 'यदि बदलना ही पड़ेगा वा श्रय स्पष्ट ही यह है

११६

कि यदि तुम्हें वाध्य न किया जाय तो तुम बौद्ध धर्म वा त्यागने के लिये तैयार नहीं हो और इसका आशय मैं यही समझता था कि बुद्ध भगवान के प्रति तुम्हारे मन में जितनी बड़ी भक्ति है उतनी दूररे किसी के प्रति नहीं । पर आज यह जानकर कि तुम आजी रात में जागकर बहून दर तक एजात में प्रभु ईसा का ध्यान किया करती हो, मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं ।" यह कहते हुए मैं अपने और उनके प्याले में दूध डाला और चम्मच से चीनी मिलाने लगा ।

मैंने साक्षात् था कि मेरी इस बात से अनिया निम्नतर हो जायगी और भप जायगी ।

पर वह तनिक भी विचलित नहीं हुई । उसने अत्यन्त सरल भाव में मेरी उम्र व्यंग्यता को ग्रहण किया । सहज म्लिग्ध भाव में मदमद मुस्करानी हुई बहुत धीरे से बड़े ही मीठे और गमल स्वर में बोली— 'तुम ठीक कहते हो । बौद्ध धर्म के प्रति मेरा मन में बड़ी प्रार्थना रहती है, और भगवान बुद्ध के प्रति भी " अनिया धीरे धीरे संस्कृत शब्दों को समझने और उनका प्रयोग भी करने लगी थी जा मेरे लिये वास्तव में एक बहुत बड़े रूप का कारण था ।

"तब ? ' एक घूट चाय पीते हुए मैंने कहा ।

"पर सच्ची बात यह है कि बौद्ध धर्म के सवध में मेरी जानकारी कभी कुछ भी नहीं रहती और बुद्ध भगवान की केवल कागजी मूर्ति ही मैं देखी है जा बच्चा के पास थी और जिसके पास बैठकर वह 'मनि धर्म हूँ ' यह मंत्र जप करता था । बौद्ध धर्म के प्रति मेरी आस्था का कारण मुझे केवल यही लगता है कि बच्चा उम्र धर्म के सवध में बड़ा बढ़ता था । अपने पतृक धर्म के प्रति माह मिलकुल स्वाभाविक है । हिन्दू धर्म से मेरा कभी कुछ भी सवध नहीं रहा है, इतनी उमर के प्रति मैं उदासीन हूँ '

"तुम गलत कहती हो अनिया", बीच ही में टोचने हुए मैंने कहा— "तुम हिन्दू धर्म के प्रति उदासीन नहीं हो, बल्कि उससे भागती हो । उम

धम के प्रति तुम्हारे मन में—मैं विनोद तो नहीं कहूँगा—  
पर विरक्ति का भाव अवश्य है ।'

इस बार मनिया के मुख के सहज क्षात भाव के ऊपर महमा एक  
अधरी छाया घिर आयी ।

“मैं हिंदू धम से भागती हूँ । प्रायः फुसफुसाते हुए उसने कहा ।  
उसके बाद एक विचित्र अनमनी सी दृष्टि से मेरी ओर देखती हुई  
वाली—“हाँ, तुम ठीक कहते हो । मैं जरूर भागती हूँ हिंदू धम से ।  
याद आ गया । मन हाँ ता कहा था तुमसे । पर क्या भागती हूँ ?  
इसका कारण क्या हो सकता है ? यह मैं स्वयं नहीं जानती । किसी भी  
हिंदू से मेरा अभी कोई बर नहीं रहा । हाँ बच्चा जरूर कहा करता था  
कि हिंदुओं के चक्कर में कभी मत पडना । वह तुम्हारी जिदगी खराब  
कर डालेगा । पर उसकी उस बात का कोई असर मुझ पर कभी नहीं  
हुआ । मैं मुनकर बंधल हम दिया करती थी । तब क्या कारण हा  
सन्तता है ? वह जस किसी भूली हुई बात को याद करने की चंटा  
करने लगी ।

मैंन धूलतावग कहा— अपने माथे पर हाथ रखकर कुछ देर गौर  
से सोचा तो गायद याद आ जाय ।

उसने मचमुच एसा ही किया । और आश्चर्य की बात यह है कि  
वह कुछ ही देर बाद वही हुई जवान में बोल उठी—“हा मुझे याद आ  
गया ।”

‘क्या ?

मेरी मा हिंदू थी—एक हिंदू परिवार में उसका जन्म हुआ हिंदू  
मस्कारा के बीच में ही वह बड़ी हुई और अतः तक उसने अपने हृदय से  
कभी बौद्ध धम का नहीं अपनाया ।”

‘पर तुम्हारी मा हिंदू थीं तो इससे तुम्हारे मन पर क्या बुरा  
प्रभाव पडा ?

‘पर हम चर्चा को छोडा, मैं तुम्हारे पावा पडती हूँ ।’ अत्यंत  
गिडगिडाती हुई आवाज में उसने कहा । उसकी आँखा में विषाद की  
छाया बहुत सघन हो आया थी ।

मैं चुप हो गया। अपने प्याले में जब दुबारा चाय डालन लगा तब मेरा ध्यान इस बात की ओर गया कि मनिया का प्याला बसे का बना ही रखा हुआ ठंडा हो गया है। मैंने कहा—“इस ठंडी चाय को गिरा दो। मैं गरम चाय डानता हूँ।”

“तुम पीओ। मुझे तनिक भी इच्छा नहीं है।” फिर एक बार उसके मुख पर गीत प्रसन्न भाव भजन उठा। विपाद और ग्लानि की कड़वी घट्टा वह जैसे नीलकण्ठ की तरह पी गयी थी।

मैंने फिर कोई आग्रह नहीं किया। जाड़ी से वह प्याला समाप्त कर मैं बनाम उठकर चला गया। दापहर को खाना खान के बाद जब मैंने देखा कि मनिया का चित्त प्रसन्न है तब फिर मैंने काच पर लेट-लेट, मिगट पूकते हुए वही चचा छेड़ दी जो सुनह अघूरी रह गयी थी। मैंने कहा—“तुमने फिर यह बनाया नहा कि भगवान बुद्ध के स्थान पर तुमने भगवान दसा की आराधना क्या आरम्भ की?”

‘मैं बना चुकी हूँ कि भगवान बुद्ध के धम के सम्बन्ध में मरी जान काग बुद्ध भी नहीं हूँ। केवल अधविज्ञान से मैं उस धम का मानती रहूँ—इस विश्वास में कि बंधा की श्रद्धा जिस धम में है वह निश्चय ही श्रेष्ठ होगा। पर प्रभु इसा के धम का समझने में मैं अपनी बुद्धि से काम लन लगी हूँ। मिलिविया में मुझे इन सम्बन्ध में जा मदद मिली है उसका नियम मैं उसकी सलाह करूँगी। मैं अँवरे में भजन रहा थी, उसमें मेरी आँखें खोल दी हैं—मचमुच मेरी आँख खुल गयी हूँ।’ और यह कहते ही उसने अपनी आँखें बंद कर ली। जैसे यह जताना चाहती है कि आँखें बंद कर लेने का अर्थ ही आँख खुलना है। और वहाँ अवसर जाना तो मुझे इस बात पर गायद हँसी आती। पर उस समय तनिक भी ज्ञान नहीं आयी। जिस मयन अतीन्द्रिय छाया के भीतर में निकला हुई उद्दाम ज्याति से उसका मुख प्रभासित हो उठा था उनके आँखें हँसी की वार्डे कल्पना ही मेरे मन में नहीं उठ सकती थी।

मैं बीच पर से उठकर पान वाली एक कुर्सी पर बठ गया और मिगट राखणन में फक्कर उसकी उम भावमग्न छवि का दक्षता रह गया। मैं दख रहा था कि मूल बात टनती चली जा रही है, और उसके

समाधान में जितनी ही तर हो रही है, मनिया का दूरत्व भी उनना ही बढ़ता चला जा रहा है। 'यदि जरूरी से जल्दी उसका निपटारा नहीं होता तो मनिया तुम्हारे हाथ समाज के लिये चली जायेगी।' मुझे धक्का दत हुए किसी की अज्ञात बागी मेरे कानों में कह रही थी।

बुद्ध देर बाद जब मनिया ने आख लाली तब मैं अपने भीतर मार्ग अग्रिष्ठ साम्म बटोरते हुए बोन उठा—'देखा मनिया, विवाह की बात दिन पर दिन टनती चली जा रहा है, अब उस अधिक टालना किसी हालत में भी उचित नहीं है। इसलिए मैं निश्चय कर लिया है कि इस सम्बन्ध में मैं तुम्हारी ही बात मान लूँ। तुम अगर हिंदू धर्म के अनुसार विवाह के लिये राजी नहीं हो तो परवाह नहीं। मैं बौद्ध मत के अनुसार ही विवाह करना ही लिये तयार हूँ। किसी बौद्ध पुरोहित को पकड़ कर मैं जल्दी ही बौद्ध धर्म स्वीकार कर लूँगी। बौद्ध धर्म को मैं हिंदू धर्म की ही एक शाखा मानता हूँ।'

मनिया ने स्वप्न से चौंक उठी। 'तुम यह क्या कहत हो?' आश्चर्य का भाव जतानी हुई वह बोली—'मैं न कब तुमसे क्या कि तुम बौद्ध ठीक है कभी गायद मैंने कहा होगा। पर तब मैं नहीं जानती थी कि किस धर्म में क्या विपत्ता है। आज भी मुझे बौद्ध धर्म का कोई जानकारी नहीं है। इसलिये मैं तो उसी धर्म को अपनाता समझ कर चुकी हूँ जिसके बारे में मुझे कुछ सोचने-समझने का मौका मिला है। अभी मैं ईसाई धर्म स्वीकार नहीं किया है। पर यह निश्चय जान लो कि अब मैं अपने मन और प्राण प्रभु ईसा को सौंप चुकी हूँ।'

'और गरीर?' 'बिजली के ब्रेक में मैंने प्रश्न किया।

मनिया ने उसे ठिठककर एक बार बड़े गौर से मरी ओर देखा। उसके बाद गान भाव से धीमे स्वर में बोली—'मेरे गरीर में प्रभु को काट मोह नहीं है।'

'तो तुमने यह दण्ड स्वीकार कर लिया है कि तुम विवाह तभी करोगी जब मैं ईसाई धर्म स्वीकार करूँ?'



“मैंने विवाह के सवध में अभी कुछ भी निश्चय नहीं किया है।” शांत स्वर में मनिया ने कहा। १२३

मुझे ऐसा अप्रत्याशित घटना लगा कि मैं कुर्सी पर से गिरते गिरते रह गया। तब क्या मरी इतने दिनों की प्रतीक्षा, इतने दिनों का धय, इतने दिनों का समय सब निष्फल सिद्ध होगा? मैंने अपने से यह प्रश्न किया। यदि मेरे सारे त्याग और सेवा का यही मूल्य उसे चुकाना था तो जमान पहले ही क्यों स्पष्ट शब्दों में यह सूचित नहीं कर दिया? इतने दिनों तक मैं अच्छे चकरलस में फँसा रह गया। मुश्किल यह थी कि अपने उस छोट से कित्तु निश्चित उत्तर के बाद उसने मेरे लिये कोई बात भी कहने के नियम नहीं रख छोड़ी। मैं खिसियाकर चुप रह गया और एक नयी सिगरेट जलाने लगा।

मेरे मुख का भाव उस समय निश्चय ही अत्यंत व्यनीय हो उठा होगा, क्योंकि मैं इस कदर मर्माहत हो उठा था कि चाहने पर भी अपने मनोभाव की बाहरी अभिव्यक्ति को दवान में अपने को नितांत अनमथ पा रहा था। सिगरेट जलाकर मैंने दियामलाई फर्स्ट से दायी ओर फँस दी, और दायी ओर की दीवार की ओर मुह करके बड़ी तेजी से धुआँ उठाने लगा। मनिया की ओर मैंने देखा ही नहीं—देखने का माहम ही मुझमें नहीं रह गया था।

२०

कमरे में एकदम सन्नाटा छा गया था। मैं मनिया ही कुछ बोलती थी मैं। कुछ देर बाद परिपूर्ण मौन की वह स्थिति अत्यंत असोभन हो उठी, इसलिये मैं महमा उठकर अपने कमरे में चला गया। वहाँ एक आराम-कुर्सी पर बैठकर सिगरेट पीता हुआ ठंडे मस्तिष्क से भारी स्थिति पर एकान भाव से विचार करने का प्रयत्न करने लगा। उस दिन की और कुछ महीने

पूव की स्थिति में कितना परिवर्तन हुआ गया था ! सत्रमे बैठे दुःख और आश्चर्य की बात जो मुझे लग रही थी वह यह थी कि आज मनिया की तेजस्विता के भाग मेरा सारा मनोबल क्षीण पड़ गया था । मुझे वे दिन याद आयें जब मैंने अपनी दृढ़ इच्छा-शक्ति के प्रयोग से मन्त्रिणा का हिप्नोटिज करके उसके प्रत्येक मनोभाव पूरात अपनी इच्छा-नुसार परिवर्तित करने में सफलता पायी थी । आज भी मैं उन्ही हिप्नोटिज-ग्रन्थ का प्रयोग करना चाहता था, पर आज मैं अपने को इस कदर परत और और पराजित अनुभव कर रहा था कि उसके प्रयोग का उत्साह ही मुझे नहीं मिल रहा था । मैंने सोचा कि वही एकमात्र अस्त्र ऐसा ही सक्ता है जो मनिया का मेरे अनुकूल पक्ष की ओर लौटा सकता है । इमनिय मैं पूरे बल में अपनी मन-शक्ति को फिर म-केन्द्रित करने का प्रयत्न में जुट गया । जब अपने भीतर मुझे काफी बल का अनुभव होने लगा, तब उस मार्मिक पांडा की शकना करने में मुझे सफलता मिल गयी जो मनिया के रुढ़ बित्तु निश्चित उत्तर से प्राप्त हुई थी । कुछ देर बाद सिन्धिया मनिया को पगाने आ पहुँची । मैंने देखा कि उनके मुख के भाव में इधर काफी परिवर्तन हुआ गया है । पहले मुझे स्पष्ट ही सकाच की जा जाता उस घेरे लेता था उसका लेग भी अब नहीं दिवायी देता था । वह एक स्थिर गभार दृष्टि से परिपूर्ण आत्मविश्वास के साथ धरी धार दखनर दूसरे कमर में चली गयी । मैं बाहर टहलन निकल गया और निरंतर पश्चि-सिन्धिया के ऊपर—और ऊपर—उठने का प्रयत्न करता चला गया । यह मानसिक प्रयोग मुझे बहुत जँवा और लाभदायक मानूँगा हुआ ।

मन्या को जब मैं घर लौटा तब मेरे मन में ग्लानि की भावना तनिक भी गप नहीं रह गयी थी । मनिया से मैं सहज शांत और प्रसन्न भाव से मिला । मनिया न जरा मरा वह बदला हुआ रूप देगा तब निश्चय ही उस आश्चर्य हुआ होगा । उसकी आँखें भी यही बताती थीं । जरा हम लाग खाना खाने बैठे तब मैं उसे बाहरी दुनिया की मनोरंजन घटनाओं का हाल हँस-हँसकर सुनाता रहा । न मैं विवाह की कोई चर्चा चलायी न सिन्धिया की न भूत की और न भविष्य की । मनिया

भी मेरी बातों से अच्छे विनोद का अनुभव करती हुईं-भी जान पड़ी ।

१२५

जब मेरा विनोदात्मक मनोभाव समाप्त हो गया और कमर में कुछ समय के लिये मौन छा गया तब मनिया ने बहुत धीरे से, अत्यंत गीत स्वर में कहा—“तुमने आज दापहर को जा बात मुझमें पूछी थी उसके सबध में मैंने सोच लिया है ”

मम ने गढ़ हुए जिस काटे दा बड़े प्रयत्न के बाद मूल पाया था उसे मनिया ने फिर कुरेद दिया । मैं बोला कुछ नहीं केवल आहत भाव से, व्याकुल उत्सुकता भरी दृष्टि में उसकी आर दखता रहा । मुह से मैंने इतना भी नहीं पूछा कि तुमने क्या माचा है ? पूछने का साहम या प्रवृत्ति ही मुझे नहीं हुई ।

मुझे मौन देखकर मनिया स्वयं बोली—“मैं विवाह के लिये तयार हूँ, पर गीत वही है—कि हम दोनों नियमित रूप से ईसाई धम स्वीकार कर लें ।”

मम मन का सारा सतुलन उलट गया और नयम ढह गया । मेज पर जोर में हाथ पटकते हुए मैंने भट्लायी हुई आवाज में कहा—‘ एमा हंगिज नहा हा सजना, मनिया । मैं इसाई धम स्वीकार करन का कनई तयार नहीं हूँ—विशेष कर उन हालत में जब कि उसकी कोई आवश्यकता नहा है ।’

‘ तुम्हें आवश्यकता नहीं है, पर मुझे तो है ।’ शांत किंतु दृढ़ स्वर में वह बोली ।

‘ तुम्हें क्या आवश्यकता है ?’ मृदु स्वर में मैंने कहा—“तुम बौद्ध हो और बौद्ध धम में ही तुम्हें डटे रहना चाहिये । मैं तुम्हारी खानिर बौद्ध धम स्वीकार करन का तयार हूँ, क्योंकि, जसा कि मैं कह चुका हूँ, उसे मैं हिंदू मन्वृत्ति का ही एक अंग समझता हूँ ।’

पर अब यह ममभव नहीं है । मैं तुम्हें बता चुकी हूँ कि मैं प्रभु इना के चरणों में अपना मन प्राण अर्पित कर चुकी हूँ । अब केवल एक ही रास्ता तुम्हारे और मेरे बीच शारीरिक और मानसिक सबध स्थापित हो सकन का रह गया है । तुम चाहो तो उसे अपना सकते हो, और न

चाहो तो न सही। जिम तरह इतने दिनों तक हम दोनों इतने निकट रहने पर भी एक दूसरे से एकदम दूर घोर अलग रह हैं वहा क्रम आग भी चल सकता है। तुमने मेरे लिय बहुत कुछ किया है, और तुम्हारे ही कारण सिन्धिया से मैं मिल पायी इसके लिय बराबर तुम्हारी कृपा रूगो। साथ ही मैं तुम्हें यह भी बता दूँ कि जब तक तुम अपना से मुझे छोड़कर नहीं चले जाओगे तब तक मैं कभी तुम्हारा साथ नहा छोडूंगी। पर जो निश्चय मैं कर चुकी हूँ उसमें हटना संभव नहीं है।

महमा मेरे भीतर की सम्मोहन शक्ति जाग्रता ही उठा जा इधर कुछ दिना में एकदम सी-सी गयी थी। मैं स्थिर दृष्टि से मनिया की आर देखत हुए दड स्वर में कहा— 'खो मनिया, तुम्हारा निश्चय भ्रमपूर्ण है। जमने तुम अपने आपको धोखा दे रही हो। तुम्हें इनाद धम की आर से मुह माडना हागा और जिम रास्त पर मैं चलने को कहना हूँ उधर ही चरना हागा। सिन्धिया तुम्हारी घोर शत्रु है, उसका साथ तुम्हें छाडना हागा, और उसी धम में रहना हागा जिसे तुम्हारा बचा

सहमा एक विचित्र ठहाका सुन कर मैं जैसे स्वप्न में उचक उठा। पहल क्षण ता मैं इस चक्कर में रहा कि अट्टहास का वह शब्द आया किधर से। दूसर ही क्षण मैं देखा, मनिया एक ऐसे विचित्र स्वर में हँस रही है जमा मैंने पहले कभी उसके मुह से नहीं सुना था। हास्य के उम विस्फोट में मरी 'सम्मोहन शक्ति' बिलर कर चूर चूर हो गयी। और तब मैं जाना कि जिस शब्द को मैं अट्टहास समझे बठा था वह वास्तव में मनिया की बही खिलखिलाहट थी जिस में कई बार पहले सुन चुका था। मर मन की उस समय की अपेक्षाकृत असाधारण स्थिति में वह खिलखिलाहट मुझे किसी के अट्टहास की तरह ही लगी थी।

उम खिलखिलाहट से मैं अत्यन्त लज्जित हावर अपनी पीठ कुर्सी की पीठ में अडाकर अपना दोना हाथा से कुर्सी की दानो वाँहा का पकडना हुआ अज्ञान भाव से मनिया की आर देखना रह गया। आज पहली बार सम्मोहन बला में अपनी इतनी बडी अमफलता देखकर मरा ध्यान अपनी नीचना की ओर गया। मुझे यह अनुभव हान लगा कि एक एसी ठगी

म रंगे हाथों पकड़ा गया हूँ जो इतने दिना तक मनिया स  
 छिपी थी और आज जिसकी पोल मेरी चरम हीनता के  
 कारण खुल गयी है। मैं सोचने लगा कि मेरी उस 'अप्रत्यागित' असफ-  
 लता का कारण क्या हो सकता है? क्या मनिया न इन बीच सचमुच  
 अपने भीतर इतनी बड़ी शक्ति जगा ली है कि मेरी इच्छाशक्ति का कोई  
 प्रभाव अत्र उम पर नहीं पड सकता? या मेरे ही भीतर इतनी कमजोरी  
 आ गयी है कि उस परिपूर्ण आत्म विश्वास उम दृष्टि शक्ति का  
 अब मुझमें अभाव हो गया है जा इतने दिना तक मनिया का इधर-उधर  
 भटकने में रोक्कर अपनी आर खींच लायी थी? अथवा दाना ही कारणों  
 की मम्मिन्न प्रतिश्रिया स ऐसा नभव हुआ है?

२५

मनिया का मिलखिलाना अभी बंद नहीं हुआ था।  
 मेरा अपराधी मन अपनी होनता के दाघ से अधि-  
 काधिक सकुचिन हुआ चला जा रहा था। मैं लज्जा  
 में गड़ा जा रहा था और उससे आँख मिलान का साहस मुझमें नहीं रह  
 गया था। आत्मलघुता की इतनी विकट अनुभूति मुझे पहले कभी नहीं  
 हुई थी।

जब उसका कटकहा कुछ थमा ता अपनी आँखें पादनी हुई वह  
 बोली—“तुम्हारी हँसी करने की आदत से मैं परिचित थी, पर यह नहीं  
 जानता थी कि तुम इतने बड़े नाटक की भी हा। घर बापरे! तुमन तो  
 आज वह रूप दिखा दिया कि पहले तो मैं सचमुच डर गयी थी। पर बाद  
 में जब मैं समझ गयी कि तुम नाटक कर रह हो तब मरी हँसी रोके नहीं  
 रकी। आफ।’ और फिर एन वार उसने हँसी के कारण निकले हुए  
 आँसू अपने अचल से पाछ डाल।

सिमियानो दिल्ली खमा नाचती है और मैं भी मूर्खों की तरह

मुस्कराने की चेष्टा करता हुआ कुर्मी की बाँह को अपने नाभून से खुरचन लगा। एक बार मरे मन में इच्छा हुई कि अपनी सफाई में उमकी धारणा का समयन करता हुआ वह दूँ कि मैं सचमुच उमे हँसाने के उद्देश्य से नाटक ही रचा था। पर अपनी शक्ति के पूरा प्रयाग के बाद जो मार्मिक असफलता मुझे मिली थी—मन मुझे इस बदर पराजित कर दिया था कि अब बतने की भी स्फुटि मुझमें नहीं रह गयी थी। अपनी दीनता पर मुझे स्वयं तरस आ रहा था और यह आँका हान लगी थी कि मैं प्रतिनियाम-स्वरूप कही सचमुच मनिया के आग ही रा न पडूँ। कुछ देर तक मिर मुकाय, मुर्सी की बाँह को खुरचता हुआ भी बठा रहा, उसके बाद सहसा उठ खडा हुआ, और यह कह कर कि— मुझे बहुत थकान मात्राम हो रही है, इसलिये मैं मो जाना चाहता हूँ। अपने कमरे में चला गया।

बस्ती जुभाकर जब मैं पलंग पर सेट गया तब कुछ देर तक ताँ में कुछ साँच ही न पाया। एक अत्यन्त सीखी बदन केवल मरे मन का ही नहीं बल्कि मर गरीर की भी नरु-नरु का मरोड रही थी जिसने कारण ऐसी टीस सी उठती थी कि जोर से कराह उठन का जो कर रहा था। मैं सचमुच कराह उठता यदि मुझे यह डर न हाता कि मनिया मुझे कराहते सुनकर मरा हाल पूछने के लिये मेरे कमरे में न चली आवे। मर मन की जसी दगा उम समय चल रही थी उसमें मनिया की उपस्थिति मरे लिये घानव सिद्ध होनी।

धीर धीर मरा चित्त जब कुछ स्थिर हुआ और पीडा कुछ कम हुई तब मैं सागी परिस्थिति को सोचने समझने का प्रयत्न करने लगा। मैं सोचने लगा कि यह भव क्या बाट आज हो गया। कितनी बड़ी सूत्रना मुझमें हा गयी। मरी मारी बलई मनिया के आग कस हास्यास्पद रूप में खुल गयी। मनिया के मन में उमकी क्या प्रतिक्रिया होगी? अभा ता उसमें हगित ब रूप में केवल इतना ही कहा है कि मैं कितना बडा 'नाटकी हूँ। पर 'नाटकी' शब्द का अर्थ उसका मन में निश्चित रूप से काफी व्यापक होगा। यह मपूण संभव है कि 'नाटकी' शब्द का अर्थ यह अर्थ रूप में करती होगी— 'तुम कितने बडे धूत हो आज मैं यह जान

गयी हूँ । आज तक मुझसे तुम्हारा यह रूप छिपा जरूर था, पर इतना तो मैं पहले ही से जान गयी थी कि तुम कोई साधारण बलाबाज नहीं हो । मेरी दुकान से एक एक करके बकाम की चीजें खरीदत रहने के बाद एक दिन तुमने मेरा पूरा टाट ही उलट डाला और फिर धीरे धीरे जिस धतता भरी कला से तुमने मुझे अपने जान म फासा उसका पाल आज खुल गयी है । आज आइने की तरह तुम्हारा सारा भीतरी हुलिया मेरे आगे स्पष्ट हो गया है । अब तुम्हारी कोई चाल भविष्य में नहीं चल सकेगी । ' मुझे लगा कि मनिया जस प्रत्यक्षवत् मेरे पास आकर मेरे कान में यह बात कह रही है । सोच-सोचकर ऐसी उत्कट आत्मगन्तवि मेरे मन का पीड़ित करने लगी कि रह रहकर मुझे अपना सिर पीटने की इच्छा होने लगी ।

“पर मेरी मन शक्ति का आज जो इतना बड़ा पतन संभव हुआ उसका वास्तविक कारण क्या हो सकता है ?”—मैंने अपने आप से यह प्रश्न किया—इसके पहले मनिया के ऊपर मैंने सम्मोहन के जितने भी प्रयोग किये वे कभी व्यर्थ नहीं गये । मेरे मन में यह दृढ़ धारणा जन्म चुकी थी कि सम्मोहन के प्रयोग के लिये उसमें अन्ध्रा पात्र कोई नहीं मिल सकता । जितनी आसानी से वह सम्मोहन के अन्ध से प्रभावित हो उठती थी उतनी आसानी से किसी दूसरे पर प्रभाव डाल सकना मैं संभव नहीं समझता था । तब आज क्या बात हा गयी ? माना कि इधर उरुन 'प्रभु ईसा के चरणों में अपना मन प्राण अर्पित करने' के फलस्वरूप यथेष्ट मनोबल प्राप्त कर लिया है पर उमकी प्रकृति की भावुकता तो अब भी कुछ कम नहीं हुई, बरिक् पहले से बर ही गयी है । जिन भावमग्नता से वह आधी रात में फास के आग माया नवाकर आसू गिरा रही थी उसे मैं प्रत्यक्ष देख चुका हूँ । कायदे में ऐसे भावुक शक्तियाँ पर हिप्नाटिज्म का प्रभाव आसानी से पडना चाहिये । और यह भी बहुत संभव है कि किसी के हिप्नोटिज्म के प्रभाव से वह अपना हृदय 'प्रभु ईसा' का दे चुका है । तब क्या सित्त्विया भी हिप्नाटिज्म की बला में प्रवीण है ? निस्संदेह ही यही बात है । केवल इतना ही नहीं उसका अन्ध्यास इस कला में इतना अधिक बड़ा हुआ है कि उमन मनिया के अन्धमन में बहुत गहरी खुनाई

करक अपना अभीष्ट वीज बोया है । मैं उतने गहरे तक न पहुँच सका, इसलिये आज मेरी सारी बला का तीर उसके सचेत मन के कुद ही नीचे तक पहुँचकर टिँककर बाहर लौट आया ।'

मैं उम दिन का याद करन लगा जब मनिया ने निश्चित गदा म मुझे बताया कि मैं दा भी क्या हजार दा हजार रुपया भी उस दू तो अब दुवारा वह दुकान नहा खालगी और 'बाबा कोई इम गरीब साधार को एक पसा द दा भगवान तुम्हारा भला करे ।' कहती हुई दर-दर भीष माँगता फिरेगी । और फिर जब अपन पिछने जीवन की मामिक कहानी और अपना ह्याग मा के नायन का लोमहृषक बताते सुना चुकने के बाद वह जान ली थी तब उसकी निपट निराश्रयावस्था और अनिश्चित भविष्य का विचार करके मरा हृदय आगवा से किम बदर हिल उठा था, और अंतर के उस मामिक आदालन के ही फलस्वरूप सहसा एक अपूर्व आत्मिक वन एक उदात्त स्फूर्ति मेर भीतर जग उठी थी । उसी उदात्त मानसिक स्थिति म मैं मनिया का धार स्थिर दृष्टि म देखते हुए, परिपूरण आत्मविश्वास के साथ अत्यंत गभीर और दृढ स्वर म कहा था— 'दया मनिया, तुम अब कहीं नही जा सकता तुम्हारा मन इस समय स एकदम मरे वसा म ही चुका है यह जान लो । मैं तुमसे जमा करन ना कहूँगा वसा तुम्ह करना हागा ।' और तब मरी आत्मा के भीतर म निबल हुए उस आदेश का उमकी विद्रोही आत्मा न दात भाव स रिना तनिक भी सधप के पूगत स्वीकार कर लिया था । वह भी एक दिन था और आज भा एक दिन ह जय मेर उमी डग के हिप्नाटिक आदेश का मनिया न अट्टहास के साथ ठुकरा दिया है । ऐसा कसे समव हुआ ? ठीक है ! महुसा एक विजयी का-सा प्रवाग मर भीतर जागते ही मैंन अपन आप से कहा— 'इसका मूल कारण मैं स्वय ह दूसरा कोई नही । तब मरी मफलता का कारण यह था कि तब मैं मनिया का सच्ची मगल-वामना म प्रेरित हातर उसकी दयनीय परिस्थिति को देखते हुए आतरिक करणा न मघा आत्मिक बल पाकर उसके मन का प्रभावित करन को उद्यत हुआ था । पर आज मैं उसकी वास्तविक



कल्याण-कामता से प्रेरित न हाकर अपनी स्वायत्तानि की  
 भाग्यता से ईर्ष्या-दग्ध हाकर कृत्रिम मानसिक बल के प्रयोग

१३१

से उस 'हिप्नोटाइज' करन चला था । इसलिय आज यदि मैं अत्यन्त  
 हास्यास्पद रूप से अमफल हुआ हूँ तो इनम आश्चर्य की कोई बात नहीं  
 है । यह अच्छा ही हुआ कि आज मेरे लुच्चेपन की पोल उसके आग खुल  
 गयी, नहा तो मेरे भीतर जा अत्यन्त नीच प्रवृत्ति इतन दिनों तक दबी  
 पड़ी थी वह न जान कब पूर वेग म उभर कर क्या नङ्गा रूप उसे दिवा  
 बठनी । आज तक उसके आग मैं मेमन का जो रूप धारण किये हुए था  
 वह एक-न एक दिन उघडता ही । मेर सचेत मन म न मही, मेरे आगत  
 मे यह घटका सब समय लगा हुआ था कि न जान कब, किस असाव-  
 धानी के क्षण म मनिया क आग मेरा पदा पाग हा जाय । आज वह  
 घडका समाप्त हा गया । अब मैं निश्चिन्त हू । अब मेरी वास्तविकता से  
 परिचित हान के बाद वह चाह मुझे फामी दे दे चाह अपन अतर की  
 सहज, सरल उदारतावग मुझे क्षमा कर दे । मर लिये ममस्त अतर्गनि  
 स मुक्त हाने का अब केवल एक ही रास्ता है—मैं अपन का पूणत उसी  
 की दया पर छाड दूँ । दाता के तीन गुण—द, न द, हीन ले । इन तीनों  
 म मे किमी भी स्थिति का यथात्प स्वीकार कर लेन के लिय मुझे तयार  
 हो जाना चाहिये । आज तक मैं उसके मन पर अपना आदेश लादने के  
 फेर म रहता था, अब मर लिय प्रायश्चिन्त का केवल यही उपाय है कि  
 मैं उलट उसके प्रत्यक आदेश—प्रत्यक इगित—के अनुसार चलू । हा,  
 इसके सिवा और कोई दूसरा गति मेरे लिय नहीं रह गयी है—तभी मैं  
 अपन भीतर की अपराध भावना के बोझ न छुटकारा पा सकता हूँ । ठीक  
 है, बल ही मैं मनिया मे क्षमा माँगता हुआ उसके चरणो म आत्म-सम-  
 पण कर दूँगा ।

इस तरह के भावुकता नरे विचार मगे तत्रातीन मानसिक हिस्ती-  
 रिया मे दस्त दशा म म भीतर उमडत चने ग्य । सारी रात मैं इसी  
 तरह मतिपात-की सी अवस्था म मन ही मन बहबडाता रहा । बीच म  
 कुछ कर के लिय जब नपनी आयी तत्र स्वप्न की अवस्था म भी उसी  
 तरह की विचार धारा कायम रही ।

पर जब सुबह हुई तब न जान मेरी सारी भावुकता वहाँ काफूर हो गयी। रात में मनिया से क्षमा माँगने का जो निश्चय मैंने किया था अब उसके सिये तनिक भा प्रेरणा मुझे नहीं मिलती थी। उठकर हाथ-मुँह धोकर मैंने अपने लिये चाय अपने ही कमरे में मँगा ली। नवम्बर का महीना था। सर्दी काफी पड़न लगी थी। मेरे आदेशानुसार मेरा नौकर किसनसिंह मेरे कमरे की दीवार में लगी अँगोठी में पत्थर के कोयले सुलगा गया था। मैं गरम ड्रेसिंग-ग्राउन में अपने को अच्छी तरह लपेट कर अँगोठी के पास एक कुर्सी पर बैठकर धीरे धीरे चाय पीन लगा।

मनिया समवत ड्राइंग रूम में बरा इतजार कर रही थी। जब काफी दर हो गयी और मैं अपने ही कमरे में बठा रह गया तब वह मेरे कमरे में चली आयी। उसका मुख अत्यन्त गम्भीर किन्तु उतना ही प्रगात भी था।

‘आज क्या तुम्हारी तबीयत खराब है?’ उसने अपनी सहज कोमल वाणी में पूछा।

मैंने उसकी आर बिना दबे ही बहुत धीम और अस्पष्ट स्वर में उत्तर दिया— ‘ठीक है।’

‘पर आज चाय पीन तुम ड्राइंग रूम में नहीं आय?’

‘तबीयत ठीक नहीं थी!’ उसी अस्पष्ट और धीम स्वर में मैंने कहा।

‘अभी तुमने बताया कि तबीयत ठीक है और अब कह रहे हो कि तबीयत ठीक नहीं है। कुछ समझ में नहीं आता!’ स्वाभाविक भावोपन के साथ मनिया ने कहा। पर तत्काल व्यग का हलका छोटा वसती हुई बोली— ‘मालूम हाता है इन दोनो के बीच की कोई बात है। किसनसिंह!’

हाँ जी! भीतर से किसनसिंह वाला।

‘मरी चाय भी इसी कमरे में ले आया।’

बहुत अच्छा जी! वहकर किसनसिंह चाय लान ड्राइंग रूम की तरफ गया।

मैं सकोच की एक अजीब, अस्वाभाविक अनुभूति से गंजा जा रहा

था। पर उस सक्च के साथ अभिमान का भी मिश्रण काफी था, यह शायद मनिया के आगे भी स्पष्ट हो चुका था। १३३

मनिया स्वय ही एक कुर्मी उठाकर मेरी बगल में, अंगीठी के सामने बठ गयी।

“हाथ देवू, कही बुखार तो नहीं आ गया।” कहकर सहसा मनिया ने अप्रत्याशित रूप से मेरा बाया हाथ पकड लिया और बुशल और अनुभवी डाक्टर की तरह मेरी नब्ज देखने लगी। वह पहला स्पश था जो उसने अपनी शात, स्वस्थ और स्वाभाविक मनोदशा में स्वेच्छा से मुझे प्रदान किया था। मेरे सारे सक्च और अभिमान के बावजूद वह स्पश मुझे बहुत ही प्रिय लग रहा था।

कुछ देर तक वह मेरे हाथ की नाडी पकडे रही। फिर बोली—  
“हरारत है। अभी गाल मिच और तुलसी की पत्ती की चाय बनवा दूंगी।  
आधे घंटे में सारी हरारत जाती रहेगी।”

अपनी उस समय की तूफानी मानसिक स्थिति में भी मुझे उसकी बात के ढग से मन ही मन हँसी आने लगी। पर मैं न हँसा, न कुछ बोला। चाय का ध्याला खतम कर चुकने के बाद मैंने उसे चुपचाप नीचे रख दिया और दोनों हाथों की हथेलियों को अंगीठी की ओर फलाकर आग तापने लगा।

विशानसिंह मनिया की चाय ले आया था, और गरम-गरम ‘टोस्ट’ भी। एक टोस्ट मेरी आर बढ़ाती हुई मनिया आग्रह के साथ बोली—  
“लो, तुम भी खाओ। गरम टोस्ट तुम्हें लाभ पहुँचावेगा।”  
“मुझे इच्छा नहीं है।” उसकी ओर बिना दखे ही, मरी हुई जबान से मैंने कहा।

“आज तुम मुझमें बहुत नाराज हो।” टोस्ट को अपने दाँतो से काटती हुई वह बोली।

“मैं किसी से भी नाराज नहीं हूँ?” पहले से भी धीमे और अस्पष्ट स्वर में मैंने कहा।

“यह देखो, तुम्हारी आवाज ही बताती है कि तुम नाराज हो!”  
प्राय हँसते हुए और टोस्ट को चबाते हुए मनिया ने कहा।

“कोई अगर ऐसा ही समझने का हठ करे तो उसका क्या इलाज है !”

“पर कल तुम्हारा नाटक बड़े मजे का रहा !” प्रायः ठहाका मारती वह बोली । वह जब कमर में आयी थी तब उसका स्वर में गम्भीरता, करुणा थी और यी सहज स्निग्ध भाव में उम्र अशोभन बानावरण को करने की भावना जिम में अपने मूखतापूर्ण डुराग्रहवश कल रात ही उत्पन्न कर रखा था । पर मेरे हृत् में कुछ भी परिवर्तन न देखकर स्पष्ट ही मेरे हठ की प्रतिक्रिया मनिया के मन पर भी हुई थी । यी का यह फल था कि उसने हास्य और व्यंग का हलका सा छिटकाव प्रारम्भ कर दिया था । उसका अंतिम छिटे में मैं तिलमिला उठा । मेरी ग्लानि और सारा सकोच पल में काफूर हो गया, और मरी तिलमितापूर्ण घुटता लोट आयी । मैं सीधा बठ गया और निस्संकाच भाव मनिया की ओर देखता हुआ वाला— नाटकीय व्यक्तियों के साथ नाटकीय कला का ही प्रयोग किया जा सकता है ।

“तो क्या मैं नाटकीय व्यक्ति हूँ ?” अत्यन्त मधुरता से खिलखिलाते ए उसने कहा और फिर एक दूसरा टोन्ट नृत्य में लेकर उम्र भा दाँतो काटने लगी ।

“तुम नाटकीय नहीं तो क्या हो ! तिन व्यक्तियों के मन में अकस्मात् सारे धर्म के प्रति इस हृद तक आसक्ति हो नाय कि आधी रात में एक उस के आग माथा झुकाकर घामू गिराती रह उस नाटकीय नहा तो गिर क्या कहा जाय !”

अकस्मात् उसकी हास्यप्रियता लुप्त हो गयी और उसका मृदु असाधारण रूप से गम्भीर हो आया । कुछ दूर तक मरी और एकटक खिन्ती ही वह बोली—“तो तमन आधी रात में मुझे प्रायना करते हुए देख लिया है ? पर इसमें नाटकीयता की कौन-सी बात है ? मैं तुम्हें विश्वास देलाती हूँ कि मैं कोई पाल्एड रचन के इरादे से प्रायना नहीं करती हूँ । तन में न जाने कहाँ से एक लहर मी उठती है और मैं प्रभु के ध्यान में मग्न हो जाती हूँ । जब प्रभु को काँटा का ताज पहना कर गूरी पर बढाया गया था, उनके दोनों हाथा और दोनों पावा पर बड़ी बड़ी कीलें

टोककर झूली से बाध दिया गया था, काटो से विच्छेद हुए  
 उनके माथे से खून की धारा बह रही थी और दुष्ट लोग  
 उनके प्रेम और शांति के संदेश के बदले में उन्हें बड़ बड़ देकर, उन्हें दख  
 कर राक्षसों की तरह ठहाका मार रहे थे तब उन्होंने मरते मरते भा  
 वान से प्रार्थना की थी—'हे प्रभु इन लोग का क्षमा करना क्योंकि वे  
 नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं। उन नीचा के प्रति तनिक भी बर  
 का भाव उनके मन में नहीं जगा और न अपना भाग्य को ही उन्होंने  
 वासा। सबका क्षमा करते हुए सारी पीड़ा का प्रेमपूर्वक सहन करते  
 हुए वह दिव्य ज्योतिष मलिन हो गये। उनके उस समय के उस स्वर्गीय  
 रूप का ध्यान करके मेरी आत्मा में, मेरे भीतर की सारी ग्लानि पिघल  
 पिघलकर आसुओं के रूप में बाहर निकल जाती है और एक पवित्र,  
 निमल भावना मेरे दुःखी और पापी प्राणों में छा जाती है। ध्यान की  
 उस अवस्था से मेरी मा की मूर्ति भी मेरे आगे प्रकट हो जाती है—  
 हत्यारी के रूप में नहीं, बल्कि प्रभु के पुनीत स्पर्श से पवित्र अपार सह-  
 मयी जग-माता के रूप में। उस अपूर्व अनुभूति के क्षणों में मेरी आत्मा  
 जिस स्वर्गीय सुख की भावना से गद्गद हो जाती है उसमें किसी को  
 कस समझाऊँ। सच माना, मैंने एक भी बात तुमसे बतलाने नहीं कही  
 है। तुम मुझ पर जो आरोप लगा रहे हो, उन्हें मैं लिख मैं तुम्हें दोष नहीं  
 देती हूँ पर यह जान ला कि वह गलत है और उससे मेरे प्राणों को  
 भारी पीड़ा पहुँची है। "

उसके जो आंसू पहले ही से उमड़ने लग गये वे अब पूरे ढग से बहने  
 लगे। उनकी अद्विजन धारा किमी तरह रुकना ही नहीं चाहती थी।

वह निरंतर आंसू गिराती और बार-बार दानों हाथा से उन्हें  
 पालती जाती थी। वह रोती हुई कहती गयी—“मैं दख रही हूँ कि  
 इधर कुछ दिना से मेरे प्रति तुम्हारे बर्ताव में बहुत अंतर आ गया है।  
 फिर भी मैं तुम्हारी रुवाई को, तुम्हारे ताना को धुपचाप सहती चली  
 जा रही हूँ। आज मैं जब तुम्हारे पास आयी तब मैंने अपने मन में यह  
 निश्चय कर रखा था कि तुम चाह कभी ही कड़ी और कड़वी बात क्यों  
 न कहा, मैं शांत रहूँगी और भरसक उन्हें हँसी में टालती जाऊँगी। पर

तुम तो जैसे इस बात पर नुबे हो कि प्रतिक्षण मेरे मन पर चोट पहुँचाय बिना न रहागे। तुम्हें यह कतई पमद नहीं है कि मैं एकांत उपासना के सहार अपने मन के गहरे घावा को भुलाय रहूँ, अपन भीतर की अगाति था, जलन को एक क्षण के लिये भी ठढा कर पाऊँ। मरी धार्मिक भावुकता, मेरी भक्ति भावना तुम्हें जैसे काटे खाती है। तुम साफ कह क्या नहीं दते कि तुम्हारे यहाँ अब मेरे लिये जगह नहीं है। मैं उसी क्षण चली जाऊँगी ' वह आसू पाछती जाती थी, पाछत-पोछते उसकी दाना आँख लाल हो आयी थी, तथापि आसू धमते नहीं थे। न जाने अंतर के किस अदृश्य और अक्षय 'रिजर्विपर' स वह अवि रल धारा प्रवाहित होती चली जाती थी। उसके हृदय का बाध आज पूरे विस्फोट के साथ एक छोर से दूसरे छोर तक टूट पडा था। वह परि-पूण भावाङ्गलन भावुकता की वह सीमाहीन बाढ मेरे हृदय को भी दुदम नीय वग से द्याकर उस दुवा दन के लिये पागलो की तरह पछाड जाती हुई उथलती चली गयी।

मैं रह न सका। मेरे आग से पूव सस्कारो का सारा अवरोध, और बौद्धिक तर्कों की सारी रुकावटें उस महाप्लावन में ढहकर लुप्त हो गयी। मरी आँखें भी प्रायः भर आयी। मैंने भर्राई हुई आवाज में कहा— 'मनिया, मैं तुम्हारे परा पढता हूँ। अपनी सभी गलतियाँ के लिये तुमसे आतरिक क्षमा चाहता हूँ। मैं तुम्हें कैसे विश्वास दिलाऊँ कि मेरा उद्देश्य वसा नहीं था जसा तुम समझे बठी हो। पर यह मैं अब मानता हूँ कि मेर अनजान में मुझमें भारी भूल हुई हैं। अब से मैं कभी तुम्हारी उपासना में कोई विघ्न नहीं डालूँगा। तुम्हें अपने विश्वास और श्रद्धा के अनुसार चलन की पूरी स्वतंत्रता है। मुझे क्षमा कर दो मनिया, और अब गात हो जाओ।'

बडी मुश्किल से उसे समझा-बुझाकर किसी हद तक गात कर पाया।

मेरे मन में कई दिनों से एक बार सिल्विया से एकांत में बातें करने का विचार उठ रहा था। जिस रहस्यमयी नारी ने मनिया की भावनाओं में ऐसा आमूल परिवर्तन उत्पन्न कर दिया था, और उन अपने प्राणों की गहरी पीड़ा को भूलन का एक अचूक उपाय बता दिया था, धार्मिक विद्वान की एक ऐसी सफ़द आग उसके मन में सुलगा दी थी जिसके ताप से उसके प्राणों की बर्फ की तरह जमी हुई सारी जड़ता पिघलकर सहृदय छोटी बड़ी नदिया की धाराओं से पुष्प, विनाल नद की तरह फल गयी थी, उनसे मिलकर मैं यह जानना चाहता था कि अपने नीतर की किस शक्ति के प्रयोग से उसने इतनी बड़ी सफलता पायी है। पर उससे एकान्त में मिलन का कोई सुयोग ही मुझे नहीं मिल रहा था। मुझे देखते ही वह कतराकर अलग हट जाती थी। मेरी उपस्थिति में उनकी सर्वोच्चशीलता असाधारण रूप से बग जाती थी। उनके घर पर तो कोई सुविधा ही नहीं सकती थी, क्योंकि वहाँ वह चौबीसों घंटे अपनी माँ और बहन से घिरी रहती थी, और मेरे यहाँ भी यह सम्भव नहीं था, क्योंकि मनिया की उपस्थिति में मैं सिल्विया से यह नहीं कह सकता था कि “तुमने क्या और कस उसे बहकाया है ? इसलिये इस समस्या का समाधान तभी हो सकता था जब वहाँ तीसरी ही जगह एकांत में उससे मेरी बातें हो पाती। पर ऐसा अवसर मिलता ही नहीं था, और साथ ही निश्चित था कि बिना सिल्विया से बातें हुए मैं कोई भी नया कदम नहीं उठा सकता था। जिस दिन मनिया की भावुकता का बाँध पूरे बग से टूट पड़ा था उस दिन से मैं सिल्विया से बातें करने की आवश्यकता का और अधिक तीव्रता से अनुभव करने लगा था।

मैं सुयोग की ताक में रहने लगा। अतः मैं एक दिन मुझे वह सुयोग मिल ही गया। उस दिन सुबह की चाय पी चुकने के बाद जब मनिया अपने कमरे में बठी हुई किसी ईसाई सत की जीवनी अँग्रेजी में पढ़ रही थी, मैं उसे सूचित करके टहलने के इरादे से बाहर निकल गया। कुछ ही दूर तक मैंने चढ़ाई पार की होगी कि मैंने देखा मुझे प्रायः दस कदम आगे सिल्विया अकेली चली जा रही है। उसके एक हाथ में

तुम तो जैसे इस बात पर तुले हो कि प्रतिक्षण मेरे मम पर चाट पहुँचाय बिना न रहोगे। तुम्हें यह कतई पमद नहीं है कि मैं एकांत उपासना के सहार अपने मन के गहरे घावा को भुलाये रहूँ, अपने भीतर की अगाध को, जलन को एक क्षण के लिये भी ठंडा कर पाऊँ। मेरी धार्मिक भावुकता मेरी भक्ति भावना तुम्हें जैसे काट खाती है। तुम साफ कह क्या नहीं दत कि तुम्हारे यहाँ अब मेरे लिये जगह नहीं है ! मैं उसी क्षण चली जाऊँगी ' वह आँसू पाछनी जाती थी, पाछनी-पोछने उसकी दाना आख लाल हा आयी थी, तथापि आँसू धमते न था। न जाने अंतर के किस अदृश्य और अक्षय 'रिजर्वीयर' से वह अचिरल धारा प्रवाहित हाती चला जाती थी ! उसके हृदय का बाँध आज पूरे विस्फोट के साथ एक छोर से दूसरे छोर तक टूट पड़ा था। वह परिपूर्ण भावोद्बलन भावुकता की वह सीमाहीन बाढ मेरे हृदय को भी दुदमनीय वेग से धाकर उम डुबा दन के लिये पागलो की तरह पछाड खाती हुई उथलती चली गयी।

मैं रह न सका। मेरे आग में पूव सस्कारा का सारा अवरोध, और वौद्धिक तर्कों की सारी रूकावट उस महाप्लावन में देहकर लुप्त हो गयी। मेरी आँख भी प्रायः भर आयी। मैंने भर्राई हुई आवाज में कहा— ' मनिया, मैं तुम्हारे परा पडता हूँ। अपनी सभी गलतियाँ के लिये तुमसे आंतरिक क्षमा चाहता हूँ। मैं तुम्हें कैसे विश्वास दिलाऊँ कि मेरा उद्देश्य वसा नहीं था जसा तुम समझे बठी हा। पर यह मैं अब मानता हूँ कि मेरे अनजान में मुझमें भारी भूलें हुई हैं। अब से मैं कभी तुम्हारी उपासना में कोई विघ्न नहीं डालूँगा। तुम्हें अपने विश्वास और श्रद्धा के अनुसार चलन की पूरी स्वतंत्रता है। मुझे क्षमा कर दो मनिया, और अब शांत हो जाओ !

बडी मुश्किल से उम समझा-बुझाकर किसी हद तक शांत कर पाया।



मर मन मे कई दिनों मे एक बार सिल्विया से एकांत म बातें करने का विचार उठ रहा था। जिस रहस्यमयी नारी ने मनिया की भावनाओं म ऐसा आमूल परिवर्तन उत्पन्न कर दिया था, और उसे अपने प्राणों की गहरी पीड़ा को मूलन का एक अचूक उपाय बता दिया था, धार्मिक विश्वास की एक ऐसी सफेद आग उसके मन म सुलगा दी थी। निमके ताप से उसके प्राणों की बर्फ की तरह जमी हुई सारी जड़ता पिघलकर सट्टा छोटी-बड़ी नदिया की धाराओं स पुष्ट, विंगाल नद का तरह फल गयी थी, उमने मिलनर में यह जानना चाहता था कि अपने भीतर की किस शक्ति के प्रयाग से उमने तनी बड़ी सफलता पायी है। पर उमसे एकांत मे मिलने का कोई सुयोग ही मुझे नहीं मिल रहा था। मुझे देखते ही वह बतराकर अलग हट जाती थी। मेरी उपस्थिति मे उमकी सकोचशीलता असाधारण रूप से दृष्ट जाती थी। उमके घर पर ता कोई सुविधा ही नहीं मवती थी, क्याकि वहाँ वह चौबीसा घंटे अपनी माँ और बहन से घिरी रहती थी, और मर यहाँ भी यह मभव नहीं था, क्योंकि मनिया की उपस्थिति म मे निन्विया मे यह नहीं कह सकना था कि "तुमन क्या और कस उमे बहकाया है?" इसलिय इन समस्या का समाधान तभी हा सकना था जब कहीं तीसरी ही जगह एकांत म उमने मरी बातें हो पाईं। पर एका अचमर मिलता ही नहीं था, और साथ ही निश्चित था कि निना सिल्विया स बातें हुए में कोई भी नया कदम नहीं उठा सकता था। जिस दिन मनिया की भावुकता का बांध पूर वेग से टूट पडा था उस दिन में सिल्विया स बातें करने की आवश्यकता को और अधिक तीव्रता स अनुभव करने लगा था।

में सुयोग की ताक म रहने लगा। अंत मे एक दिन मुझे क सुयोग मिल ही गया। उस दिन सुबह की धाय पी चुकन क बाद उम मनिया अपने कमरे मे बठी हुई किसी इनाई सन की जीवना धारण में पढ रही थी, मैं उसे सूचित करके टहलन के इरादे स बाहर निकल, कुछ ही दूर तक मैंन चलाई पार की हाणी कि मैंन उहा मुन्द उर २३ कदम आग निन्विया अकेली बली जा रही है। उर उर उर में

१३= वृत्त-ना भोला था, दूसरे हाथ में मनीषण। इससे अच्छा अबमर फिर दूसरा नहीं मिल सकता, यह सोचकर मैं बड़ी फुर्ती में तेज कदम रखता हुआ आगे बढ़ा। जब मैं केवल दो ही कदम पीछे रह गया तो मैंने कहा—'गुड मानिंग मिस रालि-मन'।"

उमन चौंकर पीछे की ओर दखा। मैं मुस्करा दिया। वह अत्यंत मञ्जुचिन्त भाव में बहुत धीमी आवाज में बोली—'गुड मानिंग'।

'मिस रालि-मन, जरा ठहर जाइय, आपसे कुछ जरूरी बात बगनी हैं।' मैंने कहा।

वह सड़ी हो गयी पर उसके पाँव काँप रहे थे। मुझे नय हुआ, वही बह गिर न पड़े। उसके पास पहुँचकर मैंने कहा—'चलिय, हम लाग धीरे धीरे चलते रहें और बातें भी करते रह। आप आज एतन सबरे अबल कहीं जा रही हैं? आज जलिया आपके साथ नहीं है'।

'आज मैं की तबीयत ठीक नहा है। पावो में बात हो गया है इसलिये जाना जलिया ही बना रणी है।

'आह मुझे दुःख हुआ यह सुनकर। मैं उनके पास जाऊँगा! मेरे पास बात की एक अचूक दवा है, उन ल जाऊंगा। अच्छा मिस रालि-मन, यह तो बनाइय कि मनीषा की पत्नी आजकल कसी चल रही है?'

'यह तो अब घडन्ले स अगरेजी बान लेती हैं। कठिन कठिन पुम्नका के पढ़ने में उनका जो लगने लगा है धीमे स्वर में, मञ्जुचिन्त भाव में मिल्बिया बोली।

वह अभी तक हिन्दी में ही मुझे बातें कर रही थी। मैं भी हिन्दी में ही बोल रहा था। पर सहसा मैंने अगरेजी शुरू कर दी।

'हाँ उस रोज वह फामिस टाममन की एक किताब पढ़ रही थी—'नायद 'इमिग्रेशन आफ क्राइस्ट' उमका नाम था। एक दिन सट आगा स्टिन की स्वीकारोक्तियाँ पढ़ रही थी, कल सेट टेरसा की गाथा पढ़ रही थी'।

सिल्विया का चेहरा सब के भाव स दीप्त होने लगा था।

मैं कहता चला गया—'मैं आपसे पूछता हूँ कि उसका जो बबल धार्मिक पुस्तकों में ही—विशेष कर ईसाई मत से संबंधित धार्मिक पुस्तक

मे—क्यों लगता है ? हमारे विषया की पुस्तकें वह क्यों नहीं पढ़ना चाहती ? मैं केवल जानकारी के लिये आपसे पूछ रहा हूँ, किमी और दृष्टि से नहीं ।”

सिल्विया ने इस बार पूरी दृष्टि से मेरी ओर देखा—“गायद मेरे मुख के भाव से यह जानने के लिये कि वास्तव में मेरा उद्देश्य क्या है । उसके बाद उमन अंग्रेजी में कहा—‘ ता क्या धार्मिक पुस्तकों का पठन आप अच्छा नहीं समझते ?’”

“नहीं, नहीं, मेरी बात को गलत न समझें, मिस रालिसन” अपने स्वर में आश्वासन का भाव भरने का प्रयत्न करते हुए मैंने कहा—“मेरा भाव यह बड़ाफि नहीं है । धार्मिक पुस्तकों का पाठ बुरा कैसे माना जा सकता है । मैं बस इतना ही जानना चाहता था कि चौबीसों घंटे केवल धार्मिक पुस्तकों को ही पढ़ना, धार्मिक चर्चा में ही व्यस्त रहना और धार्मिक चिंतन में ही मग्न रहना, यह क्या एक सांसारिक नारी के लिये बुद्धि अंधि नहीं हो जाता ?’

सहमा मैंने देखा कि सिल्विया के मुख पर सकाच और भिन्न का लेश भी बतमान नहीं रह गया था । एक सुदृढ़ गाभीय और निश्चित आत्मविश्वास की भावना उसमें स्पष्ट झलक उठी थी ।

धीरे धीरे दृढ़ स्वर में बोली—“ धार्मिक भावना को चाहे कितना ही क्या न बनाया जाय, वह कभी हानिकर नहीं हो सकती । यदि कोई सांसारिक व्यक्ति धार्मिक भावना में अधिक से अधिक तमय होकर अपने जीवन के अधिक से अधिक क्षण धार्मिक चिंतन में लगा सके ता इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है !’

“यह आप ठीक कहती हैं, मिस रालिसन, पर आपने कभी इस बात पर भी विचार किया है कि मनुष्या की इस धार्मिक तमयता के कारण मेरे उस सारे उद्देश्य की यथता मिट्ट हुई जा रही है जिसे मैंने सामने रखकर मैंने उसे पढ़ाने लिखाने और यथामय उच्च शिक्षा प्राप्त कराने की बात भीची थी ?

“आपका वह उद्देश्य क्या था ?” तीक्ष्ण दृष्टि से मेरी ओर देखती हुई सिल्विया बोली ।

“मैं चाहता था कि वह पढ लिखकर मेरे ही मानसिक स्तर पर आ जाये, ताकि उससे मेरा विवाह हो जाने के बाद हम दोनों पति-पत्नी के बीच अधिक वयम्य न रहे और हम दोनों सुख और गतिपूर्वक अपना विवाहित जीवन बिना सक। पर जबस उसके दिमाग म धार्मिक भावनाआ का कोडा घुस गमा है तनसे हम दोना एक-दूसरे का समझकर एक-दूसरे के अधिक निकट भान के बजाय हमारे बीच विरोध और बमनस्य ही बडा है। बीच म ऐसे दुलध्य अवरोध सडे हो गय हैं कि विवाह कभी हो नकेगा, इसकी कोई सभावना ही मुझे नहीं दिखायी देनी आइये इसी बेंच पर कुछ देर हम लाग बठ जाय ’

हम लोग जिस अपेक्षाकृत निजन सडक से हाकर धीरे धीरे चटाई मे चल जा रह थे, वह अब समाप्त होने पर थी। पास ही एक बेंच दख-कर मैं कुछ देर वही रहकर तनिक सुस्ता लेने का प्रस्ताव किया। जब हम दोना बेंच पर बठ चुके तब मैं अपनी बात का सूत्र फिर स पकडते हुए कहन लगा— देखिये मिस रातिसन, भाफ कीजियेगा, मैं आपको इसलिय नियुक्त नहीं किया कि आप अपने धार्मिक विचारो से उम प्रभावित करके हम दोनों के बीच ऐसा यवधान उत्पन्न कर दें मुझे भय है कि मुझे मनिया की पढाई स्थगित कर देनी होगी ”

सिल्विया का मुह इतना सा हो गया था। उसकी सारी गभीरता और दडता पल म काफूर हो गयी थी। अत्यंत दीन भाव से, प्राय गिट-गिटाती हुई वह बोली—“मैं आपको विश्वास दिलाती हू मिस्टर रजन कि मेरा उद्देश्य कदापि इस तरह का नहीं रहा है और न मुझे अभी तक इस बात का पता था कि आप दोनों के बीच बमनस्य उत्पन्न हो गया है। मनिया न मुझे कभी इसका कोई मकेत नहीं दिया। मेरा तो यह विश्वास है कि वह शायद जानती ही न रही होगी कि धार्मिकता की ओर उसकी रुचि बढ़ने से वह आपसे इस हद तक दूर चली जा रही है। मेरा तो यही विश्वास था कि धार्मिक भावना आप दोनों को एक-दूसरे की ओर अधिक निकट खीच लायेगी। मुझे आपकी बातें सुनकर आश्चय हो रहा है। विवाह के सबध म जिस ‘दुलध्य अवरोध की बात आपने कही, उसे मैं कुछ भी नहीं समझ पायी हूँ ”

“मनिया का कहना है कि विवाह तभी हो सकता है १४१

जब हम दोनों ईसाई धर्म को स्वीकार कर लें ”

“तब इसमें आपको क्या आपत्ति हो सकती है ?” अत्यंत आश्चर्य का भाव जनाती हुई मिल्बिया बोली—“विवाह की इमारत यदि किसी धार्मिक आधार पर खड़ी हो तो उसके अधिक दृढ़ और स्थायी रहने की संभावना है। आप क्या यह बात नहीं मानते ?”

“मान सकता हूँ, पर वह धार्मिक आधार केवल ईसाई मत से ही संबद्ध है या यह क्या जरूरी है ?”

“जरूरी नहीं है। पर जब एक पक्ष जान से या अनजान से किसी एक विशेष धर्ममत को अपनाते पर ही तुला हो, उम्मीद उसे गति मिल रही हो, तब दूसरे पक्ष के लिए क्या यह उचित नहीं है कि वह अपना हठ छोड़कर समझौता कर ले ? यदि केवल ईसाई मत को अपनाने का हठ करना आप दोष मानते हैं तो ईसाई मत को किसी भी हालत में न अपनाने का हठ करने वाला भी उतना ही दोषी माना जाना चाहिये। इसका अलावा, जसा कि मैं बता चुकी हूँ मनिया अनजान से इस बात पर अड़ो गई है कि वह ईसाई मत का ही अपनावगी, पर आप जानबूझकर इस बात का हठ किय बढे हैं कि आप ईसाई धर्म को स्वीकार नहीं करेंगे, भले ही बौद्ध धर्म का अपना लें। एक बार तनिक एकांत मन से, ठंडे मस्तिष्क से इस बात पर विचार करें कि आप दोनों में कौन अधिक दोषी है। आप धर्म परिवर्तन के लिये राजी हैं, पर ईसाई धर्म के प्रति आपका अकारण विद्वेष किसी प्रकार भी हटना नहीं चाहता। माफ कीजियेगा, आपसे समान पढे लिखे और सुसंस्कृत व्यक्ति से मैं इस तरह की आशा नहीं करती थी ”

उमकी तकाली एमी चतुराई से भरी थी कि मुझमें उमका कोई उत्तर ही दत्त न घना। जब मैं पहले दिन उम दत्ता था तब मेरे मस्तिष्क के किसी कोने में स्थित लघुनाम काप में भी यह कल्पना नहीं जगी थी कि सामारिक जान और धर्म के क्षेत्र में उसका अनुभव इसी उम में इग हृद तब गहराई का पहुँच चुका है। उसका बहू तक-शैशल। यह वास्तव में मुझे एक नये आश्चर्य से भरा हुआ लगन लगा था।

वह कहती गयी—“व्यक्तिगत रूप से मैं इस बात को तनिक भी महत्व नहीं देती हूँ कि कौन व्यक्ति किस धर्म का अप-

नाय हुए है। यदि विभिन्न धर्मावलम्बियों का विवाह आमानी से हा जाय तो अच्छा ही ह। पर जब उन दा म स कोई यह टूठ करे कि विवाह कार मिश्रित मरिज का रूप धारण न कर किसी धार्मिक आधार पर, धार्मिक विधि से ही हो, तब ऐसी स्थिति म यही अच्छा है कि दोनों एक ही धर्म का स्वीकार करें। वह एक ही धर्म क्या हा इन बात का लेकर भगडना भरी समझ म तनिक भी बुद्धिमानी का काम नहीं ह। क्योंकि यह ता स्पष्ट ही है कि आप—तथा साधारणत सभी सामाजिक व्यक्ति—धर्म का जिस अर्थ म ग्रहण करते हैं उसके अनुसार धर्म एक सामाजिक लिबास के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। एम आदमी ससार म कितने हैं जा चाहे कोई भी धर्म स्वीकार क्या न करें उसक ममगत सत्य का ही आंतरिक निष्ठा से अपनाय रहना चाहत हा ? कुछ भी हा आप लोगा के बीच भगडा बवल इस बात को लेकर चल रहा है कि वह लिबास लाल हा हरा हो, पीला हो, नीला हो, सफ़ेद हा या काला। पर वह सामाजिक लिबास चाह किसी भी रङ्ग का हो, हाना चाहिय दोनों के लिय समान ही। यह नहा हा सक्ता कि पनि एक रङ्ग का लिबास पहन और पत्नी दूसर रङ्ग का। इसलिय यदि आप यह मान लते हैं कि साधारण सांसारिक प्राणिया क लिय धर्म एक सामाजिक लिबास है तब आपको इसम क्या आपत्ति हानी चाहिय कि आप गार्हस्थ्यक गति और सुख के उद्देश्य स इस सबध म दूसरे पक्ष (अर्थात् मनिया) की ही इच्छा के अनुसार अपना लिबास बदल लें ? विचारकर उस हालत म जब कि मनिया आपकी तरह धर्म को एक साधारण सामाजिक लिबास नहीं मानती बल्कि आपन प्राणो को गति स उसका घनिष्ठ सबध मान बठी है !”

मिन्विया को इतने दिनों तक मैंन जिस हृद तक मितभाषो पाया था, आज उसी अनुपात म बाणी का स्रोत खुल गया था।

मैंन एक लंबी साँस नत हुए कहा— आपके तक म बहुत-बुद्ध सार है, मिम रालि मन। मैं एकांत म आपकी बात पर विचार बन्गा तब आपन निश्चय की सूचना आपको दूंगा। पर एक बात मैं आपने पूछता

चाहता हूँ। आपन अभी कहा कि मनिया अनान से इस  
 वान पर अडी है कि वह ईसाई धम को ही अपनावेगी। मैं  
 यह जानना चाहता हूँ कि चाह वह अनान ही हो, पर क्या उनका बीन  
 आपही न जानबूझकर उनके मन में नहीं बोया ?'

मर इस प्रश्न से मिलिविया कुछ कट-खी गयी। तनिक तीखे स्वर में  
 वाला—“मैं आपको विश्वास दिवानो हूँ मि० रजन कि मैं कभी जान-  
 बूझकर उनके भीतर किसी भी प्रकार के अनान का बीज वान का प्रयत्न  
 नही किया। यह ठीक है कि मैं प्रभु ईसा के आदेश चरित की महिमा  
 से उन परिचित कराने का पूरा प्रयत्न किया, उनकी जानामृत में भरी  
 वाली उम सुनायी उनकी जीवनी आदि से अन्त तक उन सुनारी और  
 उस महान् जीवन की महत्ता का निम्न रूप में मैं समझ पायी हूँ जनी रूप  
 में मैं उसे समझाया। मैं उन जनाया कि रोग-शोक उन दारिद्र्य,  
 पाप-पनाप से पीड़ित मानव-समाज के उद्धार और कल्याण के लिए प्रभु न  
 कितना महान् व्रत स्वीकार किया था। उन व्रत की पूर्ति में वह निरंतर प्रयत्न  
 हैमन-हैमन तूनी पर चला गया था और किस प्रकार अपने प्राण-दान नीचा  
 और दुःख का आचरित रूप से क्षमा करत हुए वह दिव्य ज्ञान में निरीत  
 हा गया था मैं उस बहकान के लिए कोई बनावटी या अपना ज्ञान ही  
 वान नहीं बतायी। वही वान अनायास पर मेरा आचरित विश्वास  
 है। और मरी दृढ़ धारणा है कि मरी वाना का उस पर अन्त ही प्रभाव  
 पडा है। वह भीतर ही भीतर अपने अनजान में अपनी हवागी मा के  
 दुःखमय जावन की याद से जिम दना हुई पीडा से धुलनी चनी जा रही थी,  
 उसक लिये उसे केवल प्रभु के महान पीडन की अनुभूति में ही नातरना  
 मित सकता थी और उनक चिन्तन-मगलमय, विश्व-कल्याणमय और  
 निरन्तर समाज स्वर्गीय रूप के चिन्तन में ही गति प्राप्त हा सकती थी।  
 इसी विचार से मैं उनके भीतर प्रभु के प्रेम का बीज वान का प्रयत्न  
 अवश्य किया। यदि यह अपराध है तो मैं अपने को अपराधिनी स्वीकार  
 करता हूँ और उनके लिए कुछ भी दंड स्वीकार करन का तयार हूँ। मैं  
 मनिया के अनान की बात केवल इस दृष्टि से कही है कि उनमें प्रभु के प्रेम-  
 मय रूप के चिन्तन के लिए इसाई धम का स्वीकार करना अनिवार्य मान

लिया है। मैंने उसे बताया कि प्रभु ने जिस अनन्त प्रेम अनन्त दया, और अनन्त क्षमा का उदाहरण मानव जाति के भाग रखा था वह किसी एक विशेष धर्म और सम्प्रदाय तक बद्धादि सीमित नहीं हो सकता, और वह चाहें किसी भी धर्म को स्वीकार करे प्रभु की कृपा उस पर समान भाव में बनी रहेगी, चाहे वह सच्ची लगन से उनका चिन्तन करती रहे और उनके बताये भाग पर चलती रहे। पर उसका हृदय ऐसा भोला, सरल और निष्कपट है कि वह किसी धर्म के बाहरी रूप का उसके भीतरा रूप से अलग दख ही नहीं पाती, और उसका यह विश्वास सहजात है कि किसी धर्म की भीतरा आत्मा को अपनाने से उसके बाहरी चोले को भी हर हालत में अपनाना ही होगा। मैं लाख प्रयत्न करने पर भी उस इस विश्वास से डिगाने में अपन को असमर्थ पाती हूँ। सच बात यह है कि म० रञ्जन कि मनिया की आत्मा प्रकृति से इस हृद तक तादात्म्य स्थापित किये हुए है कि वह किसी भी विषय पर मस्तिष्क से विचार कर ही नहीं पाती। प्रकृति प्रदत्त अनुभूति ही उसके लिये सब-कुछ है। और उस अनुभूति की सुझाव सब समय प्रकृति की चुम्बक-तरङ्ग के अनुसार चलती रहती है। आज प्रकृति का जो शांत रूप है वह उसी के तूफानी रूप के प्रकोप से ध्वस्त विध्वस्त हो सकता है। ऊपरी दृष्टि से दग्ध वाला यह सोच सकता है कि प्रकृति के भीतर कोई नियम नहीं है। पर अतदृष्टि रखनेवाला जानता है कि उसके अपन कुछ निश्चित नियम हैं। उसका जो शांत रूप हम देखते हैं उसके पाछे जो निश्चित नियम काम कर रहा है वही उसके तूफानी रूप का भी मूल विधायक है। मनिया की अतः प्रकृति के नियम भी बाह्य प्रकृति के उही नियमों से मिलते-जुलते हैं। यही कारण है कि वह जितनी ही मीठी है उतनी ही दृढ़ी भी जितनी ही मोली है उतनी ही आधी भी, जितना ही अधिक प्रेम कर सकती है उतनी ही घणा भी, जितनी ही गान है उतना ही तूफानी भी। प्रकृति की जब इच्छा होती है शांत सध्या मृग की म्निःस्य किरणों के रूप में और चाँदनी के तरलित प्रकाश में हँस देती है जब रात की इच्छा होती है तो वर्षा के रूप में रा देती है, जब क्रोध करना चाहती है तब वज्र के रूप में बड़ककर तूफानों के रूप



म गरजकर और झुकपा के रूप में घहरकर अपना रोप १४५  
 प्रकट कर देती है। दुराव और छिपाव की कोई गुजाइश

उसके भीतर नहीं है। मनिया के सबध में भी यही बात कही जा सकती है। ऐसी हालत में उमसे यह आशा करना कि वह अपने या हमारे के किसी भी स्वाध के लिये अपना हठ त्याग देगी, भूल है। इसलिये मैं आपसे प्रायना करती हूँ, मि० रञ्जन, कि यदि आप चाहते हैं कि आप दोनों का जीवन सुदृढ ववाहिक बधन में बँध जाये और दाना सच्चे गाहस्थिक मुख का अनुभव करें तो आप ही मनिया की बात मान लें। मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि ईसाई धर्म को अपनाते से आपको कभी कोई हानि नहीं उठानी पड़ेगी। यदि आप भी धर्ममार्ग को सामाजिक लिवास मानने वाले व्यक्तियों में से हैं, तब तो हानि का प्रश्न ही नहीं उठ सकता है, और यदि आप धर्म के भीतरी महत्व पर जोर देते हैं तो भी ईसाई धर्म स्वीकार करने से आप ठगे नहीं जायेंगे, क्योंकि जब प्राणों में दिय ज्ञान की पुनीत ज्योति जलाने में ईसाई धर्म ससार के किसी भी धर्म से पिछड़ा हुआ नहीं है।

मैं एकाग्र चित्त से सिल्विया के उस धाराप्रवाही भाषण का सुन रहा था। वह एसी एकांत लगन से अपने विचारा को प्रकट कर रही थी कि बीच में कहीं पर भाउसे टोकने, उमकी किसी भी बात से अपना विरोध प्रकट करने का साहस ही मुझे नहीं होता था। जब वह पूरी बात कर चुकने के बाद चुप हो गयी तब मैंने कहा—“आज आपने बड़ी कुशल ताकितता से ईसाई धर्म का पक्ष समर्थन किया। मैं आपकी बातों से बहुत प्रभावित हुआ हूँ। किस हद तक प्रभावित हुआ हूँ, यह मैं स्वयं नहीं जानता, पर इतना अवश्य जानता हूँ कि जिम द्विविधा में मैं पड़ा हुआ था वह आपकी बातों से बहुत कुछ साफ हो गयी है। इसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। अब मैं जल्दी ही अपना मत निश्चित कर सकूँगा, ऐसी आशा है।”

सिल्विया के मुख पर फिर मन्त्रोच की वही लालिमा छा गयी जो बीच में धार्मिक उत्तेजना से दब गयी थी। मैंने कहा—“इस समय मुझे आज्ञा दीजिये, मिस रानिन्सन। मैं आपसे फिर मिलूँगा और जल्दी ही

आपको अपन निणय की सूचना देगा । मैंने आज आपका बहुत समय लिया है । अच्छा गुड बाई !” कहकर मैं उठ खड़ा हुआ और उसकी ओर अपना हाथ बढ़ा दिया ।

उमके सकोच का दौरा बेतरह बढ गया था । अखिँ प्राय नाची करके उमने भी धीर से अपना हाथ बढ़ाया । उसे पकडकर एक हलका-सा झटका दन्तर में घला गया ।

घर लौटकर मैंने मनिया को सूचित किया कि मैंने ईगार्ड मत स्वीकार करने का निश्चय कर लिया है । मनिया कुछ देर तक पुलक भरे आश्चय से मेरी ओर ताकता रही उसक वाद मर दानो गालों पर अपन हाथ फेरती हुई वाली— तुम बहुत ही भल आदमी हो ।

दूसर ही दिन मैंने सिन्धिया को भी सूचित किया कि हम दोनों ने ईगार्ड धम मे दीभिन होन का विचार पक्का कर लिया है । सिन्धिया के मुख की चमक उम समय दलन ही मान्य थी । जसे उसे अपनी जीवन-व्यापी साधना न सिद्धि प्राप्त हो गयी हो ।

हथ-नादगद् स्वर मे उमने कहा— चलिय, मैं अभी आप दोनों को गिर्जे मे पादर के पास ले जाती हू । आज ही बसिस्ता हो जायगा ।’

जब हम तीनों गिर्जे मे पहुँचे तब सिन्धिया न सफे अचबन और नीले मखमल की टोपी पहन हुए एन अपेड अवस्था के पादरी से मेरा परिचय कराया और हम लोगो के धाने का उद्देश्य बताया । एक हली हैमी हसने हुए पादरी महान्य बोले—“बडी प्रमत्ता थी घात है ।’ उनका रग मेडैसा था । हिन्दुस्तानिया की तरह चीन भाषा, तीखी नाक और पनी अखिँ उनने अताधारण रूप से बितानील व्यतिरन का परिचय देती थीं । वह अपनी धम-मुक्तक लेकर मच पर जाकर खडे

हो गये । हम दोना को उहोंने अपने सामन नीचे खडा १४७

कराया, उसके बाद उहोंने कुछ मग्न पडन शुरू किये । बीच  
बीच म कुछ मन्त्रा की आवृत्ति उहान हम से भी करायी । अत म 'पवित्र  
जल' ने उहोंने हम दानो को अभिषिक्त किया । मारा विधि विधान  
समाप्त हो चुवने के बाद उहान हम दाना क ऊपर अपना हाथ रखकर  
आशीर्वाद दिया । मनिया ने आज पहली बार गिर्जा दत्ता था और गूली  
पर चढे हुए ईसा का चित्र भी पहनी ही बार । वह तमय हाकर उस  
चित्र को देख रही थी और उसके मुख पर एक अनिबचनीय भाव  
निमग्नता व्यक्त हो रही थी ।

जब हम सो नय वर्म की दीक्षा ले चुवन के बाद घर लौटन लग  
तब मिन्विया की प्रमत्तता का ठिकाना नहीं था । उसकी सारी सकाच-  
नीतता आज फिर न जान कहाँ गायब हो गयी थी । रास्ते भर वह चिडिया  
की तरह फुदकती और चहकती हुई कभी पादर के आशीर्वाद के महत्व से  
हम परिचित करान का प्रयाम करती थी और कभी हम दानों के उज्ज्वल  
भविष्य का चित्र खीचनी हुई हमें अधिकाधिक उत्साहित करन का प्रयत्न  
करती जाती थी । मनिया यों ही उत्साहित हो रही थी, इमलिय वह  
मिन्विया की वाता म पूरा माग दे रही थी । पर मैं कुछ दूमरी ही चिन्तामा  
म मग्न हो गया था । वचिताएँ ठीक विय तरह की थी यह मुझे इस समय  
याद नहीं है ।

मिन्विया अपने घर न जाकर हम लागा क माथ मरे ही बँगले म  
चली आयी । वाली— 'आज तो आप लोगा न बिना दावत लिय मैं नहीं  
छोडूंगी ! आज इतना बडी खुशी का दिन है कि उने माधारण पिना की  
तरह बिताना अच्छा नहीं होगा ।'

उन्के उत्साह का देखकर मैं विचार करन लगा कि कुछ नारियाँ  
कभी तनी स अपने स्वभाव का ऊपरी मुखडा उतारकर फेंक दनी हैं  
और चाहन पर तिनकी कुर्तों स फिर उसी मुखडे का पहन लेती हैं । पर  
चाह जा भी हो, उमरा आज का रूप मुके बहुत ही प्रिय लग रहा था ।  
वह आज मोलह कर की लडकी की तरह लग रही था । उम इतना  
स्वप्न, चञ्चल और प्रसन्न इसके पहले मैं कभी नहीं देता था ।

नीकर ने बताया कि चाय तयार है। हम तीना ड्राइंग रूम में चले गये। जब चाय आयी तब मनिया ने तीना प्याला में चीनी डालना शुरू किया। जब वह दूध डालने लगी तब इत्तफाक से और प्यालो की अपदा मेरे प्याले में कुछ अधिक दूध गिर पडा। सिन्धिया भट बोल उठी—“अभी से तुम अपने भावी पति के साथ इस बदर पशपात करने लगी हो! मैं तो सोचती थी कि कम से कम विवाह होने के पहले तक तो हम लागो को न भूलोगी!”

मनिया बचारी उम साधारण परिहाम का भी यथार्थोक्ति मानकर अत्यंत सकुचिन हो उठी। मिल्विया के प्याले में दुबारा दूध डालती हुई बोली—“माफ करना, आज मैं बहुत नबस हो गयी हूँ। उनके प्याले में दूध डालते समय न जान कस मेरा हाथ ही बाँप गया।”

‘यह लो, मैंने कहा न था।’ बहवर सिन्धिया ठहाका मारकर हँस पडा।

वास्तव में उसके स्वभाव में मुझे एक विचित्र परिवर्तन दिखायी दे रहा था। वह जिस गिती ध्वणनीय नगे में चूर थी। उसकी उम असाधारण प्रसन्नता का छुनहा प्रभाव मेरे बहुत दिनों से अवसादग्रस्त—बल्कि जहता प्राप्त—प्राणा में एक अपूर्व रूप हिलोर का मचार करने लगा था। वह बात-बात में मनिया से चुटकियाँ ल रही थी। मनिया कभी प्रसन्न हो उठती थी कभी सकुचाती थी और कभी खीभ उठती थी।

जब मिल्विया का हास्य-गुजन कुछ ठग पडा तब वह गत भाव से स्वाभाविक स्वर में बोली—“अब हम लोगा का यह तय कर लेना चाहिये कि विवाह के लिये कौन तिथि निश्चित का जाय। यह गुन-जाय जल्दी से जल्दी मपन्न हो जाना चाहिये। इसमें अब अधिक देर करना किसी रूप से भी उचित नहीं है। विवाह की खुगियाँ किस रूप में मनानी हागी, इस सबध में आप यदि चाह, मेरी माँ की भी राय ले सकते हैं। माँ को इन सब बातों का बहुत अच्छा तजर्बा है।

मैंने कहा—‘मैं भी चाहता हूँ कि विवाह जल्दी से जल्दी हो जाय। मैं आपकी माँ से अवश्य राय लूँगा। बेबल एक बात मैं आपसे पूछना चाहता हूँ मिस रालिम्पन। फादर एथोनी ने हम दोनों के नाम बदल दिये हैं, यह ता आपकी मामूम ही है। पर मैं किसी भी

हालत में अपना नाम बदलने को तैयार नहीं हूँ। मैं बराबर  
नृपद्र रञ्जन ही रहना चाहूँगा, नपियर रञ्जन नहीं। १४६

उसी प्रकार मैं चाहूँगा कि मनिया को सब लोग बराबर मनिया ही कहें,  
मेडलीन नहीं। यदि आप यह समझती हैं कि घम बदलने के साथ-साथ  
नाम बदलना अनिवार्य है तब तो मैं फिर अपने पूर्व घम को ही अपना  
लगा। क्योंकि इनाई घम स्वीकार करने के लिये मुझे चाहे कितनी बड़ी  
प्रेरणा क्या न मिली है, पर नाम बदलने की प्रेरणा मुझे मसार की  
बोर्ड शक्ति नहीं दे सकती, इसे आप निश्चित जानिये।"

"नाम बदलने का कोई आवश्यकता नहीं है मि० रञ्जन। फादर  
ने तो एक परम्परा का पालन करते हुए मत्र पढते समय आप लोगों के  
नाम बदल दिये थे। पर व्यावहारिक क्षेत्र में नाम बदलना बिल्कुल  
आवश्यक नहीं है।"

तब ठीक है।' चन की सास सेन दूएँ मैंने कहा। क्योंकि सारा  
घम गेंवा चुकने पर मेरे मन में उतनी ग्लानि नहीं हुई थी, पर नाम  
बदल जाने पर मुझे लगा कि नये चक्कर में पड़कर मैं अपना सर्वस्व खो  
चुका हूँ।

"तो विवाह के सम्बन्ध में आपन क्या सोचा? मेरी राय में अगले  
इतवार को ही विवाह-काय सम्पन्न हो जाय तो क्या हज है? आज  
सामवार है। अभी छ दिन बाकी हैं। इस बीच हम लाग सब तैयारियाँ  
कर लेंगे। मैं फादर से पूछ लूँगी कि अगले इतवार का दिन शुभ है या  
नहीं। शुभ होने का कारुण्य नहीं है। योता आप किन किन लोगों  
को दना चाहें? आपका कान-कौन से मित्र यहाँ रहत हैं?"

मैंने कहा— 'यहाँ तो मर मित्र आप ही लोग हैं।'

'और दान ?'

'दान में जा मित्र हैं व नहीं आ पायेंगे।'

'अच्छा तो मैं अपने कुछ मित्रों को निमन्त्रण दूँगी। आपके मित्र न  
सही, आपके मित्रों के मित्र तो आ सकेंगे।'

मनिया बोली— 'मैं भी अपने मित्रों को बुलाऊँगी।'

१५० मुझे हँसी आने लगी। मैंने कहा—“मुझे बड़ी खुशी होगी।  
 तुम अवश्य बुलाना। अन्दी चहन पहन रहेगी।”  
 “बलिये हम लोग माँ के पास चलें, मिन्विया बोली—“उसकी  
 भी राय ले लें।”

जब हम लोग मिसेज रालिंसन के पास गये तब मिन्विया ने उह  
 बताया कि हम दोनों ने ईमाइ धम स्वीकार कर लिया है और ईसाई  
 धम के अनुसार ही अगले रविवार को हम दादा का विवाह हागा।  
 मिसेज रालिंसन तो जस सातवें घासमान पर चर गयी। उनका हृष  
 इस सीमा का पहुँच गया कि वह मेरे मन से प्राय लिपट गयी। उसके  
 बाद हम दोनों के सिरा पर हाथ फेरती हुई आशीर्वाद देने लगा और  
 दो एक स्नह-जनित धामू भी उनकी आँखों से टपक पडे।

जय वह कुछ गान हुई और हम सब लोग इतमीनान ने उठ गये  
 तब उहाने बिना पूछे ही यह बताना आरम्भ किया कि कितने प्रकार  
 के कपडे बावाने पडेंगे, 'वेडिंग केव' किस डिजाइन का कितने बडे आकार  
 का और किसके यहाँ से बनवाना ठीक रहेगा, भाज का प्रबन्ध किस रूप  
 म होगा और विशेष विशेष डिसे कया कया रहेंगी हसी-खुशी के कया  
 कया प्रोग्राम रखे जा सकत हैं आदि आदि। जूनिया भी ड्राइंग रूम मे  
 आ गयी थी, पर वह एक कान मे खडी थी। पता नही कया, बह मेरे  
 आने पर कभी इतमीनान से कुर्नी पर बठनी न थी। कया वह मेरे साथ  
 एक ही कमरे मे बठना अपमान-जनक समझती थी? या किसी एक  
 ऐसी मनोप्रियि ने वह परेगान थी जिसके कारण बह किसी बाहरी यति  
 की उपस्थिति मे अपना सारा आत्म विश्वास सा बठती थी? जो म  
 हो, मेरे आने पर वह एक बार ड्राइंग रूम मे अवश्य आ जाती थी और  
 एक कोने मे प्राय दीवार के सहारे खडी होकर एन विचित्र दष्टि से मे  
 ओर देखती थी। उस दष्टि मे कुतूहल रहता था स्वागत भरी मुस्  
 भी रहती थी और लीक भी। वह लीक स्वयं अपने प्रति थी या  
 प्रति, मैं कह नही सकता। उसन स्पष्ट ही सब बातें सुन ली थी, इस  
 भाज की उसकी मुखमुद्रा मे विचित्रता का पुट और अधिक् आ  
 था। वह घुप से बिलमिलायी हुई सी आँखा से हम लागा की घो

रही थी। उसकी लकी और कुछ ऊनरी हुई मी नाक के नीचे १५१  
 एक अजीब सिक्कुडन सी पड गयी थी। वह क्या सोच रही है  
 और किस दृष्टि से हमे देख रही है मैं कुछ भी समझ नहीं पाता था।

मिसन रालिन्सन ने कहा—'जूनिया, तुमन मुना मि० रञ्जन का  
 विवाह अगले रविवार को ईसाई धर्म के अनुमार हागा ?'

"हा, मैंने मुन लिया है। अपने दोना हाथा को अपनी पीठ के पीछे  
 ले जाती हुई जूनिया बोली, और फिर उमी निराभी दृष्टि से हम लागा  
 की आर दखन लगी।

मिमेज रालिन्सन न एक बार फिर जूलिया की ओर दख्य और  
 लवा सास लेती हुई मुझमे वाली—"ओह मि० रञ्जन, तुमने मुझे  
 कमी नहीं बताया कि तुम ईसाई धम म्बोवार कर्न जा रह हो। आज  
 अचानक यह मुनकर " वर अचानक मिल्लिया की ओर दखकर और  
 उमकी आला मे न भाळूम क्या नकेन पाकर रह गयी। फिर एक लम्बी  
 माम उहाने ली और बोली— कुछ भी हा, मुझे बढी प्रनजता है प्रभु  
 तुम दाना का मगल करेगे "

२४

जब यह अनिम रूप स तय हा गया कि विवाह अगले  
 रविवार का होगा तब बडे जारा म तयारिया होन  
 लगी। मैंन थीमती रालिन्सन ये निवेदन किया कि  
 सारा काय उही को निभाना हागा क्योकि मैं और मनिया दोनो इन  
 नव मामला म नौमिलिया हैं। मैंन उसी दिन बँक से रुपया निकालकर  
 एक लम्बी रकम उहें सौर दी। तीनो माँ धनिया न ही बाजार मे कुल  
 सौदा परीदा और अपने दिन दिन मित्रों को निमअण दना उचिन समझा,  
 दिया। मनिया भी एक दिन रिकता में धक्कर लगाती हुद अपनी सगिनिया  
 को माता दे प्रायी।

मनिया के उन्लास का ठिकाना नहीं था। विवाह के ठीक एक

दिन पूव सिन्विया सध्या को भ्रंवेरा होने पर उसवे पास  
 आयी। उमके कमरे म दोना सहलियाँ आपम मे न जान क्या खुमर पुसर  
 करने लगी। मैं अपने कमरे म बठा हुआ था। बीच मे दोनो खिलखिला  
 उठती थी। कुछ देर बाद सिन्विया ने आवाज कुछ ऊँची करके उसे यह  
 बताना आरम्भ कर दिया कि विवाह के समय उसे किस ढग मे पेग घाना  
 चाहिये क्या करना चाहिये और क्या नहीं। बहुत देर तक दोनो म खूब  
 घुटती रही। उम रात सिन्विया न हम दोनो के आग्रह से खाना भी  
 वही खाया।

दूसरे दिन मैंने देखा मनिया के मुख पर एक अप्रूप, स्निग्ध और  
 कमनीय काति छापी हुई है। उसकी मद मधुर मुसकान से जैसे स्नह रस  
 चू रहा था। यथासमय श्रीमती रालिसन और उनक मित्रगण—गोरे  
 युवक और युवतियाँ, बद्ध-बद्धाएँ और बच्चे भी—मरे बँगल के बाहर  
 इकट्ठा हो गये। सिन्विया न मनिया को एक नये ही वेप म सजा दिया  
 था। श्रीमती रालिसन की यह राय थी कि वह भ्रंगरेज युवतियो की  
 तरह सफेद रशम का गाउन और जाली से ढकी हुई टोपी पहन। पर इस  
 पर मनिया न आपत्ति की थी और मैं भी। सिन्विया न सफेद रेशम  
 की एक साडा उम पहना दी थी, जिसपर इन्द्रधनुषी लहरें लहरा रही थी।  
 उसके नगे मिर पर सफेद फूला को एक सुंदर मुबुट की तरह सजा दिया  
 था और उसके जूडे पर सात रङ्गा के सात फूला का हार बाँध दिया था।  
 जा जो कीमती गहने मैं लाया था उहँ भी गले मे, काना मे और हाथो  
 म अपने ढग से पहना दिया था। बुन मिलाकर मनिया का एक  
 विचित्र ही रूप बन गया था। जब वह मेरे पास आयी तो मैं हँसी  
 रोव सवा। मनिया भी झँपती हुई मेरी ओर से आँखें फेरकर हँस  
 लगा। मैं एक कीमती बिल्लु सादा उन्नी सूट पहने था।

जब हम लाग गिजें म पहुँचे तो सफेद बर्दी पहने दूये कुछ ईर  
 सन्ध्यासिनियाँ हमारे स्वागत के लिये खडी थी। भीतर मच पर  
 पादरी महाशय मद मद मुस्करा रहे थे जिहाने हम ईसाई धम की  
 दी थी। पूरा एक घटा स्वस्तिवाचन, प्राथना, बवाहिक मंत्र पाठ, प्र



तथा द्रुमके कैथालिक विधि विधाना मे वीत गया । पुरोहित

१५३

महालय गात कितु गभीर-स्वर म जो मन्त्र-पाठ कर रह थे  
उनके एक एक शब्द का अर्थ मैं एकाग्र मन से मममन का प्रयत्न कर  
रहा था । और मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरे मन पर उन मन्त्रों का एक  
अपूव रहस्यात्मक प्रभाव पड़ रहा था । गिर्जे के सीधे, निरधरे, ऊँचे और  
गान घेरे मे जब वे गान कुछ निश्चिन्त छेद, ताल और तय म बँधी हुई  
लहरिया म प्रतिध्वनि होने थ तब वे मरे काना मे अपन अर्थ-सहित  
उदात्त वेदवाणी की तरह लगत थ और एक जादू का-सा प्रभाव डालन  
मे ममय हात थे । उन दिन पहली बार मरी समझ म यह बात आयी  
कि गिर्जे की भीतरी बनावट विशेष प्रकार की क्या हानी है—क्यों उस  
मन ह्य स निर्मित किया जाता है कि पुरोहित की वाणी गभीर स्वर-  
लहरिया म तरङ्गित होनी हुई निश्चिन्त गति म प्रतिध्वनित होनी रह ।  
मुझे एसा लग रहा था कि उन तरङ्ग-ममान मन्त्रों के प्रभाव से मैं मनिया  
क नाथ एक रहस्यमय बधन म बँधा जा रहा हूँ । अत म पुरोहित महा-  
लय का आशीर्वाद प्राप्त कर जब हम दाना बाहर निकले तो चारो ओर  
से प्रधाइयों की मन्त्री लग गयी । बुधनियाँ प्राय किलवागियाँ मारकर  
हमारा स्वागत करने और बधाइयाँ दन लगीं । बच्चे सुगी म उछल-कूद  
मचान थ । बड़ा महिलाएँ आतंगिन हृदय मे मगल आशीर्वाद बरमान  
नगी । एक अपूव उल्लास और उन्माह से सारा बानावरण गुजित थ  
उठा था । मैं मनिया की ओर दवा । नववधू की पुनक मरी भूट-मदु  
लज्जाभा उसके मुखपर प्रभावित हान्तर उसे ऐसी कमनीय नमनीयता  
प्रदान कर रही थी जो मेरे प्रति रक्तकरा का एक अनिवचनीय ह्य की  
अनुभूति स तरङ्गित करती थी । मिन्धिया न बड़ी पुनीं म आकर मनिया  
का बायाँ हाथ पकड लिया था । एक ऐसा अपूव मन्त्र-विह्वल भाव  
मिन्धिया की आँखा म चमक रहा था कि लगता था जम स्नेह-हृप के  
कारण उसका आँखा से आँसू निकलन ही को है ।

कुछ दूर आगे बदन पर मैं दवा, मनिया की मगिनियाँ अपन बाल-  
बच्चा के साथ एक किनारे पर बतार बाँधे खड़ी हैं । उनमे म  
अधिकांश पूरे आन्त्रीनवाला, पुटनों से नीचे तक का भाग पहने और

सिर पर एक कपडा बाँधे थी। दो एक एमी भी थी, जो जीण सहेंगा पहले और फटा-पुराना ओढ़ना ओढ़े हुए थी। कुछ देर तक वे शायद मनिया को पहिचान भी न पायी। परिपूरण विस्मय से भरी अवाक दृष्टि से कभी वे मेरी ओर देखती थी कभी मनिया की ओर। जब उन्होंने मनिया को पहिचान लिया तब उनका विस्मय अकपट स्नेह श्रद्धा और हृष्य में बदल गया। वे प्रदूतो की तरह दूर ही बड़ी थी। उस सफ़्त पोग समाज के बीच में उन्हें आगे बढने का माहम ही नहीं होता था। जब मनिया की अचमनस्कता भंग हुई तब उमने उन लागो की ओर दवा। देखते ही वः मुझे छाटककर धसुध सी उनकी ओर दौडी गयी और "भलो जीजी! नगीना बहन! सनोवरिया चाची! चिनारिया मामी!" कहकर नाम ल नेकर प्रत्येक से इस तरह लिपटन लगी जस सुनह के विद्युडे हुए बच्चे शाम को अपनी मा का पाकर उसस लिपट जात है। चिनारिया मामी को ता उसने अपनी दानो दाहो से दम तरह पकड लिया कि फिर छाटा ही नहीं 'मामी' की आँवा से बहती हुई आसुआ की धारा मनिया के बालो को भिगे रही थी। मैं मन ही मन सोचन लगा कि जिस पवित्र जल' स पादर ने हम गिज में अभिषिक्त किया था वह अधिक पवित्र था या जिस जल से 'मामी' मनिया के बालो का अभिषिक्त कर रही है वह अधिक पवित्र है!

पर वह दय मेरे मन में अले ही भावोडोलन उत्पन्न कर रहा हो, उपस्थित मडली के लिए वह अत्यात अगोभन सिद्ध हो रहा था। सफ़द-पाश गोरी महिलाएँ दखकर नाक भाह सिवाडने लगी था, और कुठ एक दूसर की ओर दखकर मुट फेरकर हस रही थीं। पुस्ता न यद्यपि इम प्रकार 'निष्' अभद्रना का परिचय नहीं दिया, तथापि उनके मुखा के भाव से मुझे यह स्पष्ट दिखायी द रहा था कि उन्हें भी मनिया का वह 'अदून प्रेम प्रदान अगोभन लग रहा था। धीमती रालिसन का चेहरा एनदम उतर गया था। उह शायद ऐसा लग रहा था कि मनिया ने जानबूझकर उन्हें उनके 'प्रतिष्ठित मित्रा के आगे अयमानित करने के इराद से सबके सामने उन गदी जिप्सी लडकिया से 'लगाव लिपटाव आरम्भ कर दिया है। जूलिया उपस्थित मरडली की खीभ

श्रीर मेरी परेशानी—जो मेरे चहरे से स्पष्ट ही व्यक्त हो

१५५

रही होगा—देखकर अत्यन्त प्रसन्न लगन लगी थी। कुछ ही समय पहले तक उमकी सूरत रोनी-सी हो रही थी। उसकी कजी आखों की व्यग्रात्मक दृष्टि जैसे सबसे यह कहना चाहती थी—“देखो, इस व्यक्ति ने जिस लटकी से विवाह किया है उसे यह समाज के किस चूड़ेवान से उठाकर ले आया है उसका नमूना देख लो।”

पर मुझिल यह थी कि मनिया उग्रमिथन अधीर जनता के मनोभाव के प्रति बज्र उदासीन होकर अपनी पूव सगिनिया के साथ सुख दुःख की बातों में ऐसी व्यस्त हो गयी थी कि वहा से हटने का नाम ही नहीं लेती थी। सब लोग इस इतजाग में खड़े थे कि वह लौट आवे और वर वधू के साथ सभी दावत खाने चलें। पर मनिया के लिये जैसे उन सबका कोई अस्तित्व ही नहीं था। मेरी अधीरता भी पराकाष्ठा को पहुँचने जा रही थी। एक बार मेरी इच्छा हुई कि स्वयं जाकर उसका हाथ पकड़कर ले आऊँ। पर ‘वर होने के नाते मुझे अपनी मर्यादा’ की रक्षा पूरी गम्भीरता से करनी चाहिये, यह सोचकर मैं फिर रह गया। सिन्धिया उस बीच न जाने कहा गायब हो गयी थी। श्रीमती रालिसन भी उत्कण्ठित दृष्टि से सम्भवत उन्ही को खोज रही थी। कुछ दर बाद सिन्धिया उस भीड़ के बीच में स एसे बाहर निकल आयी जस काले बादला को भेदकर चाँद। फादर जेरेमिया भी उसके साथ थे। सम्भवत वह अभी तक ‘फादर’ से ही कुछ विनोप बातें करने में व्यस्त थी। उसे देखते ही श्रीमती रालिसन उसका पास प्राय दौड़ी गयीं, और मनिया की ओर आगारा करती हुई कुछ कहने लगी। सिन्धिया अपनी माँ की दृष्टि का अनुसरण करती हुई मनिया के पास गयी। मनिया अपनी जीजी, चाची मामी, मौसी से इस तरह मग्नमन होकर बातें कर रही थी कि उसे और कहीं की सुधि ही नहीं थी। सिन्धिया को भी उसने नहीं देखा। पर सिन्धिया भी एक क्षतुर थी। उसने एक एक करके मनिया द्वारा निमन्त्रित सभी स्त्रियाँ को सलाम करना शुरू किया और उसके बाद बड़े प्रेम से मुस्कराकर न जाने उन लोगो में क्या कहा, मैंने कुछ सुना नहीं, क्योंकि मैं काफी दूर खड़ा था। उसके बाद मनिया के बान में कुछ कहकर वह उमका

हाथ पकड़कर ले आयी । मनिया के लौट आने पर फिर सब लोगो ने धीरे मथर गति से चलना आरम्भ किया । बर-यात्रा फिर आरम्भ हुई ।

श्रीमती रालिसन के प्रबन्ध में किसी प्रकार की कोई झुट्टि नहीं थी । विवाह में सम्बन्धित केवल उन्होंने बहुत बड़े आकार का तयार करवा रखा था और उस केक की सजावट भी देखने ही योग्य थी । मैं और मनिया केक काटने लगे । इस कला में हम दोनों ही नौसिविये थे । हमारे काटने के ढंग में चारों ओर कहकहा मच गया । सिल्विया ने हम लोगों की सहायता की तब उस सबट से प्राण छूटे । श्रीमती रालिसन ने कुछ विनोद भोय पदाय स्वयं अपनी दखल देख म घर ही पर तयार करा रखे थे मग मभी चीजों का प्रबन्ध एक होटल के द्वारा कराया गया था । 'लख का प्रबन्ध बाहर लान पर किया गया था । मनिया के विशेष आदेशानुसार नरङ्गिया बहन, गुलबिया भोजी चिनारिया मामी, सनावरिया चाची आदि सभी के लिये भी निमन्त्रित 'सम्य जनता के साथ ही मजें लगायी गया और उन्हें भी ठीक उसी तरह 'मव किया गया जिस प्रकार हमारे माय अनिधिया को । कहना न होगा कि मनिया के विचित्र आदेश— और उस आदेश के पूरा पालन के सम्बन्ध में बच हठ—से उपस्थित जनता तनिक भी प्रसन्न नहीं थी । पर मनिया ने इस सम्बन्ध में श्रीमती रालिसन के आग्रह पर तनिक ध्यान दिया न सिल्विया के इस सुभाव पर कि उसकी सगिनियों को भीतर आराम से बिठाकर खिलाया जाय ।

'यह हर्गिज नहीं हो सकता ।' मनिया ने ताब के साथ कहा— 'वे मेरी विवाह अनिधि हैं । उन्हें धूलों की तरह अलग बिठाकर मैं उनका अपमान किसी भी हालत में नहीं दाने दूँगी ।

इसके बाद फिर किसी का कुछ बोलने का साहस नहीं हुआ । मनिया की सगिनिया के छोटे-छाटे बच्चा ने एमा ऊधम मचाना शुरू कर दिया कि कुर्मी के ऊपर चढ़ चढ़कर मज पर से कई तश्तरियाँ तोड़ डाली, कई चीजें उलट डाली । यह बाइ भी श्रीमती रालिसन तथा उनके दृष्टबोण के हमारे ध्यक्तिया को अन्ध्रा नहीं लगा । उन्होंने बड़बड़ाना गुरू कर दिया । मनिया ने अपनी सगिनिया की घबराहट देखकर उन्हें दिनासा

दत हुए कहा कि बच्चे ऐसा करते ही हैं। और फिर स्वयं बच्चा को ठीक से बिठाकर उनके हाथ में उसने केन-मिठा-इयाँ आदि रख दी।

१५७

जब सब लोग खा-पी चुके, और पुष्पगण सिगरेट अथवा सिगार पीत हुए खाना पचा रहे थे और स्त्रियाँ गप्पाटक द्वारा, तब सहसा मनिया की जीजी, चाची, मामी, मौसी आदि ने सहसा एक विचित्र स्वर में और विचित्र ही ताल और लय में कोरस में गाना आरम्भ कर दिया—

एसो रतन दिन होवे मुबारक

ऐसी खुशी में मनाओ रंगरलिया मनाओ रे ।

सब लोगो का ध्यान उसी आर केन्द्रित हो गया। स्त्रियाँ गप्पाटक भूल गयी और पुष्प सिगार पीना। जिसी स्त्रियो का सम्मिलित स्वर निरन्तर उँचा उठता हुआ पश्चिम में धक्क और धक्क से निःसाद पर पहुँच गया था। पहले अंतरा तक तो ब बठा रही, फिर उसके बाद सहसा उठ खड़ी हुई और एक गाल घेरा बाँधकर उँहोने नृत्य और गीत एक साथ आरम्भ कर दिया। उनके मुखों पर एक अप्रूप उल्लाम चमक रहा था, आँखा में एक निराली मद मरी उमग छलक रही थी। और वीर वे सब अपने नाच और गाने में ऐसी रम गयी कि फिर बठ कर आराम करने का नाम ही उँहान नहीं लिया। 'शिष्ट जनता' पहले तो कुतूहल से देखने लगी, फिर धीरे धीरे दबे हुए कहकहे लगने लग। उसके बाद लोगो ने उबताकर धीरे धीरे अपनी जगहा पर से उठकर चलना शुरू कर दिया। पर उन गायिकाओं पर किसी भी बात का कोई असर नज़ी पड रहा था। वे अपने नाचने और गाने में ऐसी तल्लीन थी कि इन सब बातों को और ध्यान देन का अवकाश उँह नहीं था। उँहोंने न किसी की राय से गाना शुरू किया था, और न उसे बंद करने में दूसरा के मकेतो का कोई प्रभाव उन पर पड सकता था। अपनी उमम से वे गा रही थी और अपनी मौज से ही बंद कर सकती थी। चूँकि स्पष्ट ही मनिया के विवाह की खुशी से उनका मन अभूतपूर्व रूप से विभोर हो रहा था, इसलिये उसे जल्दी खतम करने का कोई सवाल ही उनके मन में पदा

नहा होता था । मनिया दूर ही से दम-जैवकर पुनः विह्वल हो रही थी । उसके लिये भी सभवतः सुगिया मनाने का इससे अच्छा ढंग दूसरा नहीं हो सकता था । पर श्रीमती रालिगन की मुद्रा न स्पष्ट ही यह प्रकट हो रहा था कि वह मन-ही मन उस अद्भुत नृत्य-गीत से बुरी तरह खीझ उठी है । वह अपनी खीझ के कारण कभी नौकरा को बात-बात पर डाटती थी, कभी सिन्विया से भिडक्कर बातें करती थी और कभी जूलिया पर वरस पड़ती थी । जूलिया माँ को खीझत देवकर और सिन्विया की परेशानी देवकर बहुत प्रसन्न हो रही थी । सिन्विया काफी दूर तक मनिया के साथ बाहर बठकर अवपूर्वक सुनन का ढाग रचती रही । पर दीर्घ धय के बाद भी जब गाना समाप्त न हुआ तो वह उकताकर वहाँ से उठकर भीतर चली गयी और वहाँ रटियो बजाने लगी । मैं मनिया के पास ही चुपचाप बठा हुआ अत्यंत विनादपूर्वक यह सब तमाशा देख रहा था ।

फापी देर बाद जब मनिया की जीजी चाची मौसी मामी का दल तनिक विश्राम लेने के उद्देश्य से बठ गया तब मनिया ने उन सबको भीतर चलेकर रेडियो सुनन के उद्देश्य से निमंत्रित किया । हम लोग सब भीतर चले गये । बच्चा को स्पष्ट ही पहली बार किसी सजे हुए बंगले के भीतर खुली छूट मिली थी । वे वहाँ भी ताड़ फोड़ तथा उछल-खूद की कारवाइया में लुट गये । उनकी माताएँ उन्हें विरत करन के प्रयत्न में बहुत परेशान हो रही थी । मना किये जान पर कुछ देर के लिये शांत हाकर बच्चे फिर उपद्रव मचाना शुरू कर देते थे । नौकर-चाकर भी उन्हें टोक रहे थे । पर मनिया ने यह आश्रय जारी कर दिया कि बच्चा को किसी भी बात के लिये निषेध न किया जाय । केवल पन्द्रह मिनट के भीतर माने कमरे का रूप ऐसा अस्त-व्यस्त हो गया कि मैं स्वयं हीलजलि हो उठा । पर मैंने एकदम निष्क्रिय रूप धारण कर लिया । विवाह के पहले ही तिन के गुप्ततम अचसर का मैं छप्टे-छोटे कारणों से आपसी मनमुटाव में परिणत नहीं होना चाहता था । रेडियो में गान पर गान चल रहा था । मनिया

अपनी जीजी चाची मौसी मामी से सुख दुःख की बातें करती जाती और तरह-तरह के प्रश्नों द्वारा उनके जीवन की नवीनतम स्थिति के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करती चली जाती थी। मुझे यकावट मालूम होने लगी थी। मैं भीतर अपने कमरे में जाकर एक कोच पर आराम से लेट गया।

लेटे-लेटे मैं नयी स्थिति के महत्त्व पर विचार करने लगा। सहसा मेरे कानों में किसी के बोलने की आवाज आयी। मनिया की अतिथिया में मैं एक बोल रही थी—“विटिया, तुमने तो बड़ा कारावार जोड़ लिया है। तुम्हें बहुत बड़ा आदमी मिल गया है।”

चाची यह सब तुम लोगों का आशीर्वाद है। मनिया कह रही थी।  
“तुम्हारा आदमी सिर्फ बड़ा ही नहीं है, बहुत भोला और भला भी है।” यह एक दूमरी स्त्री की आवाज थी।

‘हा मौसी, प्रभु की कृपा से ऐसा ही है।’

सुना है तुम किराट बन गयीं हैं? एक तीमरी आवाज सुनायी दे रही थी।

हाँ जीजी, अब प्रभु मुझे पूरे तौर से अपनी शरण में ले लेंगे।’

‘किराट बनने के लिये पादरी ने तुम्हें कितना रुपया दिया? सुनते हैं क्या पादरी जिसे किराट बनाते हैं उसको बहुत रुपया देते हैं। क्या यह सच है?’

“अभी तक तो कुछ नहीं दिया मौसी, आगे की प्रभु जान। कुछ रुपया अगर वह देंगे तो मैं सब तुम्हें दे दूँगी।” और फिर बड़े ही कोमल स्वर में मनिया को हँसते सुनाया दिया।

“सच्ची, अपने पादरी से पूछना। अगर वह रुपया दे तो मैं भी बाल बच्चा के साथ किराट बन जाऊँ। मेरी जिंदगी भर के लिये मेरी और बाल-बच्चा की राटिया का ठिकाना लगा देता बस, फिर क्या है।”

“मैं उससे पूछूँगी।”

‘जरूर पूछना।’

“पर मौसा नाराज तो नहीं होगा, मौसी? यह मनिया बोल रही थी।

“भाई मैं जाय तुम्हारा मौसा। जम मद्दुए का ता अब गाँजे माँग के गया और किसी भी बात का चिक्किर थोड़े ही रह गया है। बच्चा

तर को एक घड़ी नहीं देखना चाहता। मैं दुकान भी बन्द, उसका पट भी जलाऊँ, उसके लिए गाँजा भाँग का पसा भी जुटाऊँ, घर का काम भी करूँ और बच्चा को भी दखूँ। यह सब अब मेरे किये नहीं होगा, मनिया। जहानुम म जाय वह नाबारा। मैं वहाँ तक उसका साथ अपना गला बाँध सकती हूँ।'

'तो क्या त्रिस्ट वनने पर किसी दूमरे का घर बरन की बान सोच रही हो, नानी? एक बीस बाईस बप की नवयुवती का सा वह स्वर था।

'तो इसम हज ही क्या है? मारी जवानी उस भबुव के साथ मौन के दिन काटकर बरबाद कर टाली। अब अगर इस बुझती म काइ मुण दुख का भाथा इन जल दिल को दिनामा देन वाला मिल जाय ता क्या न उसका घर कण्गी।'

मम्मिनन अट्टहास से सारा कमरा गूज उठा।

मिल जायगा, मिल जायगा। अभी तुमम बुटापा कहीं आया है? जवानी ता अब आ रही है। यह कतगुग है कलजुग। इसम उदटी गति चलती है। धवराया मन। यह न जान कौन सात्वना के स्वर म कह रही थी।

रतन म किमी न गाना शुरू कर दिया। शायद सात आठ सान की कोई लडकी रही होगी। बह ताली पीट पीटकर गान लगी —

ए रंगीली बुडिया। जवानी तुम्हे आ गयी,

ओ रंगीना बुडिया।

दाँव तो तेर हूट गये, ए रंगीली बुडिया।

मिस्सी का तुम्हे गौर है, ओ रंगीली बुडिया।

आँस तो तरे पूट गये, ए रंगीली बुडिया।

सुरम का तुम्हे गौर है, ओ रंगीली बुडिया।

"मर छावरी। मरा मजाक उडाने वाली घायी कही की।" फिर ठहाका मचा।

मरी आँखें नपने लगी थी। पिछली रात अच्छी तरह नींद नहीं आयी थी। कुछ देर बाद मैं बीच ही पर सो गया।

जब आँखें खुनी तो देख, मनिया मुस्कराती हुई खड़ी थी। शायद



उसी के पुकारन पर मैं जगा था। मनिया बोली—“अब तो अंधेरा होने लगा। कब तक सोये रहामे? मिसज रालि-सन बेचारी 'डिनर' का सारा इतजाम अकेली कर रही हैं। अभी थोड़ी देर मे लोग आ जायेंगे। उठा, हाथ मुह धोकर तयार हो जाओ।”

१६१

उठते-उठते मैंने कहा—“गुम्हारी 'स्पेशल गस्टस' की टोली क्या चली गयी?”

“वाह, बिना 'डिनर' खाये वे कसे जा सकनी हैं।” सहज प्रसन्न-भाव से मनिया बोली।

“तब ठीक है, चलो 'डिनर' म भी 'लच' की तरह अच्छी रौनक आ जायगी।”

मैं कह नहीं सकता, मैंन यह व्यग म कहा था या सहज भाव से, पर मनिया ने उस व्यग मे नहीं लिया, यह जानकर मुझे प्रसन्नता ही हुई। मनिया बोली—“सचमुच वे सब बड़ी खुशदिल है। और बहुत भली भी हैं, मुझे अपनी ही लडकी की तरह प्यार करती हैं।”

२५

जब मैं हाथ मुह धोकर कपडे बदलकर तयार हुआ, तब तक ग्राहर शामियान के नीचे बत्तिया जगमगाने लगी थी। श्रीमती रालि-सन ने मेजा पर नय कपडे

बिछवाकर ताजा गुलदस्ते रखवा दिये थे। वह और सिन्धिया अतिथिया के स्वागत की तयारियाँ पूरी व्यस्तता से कर रही था। एक एक दो-दो करके अतिथियो ने आना भी गुरू कर दिया था। रात म बिजली की जग माहट म केवल फेशनबुल युवक-युवतिया की सुनज्जित वेप भूपा ही नहीं, अघेड और बद्ध म्ना-मुम्पो तक की व्यक्तित तजावट दिन की अपना अधिक खिल रही थी। इस वार कई नय अनिथि भी दिखायी दिये। उदाहरण के लिये, फादर एयोनी दिन म नयी आये थे। इस समय बह

भी अपने साथ दूसरे पादरिया का एक पूरा दल लेकर पधारे थे। सिल्विया फाटक से ही उनका स्वागत करती हुई उहे सामियान के पीछे लिवा ले आयी थी। उन लामा को अच्छी तरह बिठाकर वह फादर जेरमिया के साथ परम प्रसन्न भाव से बातें कर रही थी।

मनिया की 'स्पेशल गन्टम' भी बाल बच्चा के साथ उत्तर पूव में स्थित मीटा पर काजा निय बठी थी। इस मजबूत मोर्चे को भेदकर आगे बढ़ने का साहस किसी का नहीं होता था बल्कि उनके आस-पास की दो चार भीट छाड़कर ही लाग बठते थे। मुझ और मनिया को बीच में एक अत्यन्त सुंदर रूप से सुमज्जित गोल और काफी चौड़ी मज के पास श्रीमती रालिसन न बिठा दिया था। हम दोनों के मिरो के ठीक ऊपर सामियान पर तीन चार रंगीन फायून लटक रहे थे और उनके बीच बीच एक बहुत बड़े कडल पावर वाला बिजला का लट्टू जग रहा था। मनिया हल्के गुलाबी रंग की रेगमी नाडी के ऊपर काले रंग का गरम कोट पहन थी। सिल्विया ने उसके गल में रंग विरंगे बिलायती फूला की एक माला डाल दा थी। मैं नाल रंग की एक गरम सूट पहने था। मेरे दाढ़ के बदन हान पर सिल्विया ने पत्ता महिन एक लाल फूल लगा दिया था। हम दोनों सारे आकषण का केंद्र बन चुके थे।

पर मेरे आकषण का केंद्र थी मनिया की विशेष अतिथि मडली। ज़्याही पहना रंग आया त्याही के सब एमी तर्की से उस पर हूट पडा जस चूह पर बिरली। आर बच्चो ने चीखत चिल्लात हुए जो छीना भपटी म्बानी गुन कर दी वह भी देखन ही योग्य थी। 'सूप के गिरन से मारे टेरिल-बलाथ खराब हा गय और पीग का एक गिलाम और एक तदनरी सेंभालत-भेंभालते गिर ही पडी। मनिया दूर ही से देखती हुई स्नहपूर्वक मुन्करा रही थी। पर मैं देख रहा था अपना पाम ही बठी हुई श्रीमती रालिसन की मुद्रा। वह ऐसी दृष्टि से उनकी ओर दग रही थी जस आंखा के जरिय आग उगलकर उह जलाकर भस्म कर दना चाहती हा। उनका यदि बग चलता ता वह उसी दम सबका फाटक से बाहर मत्त म्ती। मनिया का रस जाननी हूइ वह जी मसोतकर चुष्पी माप से रही था। अतियिया का अच्छा बिना हा रहा था। फादर

एयोनी का दल भी उन विशेष अनिधिया म बड़ी दिलचस्पी

१६३

ले रहा था। पर कुछ सम्यताभिमानि गोरी ऐंग्लो इडि-  
यन युवनिया स्पष्ट ही उस 'असम्य दल की ओर दष्टि पडने पर नाक-  
माह मिक्कोड रही थी और एसा लगता था कि वे वास्तव म अपन का  
अपमानित अनुभव कर रही हैं।

कान पर काम 'सब होने चने गय और मनिया द्वारा निमन्त्रित  
विशेष अनिधि मडली उन पर बड़ी तेजी म हाथ साफ करती चली गयी।

किमा तरह 'डिनर' भी समाप्त हुआ। जब मभी अनिधि चले गय,  
और वडल विशेष अनिधि ही रह गय, तब श्रीमती रालिसन मुझे एकात  
म बुना ले गया। वाली—“मिस्टर रजन मुझे बड़ी प्रसन्नता ह कि सारा  
काय बड ही अच्छे ढग स रिभ गया।

मन हादिक वृत्तगता का भाव प्रकट करते हुए कहा— यह सब  
आप ही के कारण सम्भव हो सका ह मिसज रालिसन, नही तो यह मेरे  
और मनिया के बूने की बात नही थी। मैं सच कहता हू, अगर आज  
मेरी माँ जीवित हानी ता वह भी अपन माग स्नह क वावजूद न तो इस  
लगन न जुग पाती न इतन बडे काय का नैभाल पानी। आपने आज  
सच्च यवों म मरी मा का स्थान ग्रहण कर लिया।

म आनरिक आवग से श्रीमती रालिसन की भावुकता आसुआ के  
रूप म उमड आयी। मेरे सिर पर अपना स्नेह-बोमल हाथ फेरती हुई,  
गद्गत् स्वर म वाली— बटा तुम्हारा स्वभाव सचमुच ही बडा प्यारा  
है। अगर तुम्हारी—तुम्हें पत्नी भी अच्छी ही मिली है। भगवान निश्चय  
ही तुम दाना या मगन वरेगे। केवल एक बात है। मनिया म सब गुण  
अच्छे हैं पर—पर कभी-कभी वह विचित्र हठ कर बठनी है। और  
उसनी यह चामखयानी मरी समझ म तनिक भी नही आयी—जो उसन  
इन तन्मी औरता का याना देकर म मभी मान्य अनिधिया के साथ  
ही उठे बिठाकर प्रकट की है। फिर भी वह बड़ी अच्छी लडकी है।  
मरा उसस काई द्वेष नही है तुम जानत हो मैं स्वय बड़ी दुखी हूँ,  
तुम जानत हा

नही भावुकता फिर नय सिरे म उमड चली। अपन काट की जब

से हमाल निवालकर आसू पोंछने के बाद उहान फिर कहना गुरु किया—“मरी एक इच्छा जरूर थी। तुमने जूलिया को देखा है। उसके गुणों की प्रशंसा अगर मैं करूँ तो ठीक नहीं जाता। इतने दिनों तक तुम स्वयं ही उमकी योग्यता से परिचित हो चुके होगे। मेरी इच्छा थी—मैंने सकोचवग आज तक तुमसे कहा नहीं—कि वह तुम्हारे साथ बर्बादिक बघन में बँध जाती। मैं किसी और दृष्टि से यह बात नहीं कह रही हूँ। मनिया के खिलाफ मुझे कोई गिवायत नहीं है। तुम जानते हो। पर माँ का हृदय मोहवश कभी-कभी ऐसी बातें भी सोच बैठता है जो दूसरों को अनुचित लग सकती हैं। मैं अपने मन के भाव को तुमसे छिपा नहीं पाती हूँ, इसलिये क्षमा करना—अगर मेरे मुँह से कोई अनुचित बात निकल गयी है तो। पहले ही दिन से तुम्हारे प्रति मेरे मन में अनायास ही पुत्र के समान स्नेहभाव जग उठा था। इसी कारण मैं आज तुम्हारे प्राण अपना हृदय खोले बिना न रह सकी। अब मैं बच से रात में सो सकूँगी। अपने मन की जो बात मैं तुमसे बही है उसे तुम भी अपने मन तक रखना, यदि मिनिया के कानों में इस बात की भनक भी पड़ गयी तो वह मुझे बच्चा ही न्ना डालेगी। जूलिया तो बेचारी बड़ी सीधी है। पर मिनिया बाहर से सीधी बनी रहने पर भी भीतर से बड़ी तज है। जो भी हा आज मेरे निम्ने बड़ी ही प्रसन्नता का दिन है। अब तुम जाओ। दिन भर कं थक हो, जाकर आराम करो। केवल एक बात का स्याल रखना, य जिल्मी औरतें बड़ी चार हानी हैं। उनसे सावधान रहना ”

मैं श्रीमती रालिन्सन की स्पष्टाति और छत्र रहित व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुआ। उनसे बिदा होकर जब मैं मनिया के पास पहुँचा तब वह अपनी जीजी चाची मामी मौसी के पास चली गयी थी।

वह अपनी ‘मौसी से पूछ रही थी—‘मौसी, तुम्हारा पेट भरा या नहीं?’

‘खूब भर गया मिटिया इतना खा लिया कि दो दिन के निम्ने बफिफा हा गयी।’

मैंने मनिया के पास लडे होकर उसके कान में कहा—“दूत लागो के लिय क्या गिवा मोगवा दिये जायें ?”

“नहीं, इतनी रात घर लौटकर ये क्या करेंगी । १६५

आज यही सोजायेंगी । क्या सनोवरिया चाची !”

“हा, क्या कहा तुमने ?” सनोवरिया चाची अपने प्रायः पाँच साल के बच्चे से उलझ रही थी, जो जमीन पर पड़े कटलेट के एक टुकड़े का उठाकर मुह में डालन के लिये छटपटा रहा था । उन्होंने पूरी बात सुनी नहीं थी ।

‘ मैं कह रही थी, ’ मनिया बोली—“आज तुम लोग इतनी रात गये घर लौटकर क्या करागी ? आज यही सो रहो, कल दोपहर में खाना खाकर चले जाना ।”

‘ हा, हा, तुम ठीक कहती हो, ’ मौमी ने सनोवरिया चाची की ओर से उत्तर दिया—“पट इतना भर गया है कि अब उठने को जी नहीं करता । फिर आज विटिया की गादी का दिन है । रोज-रोज शादी थोड़ी होती है । आज हम सब लोग उसी के साथ रहें कल चले चलेंगे, क्या चिनारिया भौजी ?”

पर चिनारिया भौजी को यह प्रस्ताव कनई पसंद नहीं आया । वह बोला—“यही रह जाने की तुमन अच्छी कही ! तुमने तो जमाई के घर ऐसा घरना द दिया जमे गादी मनिया की नहीं तुम्हारी हुई हो ! अरे, तुम साग सब मनिया को घेरकर यही बठ जाओगी तो जमाई क्या तुम्हारा मुह ताकता रहेगा ? चलो उठो ! खुशी मना ली, खा-पी लिया, नाच-गा लिया, अब बठकर क्या करना है ? तुम्हें रहना है तो रहो, मैं तो चल दी !” और वह सचमुच उठ खड़ी हुई ।

उनके उठते ही चारों ओर स आवाजें आन लगी—“ओ भाभी ! मैं भी चलती हूँ ! आ भौजी, मैं भी आयी ! ठहर जा !” ‘ नानी, यह ला मैं भी उठी ! ’ उसके बाद मनिया के आग्रह पर भी कोठे ठहरने को राजी न हुई । मनिया न प्रत्येक से हाथ जोड़कर कहा—‘ कम से कम रिक्का आ जान तक तो हठर जाओ, नहीं ता मैं बहुत बुरा मानूँगी । ’ फलतः सब रुक गयी । रिक्का लाने को आदमी भेजा गया । प्रायः २० मिनट बाद छ रिक्का आ पहुँचे । मनिया एक-एक करके सब से गल मिली, और बच्चों के से निष्कपट आग्रह भरे स्वर में कहन लगी—“नानी, भ्रू न जाना फिर आना !” “मौमी, मैं जल्दी ही तुम्हें

बुलाने के लिए आदमी भेजूगी।” “बुलानिया बहाना, तुम तो कम से कम आज रह ही जाती।” “सितारिया जीजी! फिर कब आओगी! उसकी छाँव छानछाना आयी थी और उसकी छानियियों में भी कोई ऐसा नहीं बचा जिसकी छाँवो से दा बूँद आँसू न टपक पड़े हा। मेरी आँखें भी न जान कब डबडबा आयी हैं मुझे पता नहीं चला।

अपनी अपनी आर स मनिया को दिनामा दकर अत में वे मर रिक्का में बैठ गयी। उनमें से अधिकांश गायद जीवन में पहली बार रिक्का में बठी होगी। सभी रिक्कावाला का मनिया के आत्मानुसार भाडा पहले ही चुका दिया गया था। जब तक अंतिम रिक्का आला से आभन न हो गया मनिया एकटक उसी ओर देखती रही। उनके बाद एक लम्बी साँस लेकर आँख पाछती हुई भीतर की ओर चली। मरी ओर उसने एक बार लाज और सकोच नरी तिरछी दृष्टि से देखा और फिर भीता हरिणी की तरह मुह फेरकर जैसे भाग चली।

आज वह सुबह स ही मुभन लजा रही थी और भरसक कतराती थी। पर उसका वह लजाना और कतराना मेर भीतर ऐसी म्निग्ध और मधुर अनुभूति को उभाड रहा था जिसकी कल्पना तक्र में पहले नहीं कर सकता था। अपने जीजी चाची मामी-मामी के दल को जो वह रात में भी अपने पास रह जान क निय आग्रह कर रही थी उनका कई कारणों में स एक प्रमुख कारण मुभका वह भी लग रहा था कि वह जमे उन सबका मर और अपने बीच में दीवार की तरह आट बनाना चाहती थी। जैसे उसकी कोई अध अत प्रना उम सचत कर रही थी नि जिम पुषप से उमका विवाह हुआ है वह आज उसका सबस्व हरण करन पर उतारू हो जायगा। प्रथम मिलन की रात्रि में नववधू क भीतर सहज आत्मरक्षा का जो सस्कार पूरे प्रतिरोध के लिये सजग हा उठता है मनिया भी मुझे उसी सस्कार से प्रेरित लग रही थी। इतने दिनों में उमसे जो मरा परिचय था उस वह जमे एकदम भूल गया थी। आज जैसे उससे मरा पूणन नया परिचय हुआ हा।

उमका अनुसरण करता हुआ मैं भी भीतर गया। अपने कमरे में पहुँचते ही मैंने जो उमका बदला हुआ रूप देखा उसमें चकित रह

गया। सारे कमरे की मफाई नय निचे से की गयी थी और सनावट भी एकदम नय ढग की थी। फग पर आर-पार एक हरे रङ्ग का नया जागीन बिछवा दिया गया था जो लान पर अच्छी तरह ञ्ठी टूट धनी आर मुलायम ढूब की तरह लगता था। पलंग भी बदला हुआ था। मेरी अर्धेनाकृत छाटी चारपाई के स्थान पर एक लम्बा चौड़ा पर्नेग दिखायी दिया जिस पर मफेद नाटिन के दो झालरदार तन्जिय भनभलानी हुई चादर के ऊपर करीन म रख हुए थे। पलंग के ऊपर चारा तरफ चाँ उखे पड हुए थे जिन पर गुलाबी रङ्ग के सूब-सूरत पर्दे स्पर्शिति म मुडे हुए थे। डण्डा के ऊपर ही चार काना म चार गुलदन्त बाध दिये गये थे। पतान पर इन्धनुपी नहाग्या म चमचमाता हुआ एक नया तिराफ त्ताकर रख दिया गया था। पलंग के ठीक ऊपर पहरे नीचे 'गुड' म टर्नी हुई एक बत्ती मद्र प्रकाश स जन रही थी। कमरे म नितान रूप म आउदरक वस्तुमा का छाटकर ए भी पालतू चीन बही नही थी। जो-कुछ भी था मय व्यवस्थित मना और सुलभा हुआ।

"क्या मनिया की शक्ति म इतना परिवर्तन हा गया ह ' मैं मन्ही-मन साचा। और एक पुलकानुभूति मेरे शरीर म और प्राण का गुदगुदान ली। पाँवपाँव पर मावधानी स जून पा उकर मैंने मूट उतार डाली और सान के कपट पहन। बगनवान कमरे म दो च्यनिया क बहन ही थीमे स्वर म बानन—प्राय फुनफुनान—की आवाज ना रही थी। यदि उन समय मैं चारना म हाहा ता गायद वह आवाज मुझे सुनायी न दती। उनम निश्चय ही एन मनिया हागी और दूजरी सनवन निन्विया, इतना अनुमान मैंन लगा दिया। पर उन दाना के बीच क्या बातें हा रही थी वह मैं न सुन सका।

मैं लेटन का तयारी कर ही रहा था कि मन्ना मैंन ठना, निन्विया मनिया का हाथ पनडकर उन प्राय खीचनी टूट-नी मर कम की आर ले आयी। दरवाने के पास पहुँचते ही निन्विया न प्राय एक घन्के मे मनिया को मेरे कमरे के भीतर ढकेल दिया और मनिया के कमरे की तरफ म दरवाजा बंद करके, उस पर कुड़ा चटाकर वह भीतर से विल-विल करके हँसन गयी।

मनिया लजाती और मुसकाती हुई दरवाजे पर हलके दस्तक

देती हुई स्कूनी लडकिया की तरह गिवायत भरे स्वर में कहने लगी—“सोलो, सिन्विया, सोलो !” साथ ही बीच में एक बार वह बनविया से मेरी घोर भी देख लेती थी। वह जिनना ही कहती जाती थी, सिन्विया उतना ही खिलगिला उठती थी। मैं पलंग पर स्थिर भाव से बठा हुआ कुछ देर तक यह नाटक देखता रहा। उसके बाद उठ कर मैं धीरे से मनिया का हाथ पकड़ा और अपने स्वर में यथाशक्ति कोमलता भरत हुए कहा— मनिया, कुछ देर मेरे साथ बठकर सुना लो। तब तक सिन्विया अपने आप ही दरवाजा खोल देगी। और मैंने धीरे-मे उसे अपनी धार खींचा—यह सोचकर कि यदि वह तनिक भी प्रतिरोध करेगी तो हाथ छोट देगा। पर मनिया ने प्रतिरोध नहीं किया और धीरे-मे मर साथ चली आयी। ज्योही मैं उस पलंग पर अपनी बगल में बिठाया ज्योही भीतर से सिन्विया बोन उठी—“टा-टा ! विश यू ए लगी नाइट !” और यह कहकर वह चली गयी—सम्भवत मरी नौकरानी रमिया को कुछ हिदायत देकर।

मैंने पाठ पर हाथ फेरत हुए उसे दिलासा देने हुए कहा—“मुझे बहुत दुःख है मनिया, तुम्हारा मनोवरिया चाची चिनारिया मामी और साथ की दूसरी स्त्रियां चली गयी। वे रात में तुम्हारे ही साथ रह जाती, बड़ी चहल पहल रहनी। उन लागों की बजट में विवाह में बड़ी रीनक आ गयी थी।”

‘मुझे मौमी के चल जान का दुःख है मिर नीचा किय हुए और अपने पाँव के झंगूटे से कालीन को सुरचन की चष्टा करती हुई मनिया वाली—’ बेचारी बड़ी दुःखी है। मौसा चौबीसा घंटे नशे पानी में चूर रहता है, न बाल बच्चा की धार देखता है न मौमी की सुष लेता है। मौसी दिसाती की दुकान खोलकर जा-बुद्ध पाती है उतन से परिवार को भी खिलाती है और मौसा के नशे पानी का भाग्य जुटाती है। अगर किसी दिन मौसा बीमार हो जाय तो घर के सब साग भूखे रहें। मैंने साचा था, मौमी ने वह नि बराबर के जिय मरे ही पास रह जाय

“तब कहा क्या नह ?



“फिर सोचा कि मौसी यहाँ रहेगी तो मौसा कहा जायगा।”

१६६

“वह भी यही रह जायगा।”

“सच ?” इस धार मनिया ने आँख उठाकर उत्साहित दृष्टि से मरी धार देखा।

“हज क्या है ?”

“पर वह जो चौबीसा घण्ट नशे में चूर रहता है, वह अच्छा आदमी नहीं है।

‘उम्मे सुधारने की कोशिश की जायगी।’

“सच कहते हो ? उरलास भरी आँखों से मेरी ओर देखती हुई वह वाली।

“जहाँ तक मुझे याद है, मैं आज तक तुमसे कोई ऐसी बात कभी नहीं कही, मनिया, जो वाद में गलत मानित हुई हो। तुम्हें धोखा देना या झूठी प्रतिज्ञा करने का कोई उद्देश्य तुम्हारे पास है या नहीं ?” मेरे स्वर में अभिमान भरी शिकायत थी।

‘न, न, न, मेरा मतलब यह कभी नहीं था। मैं तुम्हें जानती हूँ। मैं या तो जानना चाहती थी और अब दिलासा देने की उसकी बारी थी। वह मेरी पीठ पर हाथ रखकर थपथपाने लगी—जैसे किसी बच्चे को मूलाना चाहती हो।

इस प्रकार हम दोनों के बीच नयी संधि हुई और नयी घनिष्टता स्थापित होने के पक्ष का आरम्भ हुआ।

२६

दूसरे ही दिन से मनिया की बातों से और व्यवहार से मुझे ऐसा लगा कि उसमें अपनी ग्राह्यत्विक योग्यता के सबंध में परिपूर्ण आत्मविश्वास का भाव जग उठा है। इतने दिनों तक वह नौकरा को भी पूरे अधिपार के साथ

आदेश देने में जस हिचकनी थी। उसकी प्रत्यक्ष गति विधि में शरा और अपने ऊपर विश्वास का अभाव का प्रकट होना था। पर विवाह के बाद में—और विधि कर विवाह के दूसरे दिन से—वह पूरे अखबार के साथ सब विषय पर अपनी मन्ता कायम करने लगी थी और महसूची की व्यवस्था उसने पूरा अपनी हाथ में ले ली थी। घर के प्रबंध से सबकित किसी भी विषय पर मेरी राय लाने की कोई आवश्यकता ही जैसे उस नहीं जान पड़ती थी। मैं घर के खर्च के नियम एक काफी बड़ी रकम उसके हाथ में सौंप दी थी। वह मुक्त हस्त हाकर सब करने लगी। घर में यदि पांच आदमी आने वाले होते तो वह दस आदमियों के नियमानुसार व्यवहार करवाता। विवाह के पहले जितने प्रकार के व्ययजन मरे यहाँ बनने थे, विवाह के बाद उनका संपूर्ण दुगुनी हो गयी थी। जो खाना बचता था उस नौकर चान्दर मरिया की भाँसा से पास पटान के कुली मजदूरों के परिवारों में बाँट दत्त थे। हमारे बँगले के कमरे में जो फनिचर था वह मरिया का महंगा अर्थात् मासूम हुआ। उसे बचाने के नियम वह अत्यन्त चिन्तित हो उठी।

एक दिन सुबह उठते ही उसने मुझसे कहा— देहरादून चलना होगा।

उसके उस अप्रत्यागित आदेश का उद्देश्य मैं समझकर मैंने पूछा—  
'किस लिये?'

'बहुत-सा नया फनिचर खरीदना है। बँगले में जो फनिचर है वह एक तो पुराना है, दूसरा काफी नहीं है। ताशना अच्छा तरह कर ला। उसके बाद अभी देहरादून चले चलेंगे। शाम को लौट आयेंगे।'

मुझे यद्यपि देहरादून जाने का आस्ताह तनिक भी नहीं हो रहा था, फिर भी उसका आदेश को मैं टाल न सका। एक विराय का कार पर हम दोनों एक नौकर का साथ लेकर देहरादून पहुँचे। यहाँ फनिचर की जिनगी भी बनी-बडा दुनारों थी सब मरिया ने छाया डाला। प्रथम दुकान में सब कुट्टन कुट्ट सामान अवश्य खरीदा गया। गाम का जब सब दुकानों में सामान बटारकर एक माटर टले पर रखा गया तब साफा-सेटो, कुशिया, मजा पल्लेगी, पगटेबिलो आलमरिया आदि का

सूमार खड़ा हो गया। इन सब चीजों के आलावा बिजली की बत्तियाँ के विविध प्रकार और विभिन्न वर्णों के शोब, विचित्र विभिन्न आरुनिया के टेबिल-लम्प, चीनी मिट्टी के चित्र विचित्र गमल रंग विरग पर्दे, कीमती साडियाँ, नौकर बाकरा के निये तथा और भी न मालूम कितने जिन वास्तविक अथवा काल्पनिक व्यक्तियों के निये खरीद गये बपड़े आदि का ढेर हम लोगों ने अपना माथ फार मनादा। सब कुछ लद चुकने के बाद जब हम लाल ममूरी के लिये खाना हुए तब मनिया के मुँह पर एक अकल्पनीय उल्लाम की दासि छायी हुई थी। जब वह मनमान डाँस चीजें खरीद रही थी तब नी केन उम एक गार नी नहीं टोका या आवाज न भी एक शब्द द्वारा यह इंगित नहीं किया कि उनकी सब चीजें बकार ह, उनमें व्यय पसा नष्ट किया जा रहा है।

जब उनका मन चीज लेकर घर पहुँचे तब श्रीमती रालिमत उठ खर कर अकल्पित आश्चर्य में प्राय हापती हुई नी बाल उठी—  
'ओ - १ - १ - १ !'

सिन्धिया अपनी माँ का वह आश्चर्य देखकर हँस पड़ी। मुझे भी हँसी आय गिना न रही।

सिन्धिया नन्हट मुस्कराती हुई बाली—“आप का अच्छी गहिणी मिल गयी है मि० रतन ! आप की आज तक की सारी कत्मा का बदला वह दा ही दिन में चुका डालेगी !”

“पर इतनी सब चीजों का होगा क्या ? श्रीमती रालिमत ने उमी परेगानी के माथ कहा।

“जो होगा वह आप भी देखेंगी और मैं भी देखूँगा।” मैं खड़ी हँसी हँसता हुआ बाला।

“और इतनी चीजों के निये जगह भी आप के बँगले में कहाँ है ?” पास ही खड़ी जलिया भी बाल उठी।

मनिया बचारी इन सब मतव्या से विचलित हो उठी। उनकी देर तक उसके मन में नभवत यदु निश्चित विश्वास जमा हुआ था कि उनमें कोई बहुत बड़ा काम कर डाला है, जो उसकी गार्हस्थ्य-बला सम्बन्धी निपुणता का अकाश्च्य प्रमाण सब लोगों के आगे उपस्थित कर देगा।

पर जब उस पर चारा और से व्यग-बौछारें होनी लगी तब उसका मुख इतना सा हो गया । मैं उस भीतर ले गया । भीतर पाँव रखते ही वह प्रायः रोनी सी सूरत बनाती हुई बोली—'क्या सचमुच सामान अधिक हो गया ? तब तुमने मुझे टोका क्यों नहीं ?'

"नहीं मनिया, कुछ भी अधिक नहीं हुआ, उन लागो को कहने दो । और अगर अधिक हो भी गया होगा तो वह कहीं न कहीं अवश्य ही छप जायगा, तुम तनिक भी चिन्ता न करो ।"

"नहीं, नहीं, तुम मुझे दिनासा देने के लिये इस तरह की बात कह रहे हो ।" रोने की तयारी करती हुई मनिया बोली—"तुम बहुत ही भले हो, और भरे ऊपर तुम्हारी दया का अंत नहीं है । पर तुमने कभी इस बात पर भी ध्यान दिया है कि मेरे ऊपर तुम्हारी इतनी अधिक दया के कारण मेरी आदतें बहुत बिगड़ रही हैं ? तुमने मुझे इतना अधिक रुपया क्यों सौंप दिया ? इतना रुपया लेकर मैं क्या कर सकूँगी ? मरी समझ में नहीं आता । इसलिये मैं चाहती हूँ कि वह जल्दी से जल्दी खतम हो जाय, और खनम करन का दूसरा तरीका मुझे जल्दी में नहीं सूझ पडा । वरन से यह सब रुपया तुम ही रखना मैं इसमें हाथ नहीं लगाऊँगी ।" और वह पलंग पर प्रायः पछाड खाकर लेट गयी और दानो हाथो से उबल अपना मुँह ढक लिया ।

उसे मनाने में मुझे पूरा आधा घंटा लग गया ।

दूसरे दिन मनिया ने फिर यह नहीं कहा कि 'यह सब रुपया तुम ही रखा मैं अब से इसमें हाथ नहीं लगाऊँगी । उसने पिछले दिना की तरह हाँ ऐसे धडल्ले से खच करना आरम्भ कर लिया कि इस तरह की बात उसने कभी कही है यह गायद उसे याद दिनाय जान पर भी मुश्किल में याद आ पाती ।

एक दिन उसने मुझे सूचित किया कि वह मौसी के यहाँ जाकर उसे अपने पास ले आना चाहती है । उसने मुझसे भी चलन के लिये कहा, पर मैंने मिर-दद का बहाना बनाकर टाल दिया । वह नौकरानी को साथ लेकर चली गयी । सध्या को निराण लौट आयी मैंने पूछा तो पता चला कि मौसी आना तो चाहती है, पर अपने 'नाबार' की राय

लिये बिना नहीं। और वह 'नाकारा' सुबह से बाहर निकला  
 हुआ अभी तक लौटा नहीं था। जब मनिया इतजार करते- १७३  
 करत एक गयी तब निराग लौट आयी। उसने कहा कि वह फिर किसी  
 दूसरे दिन जायगी।

२७

सर्दी दिन पर दिन बटनी चली जा रही थी। श्रीमती  
 राति-सन ने राय दी कि हम लोग जाहो में किसी गरम  
 स्थान में जाकर रहें। उन्होंने कहा कि विवाह के बाद लाग  
 'हनीमून' मनाने के लिये लंबी यात्रा के लिए निकल जाते हैं। और हम  
 साग यदि जाहा में भी मसूरी जस ठंडे स्थान में पड़े रहें तो यह बुद्धिमानी  
 न होगी। मैंने उन्हें सूचित किया कि मसूरी के प्रति मेरे मन में कुछ ऐसा  
 मोह उत्पन्न हो गया है कि अब उसे एक दिन के लिये भी छोड़ने से जी  
 उदास हो जाता है। श्रीमती राति-सन स्नहपूर्वक मुस्कराने लगी।

नवम्बर का महीना बीत चुका था और दिसम्बर का पहला मसाला  
 चल रहा था। दिन में यदि धूप रहती और हवा न चलती तो बाहर  
 बैठकर धूप खाते हुए अगले बगल की हरी मरी पहलिया का एकांत  
 दृश्य बहुत सुहावना लगता था, और जब बीच-बीच में उस एकांत को  
 चीरती हुईं सुदूर आकाश में चक्कर लगाने वाली नीली तीखी आवाज में  
 चीख उठता तो उसका वह ममभेदी स्वर प्राणों को एक अजीब सी  
 भीठी उठाती में छा देता था। ऐसा अनुभव होने लगता था कि जीवन  
 में कभी कोई सपना नहीं है, कहा कि चिन्मात्र भा अन्यकम्य या अज्ञानि  
 नहीं है और यदि अन्तकाल के लिये कभी भीठी धूप रू बन एकांत  
 वातावरण में और बाल में मनिया बंठी हुईं उभी तरफ तम मनिया-  
 इन बुनती रहे, तो धारे अन्त को एक मुखद स्वप्नमय भूत की तरह  
 बड़ी आसानी से बिनाया जा सकता है।

पर जिस दिन तेज हवा चलने लगती उस दिन जी बुरी तरह पवरा उठता। जीवन के जिन सघर्षों की अनुभूति को मैं भुलाय या अपने भीतर दबाय रहता वे हवा की उस तीव्रता के वेग से उभरकर चारा ओर से जैसे मेरा गला पकड़ने लगते। ८१ दिन मैं भीतर विचार बढ़ा लिये लेना रहता। या तो लेटे नट कुछ पत्ता या मनिया से निर्मा नयी गार्हस्थ्य योजना के सम्बन्ध में सलाह मांगता रहता।

मनिया को कुछ दिनों में बंगले को बाहर और भानर में अधिकाधिक मुमजिन करने की धुन सवार हो गयी थी। जा रनिचर दह लायी थी उस सभी कमरा में बरामद में और नौकरों के आवास में यथास्थान स्थापित करने के बाद जितना बचा रह गया उस उमर श्रीमती रालिंसन को दे दिया। बहुत से गमले मंगाने उसमें श्रीमती रालिंसन की सहायता में उनमें बहुतों के माध्यम से तथा पत्तियाँ लगाकर बरामद में चारा ओर मजा कर रखे दिन। एक अनुभवी माली को नियुक्त करके बाहर दालान में भी क्या-क्या खुदवायी और फूल रागवा लिये।

रालिंसन परिवार का वह अकार चाय के नियम निमंत्रित करती रहती थी। श्रीमती रालिंसन में उसमें विशेष विषय पयवान—कक सड़विष सलाह प्राप्ति पटरममय भोज्य-पानथ तयार करने सीख थे, उनमें अपनी रुचि के अनुसार नय-नय परिवर्तन करने का ढंग भी वह सीख गयी थी। अपनी छोटी-सी गहन्धी को भरसक सुगमय बन्धनपूर्ण और व्यवस्थित बनाने के उद्देश्य से उसके उत्साह में तनिक भी कमी नहीं पायी जाती थी।

मिन्विषा अब भी नियमित रूप में उमर पान के उद्देश्य से आती थी। मनिया का अंगर। भाषा सबकी जान दिन पर दिन बढ़ती तेजी से बढ़ता चला जा रहा था और वह रालिंसन परिवार के पत्तियाँ के साथ घड़ले में तैयारी में गले करना सीख गयी थी। गाद ही हिन्दी भाषा का ज्ञान बचाने की धार भी उसमें प्रयत्न में कुछ भी नहीं आती थी। मैं इस सब में यथामत्रण सहायता प्रदान कर दिया करता था। बाहर से हिन्दी का अच्छा अच्छी गानबद्ध पुस्तक मैं उसके लिये मंगा लिया करता था। एक बार मरी इच्छा हुई कि मैं उसके लिए

धार्मिक पुस्तके, जैसे तुलसीदास रामायण, हिंदी महाभारत,

१७५

भागवत की कथा, गीता तथा उपनिषदों के अनुवाद आदि

मंगाएँ। पर—फिर यह साचकर रह गया कि अभी उसके भीतर की कोमल मिट्टी में ईसाई धर्म का जो कच्चा नान बरा पड़ा है वह जब तब पकना नहीं हो जाता, उस धर्म के सभी अंगों और सभी पहलुओं से वह जय तब भली भाँति परिचित नहीं हो जाती और वास्तविक जीवन के अनुभवा से उन सभी पहलुओं का मेल कहा तक बठना है, इसका ज्ञान स्वयं नहीं प्राप्त कर लेती, तब तक किसी दूसरे धर्म से सर्वाधिक अज्ञान में उदात्तना उचित नहीं होगा। फिर भा मैं भारतीय सतों की जीव निया और बाणिया से उम परिचित कराता रहा। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि भारतीय सता और ईसाई सतों की जीवनिया में जो समता थी वह तत्काल उमकी कर्मप रहित दृष्टि की पकड़ में आ गयी। उपरा प्रभेद जो-कुछ था उस उमन तनित्र भी महत्व नहीं दिया। मैंने जब उन रामकृष्ण परमहंस की जीवनी पढ़ने को दी और उसने यह जाना कि वह एक बार ईसाई धर्म में प्रविष्ट हुए थे और ईसा के भक्त वह बराबर बने रहें तब उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। स्वामी राम-कृष्ण के प्रति और भी कई कारणों से उमकी श्रद्धा जग गयी थी। उनके उपदेशों की सूक्ष्मता को समझने में उसने अपने को अममय पाया, पर मोटे तार से वह जितना भी समझ पायी उसमें बहुत प्रभावित हुई। काली के प्रति उनकी भक्ति से उसने मरियम के प्रति अपनी भक्ति के रूप की तुलना की और दोनों भावनाओं में कोई विशेष अंतर उस नहीं मिला। गरन यह कि भारतीय सता की जीवनियों में जो कुछ भी विने पना वह पाती थी, जिस किसी भी बात से वह प्रभावित हानी थी उससे प्रभु 'मा' और माता 'मरियम' के प्रति उमकी भक्ति भावना को और अधिन पुष्टि मिलती थी। काम पर लटबते हुए ईसा और स्वयं की आभा में तीव्र मरियम के दा मुदर चित्र उमें मिलिव्या से प्राप्त हा गये थे। उन दोनों को प्रपन कमर में पूरव की ओर पग से कुछ ही उपर दावार पर टाँगकर वह रात में सोने के पहले और सुबह उठने पर नियमित रूप से उनका उपासना किया करती थी। यह ठीक है

१७८ नही खायगी। मैंने आश्चर्य से पूछा—“किसके यहाँ निमंत्रण ?”

“सित्त्विया की एक सहली है लीला। वह हिन्दू है, तुमने देखा होगा उस। वह धुधराले बालों वाली लड़की जो अक्सर काले गाउन वाला 'नम' के साथ जाती हुई सिपायी देती है।

‘उससे तुम्हारा परिचय कैसे हुआ ?’

“वह सित्त्विया के यहाँ आती-जाती रहती है। दोनों एक ही स्कूल में एक ही दरजे में साथ-साथ पढ़ती रही हैं। एक दिन सित्त्विया उसे यहाँ ना ले आयी थी। तब तुम घर पर नहीं थे।

‘गाह ! ठीक ! कहकर मैं खाने लगा।

राना खा चुकने के बाद मैं हाथ में एक पुस्तक लेकर लिहाफ आकर पलंग पर चिन लेटकर पढ़ने लगा। पढ़ते-पढ़ते न जाने कब आँखें लग गयीं। जब आँखें खुली तो मैं घंटी का बदन दबका नौकर को बुलाया। उससे एक ग्लास पानी खान को कहा। पानी पीकर मैं उठ बैठा। यद्यपि दोपहर का समय था तथापि बाहर एक दम घना अंधकार दिखायी दिया। बालू का गम्भीर गजन सुनकर मैं समझ गया कि मामला कुछ गहरा है। बरामद की ओर किवाड़ खोलते ही बरफ से भी ठंडी हवा का एक भावा सारे गरीबों में तीव्र सिहरन पैदा कर गया। मैं तत्काल किवाड़ बंद कर दिया। नौकर से पूछने पर मालूम हुआ कि जब मैं सोया था तभी सित्त्विया के साथ बाहर निकल गयी थी। मैं अकेले ही काफी पीने का विचार करने नौकर का उसके लिये आदेश दे दिया। पर उसके पढ़ले कमरे की दीवार में लगी हुई अंगीठी में कापला सुलगा जाने के लिये कहा। ध्यानसिंह कोयले ले आया और पाँच मिनट के अंदर उमन उन्हें सुलगा दिया। उसके बाद वह काफी तयार करने चला गया। बत्ती जलाकर मैं पलंग पर फिर लिहाफ ओढ़कर लेट गया और कानियो की एक पुस्तक उठाकर पढ़ने लगा।

यद्यपि सभी किवाड़ और सिडकिया बंद थी, तथापि बाहर हवा के ताप बेग में सनमनान की आवाज गोशा का आवरण भरकर कमरे में



स्पष्ट सुनायी दे रही थी। कहानी पढ़ते-पढ़ते मेरी दिलचस्पी

१७६

उसमे बढ़न लगी थी। मैं मग्न भाव से पढ़ रहा था। महसा

भीतर से किवाड खुलने का शब्द सुनकर मेरा ध्यान भग हुआ। नीकर एक टोम काफी ले आया था। पलंग की बगल वाली मेज पर उसने काफी रख दी। मैं उठ बठा। खिडकी के शीशा से होकर नजर पढ़ते ही मैंने देखा, एक काली सी छायामूर्ति—'सिलूहट की तरह—बराबदे मे खडी है। बाहर बिना पानी पडे ही मीधे-सीधे बरफ गिरनी गुरु हा गयी थी, यह भी मैंन पलंग पर बठे बठे दग्न लिया। पर वह काले आवरण स डकी हुई छायामूर्ति कौन हो सकनी है? मेरा कुतूहल बढा। मैंन ध्यानमिह स किवाड खानकर देखने को कहा। ध्यानमिह ने किवाड खोला, खोलकर दखा और फिर लौटकर चुपके से मुम्मे बतया कि फादर जेरे मिया खडे हैं।

मैं आलम त्याग कर तत्काल पलंग पर स कूद कर बाहर गया और "हूला फादर! कहकर उनका अभिवादन किया। फादर न मेरी ओर दखा और प्रेमपूर्वक मुस्करात हुए बाने — कसा मुहाबना मौमम है आज का! जरा आग बढकर दस्तो!

ब्रिक्कट सर्दी के कारण मेर दान ब्रिटब्रिटान लगे थे। अनिच्छा से कुछ आगे बढकर मैंन देखा असस्य इवन पुष्पा की तरह रूई से भी कोमल असग्य हिमबरण अविरल रूप से बरसते चले जा रह थे और धीर धीरे जमीन पर और पडा पर जमने लगे थे। मैंन कहा—'बहुत सुन्दर है!" पर मग्न मुग्न से निकते गद भी जस बरफ की तरह जम गय थे। फादर ने कहा—"तुम्ह सचमुच बडी सर्दी मालूम हा रही है!"

मैंने कहा—"आप बाहर क्या खडे हैं चलिय भीतर चलें!"

फादर ने अपना काला लबादा उतारा और उसे दोना हाथा से फटकार कर उसम जमी हुई बरफ का नाड दिया। उसके बाद मेरे साथ वह भीतर चले आये। भीतर से किवाड बन्द करके जज मैं अँगोठी के पाम कुर्मी लगाकर बठा तब मेरे जी म जी आया। ध्यानमिह न फादर क निय भी एक कुर्मी अँगोठी के पाम ही रख दी। काफी की टो भी पाम ही एक शानी सी मेज पर रख कर उनन दा प्यालो म काफी ढाली।

१८० दूध-चीनी मिलाकर उसने एक प्याला फादर की ओर बढ़ाया और एक मुझे दिया ।

फादर प्याले को हाथ में लेते हुए बोले— मैं बड़ा भाग्यशाली रहा । बहुत अच्छी साइट में बाहर निकला था । तुम्हारे यहाँ आते ही काफी मिल गयी यह मेरा बहुत ही प्रिय पय है ।'

'पर आप न जान कितनी दर से वरामदे में पड़े थे मुझे कुछ पता ही न चला । आपका चाहिये था कि किवाड़ खटखटाते । इतनी दर तक आप व्यथ में बाहर टाएड में पड़े रहें !'

मुझ कतई जाड़ा नहीं मात्रम हो रहा था स्नहपूर्वक मुम्बराते हुए फादर ने कहा— मैं तो उम मुहावने दश्य का पूरा उगभाग कर रहा था । घर से जब निकला तब इस बात की कोई सम्भावना ही मुझे नहीं दिखाया दी थी कि इतनी जल्दी बरफ पड़न लगगी । पर आपके बँगले के पास पहुँचते ही एमी यजानी आँधी चलन लगी कि मैंने कुछ दर यहाँ ठहर जाना उचित समझा ।

'आपने बड़ी कृपा की !'

फादर ने काफी पीते हुए एक बार अपनी पनी बगिट सरमरी तौर से कमरे में चारा और—ऊपर नीच—दीखायी । मनिया ने तीन ही चार दिन पूर्व फ्राइस्ट व जीवन से सम्बन्धित कुछ बड़े बड़े चित्र फ्रेम उरवाके मरे कमर में टँगवा दिये थे । गूली पर चढ़े हुए ईसा के सामने ही एक चित्र स्वर्ग में शिव्या पाति की आनन्दमयी किरणों वरमाने वाला इसा का भी था ।

'स्वर्ग और मर्त्य ! फादर ने कहा । और फिर एक घट काफी की पी ।

वह जैसे अपने आप से ही कुछ कह रहे थे । पर मैं जानता था कि यह कभी कोई भी बात बिना किसी विशेष उद्देश्य के नहीं कहते । मैंने कहा— मैं आपका आगम या मकन कुछ समझा नहीं । बनी कृपा ही, यदि आप अपने सूत्र का तनिव व्याख्या के साथ समझाने का कष्ट करें ।'

'मेरा कोई विशेष आगम नहीं था । यो ही एक बात भर मुह से

निकल आयी। आपके चित्रों को देखकर यह विचार मेरे मन १८१  
में जगा कि स्वर्ग-सम्बन्धी कल्पना एक चीज है और मृत्यु

का सत्य दूसरी चीज। ईसा को शूली पर चढ़ाया गया, यह मृत्युलोक के  
जीवन का जीवित मृत्यु है। पर यह धारणा कि वह स्वर्ग में पहुँचकर  
पापी-तापी मृत्युवासियों पर अपार प्रेम, क्षमा और करुणा की अमृत-  
मयी किरणें बरसा रहे हैं, यह कवियों की स्वर्गीय कल्पना है, जो उनकी  
सभी कल्पनाओं की तरह सुन्दर है ”

मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। मैंने कहा—“तो क्या आप यह  
स्वीकार करते हैं कि ईसा किमी दिग्गज से ईश्वर की दिव्य शक्ति  
लेकर नहीं अवतारे थे, और न मरने के बाद वह किमी दिग्गज को  
ही पधारे ?”

‘इसमें स्वीकार करने की कौन सी बात है !’ संभवतः कुछ अप-  
मानित-सा अनुभव करते हुए फादर ने कहा—“यह तो एक साधारण  
सत्य है जिस किसी भी साधारण व्यक्ति की साधारण बुद्धि समझने में  
समर्थ है।’

“आपका आशय मैं क्या यह समझूँ कि ईसा साधारण मनुष्यों के  
बीच में उत्पन्न एक साधारण ही मनुष्य थे ?”

‘विलकुल यही—केवल एक अंतर के साथ, वह साधारण मनुष्य  
के बीच में उत्पन्न साधारण ही मनुष्य थे, मदह नहीं, पर उनकी भाव-  
नाएँ साधारण स्तर के मनुष्य से बहुत ऊपर उठी हुई थी, और साथ ही  
मन की असाधारण गहराइयों तक पहुँची हुई थी।’

ता उनके श्रेय का जो प्रचार बाद में किया गया उसे आप भ्रष्ट  
मानते हैं ?

“भ्रष्टता मैं नहीं कहूँगा, पर इतना अवश्य कहूँगा कि वह भ्रमा-  
त्मक था। भ्रष्टा इसलिये नहीं था कि जिन लोगों ने उनके देवत्व का  
प्रचार किया था वे ईसा की असाधारण भावना शक्ति द्वारा इस हद तक  
प्रभावित हुए थे कि ईश्वरत्व के अनिश्चित दूसरी कल्पना ही वह उनके  
लिये नहीं कर सकते थे। और तो और, स्वयं ईसा अपनी शक्ति के सम्बन्ध  
में भ्रम में पड़े हुए थे। कभी-कभी स्वयं उन्हें यह भ्रम होने लगता था

कि वह ईश्वर द्वारा प्ररित और प्रेरित हैं। इसके कारण

फादर के मुख के भाव में एक तीव्रता आ गयी थी और मुसकान नीचे रख दिया था। अन्तिम घूट समाप्त करके उन्होंने प्याला मिलाकर फिर उसे फादर के हाथ में दे दिया। फादर ने अथ मनस्क भाव से एक बार ध्यानसिंह की ओर देखा, फिर प्याला मुह से लगा लिया। मैं उनके प्रत्येक हाव भाव और प्रत्येक चेष्टा में बड़ी गहरी दिलचस्पी ले रहा था। आज उनका बिलकुल एक नया ही रूप मेरे आग प्रकट हो रहा था। मैं तब तक सोचता था कि वह भी सभी पादरिया की तरह कट्टर और हठधर्मी होंगे।

मैंने कहा—“क्या आप यह बनाने की कृपा करेंगे कि उनके उम्र में के क्या कारण थे ?”

“अभी बताता हूँ।” कहकर उन्होंने शेष काफी को जो ठंडी हा चली थी, दो घूट में समाप्त कर डाला। मैं अपनी काफी पहल ही समाप्त कर चुका था।

प्याले को नीचे रखकर हमाल में मह पाछकर फादर ने कहना शुरू किया—“ईसा ने जब जन्म लिया तब उनका दण असाधारण परिस्थि तियों से हाकर गुजर रहा था। एक और रोमन शासक के लौह बक्र के नीचे साधारण मूढ़ी जनता बुरी तरह कुचली हुई थी, दूसरी आर पुरे हिन बग की अधिकार प्राप्ति की भावना राजनीतिक क्षेत्र में अणन को पराजित पाकर धामिन क्षेत्र में दुगनी तीव्रता से विकसित हो उठी थी और वह जनता के मन में पारलौकिक भीति की भावना जगाकर उससे अधिक से अधिक लाभ उठाकर अणन अहभाव की पूति करन में सलग्न था। तीसरी और महाजन बग अणन स्वाय-साधन में पूरे प्रयत्न से जुटा हुआ था। इन विविध शक्तियों के निपीडन से दीन-दुखी, अणिमित और असहाय जनता निमग रूप से पिसी चली जा रही थी। उसके भीतर का दमित हाहाकार सार वातावरण को भाराघात किये हुए था और धीरे धीरे अदश्य रूप से सामूहिक चेतना-लोक में कुछ विचित्र रामायनिक

परिवर्तन उत्पन्न करने लगा था। नामूहिक अतश्चेतना के  
 इही सूक्ष्म परिवर्तनों की चरम परिणत ईसा के जन्म में  
 हुई, जिसके फलस्वरूप एक विशेष प्रकार की दार्शनिकता की उत्पत्ति हुई।  
 इस नयी दार्शनिकता ने जनसाधारण की जड़ चेतना के भीतर विस्फोट  
 उत्पन्न कर दिया। इस दार्शनिकता का साधन था दरिद्र-नारायण के  
 सहज आत्म-समपणील भीरु मन के भीतर अह का स्फुटन और आत्म  
 विश्वास का जागरण और साथ ही सभी शोषक वर्गों के विरुद्ध शोषिता  
 का विद्रोह ”

१८३

उनकी सतज आत्मे वृत्ती के प्रकाश में आर अधिक तीक्ष्णता से चम-  
 कन लगी थी और उनके ओठा के माथ ही उनकी तीखी नाक का सिरा  
 भी जैसे हिलने लगा था।

मैंने कहा— 'सभी धार्मिक नेता जनता का बराबर अपने अह का  
 बिलीन करने का उपदेश देते रहे हैं। स्वयं ईमान स्थान-स्थान पर इसी  
 तरह का उपदेश दिया है। इसलिये आपकी इस बात में सगति कहा पर  
 रहे जाती है कि ईसा की दार्शनिकता का साधन था जनता के अह का  
 स्फुटन ?

पादर मुस्कराये। वह एक विचित्र व्यंग्य भरी मुस्कान थी जिनमें  
 सम्भवतः मेरी अनुराग के प्रति तरस की भावना भी भरी हुई थी। बोले—  
 “यह तो उस रहस्य का मूल है जिसने सारे युग को—वर्तमान युग को—  
 एक आश्चर्यजनक भ्रम के फेर में डाल दिया। इसमें ईसा का कोई दोष  
 नहीं था, दोष था समझने और समझाने वाला का। ईसा ने अवश्य  
 समय-समय पर अपने उपदेशों में विनय, नम्रता, अहभावपूर्णता और  
 आत्मसमपणीलता पर जोर दिया है, पर मनावनात्मिक दृष्टि से वह  
 विनय वह नम्रता वह अहभावपूर्णता, वह आत्मसमपणीलता दमिन्  
 अहम् का ही परिपूर्ण परिस्फुटन है—यद्यपि उलटी दिशा में। वह अधि-  
 कार प्राप्ति की भावना या मनाकाशा का ही दूसरा रूप है। रामना के  
 पास राजनीतिक और राज्यात्मिक का बल था, पुराहित वर्ग के पास लौकिक  
 धर्माधिकार का बल था, और यहूदी महाजन वर्ग के पास आर्थिक बल  
 था। इन तीनों बलों की सम्मिलित सत्ता के विरुद्ध सगठित विद्रोह के

लिये एक ऐसे अस्त्र की आवश्यकता थी जो सारी भौतिक दीवार का कामिब करणों की अदृश्य किंतु अतर्भेत्नी शक्ति से भेदकर उस छद्म कर सके । और वह अस्त्र क्या हो सकता है, यह जानने में ईसा के समान तीव्र अतर्भेत्नी रखन वाले महापुरुष को देर न लगी । वह समझ गये कि निरीह जनता को कुचलने वाली वे भौतिक शक्तियाँ तभी द्रिन्न भिन्न हो सकती हैं जब जनता के भीतर की आध्यात्मिक अणु शक्ति को जगाया जाय । और उस अणु शक्ति को जगाने का एतन्मात्र उपाय यही था कि अधिक से अधिक विनय, अधिक से अधिक आत्मत्याग, और सासारिक विषया के प्रति अधिक से अधिक विराग के आदेश को "सावहारिक रूप देकर जनता के मन में यह विश्वास जमा दिया जाता कि उनके भीतर एक ऐसी शक्ति निहित है जो सभी सासारिक शक्तियों को तुच्छ कर सकती है । मीथे शास्त्र में यह कहा जा सकता है कि ईसा एक धार्मिक नेता उतन नहीं थे जितने राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक चक्रा से पीड़ित और असन्तुष्ट जनता के सगठित विद्रोह के नेता । उन्होंने स्पष्ट रूप से दो म कहा था— मैं ससार में शान्ति स्थापित करने नहीं आया हूँ, बल्कि पिता और पुत्र के बीच, भाई-भाई के बीच विरोध और विद्रोह खड़ा कराने के लिये आया हूँ । उन्होंने यह भी कहा था कि बेंजेमिन् इज मारन, आई शल रिपे ।" 'प्रतिहिंसा का मूल मूत्रधार मैं हूँ और मैं बिना बला चुकाये रहूँगा नहीं । इसका अर्थ भले ही कुछ लोग यह लगायें कि ईसा न साधारण जनता में बदला चुकान की भावना से विरत रहने का उपदेश देते हुए कहा था कि 'बदला चुकान का अधिकार बवल मुझे है', पर इसमें मूल बात में कोई अंतर नहीं आता । वह यह कि बदले की भावना ईसा को अभीष्ट थी । उनके भीतर का अहम अपन युग के सत्ताधिकारियाँ से लाहा लेन के लिये बचन था । पर बदला चुकान का अर्थ उनका अपना निजी था । प्रतिगम विनय परिपूर्ण आत्मत्याग, दूसरा को बुराई के प्रति धमा भावना आदि अहिंसात्मक उपायों से निःश्रेय प्रतिरोध द्वारा मन्ताधिकारियाँ के अत्याचारों और अत्याचारियों का सामना करत हुए, हिंसात्मक प्रवृत्तियों की सारी चाट अपने

ऊपर नेकर जनता के अवचतन मन की गहराई में अग्राय के प्रति क्षाभ और अमत्तोप उभाडना—यह था उनका उद्देश्य । १८५

और अपन इस उद्देश्य में वह कुछ ता अपने जीवन-काल में और अधिका-गत अपनी मृत्यु के बाद सफल हुए, इतिहास इसका साक्षी है । उनकी मृत्यु अत्यंत दुर्गति के साथ हुई—उह काटो का ताज पहनाया गया, पुरोहिता और रामन शासको की गुलामी के कारण पतिन जनता ने तानियाँ पीकर मुह चिडाकर उनका मजाक उडाया और उनके ऊपर धूका, उनके ऊपर पत्थर फेंके गये और तब शूली पर लटकाया गया । देखा ! देखा ! अपन को जननायक बतानवाल 'म व्यक्ति का देखा !' काटा से तथा कीला से छिड़े हुए शरीर में बहनेवाली रक्त की धारा से नन्नाते हुए उम गात और अहिंसात्मक—तथापि आत्मा की अतलता में अगाति की आग भडकान वाले—उस विद्रोही महापुरुष की और लक्ष्य करके दास मनोवनि ने प्रेरित जा जनता उपहास कर रही थी उस पता नहा था कि उस महामृत्यु का क्या जीवित प्रभाव युग युग तक विश्व की व्यापक जनता पर पड़ेगा । हे प्रभु ! इन सबका क्षमा करना क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं । यह आंतरिक प्रायना करते हुए उम महाप्राण का निर्वाण हा गया । इस प्रायना न उनके उस पुजीभूत पीडन का चरम मार्मिकता का रूप दे दिया । यह सब उस महाविद्रोही आत्मा की निश्चित याजना के अनुसार हुआ । वह जैसे अपन जीवन की सारी साधना उमा धार अवमाननापूर्ण—और साथ ही निदाहण रूप से कारुणिक—मृत्यु की निद्रि के निय नियोजित किये चले जा रहे थे, क्याकि उह यह निश्चित विश्वास था कि 'Vengeance is mine I will repay' 'प्रतिहिंसा मेरी है मैं बदला चुकाऊंगा । और यह बदला वह तनी व्यापक और श्वायी रूप से चुका सने थे जब वह अपन जीवन में ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकें जिनके कारण उनकी मृत्यु अत्याचारियों के हाथों से हो, और साथ ही अधिक से अधिक हृदय विचारक और अधिक से अधिक ममघाती रूप में हा । अपनी घोर आतकोत्पादक और लोमहृषक मृत्यु का वह एक एत महान्न के रूप में अपन पिथ्या के पात छोट जाना चाहते थे जा समय प्राण पर भौतिक मद में मत्त अदिगासकों

तथा शोषका और उनके पोषका की जड़ सत्ता को नाव से  
हिला सके और एक नय आदेश राज्य की—जनसत्ता का—

प्रतिष्ठा मतार के एक बहुत बड़े भूभाग म कर सके ।

२६

“इन सब तथ्यों से यह प्रमाणित होता है कि ईसा  
एक धार्मिक नेता उतन नहीं थे जितने की जनसत्ता  
के पोषक, महान शक्तिशाली नेता । ‘नम्र—मीन

मीन—जन धर्म हैं क्याकि भविष्य में हम पृथ्वी पर वे ही राज्य करेंगे।’  
यह भविष्यवाणी वह अपने जीवन काल म कर चुके थे । उनकी मृत्यु  
के बाद उनकी यह भविष्यवाणी इस अर्थ म सफल हुई कि उन ‘दीन  
हीन जनां—अपने देश से प्रताडित दीन दरिद्र इमाइयो—ने समग्र राम  
राज्य म धीरे धीरे भूगर्भस्थ उपाया से, जन माजरण के भीतर रामन  
गामका और उनके पापन सामता के विरुद्ध ऐसे भयकर अमृतोप के दीन  
वा दिय जिहान पनपकर जिनाल रामन साम्राज्य को तहम नहम कर  
दिया । समा न जिस प्रतिहिंसा की बात कही थी वह सफल होकर रही ।  
उस युग म रामन शासका का जसा दबदबा था, जसो सुदृढ़ निनि पर  
उनका साम्राज्य प्रतिष्ठित था उस दखत हुए इस बात की कल्पना नहीं  
की जा सकती थी कि ईसा के कुछ मुठ्ठी भर अकिचन गिप्य निमबल  
आर निराश्रय अवस्था म उहा रोमना की राजधानी म पहुँचकर, जिहा  
न उनके महागुरु को धूली पर चलाय जान का आदेश दिया था, धीरे  
धीरे, पर्यर के जीड़े की सी लगन से उस सुदृढ़ साम्राज्य का बज्र  
दीवार म दरार पदा कर देंगे, और बाद म उसकी नींव को ही खोलला  
कर डालगे । यह असंभव शकलिय संभव हुआ कि ईसा न अपने निय  
अत्यंत पीटक मृत्यु बुलाकर अपनी महाप्राण शक्ति द्वारा उसे अत्यंत  
धार्मिक रूप देने म सफलता प्राप्त की । उस मृत्यु के लोमहर्षक दृश्य ने



उनके शिष्या की आत्मा में प्रतिष्ठा की एक ऐसी अजेय १८७  
 मन्त्र शक्ति भर दी जो उद्धत सामंत वग के उच्छेद के बिना  
 विराम नहीं ले सकती थी ”

मैं कह नहीं सकता कि फादर की आख अंगीठी में दहकते हुए  
 अगरो की प्रनिच्छाया से चमक रही थी या अपने असाधारण उद्गारा  
 के आवेश से। मैं आज उनका बिल्कुल ही नया और अप्रत्याशित रूप  
 देख रहा था। वह एक विचित्र अनमन भाव से, असाधारण दृष्टि से  
 मेरी आर दृष्टि रह था। ऐसा लगता था जैसे वह मुझमें नहीं, बल्कि स्व  
 गत कह चले जा रहे हो—

‘ईसा और ईसाई धर्म को लेकर केवल पादरी-पुरोहितों ने ही नहीं,  
 बल्कि कविया और रहस्यवादियों ने भी निराली भावुकतापूर्ण धारणाएँ  
 जन-साधारण के मन में भरने में कोई बात उठा नहीं रखी। उन्हें अत्यंत  
 सरल, सात, विनयी, विनम्र, दीन, कष्ट और धर्मप्राण महात्मा के  
 रूप में प्रचारित किया गया है। पर वास्तविकता इसका विपरीत थी।  
 उनके अहिंसक रूप के भीतर एक योद्धा की आत्मा छिपी हुई थी। उन्हें  
 अकेले इस युग की नाना विरोधी भौतिक और राजनीतिक शक्तियों से  
 माचा लेना था और अहिंसा ही एकमात्र ऐसा अस्त्र हो सकता था  
 जिसके द्वारा वह विकट रूप अहिंसक शक्तियाँ से मार्चा ले सकते थे।  
 वह बड़े ही कृष्णतीक्ष्ण थे और नेतृत्व की प्रचंड महत्वाकांक्षा लिये रहने  
 पर भी घोर यथाववादी थे। उन्होंने तत्कालीन शासक-शक्तियों से कभी  
 सीधा मार्चा नहीं लिया। दुखियों और रोग-पीडिता की निरंतर सेवा  
 करते हुए वह धीरे धीरे धार्मिक क्षेत्र में अपने विद्रोही और क्रान्तिकारी  
 विचारों को जनता में प्रचारित करते रहे। जब उन्होंने लक्ष लिया कि  
 जनता का एक बहुत बड़ा भाग उनपर विश्वास स्थापित कर चुका है तब  
 उन्होंने अपना मसीहाई रूप प्रकट किया और उस युग के अष्टाधारी,  
 डोगी नेताओं के विरुद्ध आवाजें कसते हुए उन्हें उनके मुख पर अत्यंत  
 बड़े शब्दों में फटकारना आरम्भ कर दिया। जब वह मूढ़ी ननाया से  
 घुला मार्चा लेने के लिये जेरूसलेम का मार्गा कर रहे थे तब चारा द्वार  
 से शब्दा-परायण जनता की अपार भीड़ ‘हासाना! होसाना!’ (जय

१२२ हो ! जय हो ! ) का नारा लगाती हुई उनका स्वागत कर रही थी ।

“त्रेहसलेम उस समय धार्मिक और अध-पार्थिव यहूदी अधिकारियों, रामन नासको के 'जी हजूर' पयी चाटुकारों और महाजना के भ्रष्टाचार का मूल केन्द्र था । वहाँ जाकर ईसा न पूरे आत्म विश्वास के साथ उन लोगों को धिक्कारना शुरू कर दिया । वहाँ के प्रसिद्ध मंदिर का विंगल अहाना फिनस्तोन के प्रमुख चापारियों और महाजना का केंद्र बना हुआ था । उमा ने वहाँ पहुँचते ही उन्हें तत्काल बाहर निकल जान और अपनी भ्रष्टाचारिता से मंदिर को बलुपिन न करने का आदेश दिया । भौहान्द्यत्र व्यक्तिया की तरह सब व्यापारों बाहर चले आये । उसका बाद उन्होंने धर्म बजिया को फटकारना शुरू किया— यहूदी बमचारिया और कट्टर-पयी फरोमियो ! पाखडियो ! तुम्हें बिकरार है । धगिल माँपो ! विपल कीटा ! तुम लोग बाहर से कट्टर धार्मिक और नीनिनिष्ठ बने रहते हो, पर तुम्हारा भीतर पाखड रूपी कालकूट भरा हुआ है । तुम लोग बद्र के उम दखत गुबद की तरह हो जो बाहर से दखने से सुन्दर लगता है, पर जिमन भीतर मनुष्य के ककाल भरे पडे रहत हैं

उहाने अपन गिप्या से स्पष्ट शब्दा में कहा कि मैं पृथ्वी पर आग उगलने आया हूँ काग मेरे जीवा काल में ही यह आग पूर जोरी से भडक उठती ! जब यहूदी पडा को (जो रोमन गवनर के अधीन रह-कर जनता पर किसी हद तक राजनीतिक शासन भी किया करते थे) जी भर कर गालियाँ देकर वह मंदिर से लौट रहे थे, तब उनके एक गिप्य ने उस इमारत की विंगलता की ओर उनका ध्यान आकषिप्त करना चाहा । उहाने एक वार जलती हुई दष्टि से सम्मरी नजर फरी और नब धीरे से कहा—'इसकी एक भी इट बचा नहीं रहती, देख लेना ।

“पृथ्वी पर उनके अवतरण के फलस्वरूप मत्रिप्य में नवत्र युद्ध और विग्रह जनित अशांति मचनी रहगी, इस बात का निश्चिन् विश्वास उह था । उहोने अपन गिप्या से कहा था—'और तुम लाग युद्ध के समाचार सुनाग या युद्ध सबधी अफवाह सुनन रहोगे । पर धरराना मन । एक-

राष्ट्र दूसरे राष्ट्र के विरुद्ध लड़ेगा, एक राज्य दूसरे राज्य

पर आक्रमण करेगा। चारों ओर से अकाल और महा

१८६

मारिया फलन की खबरें आयेंगी और भूकंपा से पृथ्वी हिल उठेगी। पर इन चिह्नों का अर्थ न समझना। इन्हें एक नये जीवन की उत्पत्ति की प्रसन्न वदना का रूप में ग्रहण करना।

‘तनी बड़ा दूरदर्शिता जिस व्यक्ति में वर्तमान थी वह राजनीतिक समस्याओं की ओर से विमुख रहा होगा ऐसा जो लोग साचते हैं वे निपट अणतावा ही ऐसा साचते हैं। मरे मन में दिन पर दिन यह विश्वास जमता चला जा रहा है कि सत्तार में कम्यूनिज्म का सबसे बड़ा और सबसे पहला प्रचारक और बीज वपनकारक व्यक्ति प्रायः दो हजार वर्ष पूर्व फिलिस्तीन में पैदा हुआ था। काल मानव ईसा से बड़ा कम्यूनिस्ट किसी भी हालत में नहीं था। गेन शोक और दुख दरिद्रय से पीड़ित जनता में अमनोप की भावना भरना कम्यूनिस्टों की विशेषता है, ईसा न वही किया। उन्होंने दीन दरिद्रों और पापी तापियों के प्रति आतुरिक सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए उनके भीतर निहित आत्म शक्ति को जगाया और उनका चारा ओर की परिस्थितियों के प्रति—शामकी और आपरा की अत्याचार परायणता और भ्रष्टाचार के प्रति—अमनोप और विद्रोह का भावना जगाया। ईसा न कहा था— मैं तुम लोगों से कहता हूँ कि एक ऊँट सुई के छेद के भीतर भले ही घुस जाये पर कोई घना व्यक्ति स्वर्गाय राज्य में प्रवेश नहीं पा सकता।’ पर वे शायद, अनाथ विधवाएँ, सूने, तैंग, कोठी, दरिद्र और निर्यातित श्रमिक स्वर्ग पा सकते हैं, यह विश्वास उन्होंने लाया था। राष्ट्रीय भावना की चहारदीवारी लाधकर अन्तर्गामीय क्षेत्र को अपनाया कम्यूनिज्म के प्रधान उद्देश्य में से है। इसा न यही किया। इजराइलियों ने अपने छोट में राष्ट्र के चारा और जा एक वचन की सी अनेक दीवार खड़ी कर रखी थी उनके भीतर किसी भी पर राष्ट्रीय तत्व का प्रवेश एकदम निषिद्ध था। ‘इजराइली जनता ईश्वर की विनिष्ट रूप में चुनी हुई जनता है, यह विश्वास यहूदियों के भीतर बूट बूटकर भरा हुआ था। अथ मभी जानिया के सागा का वे अत्यंत पूजा की दृष्टि से देखते थे और उन्हें अज्ञान समझ-

कर उनसे भ्रतग रहते थे । उनके सभा धार्मिक नता केवल इजराइली राष्ट्र क ह्रास और विकास, उत्थान और पतन र अपने उद्गार प्रकट किया करत थे और केवल उनी का विश्व की न्तीय मानव गति मानकर अपन प्रवचन सुनाया करत थे । पर ईसा न मस्त गर इजराइली जनता म और इजराइलिया म कभी काई भेद नही जाना और पिछले सभी इजराइली नेताभा के सकीण दष्टिकारण को करार कर अपन गिप्यो का यह उपदान दिया कि वे समग्र अन्तरराष्ट्रीय मानवता के उद्धार का बीडा उठाय और उनकी वाणी का प्रचार दूसर ता म जाकर सभी जातियो के मनुष्यो मे करें । उस युग म, और उपेकर यहूदियो के देग म, इम प्रकार के व्यापक दष्टिकारण को अपना एक ऐसा मूलत विद्रोहात्मक कदम था जिसे कट्टर यहूदी जनता भी सहन नही कर सकती थी ।

“इन सब दष्टिया से विचार करन पर यह स्पष्ट हो जाना है कि आरम्भ ही स ईसा वा उद्देय एक मामूहिक जन क्रांति मचाने का था जो मस्त विश्व की दलित और निर्यातिन जनता के भीतर एमी आग फूक क जिमसे उस युग की समस्त गोपणगील सत्ताएँ—चाह वे धार्मिक न स सम्प्रधित हा, चाह राजनीतिक क्षत्र से और चाह आर्थिक क्षत्र —त्रस्त हा जायें, और यह महावाणी सत्य हा जाय कि ‘दीन और नम जनता धय है, क्याकि एक त्तिन पृथ्वी पर उसी का अधिकार हा जायगा !’

‘ पर ईसा द्वारा प्रचारित कम्युनिज्म म और मार्क्स द्वारा प्रचारित अलनरियन क्रांति के स्वरुपा म बहुत अन्तर था । दोनो म मूलगत अन्तर हा था कि ईसा न अहिंसा, आत्म त्याग और आत्मपीडन क सिद्धान्त को क्रांति के प्रचार का प्रमुख अस्त्र बनाया था, जब कि मार्क्स न हिंसात्मक साधना के अनिरिक्त दूसरा काइ साधन कम्युनिस्टिक मिडाना की सिद्धि लिय नही बताया । इगा न दलित जनता की विश्व-यापी विजय के उद्देय म जो आग भडकायी वह केवल आत्म साधना द्वारा, जनता की अन्तरी प्रवृत्तिया की चीर फाट द्वारा ही संभव हुई जब कि मार्क्स ने केवल आर्थिक और राजनीतिक चक्रा की बाहरी प्रतिप्रियाभा को अस्त्र

नाकर उनसे पूरा लाभ उठाने का उपदेश दिया। सफलता दाना को मिली—प्रत्येक की मृत्यु के बाद। पर जहाँ ईसा की सफलता—मध्ययुगी ईसाइया की भ्रष्टाचारिता और आज के युग की धर्म विराधी प्रवृत्तियों के बावजूद—एक सुदृढ़ चट्टानी, आध्यात्मिक नींव पर स्थिर रहने के कारण अभी तक प्रत्यक्ष या पराक्ष में स्थायी शक्ति की सभावना का मूल उपादान बनी हुई है, वही मार्क्सवादी सफलता आज संसार के बाहरी राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों में व्यापक प्रभाव डालते रहने पर भी भीतरी आधार की अनिश्चितता के कारण अभी तक स्थायित्व के उपादान का खोज रही है।

‘आश्चर्य है कि मार्क्सवादियां न उस बख़्खत दृढ़ आधार को एकदम अस्वीकृत कर दिया, बल्कि टुकरा दिया, जो जनता के भीतर युग युग में नियम बना देता और नया स्फूर्ति उत्पन्न करने में समर्थ है, जो स्थायी शक्ति का अक्षय रिजवाज़ है। वह आधार है मानवीय अचेतना का अगाध अतल लोक। अचेतना की उस अतलना का चिनना ही खादा जाय उतने ही अधिक शक्ति-स्रोत उसमें से फूट पड़ते हैं। इन्हीं से वही खनन और बीजबपन की क्रिया आरम्भ की थी, यही कारण है कि आज भी उनका वह शक्ति-स्रोत समाप्त नहीं हो पाया है, आज भी उनका द्वारा निर्देशित साधन—गांधी के माध्यम से—आर्थिक और राजनीतिक विवृत्तियां से अस्त-व्यस्त विश्व के जड़ प्राणा में नयी सजीवनी चेतना फूंकने में समर्थ है। पर मान्य न इस मूल शक्ति-स्रोत की एकदम अचेतना की, और उससे अनुयायियों ने उस मुष्ठा देन तक के अमनव और अस्वाभाविक प्रयास किये। फिर भी आज मार्क्सवाद ईसा के मूल सिद्धान्तों के बदले हुए प्रतिनिधि रूप में हमारे सामने आता है। अचेतना की ऊपरी सतह पर मार्क्सवादी सिद्धान्त का विश्व-व्यापी प्रभाव सुस्पष्ट है। यद्यपि वह प्रभाव एक ऐसे कुहरे की तरह लगता है जो प्रकट में समस्त वातावरण को डूबकर तत्काल के लिये उसे जम पूरानया मिटा देता है पर दूसरे ही क्षण वह कुहरा फटकर साफ हो जाता है और पृथ्वी और आकाश अपने सच्चे और स्वाभाविक रूप में हमारे

सामन आते हैं। इसलिये आज की परिस्थितियों में माक्सवाद का महत्व तनिक भी उपस्थायीय नहीं है।

'इसा और माक्स दोना सतार से आर्थिक बदल्य दूर बन और पृथ्वी पर सबहारा बग का स्वयं स्थापित करने के पक्ष में रहें हैं दाता आर्थिक पाखंड के निराकरण के उद्देश्य से प्रयत्न करते रहें हैं। दाता न युग की बाहरी परिस्थितियाँ में लाभ उठाया है, और दाता अपने-अपने उद्देश्यों में आपेक्षिक रूप से सफल हुए हैं। पर जसा कि मैं बता चुका हूँ, एक न सुदृढ़ भीतरी नींव को अपनाया है और दूसरे न केवल बाहरी परिस्थितियाँ के बदलते हुए चला को ही अपना साधन माना है।

दाता न एक मूल सिद्धांत के दो बदले हुए रूपा का अपनाया है। एक न उत्कट आत्म पीडन द्वारा विश्व के जनदल को अपनी आर लीचन का प्रयास किया है दूसरे न युग धर्म के अनुसार आम-पीडन के साथ साथ शापका के दमन को भी सबहारा बग की विश्व यापी विजय का प्रमुख साधन माना है। एक ने अहिंसा और शत्रु के प्रति प्रेम भावना के पापण को अपना अस्त्र माना है, दूसरे न सामूहिक उपाया द्वारा शत्रु के दलन की भावना का सफलता की मूल बुजी बताया है। इन दाता में किमका मतवाद अधिक महत्वपूर्ण है इस सम्बन्ध में कोई भी राय निष्पक्ष रूप से नहीं दी जा सकती, फिर भी दतना निश्चित है कि जो मतवाद सामूहिक जन हित को ध्यान में रखते हुए यथाशक्ती दृष्टिकोण का अपनाता हुआ चलेगा वनमान अस्त-यस्त आर्थिक या राजनीतिक परिस्थितियों में दलित दलों की जनता में उसकी सफलता स्वाभाविक है। भगत महायुद्ध में उसकी विजय की बहुत बड़ी सम्भावना है। पर यह सब जाने पर भी वह मक्षार में तब तक कभी अपना स्थायित्व कायम नहा कर सकता जब तक वह केवल हिंसा और नय प्रयोग द्वारा नर, अहिंसा और प्रेम द्वारा भा जन मन पर अपना अधिकार नहीं जमा लेता और जब तक उसका नायकगण विश्व जनता के आर्थिक पुनरुद्धार के साथ ही सामूहिक चेतना के भी व्यापक विवाम को और अपनी गतिशा का प्रचलना से नियोजित नहा करते।

बाहर अचिराम गति से घन घन हिमवर्षा हो रही थी। किवाडा पर लगे हुए शीशा से मैं बीच-बीच में बिना किसी इच्छित प्रयास के बाहर की ओर दखता जाता था। ऐसा लगता था जैसे सारे विश्व का सम्पूर्ण पार्थिव तत्व बरफ के रूप में परिणत होकर समस्त पृथ्वी पर जम जायगा। बर्फ के चारा-ओर जम जाने से जा सफेदी छा गयी थी उसमें सघन बादलों के घटाटोप के बावजूद एक उज्ज्वल प्रकाश की अदृश्य किरणें जैसे चारा-ओर बिखर गयी थी। मवत्र मृत्यु का-सा सनाटा टाया हुआ था—ऐसा सनाटा जिसमें कहीं एक भांगुर तक नहीं बाल रहा था।

फादर जेरेमिया के अप्रत्याशित धारावाही भाषण के लिये इससे उपयुक्त समय जैसे कोई दूसरा हो ही नहीं सकता था। सचमुच मैं एक पादरी के मुख से इस तरह की बात सुनने के लिये तैयार नहीं था। मैंने घटी का बटन दबाकर नौकर को बुलाया। जब वह आया तब उससे फिर काफी तैयार करने को कहा।

अंगीठी से जो आंच आ रही थी वह अत्यंत प्रिय और सुखद लग रही थी। फादर जेरेमिया अपने दीर्घ भाषण पर जब स्वयं एकांतपूर्वक विचार कर रहे हो, ऐसा लगता था। अपने दोना हाथों को अंगीठी की ओर बढ़ाकर आग तापते हुए वह जैसे स्वयं अपने ही अंतर के माध्यम से बातलाप करने लगे थे। कुछ देर तक हम दोनों चारा-ओर की प्रकृति की स्थिति के साथ एकत्र होकर मौन बैठे रहे।

उसके बाद पहले मैं ही मौन भंग करते हुए कहा—“आपके इस रूप से मैं तो परिचित ही था न इसकी अभी आशा ही करता था। पादरियों के सबंध में मेरी जा धारणा थी आज उस आपन चर्चित कर लिया।”

पादर के मुख पर एक अत्यंत गभीरतापूर्ण मुसकान मन्त्र उठा। अपनी सुन्दर, कलात्मक दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए वह बोले— ‘जहाँ पर मैं पादरी हूँ वहाँ किसी भी दूसरे पादरी से आप मुझे भिन्न न समझें। पर इस समय मैं एक पादरी की हसियत में आपसे बातें नहीं कर रहा हूँ। दीर्घ काल तक मैंने अपने भीतर और बाहर एकाकी जीवन बिताया

है। अपने उस भीषण एकाकीपन को भूलने के लिये मैं जीवन और जगन के सबध म कुछ विचित्र विचित्र दृष्टिकोणों से विचार करता रहा हूँ। मेरे उसी एकान चिंतन की एक झलक आज आपके आगे जमे बरबस प्रकट हो गयी। कभी कभी अचानक किसी अप्रत्याशित क्षण मे व्यक्ति के भीतर का बहुत सावधानी से छद् किया गया द्वार खुल पडता है और तब अंतर म पाले हुए विचारों की ऐसी अद्भूत झडी बाहर का फूट पडती है कि स्वय आश्चय होने लगता है ।

‘जो भी हो, यह ता स्पष्ट ही हो गया है,’ मैंने कहा, “कि आप कट्टर ईसाई नहीं हैं।

कट्टर ईसाई से आपका क्या आशय है मैं ठीक समझा नहीं। जहाँ तक ईसा के व्यक्तित्व और उनके भीतरी विश्वास का प्रश्न है, मैं उनका बहुत बड़ा प्रशंसक हूँ। पर उनकी मृत्यु के बाद उनके प्रवचना के ऊपरी रूपों को मनमान ढंग से तोड़ मरोड़ कर, उनका मनमाना अर्थ लगाकर उनके शिष्यों और प्रशिष्या न जो एक धमवाद खडा किया और फिर एक गती से दूसरी गती म उम धमवाद के जो रूप बदलते चले गये और आज भी वह जिस रूप म बतमान है उन सब मे मेरे विचारों का कोई मल नहीं बठता। मैं न आज के ईसाई धम म प्रचलित रीति रिवाजों क महत्व को स्वीकार करता हूँ, न इस बात पर विश्वास करता हूँ कि तथा-वधित इसाई धम के प्रचार द्वारा ससार की अधिक से अधिक जन-संख्या को ईसाई धम के बाड़े के भीतर ने भ्रान म किनी भी पक्ष का कोई हित है।

‘यदि यही बात है’ एक हलका-सा छोटा कसन के इरादे से मैंने कहा— ‘तो जब मनिया न और मैंने ईसाई धम को अपनाया तब आपने प्रसन्नता क्यों प्रकट की?’

पादर जेरमिया के गान्त और गम्भीर मुख पर अविश्वास की एक हलकी सी मुसकान झलक उठी। सहज गान्त स्वर म वह बोले—“दामा कीजियगा, आपका किसी कारण से गलतफहमी हुई है। मैंने कभी आपके और श्रीमती रजन के इसाई धम का अपनान की बात पर प्रसन्नता प्रकट नहीं की। यह ठाक है कि मैंन आपका आग कभी यह भी प्रक-



नहीं किया कि मुझे आपके धम-परिवर्तन से दुःख हुआ है।  
 पर ऐसा प्रकट न करने का अर्थ यदि आपने यह लगाया है  
 कि मैं ईसाई सभार में दो नये ध्यक्तिया की भरता देखकर प्रसन्न हुआ  
 हूँ तो आप झूल करते हैं। सच पूछिये तो मुझे दुःख ही हुआ  
 है ”

१६५

मैं दग रह गया। ईसा को सभसे पहला कम्पूनिस्ट बताते हुए उहोने  
 जो लवा भाषण दिया था उसे सुनने के बाद भी मैंने उनके मुख से इस  
 प्रकार की बात सुनने की कल्पना कभी नहीं की थी। मेरे सिर के भीतर  
 की किसी एक विशेष नस में ऐसी ऐंठन होने लगी कि मैं वहा पर हाथ  
 रखकर उसे दवाने लगा। धम परिवर्तन के बाद आज पहली बार मुझे  
 ग्लानि का अनुभव होने लगा। साथ ही फादर जेरेमिया के विरुद्ध एक  
 उत्कट खीभ की भावना मेरे भीतर जग उठी।

कुछ दर तक मैं भ्रात भाव से उनकी ओर देखता रहा, उसके बाद  
 अत्यंत हताश स्वर में बोला—“आपन मेरे साथ बडा ही अयाय किया  
 है फादर! जब आप समझे हुए थे कि मैं अपना धम बदलकर ईसाई धम  
 को अपनाकर गलती कर रहा हूँ, तब आपन क्या उसी समय मुझे एकांत  
 में बुलाकर आपन विचार से परिचित नहीं कराया? आपको पता नहीं है  
 कि धम-परिवर्तन करने के पहले मैं कैसी विकट मानसिक स्थिति से होकर  
 गुजर रहा था। कोई निश्चित निणाय न कर सकने के कारण रात रात  
 भर मुझे नाद नहीं आती थी। मैं कभी खुशी से ईसाई धम को स्वीकार  
 नहीं किया। मैं बुरी तरह छटपटाता हुआ किसी ऐसे व्यक्ति का खोज  
 रहा था जो मुझे धम-परिवर्तन न करने की सलाह देता। ऐसा हाने से  
 आपन मन की उम बेवसी की स्थिति में मुझे डूबते हुए को तिनके का  
 सहारा मिल जाता। सलाह मुझे अवश्य मिली, पर ऐसी जिससे धम-  
 परिवर्तन के पक्ष में मेरी रही-सही हिचक भी जाती रही।”

‘क्या मैं जान सकता हूँ, आपका वह सलाहकार कौन था?’ फादर  
 जेरेमिया न उत्तुक भाव से प्रश्न किया।

“निश्चया। वह प्रारम्भ ही से मनिया को ईसाई मत की आर

मुवाने का प्रयत्न करती आ रही थी। मरिया क मन पर उसने ऐसा जबदस्त प्रभाव डाल दिया था कि वह केवल एक ही बात पर मुझे विवाह करन का तयार हुई—वह यह कि हम दोनों इसाई धर्म स्वीकार कर लें। मन सिल्विया को जब अपने मकट में परिचित कराया तब उसने भी मुझे यह समझाया कि मरा कन्याएँ इसी में है कि मैं इसाई धर्म स्वीकार कर लूँ। अपनी उस समय की अव्यवस्थित मनोदशा में मैंने उसकी बात मान ली। ”

फादर जेरेमिया के मुख पर एक असाधारण रूप से गम्भीर चिन्ता की छाप पड़ गयी थी। कुछ दर तक वह अनमन भाव से कुछ साचते हुए अगीठी में दहकते हुए लाल लाल अगारों की ओर देखते रहे, उसके बाद एक लम्बी साँस का बलपूर्वक श्वास का प्रयत्न करते हुए बोले— ‘सिल्विया एक बहुत उत्साहा धार्मिक महिला है। यदि परिस्थितियाँ उसके अनुकूल हानी तो वह पृथ्वी के एक सिरे से दूसरे सिरे तक प्रत्येक मनुष्य से इसाई धर्म का प्रचार उमा लगन और सतिपता के साथ करती जिस प्रकार एनी वासट थियोसोफी का प्रचार करती रही हैं। जब तक मसार का प्रत्येक व्यक्ति इसाई धर्म स्वीकार न कर सता तब तक वह कभी चैन न लेती। उसकी आत्मा का एक एक अणु इस विश्वास से भ्रान प्रीत है कि मसार के सभी दीन-दुगी, पापी-सापी और कम भार अस्त मनुष्यों का उद्धार तभी हो सकता है जब वह इसाई धर्म की अनाय। इसी सिलमिले में मैं आज आपको एक बात यह बता दूँ कि मैं आज भी जो फादरी का जामा पहन ह उसका एकमात्र कारण सिल्विया ही है।’

यह मरे लिये एकदम नया आश्चर्य था मद्यपि मैं जानता था कि फादर जेरेमिया और सिल्विया में यही घुटा बगती है और दोनों अन्तर एक-दूसरे के निकट सपक में दिनायी दते थे। तब तक इन दोनों के इस नकट्य और घनिष्टता के ऊपर एक ऐसा कठिन पर्दा पड़ा गया था कि उत्सुकता रहन पर भी कभी मुझे इस सम्बन्ध में काद प्रश्न परा का साहस नहीं हो सकता था। रहस्यमयता का एक ऐसा कठिन, कठोर आवरण उन दोनों के पारस्परिक सम्बन्ध के ऊपर पड़ा हुआ था कि

उस आचरण को भेदने क्या छूने तक की बात मैं सोच नहीं सकता था। पर आज पादर जब स्वयं ही उसे तोड़ने की आर प्रवृत्त हुए तब स्वभावतः मेरी डिठाई बड़ी।

१६७

मैंने कहा—“क्या मैं जान सकता हूँ कि सिन्विया इसका एकमात्र कारण किस रूप में है?”

पादर जेरेमिया एक बार अपनी कुर्मी पर कुछ हिले, जैसे अपना आसन बदलना चाहते हैं, उसके बाद फिर जमकर बठ गये और बोले—“आप चूँकि रालिसन परिवार के इतने निकट आ चुके हैं, इसलिये आपके आग यह एकांत गापनीय बात प्रकट करने में कोई हानि मैं नहीं देखता। वान स्पष्ट यह है कि मैं सिन्विया को चाहता हूँ। काफी लंबे अर्थ तक मैंने सन्यासी का जीवन चलाया है। इस समय मेरे जीवन का वाकनवा वष चल रहा है। यदि मैं इस आंतरिक विश्वास से सन्यास ग्रहण करूँ हाना कि मेरे इस आचरण में प्रभु ईसा की आत्मा तृप्त होगी और इस उपाय से मैं निश्चय ही स्वर्ग के राज्य में प्रवेश पा जाऊँगा तब दूसरी बात थी। उस हालत में प्रथम तो मेरे भीतर पार्थिव प्रेम की भावना कभी सचेत रूप से धरन करती और यदि करने भी लगती तो मैं निश्चय ही उसे अपने भीतर इस तरह गाड़ देता कि वह फिर कभी सिर न उठा पाती। पर मेरे मन में इस तरह का कोई विश्वास कभी नहीं रहा। मेरे मन में कभी ईसा की आत्मा का प्रयत्न करने की इच्छा रही न स्वर्ग के अस्तित्व के मवध में ही कोई विश्वास रहा। कुछ विनाय पारिवारिक परिस्थितियों और मानसिक उलझनों के फेर में पड़कर मैंने पादरी बनना स्वीकार किया। ध्यान एक धार मेरी बौद्धिकता मुझे पादरी-समाज से बहुत दूर ले गयी है और दूसरी ओर स्नेह प्रेममय सामाजिक जीवन विज्ञान की इच्छा मेरे मन में प्रबल हो उठी है। सिन्विया की धार्मिक प्रवृत्ति से मैं तनिक भी प्रभावित नहीं हुआ हूँ। पर उसके स्वभाव में एक ऐसी जीवनी-गति दिखायी दी है जो बरबस मुझे अपनी ओर खींच ले गयी है। उसके भीतर जो धार्मिक उत्साह पाया जाता है वह भी उमी जीवनी-गति का ही एक अंग है। और वह जो मेरे प्रति आवृत्त हुई है उनके दो कारण मुझे लगते हैं। एक कारण तो स्पष्ट ही यह है कि

में पादरी हैं, और फलत (उसकी भाँखो मे) पृथ्वी पर ईसा के प्रतिनिधिया म से एक हैं। दूसरा कारण समभवत यह है कि दीप अध्ययन और चिन्तन के फलस्वरूप मुझे धार्मिक और पार्थिव क्षेत्रा म जो अनुभव हुए हैं, उसके तरण प्राणा के लिय उनका बडा मूल्य है। पर कारण चाहे जो भी है, इसम मदह नही है कि मेरे प्रति वह सहृदय और म्नेहशील है और मेरे मन का भाव भी उसके प्रति कुछ ऐसा ही है।

“पर हम दोनो का एक-दूसरे के प्रति यह जो खिचाव है उसकी परिणाम म सामाजिक और धार्मिक दृष्टिया से बडी भयकर बाधाएँ उठ खडी होगी, इसका अनुमान सहज मे लगाया जा सकता है। सिल्बिया ने गायद अभी इस प्रश्न पर सर्वांगीण दृष्टि स विचार नही किया है। वह उसे एक सहज और साधारण बात समझे बठी है। वह यह नही ख पा रही है कि एक स्त्री और एक पुरुष के बीच म जहाँ एक बार पारस्परि खिचाव आरभ हा जाता है, दोनों के भीतर एक-दूसरे के ति प्रेम का बीजाणु जहाँ एक बार धर कर लेता है, फिर बडी स बडी दृानी शक्ति भी उसके विकास को नही रोक सकती, और उस विकास । चरम परिणति जब होने आयगी तब न समाज हमारा साथ देगा ससार। मैं आज यदि सिल्बिया से सामाजिक बधन मे बंधना चाहूँ । धमसध मुझे उसी क्षण बाह्वृत्त कर देगा और चारो ओर स यग, अट्टहास और धिक्कार भरी आवाजें कसी जायेंगी, पर सामाजिक बधन के बिना किसी प्रेम की काइ साथवता मैं नही मानता। सिल्बिया प्रश्न के इस गभीर पहलू पर विचार करने का प्रवृत्त नही जान पटती। उसने अपनी अतश्चेतना को टटोलन की कोई चेष्टा कभी नही की है, और न मैंने ही कभी उसे इस ओर प्रवत्त करना उचित समझा है। मेरा ऐसा अनुमान है कि वह हम दोनो के पारस्परिक आकर्षण को दो समान धर्मा व्यक्तिया के बीच उत्पन्न होने वाले सहज सौहाद या धनिष्ट मंत्री से अधिक कुछ नहीं मानती। यदि किसी दिन उमके सचेत मन मे भीतरी वास्तविकता के सबध म थोडा बहुत प्रकाण पडे भी, और यह चेतना उसके मन में जगने लगे कि जा भावना हम दोनो को एक-दूसरे

के निकट खींच लायी है वह साधारण मंत्री नहीं बल्कि १६६  
 निगूढ प्रेम है, तो भी वह उसके आध्यात्मिक रूप को ही  
 स्वीकार करेगी, सामाजिक रूप को नहीं, उसके स्वभाव को देखते हुए  
 मुझे ऐसा लगता है। वैसे कब, किस कारण से और किस रूप में किसी  
 मनुष्य के स्वभाव में क्या परिवर्तन हा जाये, यह कोई नहीं कह  
 सकता ”

नौकर कॉफी ले आया था। बाहर अविराम गति से बरफ गिरती  
 चली जा रही थी, जमे हुए पाप-नाप-तप्त भूलोक पर स्वर्गिक पूना की  
 अविरत वृष्टि हो रही हो।

कॉफी का प्याला हाथ में लेते हुए मैंने पूछा— ‘क्या सिन्धिया  
 आपके इन स्वतंत्र विचारों में परिचित हो चुकी है जिन्हें आज आपने  
 मेरे आगे प्रकट किया है?’

“नहीं मैंने कभी इस तरह की एक भी बात का आभास तक उसे  
 नहीं दिया है। जिन दिन वह यह जान लेगी कि मैं भीतर से एक पादरी  
 नहीं, बल्कि स्वतंत्र विचारक हूँ, उस दिन से मेरे संबंध में उमड़ी क्या  
 घारणा हो जायगी, मैं कह नहीं सकता। यही कारण है कि मैं इच्छा होने  
 पर भी अपना पादरी का चोला उतारकर फेंकने में अभी असमर्थ हूँ।  
 पर साथ ही यह भी ठीक है कि अधिक समय तक उसके आगे मैं अपना  
 अमली रूप छिपा नहीं पाऊँगा और उसके प्रति मेरे मन का भाव भी  
 एक न एक दिन अपनी वास्तविकता प्रकट किये बिना नहीं रहगा।  
 तब उसका परिणाम क्या होगा, उसके मन पर क्या प्रभाव पड़ेगा, यह  
 मुझे देखना है। उसी क्षण की प्रतीक्षा में मेरे जीवन की घण्टियाँ बीती  
 चली जा रही हैं।” यह कह कर पादर ने एक घूट कॉफी ली और फिर  
 अपनी मूर्छे, जा कॉफी से कुछ भीग गयी थी, हाथ से पोंछने लगे।

दो-तीन घूट पीने तक हम दोनों चुप रह, उसके बाद मेरे मन में एक प्रश्न जगा। मैंने कहा—  
 “मान लीजिये कि सिल्विया आपके स्वतंत्र विचारा से परिचित होने पर भी आपने विमुख न हुई और आपने सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने में कोई आपत्ति उभर न जतायी, तब आपकी क्या स्थिति रहेगी? तब आप जीवन के किस रूप का अपनाना चाहेंगे?”

“यह तो स्पष्ट ही है कि तब इसाइ धर्म-संघ से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं रह सकता, तब मुझे कोई दूसरा ही पंथा अपनी जीविका के लिये अपनाना होगा। इस सम्बन्ध में भी मैं पहले ही से निश्चय कर चुका हूँ। तब मैं एक स्वतंत्र सांसारिक व्यक्ति की हैसियत से सिल्विया को लेकर अमेरिका चला जाऊँगा। वहाँ पत्रकारिता द्वारा और पुस्तकें लिख कर अपनी गुजर कर सकूँगा, ऐसा मेरा विश्वास है।”

‘किस तरह की पुस्तक लिखने का विचार आपका है?’ बाफी के प्रतिम घूट को निशेप करते हुए मैंने पूछा।  
 फादर जेरेमिया भी प्याला समाप्त कर चुक थे। प्याले को नीचे रखते हुए उन्होंने कहा—

‘म विभिन्न विषयों पर पुस्तकें लिख सकता हूँ। इसा और ईसाई मत के सम्बन्ध में जा विचार मैं अभी आपके आग्र प्रकट किया है उन्हें भी एक पुस्तक के रूप में विस्तार के साथ लिखिबद्ध किया जा सकता है। इसके अनिश्चित

पर क्या आपकी यह धारणा है, बीच ही में उनकी बात काटत हुए मैंने कहा— ‘कि अमेरिका की जनता इस प्रकार के विचारों का स्वागत करेगी?’

“जाहिर है कि मेरे विचारों का वहाँ धार विरोध होगा। फादर ने बाफी से भरा हुआ प्याला उठाते हुए कहा— ‘वहाँ के पूजोपनि और पादरी बौखला उठेंगे। पर इसी कारण इस बात की आवश्यकता है कि मो-सौ विरोधा और अपराधों के बावजूद वहाँ इस तरह के विचारों का निरंतर प्रचार किया जाय। वहाँ की साधारण जनता असलियत जानने के लिये उत्सुक है, इसलिये विघ्ना के भय से कतय से लौच लेना उचित नहीं। इसके अनिश्चित एक बात और ध्यान

योग्य है। मेरे विचारों का विरोध अवश्य होगा, पर इसका २०१  
यह अर्थ नहीं है कि मेरा मुह ही एकदम बंद कर दिया

जायगा। अपनी राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था के औचित्य और  
स्थायित्व के संबंध में अमेरिकी नायक इतने अधिक आश्वस्त हैं कि  
किसी भी विपरीत मत के प्रचार और प्रकाशन से वे अधिक भयभीत  
नहीं होते।”

“यह आपन बहुत बड़ी प्रशंसा की बात अमेरिकियों के लिये बही  
है। क्या आप सचमुच उह इतना उदार मानते हैं ?”

‘मुझे भय है कि आप मरी बात का गलत अर्थ लगा रहे हैं,’ फादर  
न उहा, ‘मेरे कहने का तात्पर्य केवल यह था कि अमेरिका का नायक  
दम इतने बड़े भ्रम में है कि विराधी विचारों का काइ महत्वपूर्ण प्रभाव  
अमरिका की प्रचलित व्यवस्था पर पड सकता है, ऐसा मानने का वह  
तयार नहीं है। यह उसकी उदारता नहीं, भ्रम है। इस भ्रम का पूरा  
लाभ हम उठाना चाहिये।”

‘क्या आपकी यह धारणा नहीं,’ विषय को कुछ बदलते हुए मैंने  
कहा—‘जि मसाल की वर्तमान आर्थिक विपन्नता और राजनीतिक  
अज्ञाति के मूल में अमरीकी पूँजीवादी व्यवस्था ही है, जिसका एक सहस्र  
हस्तपदीय दानव की तरह अपने अत्यधिक विकसित आर्थिक और राज-  
नीतिक चक्रजाल से आज की संपूर्ण विश्व-व्यवस्था का छा लिया है ?”

फादर न कांफी का एक गहरा घूट लिया और दूसरे घूट में उसे  
समाप्त करके प्याल का रस लिया। रमाल में मुह और मूँछें पाछ चुकने  
के बाद उहोत कहा—“आज की विश्व-यापी अज्ञानि के मूल में जो  
प्रमुख कारण हैं उनमें अमरीकी सम्पत्ता भी एक है, इममें मनेह के लिये  
काइ गुजाइग नहीं है। पर उस अज्ञाति का एकमात्र कारण बही है ऐसा  
मानने का मैं तयार नहीं। युग में मानवता मसाल के दूसरे प्राणियों पर  
अपना भौतिक आधिपत्य कायम करने के बाद स्वयं अपनी ही जाति के  
अपक्षायित दुबल वर्गों को इवान के उद्देश्य से अपने मस्तिष्क के जिन  
विशय-बोधा का विकास सुनिश्चित गति में करती चली आ रही थी वे  
अमरिका की अनुकूल मिट्टी का पाकर इनमें अधिक फूल उठे हैं कि अब

उन्हें दवाना असम्भव सा हो गया है। वे अब भी निरंतर अधिकाधिक फूलते चले जा रहे हैं। और अब उनका विकास अपने आप यथावत्, ऐसे विराट् दानवीय रूप से हो रहा है कि लाख चाहने और सिर पटकने पर भी मानवता स्वयं अपने आपकी पीमन-वाली उस भीषण यांत्रिक प्रगति को रोकने में अपने का असमर्थ पा रही है। उसे नियंत्रण में रखना अब उसके बग की बात ही नहीं रह गयी है और उसके असह्य अत्रजाला में उसने अपने को इस बदर उलभा लिया है कि अब वह जितना ही उम उलभन को मुलभान का प्रयत्न करती जाती है उतना ही अधिक अपने को उलभाती चली जा रही है। विडवना यह है कि आज विश्व-व्यापी भ्रान्ति और अयवस्था यथ्य और वपरीत्य दुःख और दारिद्र्य के लिये वह इस प्रकृति विराधी प्रगति को दोषी न ठहराकर दूसरी गक्तिया को—जन-जागरण की विश्वव्यापी प्राकृतिक प्रवर्तियों को—उनके लिये दायी ठहराना चाहती है।

“तब क्या आपके इस मत का अर्थ यह लगाया जाय कि आप उम राष्ट्र-मूह की प्रगति की स्वाभाविक मानते हैं जिसने अपनी गक्ति जनसत्ता से खीची है ?” मैंने प्रश्न किया।

“उस प्रगति को मैं स्वाभाविक अवश्य मानना हूँ पर उनमें जो न्यायियाँ रह गयी हैं उनसे प्रति उदासीन नहीं हूँ। मानवता का यह घोर दुर्भाग्य है कि जो जनगक्तियाँ इस युग में सत्तार के विभिन्न क्षेत्रों में उभरी हैं उन्होंने भी उसी यांत्रिक विकास से प्रेरणा पायी है जो दानवीय शक्तियों के उत्थान के फलस्वरूप विश्व के समस्त मूलान और केन्द्रीय सांस्कृतिक तत्त्वा को अत्यन्त निममता से कुचलने का बीडा उठाये हुए है। इस युग में आवश्यकता से अत्यन्त अधिक यांत्रिक उप्रति के फल स्वरूप, साधारण जनता के निमम निपीडन की जो भौतिक क्रियाएँ चल रही हैं, उनका निराकरण सभी हो सकता है जब आध्यात्मिक गक्तियों के अधिकाधिक विकास द्वारा उनका नियंत्रण किया। पर आज सत्तार के दोनों प्रधान पक्ष आध्यात्मिक गक्तियों के विकास का परिहास उठाने पर तुले हुए हैं, और इस बात की होठ धल रही है कि कौन पक्ष विश्व



विषाती यात्रिक और भौतिक शक्तियों के आर्थिक और कूट- २०३  
नीतिक प्रतिरूपा का कितने समय में कितन अधिक परिमाण

में विकसित कर सकता है। कहना न होगा कि इन उपायों से विश्व शांति और मानवता के व्यापक कल्याण की समस्याएँ हल होने के बजाय नयी नयी जटिलताएँ और नयी-नयी उलझनें पैदा होती चली जायेंगी, जो तभी विरत हागी जब संपूर्ण मानवता पिछले युगों में विकास प्राप्त अपने दाम्भिक यत्रवत्त के दो एक और भीषण सामूहिक विस्फोटों द्वारा, भौतिक दृष्टि से, पूरातया ध्वस्त विध्वस्त हो जाय। तभी उस ध्वस्त की रक्त-सिंचित मिट्टी पर भौतिक और आध्यात्मिक समता के नये बीजा का बपन हो सकेगा।”

“और उन नये बीजा का रूप क्या हो सकता है, क्या आप अपनी इस बात को स्पष्ट करने की कृपा करेंगे ?”

मरा प्रश्न सुनकर फादर जेरेमिया कुर्सी की पीठ पर अपनी पीठ अच्छी तरह जमाकर आराम से बठे गये, और तब बोले— ‘आज पिछली इसाइयत मर चुकी है और उस मृत शक्ति को नये सिरे से उभारने से कोई लाभ न हागा। वह अपना काम बहुत पहले पूरा कर चुकी थी। आर्थिक स्वायत्त, राजनीतिक भाह और साम्राज्यवादी लाभ से मदभक्त और अधी दुनिया के जड प्राणों के भीतर आध्यात्मिक विद्रोह जगाकर और रहस्यवादात्मक शक्ति भचाकर ईसा न एक सिरे से लेकर दूसरे तिर तक जन-जागरण की बाढ उत्पन्न करके एक नयी भगलकारी चेतना की जो लहर जगा दी थी उसके उद्देश्य की पूर्ति सदियों पहले हो चुकी थी। बाद में उस बात की और उस लहर की मुख्य गतिशीलता एकदम रुद्ध हो गयी थी और उसका पानी बेटिकन में एकदम जम जान के कारण गँदला हो गया था और विपले कीटाणुमा से भर गया था। धीरे धीरे वह धारा भी सूखनी चली गयी और आज एकदम सूख चुकी है— केवल बामू ही बामू रोप रह गयी है। आज आवश्यकता इनकी है कि उस मृत शक्ति की बजर मिट्टी को एकदम साफ करके उसके स्थान पर पिछले युगों की वज्ञानिक प्रगति और आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों के व्यापक अंतरराष्ट्रीय संधय से ज्ञान की उपजाऊ मिट्टी पर एक नयी

संस्कृति का उत्पादन किया जाय, जो विश्व को एक नया संदेश देकर, उसे एक नये प्रगतिशील प्रकार की ओर आकर्षित कर सके। 'ईसाई धर्म खतरे में,' 'इस्लाम खतरे में,' इन तरह के नारे लगाने वाले राजनीतिक नेताओं की घुसतता आज किसी के ध्यान नहीं छिपी है। ईसाई धर्म के ये तथाकथित ठीकेदार जिन विश्वविनाशी योजनाओं को प्रोत्साहन दे रहे हैं वे आज सबके ध्यान स्पष्ट हैं। ईसाई धर्म के भेदने की खाल की ओट में छिपे हुए ये भेड़िये ही ईसाई सम्प्रदाय के मूल हस्ता हैं। इसलिये उनमें वास्तविक विश्व-कल्याण के किसी नये आदर्श की आशा नहीं करनी होगी। आज सत्कार के जो-जो महान-चितक राजनीतिक प्रभावों से मुक्त हैं साथ ही सभी आर्थिक और राजनीतिक चक्रों से भली भाँति परिचित हैं उन्हीं के संगठित प्रयत्न से नयी 'ईसाइयत' या 'इंसानियत' जन्म लेगी। सत्कार में आज तक मानवता के सामूहिक कल्याण के जितने भी महान प्रयत्न हुए हैं उन सब का समन्वय इस नये धर्म में होगा। गांधी और मार्क्स के आधुनिक मतवाद भी अपने-अपने सांप्रदायिक और राजनीतिक बोला त्याग देंगे और उनके मूलगत तत्व अपने-अपने इन महामानवीय धर्म में मिलकर एक रूप हो जायेंगे। सभी आदर्शों और मानवोद्धार के उद्देश्य में प्रेरित वादों के परिभाषित और परिशोधित तत्वों का जो सामायनिक मेल उस नये विकसित महाधर्म में होगा उसे किसी विशेष साम्प्रदायिक धर्म के भीतर दबाया नहीं जा सकेगा। उसका नाम महामानव धर्म या इसी ढंग का वृद्ध हागा। उसी के विकसित रूप की प्रतीक्षा आने वाली पीढ़ी से करनी है।

बाहर से किसी के दरवाजा खटखटाने का आद सुनकर मरी तन्मयता भंग हुई। दरवाजे के पीछे के पार मुझे मनिया और मिल्किया खड़ी दिखाई दी। मैं तुरन्त उठकर दरवाजा खोल दिया। एक ठनी हवा का भौका मुझे

बैठा गया। मनिया और सिल्विया दात किटकिटाती हुई २०५

उसी दम भीतर चली आयी। मैं भीतर से दरवाजा बंद कर दिया। फादर न और मैंने उन दाना के अग्नि-सेवन के लिये जगह खाली कर दी। हम दाना पीछे की ओर हटकर बठ गय, और वे दोना अँगोठी के पास जा बठी। सिल्विया दाब-बीच में फादर की आर एक भलक देख लेती थी। उसके मुख पर एक ऐसी चमक, आला म उन्नास की ऐसी दीप्ति आ गयी थी जिसकी आशा नहीं की जा सकती थी। स्पष्ट ही उसे फादर का उस समय मर यहाँ दखने की आशा नहीं थी। फादर के भी गम्भीर दार्शनिक रूप में सरस स्निग्धता आ गयी थी।

“इस हिम-वर्षा में बाहर निकल कर तुम लोग ने निश्चय ही बहुत बड़े साहस का काम किया है।” मैंने उन लोगों का बातचीत में घसीट लाने के उद्देश्य से कहा।

‘मैं तो राजी नहीं थी,’ सिल्विया बोली—“पर इन्होंने बड़ी जिद की।”

मनिया ने कहा—“मुझे बड़ी भूख लग रही थी, और वहाँ कुछ अच्छा नहीं लग रहा था।

“क्या निमंत्रण में थाधा ही पट खान को मिला ?” मैंने परिहास में कहा।

“बात त्रिलकुल सही है।” सिल्विया मुस्कराती हुई बोली—“इन्होंने वहाँ कुछ खाया ही नहीं, केवल कुछ चुगवर रह गयीं।”

‘चुगन की बात सुन कर फादर जेरमिया और मैं दोनों हँस पडे। पर मनिया तनिक भी नहीं हँसी, बल्कि खीझ के स्पष्ट चिह्न उसके मुख पर प्रकट हो रहे थे। बिना कुछ वाले वह भीतर चली गयी। थोड़ी दूर बाद जब लौटी तो वह फपज बढने हुए थी और ऊपर से एक काला गरम ओवरकोट उसन पहन लिया था। एक कोट वह सिल्विया के लिये भी ले आयी थी। सिल्विया न बिना किसी आपत्ति के परम प्रउन्न भाव से उसे पहन लिया। उमने बाद दाना फिर अँगोठी के पास बठ गयी।

“क्यों ? क्या बात हो गयी थी, मनिषा ?” मैंने अपने स्वर को कुछ गम्भीर रूप देकर सात्वना के तौर पर कहा ।

“मुझसे वहाँ कुछ साया नहीं गया । वन्य भजीव सा वातावरण लगा मुझे । लीला बचारी तो बड़ी भली लडकी है पर उसके घर के दूसरे लोग हमारी छूट मान रहे थे, और हमारे आने में तर्जिब भी प्रसन्न नहीं हो रहे थे । हम तीनों को अलग एक कमरे में खाना खिलाया जाने लगा । घर के दूसरे लोग—लीला की माँ, दूसरी बहनें, बच्चे और बड़े भव—हम लोगों के पास फटकने तक नहीं थे । केवल दूर से देख रहे थे, जैसे हम कोई तमाके की चीज हो । बच्चे हमारे पास आना चाहते थे, पर उन्हें बुरी तरह फटकारा जा रहा था । मुझे अगर पहले से यह मालूम होता तो मैं हीर्गज न जाती ” और वह सिन्धिया की ओर शिकायत भरी दृष्टि से देखन लगी ।

सिन्धिया अत्यन्त शांत भाव से बोली—‘ पर इस तरह की छोटी-मोटी बातों को बहुत महत्व देने से कैसे काम चलता । यह तो जानी हुई बात है कि कट्टर हिंदू-परिवार ईसाइयों को छूट मानते हैं । हालांकि भव यह कट्टरता बहुत कम परिवारों में रह गयी है, पर वहाँ वहाँ भव भी शेष है । ज्यो-ज्यो देश में गिद्धा और संस्कृति बढ़ती चली जायगी तदा-तदा यह गृही-सर्ही कट्टरता भी अपने आप नष्ट होती जायगी । उस पर हट्ट हाना बकार है, बल्कि उन लोगों की अज्ञानता पर दया करनी चाहिये

पर बसल घम भिन्न होन के कारण ही मनुष्या का एक वग दूसरे वग को इस वदर हय समझे यह तो उडी विविन्न बात है ।

“इसमें आश्चर्य की कुछ भी बात नहीं है । अत्यन्त शांत भाव से पादर ने कहा—‘ यह मानव-स्वभाव है । स्वयं ईसाई लोग गर ईसाइया का बराबर काफिर समझते रहें हैं । आदिम मानव जब जगती जीवन नितानता था तब उसे छोटे छोटे गुट बाँध कर रहना पड़ता था । जीवन की ऐसी कठिन परिस्थितियों में उसे रहना पड़ता था कि जब कभी जगती जानवरों का गिवार प्राप्त न हुआ तब किसी अपने ही स्वजातीय जीव—घराने मनुष्य—को मारकर उसे अपना पेट भरना पड़ता था ।

यह इस प्रकार होना था कि किसी एक गुट के मनुष्य मिल कर किसी दूसरे गुट के मनुष्य की टोह में रहते थे और उसे पकड़कर मारकर उत्सव मनाकर उसे खा जाते थे। केवल अपने गुट के मनुष्य को नहीं मारते थे। अपने अपने गुट को सभी भिन्न गुटों से उन्नत और पवित्र मानते थे, और अपने से दूसरे किसी भी गुट के विरुद्ध उनके मन में सहज ही घोर घृणात्मक और हिंसक भावना बतमान रहती थी। पारस्परिक घृणा और हिंसा की जो यह भावना उम्र समय छोटे छोटे गुटों के बीच बतमान थी वही सम्य युग में बड़े-बड़े गुटों के बीच पायी जान लगी क्योंकि सम्मता के साथ-साथ छोटी छोटी गुटवदियाँ बड़ी गुटवदियाँ में परिणत हो गयीं। य गुट कभी तो किसी बड़े धार्मिक धेरे के भीतर बँधे हुए पाये जाते रहें हैं और कभी बरा अथवा जाति के धेरे के भीतर। आय जाति का एक बहुत बड़ा परिवार या गुट था। पर उस बड़े परिवार के बाहर वाले किसी भी गुट के प्रति उनकी घृणा और हिंसा का ठिकाना नहीं था। इसी हिंदुस्तान में जब आय लोग आये तब उन्होंने यहाँ भी अपने से भिन्न सम्य जाति को ध्वस्त करने का बीड़ा उठा लिया और उन्हें दास समझने लगे। आज तक काली और गोरी जानियाँ के बीच जो पारम्परिक विद्वेष भावना ससार में पायी जाती है उसका भी मूल कारण वही आदिम प्रवृत्ति है। यहूदियाँ का गुट यद्यपि बहुत छोटा था, तथापि वे मनार नर की अथ सभी जानियाँ का अत्यन्त घणित, पतित और हय समझने रहें हैं। केवल इतना ही नहीं, एक बड़े गुट के भीतर जो बहुत-से छोटे गुट होते हैं उनमें भी आपस में एक-दूसरे को छोटा समझने की प्रवृत्ति पायी जाती है। इसी दग में अभी तक हिंदुओं के बीच ब्राह्मण, क्षत्रिय, वश्य, सूद्र इन चारों के भीतर एक-दूसरे के प्रति विद्वेष भावना पायी जाती है। ब्राह्मणों में भी कई उप-जानियाँ हैं जो एक-दूसरे का अपने से हीन समझती रहती हैं। केवल भारत में ही नहीं, पश्चिमी दग में भी लाग, इस वैज्ञानिक सम्मता के युग में भी, अभी तक कुछ विभिन्न सामाजिक स्तरों में रहकर सामाजिक असमानता का जीवन बिताते हैं। यही प्रवृत्ति ससार के विभिन्न राजनीतिक और आर्थिक गुटों के बीच पायी जाती है। पूजोबान वग आर

पंच चलते रहते हैं वे किसी से छिपे नहीं हैं। साम्राज्य

वाणियों और पराधीन जानिया के बीच अलग सपथ चलता रहता है।  
माकमवादियों और पश्चिमी यूरोपियन और अमेरिकन राष्ट्रों के बीच जो  
सनातनी बार बार चलती रहती है उसका भी यही कारण है। इसी  
देश में गांधीवादियों, कम्युनिस्टों और समाजवादियों के बीच एक-दूसरे  
के प्रति विरोधी भावना बराबर पायी जाती रही है। और तो और,  
सांस्कृतिक क्षेत्र में भी यही गुटबंदी चला करती है। एक विशेष कोटि  
के साहित्य या कला के उपासक दूसरी कोटि के साहित्य और कला के  
अनुयायियों की निंदा किया करते हैं। एक विशेष दार्शनिक दृष्टिकोण  
रखने वाले किसी दूसरे दार्शनिक मतवाद के मानने वालों के प्रति अत्यंत  
असह्युशील रहते हैं। इन सबके मूल में बड़ी गिरावट भावना काम करती  
है जो आदिम मानव का अपने अनिश्चिन जीवन की अनियमित परिस्थि-  
तियों के कारण पालनी पड़ती थी।

आज फादर स्पिट ही लंबे-लंबे मापण पने की मनास्थिति में थे।  
हम सब लाग एकांत मन से उनकी बात सुन रहे थे। मिन्विया तो जैसे  
अपने भीतर का मारी शक्ति बहारकर अपने कानों में केन्द्रित किय हुए  
थी। फादर जेरमिया की धारावाहिकता जब रकी तब मनिया ने प्रश्न  
किया— तब क्या आपका यह खयाल है कि गुटबंदी की यह अवस्था  
हीन और सही भावना मानव-स्वभाव में सदा तिसी-न किसी रूप में  
बतमान रही ?

नहीं मैं ऐसा कदापि नहीं समझता। पूरी सम्भारता के साथ  
फादर ने कहा— इस भावना में आज गारे ममार को एक छोर से लेकर  
दूसरे छोर तक किम बदर अज्ञात और अच्यवस्थित बना रखा है उसका  
भार-केंद्र को ही अपने मूल स्थान से च्युत करके समस्त आदिम राज-  
नीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्था को अस्त-व्यस्त और डबा  
डोल कर दिया है यह किसी से छिपा नहीं है। दो वृत्त—पूर्वों और  
पश्चिमी—गुटों की पारम्परिक सनातनी ही इस विचित्रवापी अस्त-व्यस्तता  
के मूल में है। इन दो वृत्त गुटों के भीतर कई छोटे-मोटे गुट और हैं जो

आपन म एक-दूसरे से जभन मे अपनी सारी शक्तिया का  
 अपव्यय कर रह हैं । पर इही सब कारणा की जो प्रति  
 क्रिया आज के मानव की अनदचेतना म हो रही है वह एन-न एक दिन  
 निश्चय ही उसके आपस के तुच्छ व्यवधाना और अवरोधा का हटाकर  
 ही रहगी । मानव को आज महाविद्व के बीच म अपन परिवार की  
 लघुता का बोध हान लगा ह । उसका अतमन यह महसूस करन लाा है  
 कि समस्त पृथ्वी म मानवता की केवल एक ही इकाई गेप रह सकती  
 है । गेप सब इकाइया जन्म तुच्छ अहम् से निकले हुए निम्मार बुलबुले  
 है । आज का मानव पृथ्वा के धेनन विवाम के समसे अत्रिज महत्वपूर्ण  
 मोल के पत्थर पर पहुँचन ना रहा है, जहा न उसके पिछन युगा से नम  
 हुए अघ-भस्वार प्रचंड अत विस्फाटा क फलस्वरूप ध्वन्त हाने का  
 हैं

फादर जेरेमिया की आँखें किसी आतद्रष्टा ऋषि की अन्तर्भेदिनी  
 मनाकिरणा से जैसे प्रज्वलित हो रही था । मनिया उनकी गम्भीर बारी  
 का महत्व किस हद तक समझ पायी थी, मैं कह नहीं सकता पर विस्मय-  
 भरी श्रद्धा उसकी आँखा म स्पष्ट व्यक्त हो रही थी । भिन्विया तो उस  
 समाधि मग्न हा गयी थी । वह आत्मविस्मयना हाकर अधमुनी आँखों म  
 फादर की ओर देख रही थी ।

मनिया ने घटी का ऋटन दबाकर प्यार्नासिंह का बुलाया और उमे  
 टोस्ट, ब्राडू चाप और कॉफी तयार करन का कहा ।

३३

कमर म फिर एन बार स्नान शानि छा गया थी ।  
 दरबाज पर लग हुए गीगा स बाहर की ओर दखन  
 पर हिमवणा की अनन्य पुलकशिया की अत्रित  
 बोझार दिवायी दे रही थी । मैंने सब लोगा की आना लेकर फिर एक

बार दरवाजा खोला । तीखी कितु मीठी ठडी हवा शरीर  
मे और प्राणो मे पुलक की सी मिहरन पदा कर रही थी ।

ठड के कारण सिसकारी भरता हुआ भी मैं बरामदे से बाहर का दृश्य देखने लगा । प्राय ६ इंच बरफ जम चुकी थी । सभी दिशाएँ बादल और कुहरे से इस तरह ढक गयी थी जैसे एक अत्यंत सीमित खड के सिवा विश्व का और कोई भाग कही शेष नहीं था । प्रकृति जैसे अपने अहम की कुहेलिका से स्वयं अपने को चारो ओर से ढककर उस सकीणता में ही परिपूर्ण आत्म-तुष्टि पाकर शांत थी । कुहरे के बावजूद एक विचित्र प्रकाश भी उस अहम से उद्भासित हो रहा था ।

मेरे बाहर निकलने पर फादर जेरमिया, सिल्विया और मनिया तीना बाहर निकल आय । मनिया ता सिसकारियाँ भरन के साथ ही साथ बच्चा की तरह आनंद की किलकारियाँ भी मारन लगी थी, सहसा वह बरामदे से बाहर, खुले मदान में जमीन पर बिछी हुई बरफ के ऊपर कूद पडी । ऊपर से हिमकणों की जा पुष्पवृषा उन पर हो रही थी वह उसके काले काट पर जमकर उस एक विचित्र अलकारिता प्रदान कर रही थी । उनकी देखादेखी सिल्विया भी किलकनी हुई बाहर कूद गयी । मनिया ने नीचे से थोडी सी बरफ उठाकर सिल्विया पर फेंकी । सिल्विया ने भी पलटे में ऐसा ही किया । दोनों की किलकारियाँ में सारा वातावरण आनंद स्फुटित पटासो की आवाज में गूँज उठा । फादर जेरमिया और मैं बरामदे में ही खडे थे और प्रसन्न भाव में तमांगा देख रहे थे । केवल एक बात की चिंता मुझे हो रही थी—कहा मनिया को ठड न पकड ले और वह बीमार न पड जाय ।

फादर जेरमिया भी रहे न सके और यात्रा दर बाद वह भी कूद पडे । ऊपर आवाज की ओर मुह करते हुए वह बोले—'वाह ! बहुत सुन्दर ! चले आइय मि० रजन आप भी ! ऐसा सुन्दर स्वास्थ्यकर और आनंदमय वातावरण सदा नहीं मिला करता । प्र० ।

पर मुझे तनिक भी माहस नहा हाना था । जीवन में पहली बार मैं हिमपात का दृश्य देख रहा था । न जान उसका क्या क्या प्रभाव मरे



शरीर पर पड़े इन आशका से मैं यथाशक्ति सावधान रहकर २११  
 चलना चाहता था।

मैंने कहा—'मुझे क्षमा कीजिये, फादर, मैं यही से इस सौंदर्य का पूरा पूरा उपभोग कर रहा हूँ।'

फादर निपट बच्चा की तरह अपनी जीभ बाहर निकाल कर ऊपर की मुह किये हुए थे, और हिम के जो कण उनकी जीभ पर बठ जाते थे उह चटखार भरे गद के साथ निगल जाते थे।

सहसा पीछे से मनिया की आवाज आयी—“फादर, फादर!”

फादर लौटकर देखना चाहते थे। पर तब तक सिल्विया शरारत कर चुकी थी। फादर ने “आह!” कहकर अपना सारा मुह और शरीर सिक्कोट लिया। सिल्विया और मनिया खिलखिलाकर हँस पड़ी। बात यह हुई थी कि सिल्विया ने चुपके से पाछे से थोड़ी सी बरफ फादर की गदन के नीचे कोट के भीतर डाल दी थी। वह बरफ जब फादर की रीढ़ से हाकर नीचे सुरसुराती हुई गयी होगी तब जा पुलक भरी कटीली मिहरन उनके सार शरीर में दौड़ी हागी वह निश्चय ही बड़ी कौतुकप्रद रही होगी।

कुछ देर तक फादर बच्चा की तरह मुह बनाय हुए कमर झुकाय खड़े रहे उसके बाद उह भी लडकपन सूझा और पलट में उहोने भी थोड़ी सी धुनी हुई रुई की तरह कोमल बरफ जमीन पर से उठायी और सिल्विया की आर दौड़े। सिल्विया किलकारियाँ भरती हुई वहाँ से भागी। फादर भी उसके पीछे-पीछे पीडन लग। अत म या तो सिल्विया जान-बूझकर स्वयं पकड में आ गयी या फादर ने ही उससे अधिक फुर्ती दिग्वाकर उसे पकड लिया और पकडकर उहोने छटपटाती हुई और रेल के इजन की सीटी की तरह कूकता हुई सिल्विया की गदन के नीचे, कोट—और भभवत फादर के भी—भीतर वह बरफ डाल ही दी। सिल्विया नभवन सीखी सिहरन के कारण, दुगनी तीव्रता से कूकन लगी। मनिया यह दृश्य दल देखकर आनन्द से किलकता हुई तानियाँ पीडन लगी। मुझे भा यह हास परिहास अत्यन्त सुखद प्रतीत हा रहा था।

जब बापा बौनुक हा चुका तब सब लाग भातर बरामद म खत

आये । अपना अपना बोट उतारकर रखने उस भाड़ा । मेरे साइकिल की सीमा न रही जब मैंने देखा कि बरफ के भाँसे जान के बाद बोट में किसी प्रकार की नमी का गैप न रहा ।

उसके बाद भीतर अँगोठी के पास बँठकर सब लोग मिसकारियाँ भरते हुए अपने ठंड से अकड़े हुए हाथ गरम करने लग । कुछ दर बाद ध्यानसिंह टास्ट चाप, ग्रामफोन आदि कई बार्जे तैयार करके ले आया । सबके आग लपटे छपटे टेबिल लगाकर अलग अलग प्लेटों में सजाकर उहाँ रख दिया गया । छोटी छोटी गींगियो में पिसा हुआ नमक और पिमी हुई काली मिर्च भी लाकर उनमें रख दी । उनके बाद ही काँची आयी ।

मनिया को बारातव में बड़ी भूख लगी हुई थी और वह बड़ी फुर्ती से टोस्ट, चाप आदि पर हाथ साफ करती जाती थी । सिल्विया सबके प्याला पर काफी ढाल चुकने के बाद बड़ी ही गालीनता के साथ धीरे धीरे टास्ट बुतारन लगी ।

फादर ने सिल्विया से कहा— 'मेरी राय में तुम्हें केवल हवा खाकर रह जाना चाहिये । तुम्हारी जसी, ईंधन की तरह सूक्ष्म, हवाइ प्राणियों का स्थूल पदार्थों का भोजन कुछ सोभा नहीं देता ।'

मनिया का मुँह दाँत से पिसे हुए खाद्य से भरा होने पर भी वह बीच ही में बरबस खिनखिला उठी ।

सिल्विया पहले तो कुछ सभुचाया, पर फिर उसमें चुप न रहा गया । बोली— 'मेरी समझ में नहीं आता कि आप जैसे ईश्वर के प्रेमाभूत-प्राण से वृक्ष धमन लोग वधो सांसारिक मनुष्यों की तरह खाने पीने की चीजों में दिलचस्पी लेते हैं ।'

'जल्दी ही समझ में आ जायगा ।' अपनी बात को सघन रहस्यमयता के आवरण में लपेट कर फादर ने कहा ।

मनिया बोली— 'आप दाना आपस में न जान किस भेदभरी भाषा में बात करत हैं ।'

'आप लोगो के आगे भी जल्दी ही सारा भेद चुन जायगा, इसलिये आप भी अधीर न हो !

“एमा कह कर आपने अपनी बात पर भेद की दुहरी चादर डाल दी है।” और वह दुष्टतापूर्वक मुस्कराती हुई सिल्विया की ओर देखन लगी।

सिल्विया क मुख की लालिमा पर और अधिक गहरा लाल रग गया था। आज फादर के बात और व्यवहार में उसे जैसे कोई नया लग रहा था। यह भरा अनुमान मात्र था, क्योंकि उनके मन की बात जानने का कोई साधन मेरे पास नहीं था।

फादर ने ज्यों ही कॉफी का एक घूट गले के नीचे उतारा तब उनका हास्यात्मक व्यंग और अधिक विल उठा। सिल्विया की देखते हुए बहुत धीरे से बोले—“तुम ठीक ही मोना था कि तुम भी ठीक हाथा से बिना चीनी के भी काफी अपन आप भीठी हो जाय पर अफसोस कि आज के नीरस युग की काफी भी बटी बेहया उठी है।”

“क्या सबकुछ आप की काफी में चीनी नहीं पड़ी है? सिल्विया सकोच का बरबस झाडती हुई भी बोली और उमन दो चम्पक उनके ध्याले में डाल दी। ध्याले में चम्पक खलाती हुई सिल्विया की मुह करक बोली—“फादरी लाग बहुत अधिक भीठा पसंद करते पता नहीं इसका क्या कारण है। यदि फादर इस रहस्य पर प्रकाश डालने की कृपा करें तो अच्छा है। और फिर कभीली मुझे भरी निरछा नजर में फादर की आर दपन लगी। सिल्विया के भी ठंडे मस्तिष्क और ठंडे हृदय वाली लडकी में इस कदर चचलना पा सकता है, इसकी कल्पना मैंने पहले नहीं की थी।

फादर ने कहा—‘यह कोई अस्वाभाविक बात नहीं है। भीठा एक मात्र एमा रस है जो जीवन के समस्त कष्ट और दाहक रस तीव्र अनुभूति का तत्काल मिटान में समर्थ है। कविया को जो सबसे अधिक प्रिय है वह ‘मधुर ही है। निष्कपट बालकों का स प्रिय मिठाई ही लगती है। उसी प्रकार कई भी गानिवादी दाहनि धमन भीठे के प्रति स्रजन अधिक आकर्षित होगा, यह स्वाभाविक ही

“पर बहुत मे गानिप्रेमिया को नमकीन और चपटा भोजन

“ऐसे लोग बाहर से भले ही शांतिकाभी लगते हा, पर यदि मनो वैज्ञानिक ‘एक्स’ किरणों से उनके भीतर देखा जाय तो माछूम हागा कि उनके भीतर घोर अशानि की ज्वालाएँ धधक रही हैं । ऐसे लोग भीतर से रक्तमय श्रान्ति के उपासक हाते हैं, उसी की कल्पना म अपनी भीतरी अशान्तिप्रियता को हुवाना चाहत हैं, यद्यपि वे स्वय कभी ऐसी श्रान्ति मे भाग लेने का साहस नही रखते । मनुष्य का भोजन निर्भ्रान्त रूप म वता देता है कि उसकी भीतरी प्रवृत्तियाँ कसी हागी ”

“यदि ऐसी ही बात है, ’ सिल्विया न कहा—“तो मिष्ठात्र प्रेमी व्यक्तिया के बारे मे यह कल्पना की जा सकती है कि वे जीवन की मया धना से भागकर अपने मन की म्निग्ध मधुर कल्पनाओं क शान्तिलाक म डूवे रहना चाहते हैं । ऐसे लोग न तो किसी कठोर त्याग क्त को ही दीघ काल तक निभा पाते हैं न जीवन के एमे श्धनों क नी स्वीकार करने का साहस रखते हैं जो उह कठोर मघपों म घसीटें

इम बार फादर ने बडे गौर स सिल्विया की ओर देखा । स्पष्ट ही उसकी बात म उहें एक विशप अथ की ध्वनि टिपी हुई सी गी । कुछ सोचकर उहोने कहा—“मधुर रम का जो सच्चा प्रेमी हागा उसकी शान्ति कामना कभी किसी कच्ची नीव पर आधारित नही हो मन्ती । उमका शान्तिवाद कभी टुई मुइ नही हो सकता, जो मयाथ जीवन के तनिक से स्पग से मुरझा जाय । भीतर और बाहर क लाख आघातों और प्रत्याघातों के बीच म भी उमका विश्वास अडिग रहेगा । एसा व्यक्ति मयाथ की गदगी को कभी अपनाता नही, यह ठीक है, पर मयाथ की कठोरता से वह कभी कतराता भी नही ।’

‘पादरी जमजात तार्किक होते हैं, इसलिये उनमे तर म जीत पाना सम्भव नही है ।’ कहकर सिल्विया एक बार कटीली दृष्टि से फादर की ओर देखकर पलकों के भीतर मुसकरान लगी ।

फादर जेरैमिया यह मन्तव्य सुनकर अट्टहास कर उठे ।

जब सब लोग कॉफी पी चुके तब भँधेरा हो चला था । कमरे की

बत्ती जला दी गयी थी। फादर मुझे धयवाद देते हुए उठ सट्टे हुए। बोले—'आज का दिन आपके महा बटून मुख मे कटा। आपकी अंगीठी की भीठी गरमी को छाडकर जान की इच्छा नहीं होती, पर अंधेरा हा चला है और समय बहुत हा गया है, इस लिये अब चलता हूँ।' कहकर उहनि हिंदू ढग स मेरी और मनिया की ओर दाना हाथ जाटे।

मनिया न कहा—'अगर आप जा ही रह हैं ता कृपया मिस रालिसन को भी उनके घर तक पहुँचा दें। वफ के कारण रास्ते मे बडी फिसलन है।'

'मुझे इसम क्या आपनि हो सकती है।' मित्विया की ओर अथ भरी दष्टि स देखते और मद मद मुम्काते हुए फादर ने कहा।

मनिया न मित्विया को मवाधित करत हुए कहा—'मिम रालिन्मन शाम हा मयी है अंधेरा हान लगा है। इस वर्षानी मौसम मे तुम्हारा अकेले जाना ठीक नही है। इनतिय मेरी राय म तुम फादर के साथ चनी जाओ।'

मित्विया धीरे न खडी हुई। आज का एक बटून ही भीना आवरण उसके मुख पर छाया हुआ था। आन फादर की बातें सुन चुकन के बाद मैं चून् उमका छाती-ने-छाती हरकत पर गौर कर रहा था, इमनिय उसके मुख पर चटनवाला हनना से हलवा रग भी मेरी दष्टि स बचन नही पाता था।

मैं साचन लगा कि क्या मनिया भी इन दाना की भातरी भावना से परिचित है? जा उसन यह प्रस्ताव रखा कि फादर जेरमिया मित्विया को उसके घर तक पहुँचा दें वह क्या दुष्टतावन रवा गया था या मित्विया की वाग्मविष् कठिनाई का अनुभव करत हुए?

फादर और मित्विया के साथ जब हम लोग बरामद तक गय तब बरफ उमी रफ्तार मे, अत्रिराम गति से गिरती चला जा रहा थी।

"अच्छा नमस्त" फादर न हिंदी मे कहा। मनिया और मैं सुन कर खूब जार से हँस पडे। मित्विया हम लाग की आन देखती हुई वाली—"सलाम" फिर एक बार सब लाग अकारण ही टहाका मार-कर हँस पडे। अकारण हँसी की इस लहर का अय स्पष्ट ही यह था कि सबका मनोवातावरण आज एक अज्ञात रगीनी से भर गया था।

फादर और सिल्विया के चले जाने के बाद जब मैं मनिषा के साथ कमरे के भीतर गया और विवाह बंद करके फिर अंगीठी के पास बठ गया तब मनिषा

सीधे पलंग पर जाकर मेरी आर मुह करके दाइ करवट लेट गयी।

“आज फादर इतने खुश क्यों थे, जानते हो ?” मनिषा ने कहा।

“अनुमान लगा सकता हूँ।”

“क्या अनुमान तुमने लगाया, बताओ ?”

“पहले तुम बताओ कि खुश क्या जानती हो ? तुम्हारी समझ में इसका कारण क्या हो सकता है ?”

‘बात यह है कि फादर ईसा के सच्चे भक्त हैं। इमलिये जब कभी उन्हें अंधकार के बीच में प्रकाश दिखायी देता है तब उनकी आत्मा में इस भावना से उत्साह छा जाता है कि वह प्रकाश जीवन के अंधकार के बीच में ईसा की ही पुण्य आत्मा की अमर ज्योति है। आज बरफ पडने से चारा और के धन अंधेर के बीच में जा सपेयी बिना किसी बाहरी प्रकाश के अपने आप चमक रही है वह निश्चय ही उनके प्राणों का पुदगुदा रहा होगी। उनकी खुशी का कारण मैं तो यही समझती हूँ।’

मैंने मृदु मद मुस्करात हुए उसकी ओर देखा। उसकी स्वच्छ तरल आंखा में अंग का लोभ भी नहीं था। वह सरल विद्वान से टिमटिमा रही थी।

मैंने कहा— ‘तुम्हारा अनुमान ठीक हो सकता है। मरा भी यह अनुमान है कि आज की हिमबर्षा उनकी प्रसन्नता का एक महत्वपूर्ण कारण है। पर मूल कारण केवल यही है, ऐसा मैं नहीं मानता

‘वह दूसरा कारण तुम्हारी राय में क्या हो सकता है ?’

मैंने जेब में सिगरेट का पकट निकाला और उमम से एक सिगरेट निकालकर जनाकर ध्यागम से पीने लगा। उसके बाद बोला— ‘क्या तुमने इधर फादर और सिल्विया की धनिष्ठता पर ध्यान नहीं दिया है ?’

मनिषा सहसा उठ बठी और पलंग के नीचे पाँव टाटकाकर बोली— ‘तो इसका क्या हुआ ? इसमें कौन सा नया रहस्य छिपा हुआ है ? सिल्विया का भुवाव धम की आर किस हद तक है यह तुम भी जानते

हो और मैं भी। एक धर्मप्राण व्यक्ति की घनिष्ठता दूसरे धर्मप्राण व्यक्ति से होगी, इसमें आश्चर्य की क्या बात है।" २१७

"यह ठीक है। पर दो धर्मप्राण व्यक्ति आपस में एक दूसरे के प्रति मीठे ध्यंग वस, एक दूसरे के साथ बर्चों की सी शरारत करें, बीच-बीच में एक-दूसरे को देखकर लजाने लगें, यह बात क्या तुम्हें कुछ विशेष अर्थ भरी नहीं मालूम होती?"

"तुमने इस बात का क्या अर्थ लगाया है, जरा सुनू।"

"मुझे तो स्पष्ट ही यह लगता है कि दोनों एक दूसरे का चाहते हैं। हा सकता है अभी यह चाहना केवल आध्यात्मिक क्षेत्र तक ही सीमित हो, पर यह धीरे-धीरे दो प्राणियों का कहा तक खींच ले जा सकता है इसकी कोई सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती?"

मनिया अपनी विस्मित आवाज को मरी और गडाकर जैसे अपने ही भीतर की किसी गभीर समस्या पर विचार करने लगी।

उमर वाद वाली— क्या यह संभव है?"

'संसार में अनभव कुछ नहीं है, इस स्वयं सिद्ध सूत्र का गाँठ बांध कर तुम चलो तो जीवन में कभी ठगी नहीं जाओगी।'

पर फादर—और सिन्विया! खासकर फादर तो अपने धर्म-धर्म और चिंतन और अध्ययन से ही कभी छुट्टी नहीं पाते। उनके दिमाग में भी कभी सांसारिक प्रेम का कीड़ा घुस सकता है, यह बतलाना मैं नहीं कर सकती। पर—पर तुम्हारे सुझाव से मुझे भी कुछ ऐसा लगने लग है कि कहा कुछ बात अवश्य है। पर ठीक कि रूप में, यह जानना कठिन है।"

मर मन में एक बार यह तरंग उठी कि फादर ने आज मुझे अपना धार्मिक विचारों के संबंध में और सिन्विया के विषय में जो बातें कहीं थीं या वह मनिया के आगे प्रकट कर दें। पर तत्काल ही मैं यह सोच कर रह गया कि जब फादर जेरेमिया ने स्वयं सिन्विया के आगे कभी बातें स्पष्ट रूप में प्रकट नहीं की हैं तो मनिया के आगे मारा रहस्य यथास्तक सातन में उनके प्रति घोर विस्वासघात होगा। इसलिये मैं उन चर्चा का आग्रह बताना उचित नहीं समझा। विषय का बदलने के विचार के

मैंने कहा—“मसूरी म तो अब बड़ी बड़ी सर्दी पड़ने लगी है, और यह भी निश्चित है कि दिन पर दिन सर्दी बढती

ही चली जायेगी। तुम्हारा तो सारा जीवन पहाड मे घीता है इसलिये तुम बड़ी से बड़ी सर्दी सहन करने की आदी हो, पर मैं पहली बार जाडो म पहाड की सर्दी का रहा हूँ। इसम सदेह नही कि बरफ गिरने का दश्य मुझे भी बहुत अच्छा लग रहा है, पर जब जाडो भर सुबह गाम इसी तरह की सर्दी होगी तब तो बड़ी कठिनाई होगी।’

मनिया खिलखिला पडी। बोनी—“तुम क्या यह समझे बडे हो कि प्रतिदिन सुबह गाम इसी तरह बरफ गिरती ही रहेंगी? एसा उमी त्तिन सम्भव होगा जिस दिन प्रलय होने का आयेगा। अभी दा ही तान त्तिन वाद मौसम साफ हो जायगा और धूप निकल आयेगी। पर हाँ यह ठीक है कि अब सर्दी बढती चली जायगी। और तुम्हारे लिये ता निश्चय ही यह बात बडे कष्ट की होगी।’

“एक काम आर किया जाय ता कैसा रह ?

“क्या काम ?”

मैं सोच रहा हू कि सर्दी के त्तिन हम लाग कहीं नीचे जाकर काट आवें।’

‘कहा जान का विचार है ?’

“बबई बलबत्ता या और किसी बडे शहर म जाने की बात माच रहा हू। जाना ता मुझे घर भी था। मनजर साहब की कई चिट्ठियाँ ना चुनी हैं मैंन अभी एक का भी उत्तर नहा दिया है

‘कौन मनजर साहब ?’

“जो मरी जमीदारी का प्रबध करते हैं।

‘आह ! तब तो तुम्हे जरूर जाना चाहिये। घरवाला म रिछुडे तुम्हें बहुत दिन हो गय ” उसने बहुत धीरे से, बिना किसी उत्साह क जिज्ञासा मरी गभीर दृष्टि से मरी आर देखते हुए कहा।

‘पर अभी घर जाना मेर लिये न तो उचित ही होगा और न मेरे मन मे ही कोई उत्सुकता है।’

‘क्यों, उचित क्या न होगा ?” अत्यन्त उत्कण्ठित भाव से मनिया



वाली । न चाहने पर भी, न जाने मेरे मुह से इस तरह की  
 बात क्या निकल आयी थी, मैं कह नहीं सकता । लीपा

२१६

पोती करने के उद्देश्य में मैंने कहा—“कोई खास कारण नहीं है ”

“पर कुछ कारण तो अवश्य ही है । तुमने निश्चय ही इस सबध में  
 कुछ सोचा होगा कि वहाँ जाना क्यों उचित है और क्या अनुचित । तभी  
 तो तुमने इस तरह की बात कही है । वह कारण क्या है मैं तनिक  
 जानना चाहती हूँ ।’

मैंने देखा कि अपनी यथ की बात से मैंने अपने को बुरा फँसा  
 लिया है । उसका निराकरण कैसे हो, इस सम्बध में मेरी बुद्धि ठीक से  
 जग नहीं रही थी ।

कारण और कुछ नहीं है, असल में मुझे देहात कभी पसंद नहीं  
 रहा । मैं देहाती बातावरण से इस कदर ऊब गया हूँ कि जहाँ तक  
 सम्भव हो मुझे उममें छुटकारा पाना चाहता हूँ । देहाती जनता किस हद  
 तक मूर्ख होती है, इसकी कल्पना तुम नहीं कर सकोगी । उसकी मूर्खता  
 से मैं उकता उठा हूँ इसी कारण टले रहना चाहता हूँ ।’

“साफ़ शब्दों में यह क्यों नहीं कहते,” अपने स्वर में कुछ तीखापन  
 भरती हुई मनिया बोली—“कि तुम्हारे घर और गाववाले मेरे साथ  
 तुम्हारे विवाह की बात से बहुत भडक उठेंगे, यह तुम जानते हो और  
 इसीलिए उनके पास जाने से डरते हो । गाँववाले जब यह जान लेंगे कि  
 तुमने एक इसाई लड़की से विवाह किया है और तुम स्वयं भी इसाई बन  
 गये हो तो तुम्हारा कबल बहिष्कार ही नहीं करेगा, बल्कि बटु व्यगा की  
 बोधवार से तुम्हारा जीना मुश्किल कर देंगे । यह मैं जानती हूँ । मुझे दुःख  
 है कि मेरे कारण तुमने अपने का इतनी बड़ी परेशानी में डाल दिया है ”

और वह पल्ले पर उठकर मेरे पास चली आयी । फल पर घुटों  
 के बल बैठकर उसने अपने दोनों हाथ मेरे कंधों पर डाल दिये । अपनी  
 दाँवप्यारी-प्यारी छोटी आँखों को मेरी आँखों के एकदम निकट से जाकर  
 वह विस्मय विमुग्ध और साथ ही स्नेह विह्वल दृष्टि से मुझे देखती हुई  
 जैसे मेरी आँखों के जरिये मेरे अन्तस्सल की चाह नापन लगी । धीरे-  
 धीरे उसकी आँखें जैसे कृपणता से झलझला आयी । मेरे सिर पर अपना

सिर रखते हुए वह बायें हाथ से धीरे—बहुत धीरे—मेरी पीठ थपथपाने लगी, जैसे किसी बच्चे को सुलाना चाहती हो। उसी स्थिति में बोली—“तुमने मेरे लिये कितना बड़ा त्याग किया है यह बात मैं मरते दम तक नहीं भूलूंगी—गायद मरने के बाद भी नहीं। मैं तुम्हें बात-बात में अपने मूल्यतापूर्ण हठ से परगान करती रही हूँ, पर तुमने बिना तनिक भी विरोध के मेरा प्रत्येक हठ पूरा किया। मेरी बककूफियों को तुमने अपने स्नेह और करुणा से बार-बार दुलराया है। न कभी तुमने मुझे मेरे किसी दुराग्रह के लिये डाँटा न छापी से छोटी भी माँग की श्रवणा की। तुम महान आत्मा हो। मैं तुम्हारे योग्य कल्पि नहीं हूँ। मुझे क्षमा करना ”

और टपाटप गरम आँसुओं की बूँदा में उसने मेरा कंधा भिगो दिया। मेरी समझ में नहीं आता था कि मैं उसे किन आँसुओं में सात्वना दूँ। उसकी भावुकता का बाँध बड़े घुरे समय में टूटा था और मेरी ही मूल्यता के कारण।

मैंने भी पलटते में उसकी पीठ को थपथपाना आरंभ कर दिया। अपने स्वर में यथासाध्य कोमलता भरकर बोली—मनिया गान्त हो जाओ इस तरह का लडकपन क्यों करती हो! तुम ऐसा क्या सोचती हो कि मैंने तुम्हारे साथ कोई दया की है? ऐसा क्या नहीं सोचती कि मैंने जो कुछ भी किया वह केवल इसलिये कि मैं तुम्हारी दया पान का अधिकारी बन सकूँ? तुम स्वयं नहीं जानती हो कि तुम्हारी दया का क्या मूल्य है। जो व्यक्ति आत्मा की श्रतल गहराई में उथली हुई उस दया की मागलिक छाया के नीचे एक बार भी विश्राम कर चुका है वही जान सकता है कि उनका कितना बड़ा महत्व है। तुम्हारे ऊपर मेरा तनिक भी अहसान नहीं है। उलटे तुम्हारी भरपूर दया के स्नेह-संभार से मैं दब गया हूँ। मेरे जिस 'त्याग' की बात तुम कहती हो उसके फटे आवरण के भीतर मेरा वनियान साफ भ्रमक उगता—यदि तुम गौर से देखो तो। उग चुच्छ 'त्याग' के सस्ते दामा पर मैंने कसा अमूल्य रत्न मोतलिया है यह मैं ही जानता हूँ।

मनिया ने मेरे कौट पर अपनी आँखें रगड़कर उन्हें पाछा और

काफी दूर तक उमी अक्सर मे घठी रही । उस मौन घठी मे आत्मा के अन्दर म उठनवाली क्या अतीन्द्रिय अनुभूति मेरे भीतर स्पष्ट हो रही थी और क्या भाव तरंगों उसके रहस्यमय मानस म लहरा रही थी, इसका अनुमान लगाना संभव नहीं है । जब बाहर के कमर म ध्यानसिंह न खाना तब मनिया विजली के वेग से हड़बड़ाकर उठ बठी ।

२२१

“खाना क्या बनगा, हुजूर ?” ध्यान सिंह ने पूछा ।

मैन मनिया की आर देखा । उसने पलटे मे मुझसे पूछा—“तुम क्या खाओगे ?”

मैन कहा— मैं ता इस समय भी टास्ट और कॉफी से काम चला लूंगा ।’

“तब ठीक है । मरे लिय भी कुछ टोस्ट और चाय तयार कर लो । अपन लिय तुम जो भी कुछ चाहो बना लेना ।”

“यानसिंह के चल जाने पर मैनै कहा—“मैनै जा बात तुमसे पूछी थी उसका कोई उत्तर तुमने अभी तक नहीं दिया ।’

“कौन-सा बात ?”

“यही कि जाडा म कहा जाया जाय ?”

“ओह, ठीक है, पर इसके बारे म मुझमे पूछने की जरूरत क्या है ?”

“तुम्ह कौन जगह पसंद है—बंबई, या कलकत्ता या मद्रास ?”

मनिया बड़े म्निग्ध और मद स्वर म ‘खिल्ल !’ करके हँस पडी । बोनी—“मैनै न तो कभी बंबई देखा ह न कलकत्ता, न मद्रास । मैं क्या जानू कि कौन गहर त्रमण की दृष्टि स अच्छा रहेगा । मसूरी, चक्राना और दहरादून का छाडकर मैनै अपन जीवन म कभी कोई चौथी जगह दली नहीं है ।”

“पर तुम कम स कम इतना तो तय कर ला कि तुम्ह जाडा म मसूरी छाडना पसंद है या नहीं ।”

‘गब पूछा ता मुझे मसूरी छोडकर कही भी जान की इच्छा नहीं है । पर अगर तुम चाहता तो मुझे कोई एतराज भी न होगा ।’

उसका उत्तर सुनकर मेरा जी खराब हो गया। सारा उत्साह जाता रहा। एक ही स्थान में बठे बठे मैं ऊबने लगा था। कुछ समय के लिये स्थान-परिवर्तन करने से मन को कुछ आराम मिल सकेगा ऐसा मैंने सोचा था। पर मनिया की उदासीनता से मुझे बड़ा धक्का पहुँचा।

मेरे मन से मैंने कहा— 'तब ठीक है। मैं भा कहां नहीं जाऊंगा।'

'पर तुम्हें जरूर जाना चाहिये। तुम यहाँ की सर्दी बर्दाश्त नहीं कर सकोगे।'

'मुझे जरूर जाना चाहिये तुम्हारी जाने की इच्छा नहीं है, वस तुम्हें मेरे साथ चलने में कोई एतराज भी नहीं है। इन तीनों बातों में मेल कहाँ पर है मेरी समझ में नहीं आता। कभी-कभी तुम बड़ी विचित्र पहेलियों में बातें करने लगती हो मनिया।' मैंने कुछ खीभकर कहा।

'अरे तो नाराज क्यों होत हो? अभी कोई बात आखिरी तौर पर तय बाड़े ही हुई है।' कहकर मनिया फिर पलंग पर लट गयी। मुझे खीभ में भी हँसी आ गई। मैंने कहा— 'आखिरी तौर पर तय होने के लिये क्या बाजे गाजे की जरूरत है? छोटी-सी बात है मीधा सा प्रश्न है—जाडों में मसूरी में रहना है या कहीं बाहर जान ही योजना बनायी जाय। जब तुम्हें मसूरी छोड़ना पसंद नहीं है तब वान वहीं पर समाप्त हो गयी वस।'

'पर तुम क्या यहाँ का जाड़ा सहन कर सकोगे?'

बोनिश करूँगा, आखिर जो लोग जाडों में महा रहत हैं वे भी तो मनुष्य हैं।

'पर सहन करने की आवश्यकता क्या है।'

'आवश्यकता कुछ भी नहीं है इमीलिय तो मन यहाँ से जाने का प्रस्ताव रखा था। पर जब तुम्हारी इच्छा ही नहीं है।'

'पर मैं तो बहा है कि मुझे कोई आपत्ति न हागा।'

यह मैं जानता हूँ पर किता पर दबाव डानन का स्वभाव मेरा क्या नहीं रहा।

तुम गलत बात कहत हो।

धिर आयी थी ।

भ्रमहित हाकर मैंने कहा—“मैंने क्या गलत कहा ?”

‘यही कि किसी पर दबाव डालना का स्वभाव तुम्हारा नहीं रहा । याद करो, जब मैं पहले-पहल तुमसे मिली थी, तब मैं तुम्हारे होटल से लौट जाना चाहती थी । पर तुमने सहमा अत्यंत गभीर वाणी में आदेश के स्वर में मुझसे कहा— तुम कहीं नहीं जा सकती । तुम आज से यह न साबना कि तुम अपनी इच्छा से जहाँ चाहो जा सकती हो । तुम्हारा मन इन गमय से एकदम मेरे बग में हो चुका है याद आता है तुम्हें कि नहीं ?’ और वह फिर उठ बठी । उसके मुँह से ठीक क्या भाव व्यक्त हो रहा था मैं कह नहीं सकता । क्या प्रीतिहीनता या त्रास या खीभ, उन तीनों में से किसी की छाया वनमान थी ? मैं निश्चित रूप से कुछ भी जान न पाया । पर इनका मुझे याद है कि उस समय उसके मुख का अभिव्यक्ति अत्यंत असाधारण हो उठी थी और वह असाधारण अभिव्यक्ति आश्रय की अपथा भय ही अधिक उत्पन्न कर रही थी । पर इन ही क्षण व्यगात्मक हान की एक बहुत ही हलकी रखा उनके आँठों के लाना और फूट निकली ।

कुछ दर के लिये मैं स्तब्ध रह गया और हलप्रभ हाकर काठ के पुतले की तरह उमड़ी और ताकता रह गया । जब कुछ मँमला तब कुर्मी पर जमकर बठ गया और बाता— हाँ, याद आता है ।

‘तब क्या उस तुम ‘दबाव डालना’ नहीं मानते ।

‘मानता भी हूँ और नहीं भी मानता ।’

“नवा मतलब ।’

“मननय यह कि ऊपरी दृष्टि में दखन पर उस समय मैंने तुम पर दबाव अवश्य डाला था । पर यदि सूक्ष्म दृष्टि में विचार करा तो वह दबाव नहीं, बल्कि एक भुभाव ही था । तबकि याद करो कि जब तुम हाटल छोड़कर जाना चाहती थी तब उस समय तुम्हारे मन की स्थिति क्या थी । तुम चाहती थी कि भाग्य न और समाज न तुम्हारे विशुद्ध जो पहलवान का है, तुम्हें एकदम अमहाय, अनाय और निराल घनाकर

२२४ वहल ससार के बीच में अकेले भटकने के लिए छोड़ दिया है, उसका बदला अपने को और भी अधिक असहाय और भी अधिक करण परिस्थितियों में घसीटकर चुकाया जाय। 'बाबा, कोई इस गरीब को दो पसा दे दो' की रट लगाते हुए दर-दर भीख माँगकर, ठोकरें खाकर अवमानना की चरम सीमा तक अपने को पहुँचा कर तुम समाज के अपक्षाकृत व्यवस्थित और सुखी व्यक्तियों के भीतर मार्मिक पीड़ा जगा कर एक प्रकार का विकृत प्रतिहिंसात्मक आत्म सताप प्राप्त करना चाहती थी। समाज के विरुद्ध विद्रोह का वह विकृत रूप था। मैं जानता था कि इस प्रकार का नकारात्मक विद्रोह स्वयं तुम्हीं का दुर्गति की चरम सीमा तक पहुँचाकर रहेगा। उस समाज की व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं आ सकता। इसलिये मैं चाहता था कि तुम्हारा विद्रोह स्वस्थ, सक्रिय और सकारात्मक रूप धारण करे। यह तभी संभव हो सकता था जब तुम्हारी सारी आत्मघाती प्रवृत्ति को दूसरी दिशा में मोड़ कर उसको मोड़ दिया जाय। सब कुछ जानने के बाद यह मरा तय हो गया था कि मैं किसी भी उपाय से तुम्हें उन पथ की ओर भटकाने से रोकूँ, जिसकी ओर तुम्हारा चोट खाया हुआ मन सामान्य जगत् की ओर बिना देखे ही बड़ी तीव्रता से उन्मुख हो रहा था।

२५

मनियाँ एकांत भाव से, "यगलेंग" नाम दृष्टि में पूरी तन्मयता के साथ मेरी बातें सुन रही थी। मेरा उद्गार समाप्त होने के बाद भी वह कुछ क्षण तक मौन रही। मेरी ओर अपनी विस्मित और उत्सुक आँखें गड़ाय न जान क्या सोचती रही। उसके बाद सहसा बोली— 'पर क्या तुम्हारा यह निश्चित विश्वास है कि केवल मुझे उस विकृत आत्मघाती पथ से मोड़ने के उद्देश्य से ही तब तुमने मुझे रोका था? क्या केवल कल्याण ही तुमने मुझे

विवाह के बधन में बाधने की बात सोची थी ? क्या और कोई दूसरी भावना तुम्हारे उस काय के पीछे छिपी नहीं थी ?” २२५

“दूसरी भावना जो थी वह इतनी स्पष्ट थी कि मैं न तो कभी उसे छिपाने का कोई प्रयत्न किया, न कहूँगा, मैंने कुछ पीड़ित होकर कहा—“तुम्हारी सारी गति विधि में प्रारंभ ही से किस कारण दिलचस्पी ले रहा था, यह कम से-कम तुमसे तो छिपा रह ही नहीं सकता था, यह मैं जानता था, इसलिये मैं स्वयं भी पहले ही से तुम्हें जता दना चाहता था, पर तुमने स्पष्टीकरण के लिये मौका दिया ही नहीं। पहले ही दिन से मैं तुम्हें किस कदर चाहन लगा था, यदि तुम एक एक करके पिछली सब बातें याद करा ता तुम्हारा रहा सहा सदेह भी दूर हो जायगा। तुम्हारे प्रति केवल दया की भावना से मैंने तुम्हारे साथ इतना घनिष्ठ संबंध जोड़ा है, ऐसा साचना मर साथ कितना बड़ा अन्याय होगा, यह तनिक गहराई से सोचकर दखा। दया तुमने मेरे मन में अवश्य उभाड़ी है, पर वह वाद में। सबसे पहले जिस प्रवृत्ति में मुझे तुम्हारी आर पूरी शक्ति से खींचा था वह था प्रेम—वह प्रेम जो कभी इस बात पर विचार नहीं करता कि दूसरे व्यक्ति की सामाजिक स्थिति क्या है और जा अपने प्रिय पात्र की स्वतंत्र सत्ता का पूरा सम्मान करता है। मैं तुम्हें बराबर अपने से कई दृष्टियाँ में ऊँचा पाया है। और सच पूछा तो उस ऊँचाई के कारण ही मैं तुम्हारे प्रति आकर्षित हुआ हूँ।”

मनिया पुलकित दृष्टि से मरी और दख रही थी, लगता था जैसे वह मेरे एक एक शब्द को पी जाना चाहती हो। उसके बाद एक लंबी सी सास लेती हुई बोली—“मैं जानती हूँ कि तुम मुझे मच्चे मन से चाहते हो। पर जानन पर भी मेरे मन में कभी-कभी जो शंका उत्पन्न हो जाती है वह मेरे मन की चंचलता का ही परिणाम है। मैं कई बार प्रभु से एकांत में यह प्रार्थना कर चुकी हूँ कि मेरे मन में तुम्हारे प्रति अव्यक्त प्रेम, अशुद्ध श्रद्धा और अदृष्ट विद्वान का भाव बना रह। पर उमका भी कोई फल नहीं होना, और बीच बीच में न जाने कहीं से अकारण, सच की भावना मेरे गान मन में ऊपर एक हनवी गा सहर की तरह तरन लगती है और सारी शक्ति का हिना बना कर अस्थिर और

अज्ञान कर गैनी है। अपने मन की इस विवृति को मैं क्या कहूँ, मेरी समझ में नहीं आता। अभी कुछ ही देर पहले मेरे मन में तुम्हारे गुणों की याद से ऐसा उच्चवास उमड़ आया था कि उस रोकना मर लिये कठिन हो गया था, और उसके बाद ही एक साधारण सी बात से कुछ दूसरी ही प्रतिक्रिया मेरे भीतर हो गयी, मैं कहना चाहती थी कुछ और कह गयी क्या। मेरे भीतर इस तरह के मूखतापूर्ण दोरे बनते रहते हैं। मुझे पूरी आशा है कि तुम अपनी उदारता से मुझे बराबर क्षमा करते रहोगे।

फिर उसका भावावगम उमड़ आया था और उसके आसुओं के रूप में आत्मा के बानों पर चमक रहा था। मैं चुप हो रहा और अनमन भाव से अंगीठी की आर दोना हाथ पलाकर आग तापन लगा।

वह कहती चली गयी— आज जब मैं सोचती हूँ कि तुमने अपने स्नेह और दया से मुझे जसी अविचन को क्या से क्या बना दिया तब कभी तो मेरे प्राणा के भीतर से कृतज्ञता सी नी बाराआ मे पृष्ठ पड़ती है और कभी अपने पिछले स्मृत जीवन का मरु के लिय खो चुकने के कारण मैं भीतर ही भीतर पुरी तरह खीझ उठती हूँ। तब मुझे अपने ऊपर भी क्रोध आने लगता है और दूसरों के प्रति भी। मैं सचमुच दया के योग्य हूँ। मरी तुमसे प्रार्थना है कि मैं कभी पागलपन के क्षण में चाहे कभी भी अनुचित बात तुमसे कह बठूँ मुझे अंतर में क्षमा कर देना। और उसने पलक से उठकर मेरे दोनों पाव पकड़ लिये।

मैंने हड़बड़ाकर अपने दाना पाँव हटा लिये और उसके दाना हाथ पकड़कर उस उठाया अपनी बगलवाली कुर्सी पर बैठने के लिये उससे आग्रह किया।

वह धीरे से उठ बठी। उसकी आँखा में सरम स्निग्धता झलक रही थी और आनन्दित कृतज्ञता छलक रही थी। अपने अंतर का सारा स्नेह अपनी आँखा द्वारा उँडेलती हुई यह बोली— सचमुच जब मैं अपने उन स्निग्धों की याद करती हूँ जब मैं पहले पलक तुमसे मिली थी, और आनन्द की अपनी स्थिति से उस समय की स्थिति का मिलान करती हूँ तब कभी कभी मैं बड़े भय में पड़ जाती हूँ। मैं यह निश्चय नहीं कर पाती कि मेरा पिछला जीवन एक ठरावता मनना था या आनन्द का जीवन



केवल एक मुख-स्वप्न है। कभी-कभी इससे भी भयकर भ्रम के चक्रवर्तन म पड़ जाती हैं। तब मुझे ऐसा लगता है कि मनिया नाम की जो लड़की तुम्हारे माथे इम बेंगले में रहती है, उठती है, बठनी ह, बालती ह कभी प्रमत्त होकर प्रेम भरी बातें करती है और कभी खोमकर तुम्हें उलटो-सीधी बातें सुनाने लगती है, कभी फनिचर म, कपडा म और दूसरी चीजा म सँकडो छपया बर्दाद करके शौकीन लटकिया की तरह रहना चाहती है और कभी केवल प्रभु ईना के चरणा म सब-कुछ मीपने के लिये उत्सुक होकर सासारिक सुखा के प्रति विरक्त हो उठती है और अकिञ्चना का मा जीवा विनाम को इच्छा करन लगती है—वह मुझसे कोई भिन्न लटकी ह। तब मैं प्रत्यक्ष मनिया से अपन को अलग देखन लगती हूँ। मैं कुछ नहीं करती, मुझे केवल उसे डाँटन से बच्चा होती है, कभी उसे प्यार करने को जी चाहता हूँ। और मैं यह मोचने लगती हूँ कि यह मनिया मरी होती कौन है जिसके साथ मेरा जावन सदा क लिये बँध गया ह और अग मैं चाहने पर भी उससे अलग नहीं हो पाती। और एमे अवमरा पर इम तरह की बात सोचते सोचते मुझे चक्कर घाने लगता है। तब मैं चुपचाप बठ जाना चाहती हूँ। बताओ तो सही, मेर भीतर यह सब क्या हो रहा है। कहीं मैं एन दिन पागल न हो जाऊँ।”

वह गूँथ दृष्टि से मेरी आर देखन हुए भी जमे मुझे नहीं देख रही थी। उनकी बातों ने और उमड़ी उम विचित्र और भ्रात दृष्टि ने मुझे डरा दिया। मैं उनसे दोनो हाथ पकड़ लिय और फिर बाया हाथ उमकी पीठ पर फेरना हुआ मैं उस बच्चा की तरह चुमकारन और पुचकारन लगा।

कुछ दर तब हम दानों मीन ही रह। मैं अपने प्राणों में उसके शरीर और मन की अत्यन्त निन्दता का अनुभव कर रहा था। कुछ दर बाद यह विद्वान्त करके कि मेरा स्नेह-स्पर्श पाकर उसके मन की भ्रात अवस्था दूर हो गयी होगी, मैं धीरे से, अत्यन्त कामिल स्वर में कहा—  
‘मनिया !’ वह भी बहूँ ही धीमे स्वर में बानी—‘हाँ।’

“तुम्हें इम तरह नहीं सोचना चाहिये। तुम बहुत ही भली, नरल

और घात स्वभाव की लड़की हो, और अपने स्वभाव की उम

सरलता और शांति की व्यथ की कल्पनाओं के चक्कर में पड़

कर खोना तुम्हारे लिये किसी प्रकार भी उचित नहीं है। अपने पिछले जीवन में तुम्हें जरूर बड़े ही बड़े और असाधारण अनुभव हुए हैं, पर उस जीवन को तुम दुःस्वप्न की तरह ही एकदम भूल जाओ। यह विश्वास कर लो कि तुम्हारा जो आज का जीवन है वही सत्य और स्वाभाविक है। पिछले जीवन की स्मृतियों के व्यथ के भार से अपनी निष्कलक आत्मा को ग्रस्त न हान दो। तुम चाहे प्रभु ईश्वर के चरणों का ध्यान करो चाहे अपने वास्तविक गृहस्थिक जीवन का, दोनों ही तुम्हारे अस्त व्यस्त मन में सतुलन ला सकते हैं। पर धरती की कल्पनाओं के भँवर में मत पड़ो। इस प्रकार के चक्कर में पड़ने से तो तुम इस दुनिया में पाँव जमा पाओगी न दूसरे किसी निश्चिन्त सत्कार के लिये ब्रह्म बड़ा पाओगी। इसलिये अभी से सावधान हो जाओ। मनिया नाम की जिस लड़की को तुम अपने से अलग पाती हो वह तुमसे भिन्न नहीं है। भिन्नता जो है केवल तुम्हारे द्विधा विभक्त मन में है। इसलिये ऐसी आदत डालो जिससे तुम्हारे अपने अलग व्यक्तित्व में, और मनिया के व्यक्तित्व में तनाव भी नहीं दोवार न रहने पावे।'

मनिया ध्यानपूर्वक सुन रही थी। जब मैं अपना वक्तव्य समाप्त कर चुका तब उसने एक लंबी साँस ली, फिर बोली—'मैं बार बार इसके लिये चेष्टा करती हूँ अक्सर मफल भी हो जाती हूँ। पर किसी एकांत क्षण में फिर इस तरह की अनोखी अनुभूति मुझे घेर आती है। कभी-कभी मुझे ऐसा भय भी होने लगता है जैसे मैं 'मैं' नहीं रह गयी हूँ और किसी दूसरे व्यक्ति की आत्मा मेरे भीतर प्रवेश पा गयी है। जैसे मेरा शरीर और मेरा नाम—केवल ये ही दो चीजें 'मेरा' रह गयी हैं। शेष मेरा कुछ भी नहीं है—उसी आत्मा का है।'

'भूल जाओ! एकदम भूल जाओ! इस तरह की बात क्षण भर लिये भी मत सोचो मनिया! भूलने की आदत पढ़ना से मात्र दिन इस तरह की भाव फलपनाएँ तुम्हारे मन में जन्म से उत्पन्न जायेंगी, जैसे उनका कभी कोई अस्तित्व ही न रहा हो।' बहुरंग में उसकी पीठ

पर धीरे से हाथ फेरते हुए उसे फिर बच्चो की तरह चुम २२६  
कारना शुरू कर दिया ।

जब ध्यानसिंह खाना तयार करके लाया तब तक मनिया की आखा  
मे उसका स्वाभाविक रूप झलक आया था ।

उस दिन मनिया रात मे बहुत देर तक छटपटाती और करवटें बद-  
लती रही । मैं उसे भरसक शांत करने का प्रयत्न करता रहा और तरह-  
तरह की बातों से उसे सात्वना देता रहा । प्राय तीन बजे उसकी आंखें  
लगी, और तब वह बेखबर सो गयी । मैं उसके बाद भी ईसाई-दशन  
सबधी एक पुस्तक मे मन लगाने की व्यथ चेष्टा करता रहा । वह पुस्तक  
मनिया कही सं ले आयी थी—सभवत सिन्धिया से । पुस्तक हाथ मैं  
लेने के कुछ ही देर बाद मेरी पलकें मारी हो आयी और मैं पुस्तक हाथ  
मे लिय ही सो गया ।

२६

सुबह जब आंखें खुली ता मैं देखा कि पुस्तक मेरे हाथ  
म है और बत्ती बसी ही जल रही है । मनिया पहले  
ही स जगी हुई थी और लिहाफ ओढे हुए पलंग पर  
बठी हुई मरी और अत्यंत स्निग्ध-मधुर दृष्टि से देखती हुई मद-मद  
मुस्करा रही थी । मैं भी हड़बडाता हुआ उठ बढा और पुस्तक बगल  
वाली छोटी-नी मज पर रख दी ।

मनिया अपनी वाणी म मधु घोलता हुई सी चाली—“इस पुस्तक  
का कम मे कम एक गुण तो तुमन स्वीकार किया ।”

“बह क्या ?”

“तुम्हार लिये यह ‘स्लीपिंग डोज’ का काम करेगी यह तुमन जान  
लिया ।”

२३० मैं "हो हो !" करके अट्टाहास कर उठा। वह भी मद मद मुस्कराने लगी।

कुछ देर बाद बोली—'आज नींद खुलने के पहले मैंने एक अनोखा सपना देखा।'

"वह क्या?"

'मैंने देखा कि बिजली की तरह चमकते हुए आकाश में माता मरियम एक छोटे से सुंदर बच्चे को दाना हाथ में लिये हुए आकाश में उड़ती हुई नीचे उतर रही हैं। वह प्रकाश उनके और बच्चे के सिर के चारा और गोबर चक्र बनाता हुआ उनके साथ-साथ चल रहा है। मैं भक्ति भाव से गद्गद् उनकी ओर हाथ जोड़े हुए अधमुदी आँखों से उन्हें देख रही थी। नीचे उतरकर माता मरियम ठीक मेरे आगे खड़ी हो गया और उस प्यारे प्यारे बच्चे को मरी और बढ़ाती हुई स्नह पूर्वक मुस्कराने लगा। ऐसा सुंदर और ऐसा प्यारा बच्चा मैंने कभी उन चित्रों में भी नहीं देखा जो मरियम से संबंधित हैं। मुझे लगा कि प्रभु ईसा बचपन में निश्चय ही ऐसे ही रहे होंगे। मैंने बड़ी अधीरता के साथ दाना हाथ बढ़ाकर बच्चे को गोद में ले लिया और गोद में लेते ही उसका मुँह चूम लिया। बच्चा भी भ्रमन्न हाँकर मुझसे खेलने लगा। कभी वह मर गालों पर अपनी कोमल-कोमल उँगलियाँ फेरता था, कभी चुटकी काटना था और कभी भीठी देता था। उसका प्यारा-प्यारा मुँह उमा चमक रहा था जैसे हजारों हीरे एक साथ चमक रहे हों। मैं उसे प्यार करने-करते थकती हूँ नहीं। बार-बार उसका मुँह चूमती, बार-बार उस कलज से लगाती, बार-बार उसके सिर पर हाथ फेरती। मरी छाती दूध से भर आयी, सहसा उस दुलारे बच्चे ने मर कपड़े हटाकर मरा दूध अपने मुँह से लगा लिया और गटागट पीने लगा। कब तक वह पीना रहा, मुझे याद नहीं है। माता मरियम भी कब तक स्नेह से मुसकाती हुई मर पाग खड़ी रही यह भी मुझे ठीक याद नहीं है। कभी लगता था, दम मिनट, कभी दस दिन और कभी दस महीने। मैं बच्चे को छाड़ना नहीं चाहती थी, पर सहसा माता मरियम की आवाज मेरे कानों में आयी—'बहुत देर हो गयी, अब तुम्हें यह बच्चा छाड़ देना होगा। और यह कहकर

वह बच्चे को पकड़न ना। मैं बहुत गिडगिडायी कि बच्चे को मर पाम हा रहने दो अभी न छोना अभी अभी तो मैं इसका प्यार पाया है । अर यह मुझसे विछुड जायगा तो मैं कैसे जीऊँगी । पर मरियम न एक न सुनी, कहने लगी— 'नहीं, एसा नहीं हो सकता । इमा पृथ्वी पर फिर दूसरी बार सूनी पर चढ़ने के लिये नहीं उतरा ह । तुम्हारे स्नह न उमे फिर खीच लिया था, अब वह फिर सीधे मेरे नाथ स्वर्ग को चला जायगा ।' और यह कहकर वह बरबस बच्चे को मुझम छान कर अतधान हा गयी मैं दिलबिनाने लगी, जब नींद खुनी ता खती हू कि भचमुच मेरी आंखे भीगी हुई हैं और छाती से दूध की धारा बह रही है "

मैं चौंकर हडबडाना नुआ पलंग पर उठ बठा । अयत आश्चय से मैंने कहा— यह कम सम्भव हा सकता है । तुम्हें ठीक मात्रम है वह दूध ही था ?'

मनिया मुखरान लगी । वाली—“इसम भ्रम की कारे बात नहीं है । मैं तब स इम इतना म बठी हूँ कि तुम्हारी आंखे खुले ता तुम्ह इम विचित्र स्वप्न का शान सुनाऊँ ।

“हाल सुनाकर तुमन उचित ही किया ' मैंन चितित भाव से कहा—“मरी तो यह गब है कि तुम किसी याग्य लडी डाक्टर से अपनी परीक्षा करवा ला । मुझे ता य कुद हमर ही लक्षण जान पडत है ।'

किस तरह के लक्षण ?' तनिक गभीर भाव से मनिया न पूछा ।

“मुझे गब है कि तुम्हार पट म बच्चा है ।'

“यह गब ता मुझे भा ह । मैंन तुमम आज तक सकाचका कुछ कहा नहीं ।'

“तब जल्दी ही किसी मटनिटी टाक्टर का बुलाकर तुम्हें दिखान की आवश्यकता है । मैं आज हा जाकर निती का बुला आता हूँ ।"

“डाक्टर क्या कर्गे ? मैं कुछ बीमार बाड ही हूँ ।'

“वह देखकर बनावगा कि पट म बच्चे को ठीक क महीन हा खुव हैं, तुम्हें किस तरह दिवाजन और परहज से रहना होगा, क्या-क्या

दबाइयाँ खानी पड़ेंगी, ऐसी हालत में यात्रा करने से कोई खराबी तो नहीं होगी, आदि आदि।”

“अगर तुम्हारी यही इच्छा है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। पर आज नहीं। आज सर्दी बहुत अधिक है। दो एक दिन बाद जब मौसम कुछ ठीक हो जायगा तब जाना।”

पर मैं यह मोचकर चिंतित हो उठा था कि कहीं मनिया अपनी अनुभवहीनता के कारण इस बीच अपने खान पान और रहन-सहन में कोई ऐसी गड़बड़ न कर बैठे जिससे पेट के बच्चे को भी हानि पहुँचे और उमका भी स्वास्थ्य खराब हो उठे।

ध्यानसिंह ने हम लागा को विस्तर पर ही चाय पिलायी। चाय पीने के बाद उठकर आवश्यक थियामो से निवृत्त होकर, गरम पानी से बदन कमरे में नहा धोकर जब मैंने गरम कपडा से अपने को लाद लिया, तब बाहर की तरफ का किबाड खालकर क्या देखता हूँ कि प्रायः डेढ़ फीट ऊँची बरफ जमी हुई है। जूते से ठोकर मारकर देखा बरफ आज पिछले दिन की तरह रई-मी कोमल नहीं रह गयी थी, बल्कि पत्थर की तरह सरन हा गयी थी। बाद में मैंने जाना कि रात में आकाश कुछ समय के लिये साफ हो गया था और बरफ के ऊपर पाला जम गया था जिसने फलस्वरूप बरफ इस बदन सरन हो गयी थी।

आज सर्दी भी पिछले दिन की अपेक्षा बदन अधिक थी। हाथ पाँव एकदम ठिठुरे जा रहें थे। मैं ऊपर से काफी मात्रा आवरकोट पहने था। सिर पर कपटोप, हाथों में दस्ताने और पाँवों में गरम मोजे। पर उन सब के बावजूद मर्दी जैसे प्रत्यक्ष हड्डी के भीतर में प्रत्यक्ष छिद्र में घुसी जा रही थी। ऐसी हालत में बाहर निकलने का साहस करना भूखतापूर्ण दुस्साहस का अतिरिक्त और कुछ नहीं था। मैं तलाक भीतर लौट चला और अदर से किबाड बंद करके अँगोठी के पास बैठ गया। ध्यानसिंह अँगोठी में आग मुलगा चुका था। मनिया अभी भीतर में स्नानादि से निवृत्त होकर नहीं आयी थी।

जाड़े के उस प्रातःकाल, अकेला अँगोठी के पास बैठा हुआ मैं आकाश पाताल की बातें सोचने लगा। मनिया ने स्वप्न में जो ईसा-

मसाह का सिगु-न्प में प्राप्त किया था, यदि वह उसे केवल २३३  
कारा स्वप्न न समझ कर दाम्पत्यविकृता का पूर्वसूचक समझ

बट तब इस भावुकतापूर्ण विद्वान् की क्या प्रतिक्रिया उसके मन पर  
हागी ? यदि उसने बच्चे को जन्म दिया तो उसे सचमुच का ईनामसींह  
मानकर वह न जान उसकी क्या गत कर डालेगी ! 'ईसा दूसरी बार  
गूनी पर चतन के निद्र पृथ्वी पर नहीं उतरा है, केवल तुम्हारा मनह इसे  
यहाँ खींच लाया है।' वास्तव में बटा ही रहस्यमय स्वप्न था वह ।  
मैं न तो उनका अर्थ यही लाया था कि मनिया के लिय बच्चे का महत्व  
तमी है जब वह ईसा का प्रतीक—नहीं अवतार—बनकर आय । किसी  
साधारण बच्चे का साधारण ही नारियों का तरह पालन कर केवल  
मातृत्व का स्वभाविक प्रवृत्ति के पालन में सलग्न रहना जन्म उसकी  
प्रसाधारण मनह-शुधा व निद्र पथात नहीं था । वह ईसा का जन्म में  
धारण करन की विधि 'फैटेसा' का अपन भीतर पालकर उसके द्वारा  
जस समय पीठित मानव जाति के पुनर्द्वार की कल्पना अपन अन्त्यतल  
व एक अत्यन्त अस्पष्ट, छायामय स्वप्न के अनुसार कर रही थी ।

मन आप मनिया के स्वभाव का एक टिप्पण दूसरा पहलू कुछ समय  
से जस स्पष्ट हाता चला जा रहा था । वह जसे अपन निजी जीवन के  
उल्ल-जीये बना—बाहरी और भीतरी उल्लान्तों—में बुरी तरह उल्लनी  
हूट हात पर भी, अपन अनजान ही म उनस ऊपर उठकर अपन चारों  
घोर व—बल्कि अपनी सीमित कल्पना की परिधि के अनुसार समग्र  
सपपरत मानवता के—शु-शु की पीडा और निर्वातन व प्रदन् पर  
अनन हा से विचार करने व निय छगपटा रही थी । यह जीव ह कि  
उनक व्यक्तित्व व केवल स्वप्न-सुम्बधी स्तर का ही यह व्यापक प्रान  
प्रदान और अस्पष्ट रूप से आदातित कर जाता था, पर वह स्वप्न-  
म्यक्ति उसके तावत मन का भी बीच-बीच में हिलाये बिना स्वभावत  
नहा रह सकती थी । इसी निय मुझे लगा कि ईसा को गन्म म धारण  
करन का स्वप्न कल्प उसकी आमादार की स्वप्नाकाया का ही परिणाम  
नहा है । 'ईसा दूसरी बार गूना पर चतन के लिय पृथ्वा पर नहीं उतरा  
है' यह स्वप्न-कल्पना बिना व्यापक मानवता का समन्या के समाधान

की प्रेरणा के नहीं जग सकती थी पर इस सारी यापकता का यत्नित 'केटोसी' किम कदर छाय हुए थी इसका अनुमान स्वप्न म आनवाली मरियम के बाक्य के शेषाक्ष से स्पष्ट लग जाना है—'केवल तुम्हारा स्नेह इसे यहा खीच लाया है !'

३०

दो दिन बाद जब मौसम कुछ माफ हुआ तब मैंने एक लडी डाक्टर का बुनाया । परीक्षा करन पर भरा ही अनुमान ठीक निकला । पट म टाइ महीन वा बच्चा था । डाक्टरनी के चले जान पर जब मनिया भरे पास आयी तब उसके मुख पर एसा अपूथ स्निग्ध सरस दात मधुर हास दिप रहा था जा मुझे वास्तव मे क्षण भर के लिय एक अलौकिक स्वर्गीय महिमा स मडित सा लगा । मैं रोमाच का अनुभव करता हुआ, निर्निमेष दष्टि स विह्वल गद्गद् भावुक्तता स उसकी ओर दखता रह गया ।

तुम सचमुच आश्चयजनक तत्वदर्शी हो ! सुकीमल सगीन मधुर भकार से मर स्तब्ध, रोमाचित काना क पदों का गुँजाती हुद यह वाली, और बोलते हुए उसकी आँख, उसका सारा मुख और अधिब दीत हो उठा ।

उसक उस आकस्मिक वीणा बिनिदक स्वर से चारुत हुए मैंने कहा—'क्या, तुम्हे आज अचानक एसा लगा ?'

'मुमने कसे जान लिया कि मेरे पट म—'

'ओह यह ! इसे जानने के लिय तत्वदर्शिता की क्या आवश्यकता है ?'

'केवल मेरे स्वप्न से तुमन ठीक अनुमान लगा लिया, यह सचमुच चढे आश्चय की बात है !'

उमके आश्चय का मिटाने की कोई आवश्यकता मैंने नहीं समझी,



दैनिक इस सम्बन्ध में मौन रहा। पर इस बात पर गौर २३५  
 दिया बिना मैं न रत्न कि केवल इस माधारण-सी जानकारी  
 से कि उनके पेट में बच्चा है, उमक नैदिय में एत अविश्वसनीय रूप से  
 आश्चर्यजनक निश्चार आ गया था जैसा अंतर की सारी स्निग्धता, मधुर  
 रस विद्वन्ता, समग्र माधुर्य ने तल प्रदग् में उमटकर उमकी अग्ना को—  
 सारे मुखमङ्गल को पूर्ण रूप में परिप्लावित कर दिया हो।

मैं उमी पुलक मरी दृष्टि से उमकी आर देखा हुआ अपन स्वर में  
 विचित्र परिहान का पुट गते हुए बोला— मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि तुम्हें  
 किसी कारण से भी हा मरी तत्त्वदर्शिता का पता लग गया। पर यह ता  
 हुई गीण ज्ञान। मुख्य बात यह है कि प्रबन्धे तुम्हें बड़े जनन में रहना  
 होगा। खान पीन के सम्बन्ध में विशेष नियमों का पालन करना होगा।  
 ऐसा कोई काम नहीं करना होगा जिसमें तनिक भी श्रम आश्चर्यक है।  
 और सबसे बड़ी समस्या जो इस जानकारी न खड़ी कर दी है वह यह  
 है कि अब हम नाग मसूरी छाड़कर कहीं जा नहीं सकते।

“क्या ? अहनिम आश्चर्य से मनिया न पूछा।

“शुनिये कि नीचे की यात्रा में—माटर में पहाड़ी रास्ते में नीचे  
 उतराई में जान में और उसके बाद रत्न की यात्रा में भी तुम्हारे शरीर  
 पर जो जोर पड़ता वह तुम्हारी इस स्थिति में हानि पहुँचा सकता  
 है।

“गोह यह बात है।’ उसने कुछ आश्चर्य होने हुए कहा। मैं  
 समझी कि कुछ नया ही कारण उत्पन्न हो गया। इसके नियमों बिना  
 न करे। मैं लेनी अक्टर से इसके बारे में पहले ही पूछ चुकी हूँ। उम्मा  
 कहता है कि अभी मैं बिना किसी आगवा के माटर और रत्न-यात्रा कर  
 सकती हूँ। अभी चार महीने तक कोई भय नहीं है। इमानिय हम लाग  
 इसी रूपों के भीतर चल दें तो अच्छा होगा।”

‘तुम मसूरी छाड़ने के लिये रुहमा इस बदर उल्लुख क्यों हा  
 उठी?’

‘मैं कह नहीं सकती। पर जब मैं तुमसे जाहों में पहाड़ छाड़ने  
 की खर्चा खतायी, तब मैं, न मासूम क्या, मर मन में भी कहीं चलन के

लिये बेचनी-सी उठने लगी है। सगता है जैसे एक ही स्थान  
 म बठे-बठे दम घुट जायगा। इसलिय भव जल्दी तयारी

करो ।'

मैं उसी दिन से तयारी म जुट गया। मुझे अपने लिय कोई विशेष  
 तयारी नहीं करनी थी और मैं कम-से-कम सामान—जितना अनिवायत  
 आवश्यक हो—ले जाने के पक्ष मे था, पर मनिया की आवश्यकताओं  
 की पूर्ति ही ही नहीं पाती थी। चमड़े के कई बड़े बड़े बक्सों को अपने  
 और मरे बपटों से ठूस-ठस कर भरन पर भी उसे सतोप नहीं हो पाता  
 था। सिगरेट और भक्ख के अन्नकट हुए टिना स उसने एक पूरा बक्स  
 भर दिया। बिस्कुट के टिना स दो बक्स भर डाले। प्याला और तस्त-  
 रिया के सेटा से एक और काफी बडा बक्स भर दिया गया। मैं लाल  
 उसे यह समझाने का प्रयत्न करता रहा कि ये सब चीजें 'यय हैं,  
 जहाँ जायेंगे वहाँ खरीद ली जायेंगी—और सभवत खरीदन की भी  
 जरूरत नहीं पडेगी, क्योंकि सभावना यही अधिक है कि हमे होटलो का  
 आश्रय लना पडे, क्योंकि सुविधा की दृष्टि से वही ठीक पडेगा पर वह  
 मेरी एक भी बात नहीं सुनना चाहती थी। या तो उपक्षा भरी मुसकान  
 से टाल जाती थी या हठ पूर्वक कहती थी— 'तुम्ह गिरस्ती के कामा से  
 कभी चास्ता पडा नहीं इसलिय इसकी क्या आवश्यकता है। उसकी  
 क्या जरूरत है।' की रट लगाये चले जाते हो। इन सब विषयो पर मुझ  
 मदों की राय नहीं चाहिये। मुझे सब अनुभव है। परदस म न मालूम  
 कब किम चीज की कमी पड जाय।' मरे पास इसका कोई जवाब नहीं  
 था। इसलिय मन मारकर, उसके बख हठ के आगे हार मानकर, मौन  
 हो रहा। पर माय ही मनिया की वान के ढग से मैं मन ही मन अच्छा  
 कौतुक अनुभव कर रहा था। सोच रहा था कि गिरस्ती के अनुभवों के  
 सबध म उसके मन म इतना बडा आत्म विश्वास कहाँ स था जमा ?  
 इनना सब अमें तक निद्र ड, उत्तरदायित्वहीन जिप्सी-जीवन बिताने पर  
 भी बुद्ध ही अमें के गहस्थ जीवन के अत्यंत साधारण अनुभवों का  
 परिणाम तो यह नहीं हो सकता। तब क्या नारी मात्र क भीतर घर-  
 गिरस्ती की आवश्यकताओं के सबध म यही अनुभवाधिकार सुप्त भवस्था

मे वतमान रहता है, और अनुकूल परिस्थितियाँ पाने पर २३७  
 एक क्षण में पूर्णतया जागरित हो उठता है ?

भीतर सूती और ऊनी दोनों प्रकार के कपड़ों के ढेर पड़े हुए थे। विस्तर से मबधित उपकरणों की भी कोई कमी नहीं थी। पर मनिया का जी उतने से नहीं भरा। उसने अपने मन का सामान जुटाने के लिये फिर एक दिन देहरादून चलने का प्रस्ताव किया। यह सोचकर कि उसकी खामखयाली के आवग को रूँधना उसके निश्चल उल्लास का स्रोत ही सुखा दान के बराबर होगा, और किसी प्रकार का कोई तब इस सत्र में उस पर असर नहीं करेगा, मैंने उसकी किसी भी बात पर तनिक भी आपत्ति नहीं जतायी।

देहरादून जाकर उमने पहनने के कपड़ों और ओढ़ने विद्या की चीजों से लेकर मूख मवों तक इतना अधिक समान खरीद डाला कि उहे ममूरी ले चलने की समस्या पिछली बार से भी अधिक विकट हो उठी।

मैंने बलवत्ते जान का निश्चय किया था। उस शहर से मैं थोड़ा बहुत परिचित था, इमनिये वही चलने में मुझे अधिक सुविधा मालूम हुई। जिस दिन जान की बात तय हो चुकी थी उसके ठीक एक दिन पहले फादर जेरेमिया, सिन्विया और श्रीमती रालिसन के साथ हमारे यहाँ आ घमके। घमको का अवार लग दखकर सबके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। क्षण भर के लिये तीनों एक दूसरे का मुह ताकते रह गये। प्रत्यक्ष की आँखा में कौतुक और या का भाव वतमान था, यह बात मेरी दृष्टि से छिपी न रही। पर मनिया का ध्यान उन लोगों की आँखों की उन अभिव्यक्ति की और नहीं गया।

फादर जेरेमिया ने अपने व्यग और कौतुक के भाव को शालीनता से दबाकर उसे मुमधुर कुतूहन में परिणत करत हुए अपने स्वाभाविक वामल स्वर में कहा—‘जान पडता है, आप योग वही नो यात्रा करव बडे लग अमें के तिय जाने की तयारी कर र है।’

मैंने कहा—“यात्रा सवी तो जरूर है, पर असा बटून लग होगा ऐसा मैं नहीं सोचता।”

२३= "मैं सोचता हूँ ये सब बक्स आप अपने साथ ही ले चलने का विचार कर रहे हैं। मेरा अनुमान ठीक है न?"

"जी हाँ, आपके अनुमान में तनिक भी त्रुटि नहीं है।" मैं यथासाध्य पूरी गम्भीरता कायम रखने का प्रयत्न करते हुए उत्तर दिया।

"पर इतने बक्सों को लेकर आप लाने करेंगे क्या?" श्रीमती रालिंसन अपने को न रोक सनने के कारण बरबस बाल उठा।

उनकी खीझ देखकर मेरे इनकी दर तक बरबस कायम रहे हुए कृत्रिम गाम्भीर्य का मुखड़ा थिसक पड़ा और मैं फुँट करके हँस पड़ा। और हँसी का रुद्ध स्यात एक बार बुलते ही अट्टहास के निष्कार के रूप में फूट पड़ा। हँसी में भी इस कदर मुक्त आनन्द निहित रहता है इसका अनुभव मुझे जैसे पहली बार हुआ। अट्टहास की उसी उद्दाम लहर के बीच ही मैं श्रीमती रालिंसन के प्रश्न का उत्तर दत्त हुए मनिया की ओर बटाक्ष पात करता हुआ बोला—'आप अपनी बहू में पूछकर जान लीजिये कि इन सब बक्सों का ले जाकर वह क्या करेगी। मैं तो बार-बार पूछकर हार गया, आपको शायद समझा सके।'

सम्भवतः इस बात से कि मैंने मनिया को उनकी बहू माना है, और फलतः उन्हें माँ के तुल्य स्नेह सम्मान दिया है, श्रीमती रालिंसन का चेहरा खिल उठा। वह भी उस सारे चक्कर का अच्युत परिहास मानकर अत्यन्त स्नेहपूर्ण हास्य में मनिया से बोली—'बेटो, क्या तुम सचमुच इतने सब बक्सों का कलकत्ते तक की लंबी यात्रा में अपने साथ ले जा रही हो?'

फादर जेरेमिया और मिन्विद्या भी मनिया की ओर दत्तकर मद-मधुर हँस रहे थे। अपने का चारा ओर से हँसी का लय पाकर मनिया बचारी हृत्प्रभ हो गयी थी। बच्चा की तरह मचलती हुई वह बोली—

मरी समझ में नहीं आता, आप सब लोग इन बक्सों के पीछे क्या पढ़े हुए हैं। अगर मैं अपने आराम के लिये इन्हें साथ ले जाना चाहती हूँ तो इसमें आप लोगों को आपनि किस बात की है? इन सब में मैंने जो निश्चय किया है उससे मैं कभी पीछे नहीं हटूंगी। यह मैं कह देती हूँ। बाद में कोई बुरा न माने। और वह मटक के साथ उत्र की ओर पीठ करके बड़ी तेजी से दूसरे कमरे में चली गयी।

अचानक, अप्रत्याशित रूप में, सारा वातावरण ही बदल गया। जिस विगुड, मुक्त, प्रेमपूर्ण हास्य के आनंद का स्वाद मैंने जीवन में बहुत वर्षों बाद—शायद पहली बार—पाया था उसका परिणाम इस कदर कड़वा निकलेगा, यह मैंने नहीं सांचा था। बेचारी श्रीमती रालिसन भी खिमिया गयी। फादर जेरमिया और मित्रिया के चेहरे भी गभीर हो आये। मनिया के स्वभाव का वह विचित्र रूप देखकर किसी का उम मनान के लिए भीतर जाने का साहस नहीं हुआ—मुझे भी नहीं।

मित्रिया इस मामले में अग्रणी बनी। कुछ देर तक वह सभी लोगों की तरफ स्मिर खड़ी रही, उनके दाद तेज कदम रखती हुई उस कमरे में चली गयी जहाँ मनिया गयी थी। मैं भी सहारा पाकर चुपके से उसके पीछे पीछे हा लिया।

मनिया एक बड़े पलंग के पदवाले डबे के महार गिर भुजाय हम लागा की आर पीठ किम खड़ी थी।

मित्रिया ने बड़े ही दुःखार भर स्वर में अंगरेजी में कहा—“मनिया, तुम क्या सचमुच नाराज हो गयी—एक नाधारण से परिहास से?” और उनके कंधे पर अपना चमड़े का दस्ताने से ढका हाथ रखा। मित्रिया मनिया ने कभी अंग्रेजी में बोलना ही कभी हिंदी में। जब काइ गम्भीर या मामूली बात कहनी हाती था ता वह अंगरेजी का सहारा लती थी, अथवा नाधारण विषय पर वह अपरिष्कृत हिंदी में ही उससे बोलती थी।

मनिया उसकी ओर मुह किम गिना ही अंगरेजी में ही बोली—“क्या तब वह मुझे सब समय चिन्ताते रहते हैं? हमारा के सामन भी मरी हें। उडाया करत हैं? मैं हंगिन नही जाऊंगी कलकत्ते।”

“ओह मनिया डांनिंग ईश्वर के निय यह सब शोध स्वाग दा। तबिब भी बात पर इस तरह नागज न होओ। आओ! चला! दवा, मर लाग तुमने म्हाबग मिलन आय हैं। घर आय हुए मित्रा के साथ भा क्या इस तरह का वर्नाव किया जाना है? चलो तुम बनी अच्छी नकी हा।” कहती हुई मित्रिया उसकी पीठ वगुन ही धीरे से थप-थपानी हुई चुमकारन लगा, उस मनिया एक नादान बच्ची हो।

२४० मनिया उसी तरह पीठ किय हुए दोनो हाथो से चुपचाप आसू पोछ रही थी। मैं चुपके से बाहर निकल गया।

३५

थोली देर बाद तिल्विया के साथ मनिया बाहर आयी। इस बार उसकी प्यारी आँखें स्निग्ध, सलज्ज मुसकान से चमक रही थी, यद्यपि आँसू के चिह्न अच्युती तरह पाछे जाने के बाद भी स्पष्ट भलक रहं थे। उसने एक एक करके मव की ओर बारी बारी से अपनी स्निग्ध-सरस, सजल-उज्ज्वल दृष्टि स देखा। स्पष्ट ही वह अपने आकस्मिक रूप से असीमन व्यवहार से लज्जित जान पडी।

मव से पहले श्रीमती रालिन्सा के प्रति दोना हाथ जोडते हुए उसने कहा—“मैं आशा करती हूँ मेरे वचकान व्यवहार को आप क्षमा करेंगी।” ईसाई धर्म ग्रहण करन पर भी उसने दोनो हाथ जोडन की 'नेटिव' आदत नही छाडी थी। भगवान की प्रायना और मनुष्य स क्षमा याचना दाना के लिये वह अब भी एक ही तरीका काम मे लाती थी।

श्रीमती रालिन्सन गद्गद् हो गयी। उनकी आँखें स्नह विह्वलता से प्राय सजल हो आयी। मनिया के एकदम निकट जाकर उहान उसे गले स लगा लिया। मनिया न भी परम विश्वास तथा परिपूर्ण आत्म समर्पण के साथ उनके कंधे पर अपना मिर स्थापित कर दिया। निश्चय ही उसे अपनी उस माता की याद आ रही हागी जिमका प्राणघाती स्नह उसन पाया था, जो अपन उत्कट प्रेम के दान के साथ ही ऐना मम पीडक माहुर मनिया के लिये छाड गयी थी जिसने प्रभाव स उसका पर वर्ती जीवन तित्त हा उठा था। श्रीमती रालिन्सन वन्दुत ही धीरे से उमरी पीठ महलाती हुई स्नह घुले स्वर स बोली— 'नादान वच्चा कहीं की ! क्षमा माँगन की दमम बौन सी बात है ! जरा देखो इसका ढग !

अपनी माँ स भी कभी क्षमा मागी जाती है ।" और उमकी

२४१

ठुड़ी ऊपर का करके उत्कट दुलार से उमका मुह चूमन

सगी । मौन आमुओ की धाराएँ उनकी दोनों आखा स अखिरल बहनी  
हुई मनिया को अभिपिक्त कर रही थी ।

वह ऐमा अपूव दृश्य था कि हम सब लाग—फादर जेरमिया,  
सिबिया, मैं और मेरा नौकर ध्यानसिंह भी जो किसी काम स दो ही  
मिनट पूव आया था—गद्गद् भाव से, प्राय श्रद्धावनत हाकर, वह  
मधुर दश्य देखते रह गय ।

दोना 'मा-वटी' का वह आच्छन्न भाव जब कुछ उतर गया तब  
मनिया न धीरे स सिर ऊपर उठाकर फिर एक बार अपनी महज-म्बा-  
भाविक स्नहा-बल दृष्टि से सब की ओर दखा । इन बार उसकी दृष्टि  
म सक्ताच या ग्वानि का नेश भी नहीं था । आम स धुले कमल की तरह  
उमकी आँखें उसका सारा मुख मडन एक निराली ताजगी से निखर  
रहा था ।

नहन हास मे (जिसम शायद तनिक परिहान का भी अ-यत्त पुट बन  
मान था) वह फादर जेरमिया की ओर दबती हुई वाली— आपका  
निश्चय ही यह मारा दश्य एक अच्छा स्वाग लगा होगा । आप निश्चय  
हा यह सोचते हगि कि यह कस अनाखे स्वभाव की मूब लटकी है । मैं  
आगा करती हूँ आप भी निश्चय ही मरी इत मूवना का क्षमा  
कर गे ।

यह ला, फिर हम नटवट लडकी न क्षमा-याचना का पव प्रारभ  
कर गिया । 'कहकर श्रीमती रालि-सन न उमकी पीठ पर हाय म एक  
हनका-ना आघात किया । हम सब लाग एक नाय ठठाकर हँस पडे ।  
मनिया भी खुनकर खिलखिना उठी ।

इस प्रकार उस दिन अप्रत्यागित रूप मे सहसा उमटे हुए घन  
बादन फिरकर अचानक ही बरम पडे और उसके बाद फिर अचानक ही  
बिलीन भी हो गय और उस सारे अभिपिक्त बानावरण पर निमल मूय  
की म्निग्ध किरणों भी चमकन सगी ।

दूमरे दिन मारा रालि-सन परिवार फादर जेरमिया के नाय हूब

लोगों को पहुँचाने देहरादून तक गया। पहले दर्जे के दो टिकट खरीदन के बाद मारा सामान—जिमने मनिया न पिछले दिन के परिहासात्मक छोटी के बावजूद तनिय भी बमी नहीं की थी—बुक् करा लिया। अपन साथ डिब्बे में केवल एकात रूप से आवश्यक सामान ही रक्का—हालाकि वह 'एकात आवश्यकता' भी, मनिया की गगना के अनुसार होत स, बुद्ध सामान्य नहीं थी।

जब गाडी छूटने का समय आया तब मनिया डिब्बे के भीतर ही श्रीमती रालिंसन के गले लगकर छूब रायी। श्रीमती रालिंसन स्वयं भी रोनी हुई उस धैर्य दती हुई वाली— जल्दा लौटकर आ जाना बेटी, अपनी इस बूढ़ी माँ को भूत न जाना। और दाना अपन स्वास्थ्य का ध्यान बराबर रखना। बीच-बीच में बिना जरूरत के भी किसी अच्छी लड़ी डाक्टर को बुला लेना। यह कहकर उहाने उसका मुह चूम लिया। उसके बाद मनिया मिल्विया से गल मिली। दाना सहैरियो की आँखा में धूप उँह का खल चल रहा था। दोनो की आँखें आसुआ से चमक रही थी, पर दाना साथ-साथ प्रेमपूर्वक मुस्कराती भी जाती था। फादर जेरैमिया और मैं लडे-लडे मौन मुग्ध भाव से वह अत्यंत भाविक रूप से मधुर दृश्य दल रहे थे। जब इंजिन ने सीटी दी तब दोना ने अघमुदी आँखा से एक-दूसरे का मुह चूमना शुरू कर दिया। पूरे एक मिनट तक दाना गाढालिगन की अवस्था में खड़ी रही। श्रीमती रालिंसन बाहर उतर गयी थी। त्विडकी से भीतर का भाँककर उहोने उतरन का आग्रह करते हुए कहा— 'सिल्विया, गाडी छूटने को है। जल्दी नीचे आओ।' तब दोनो की तमय अवस्था भंग हुई। जब सिल्विया उतरने लगी तब मनिया डिब्बे में ही उस एक कोने में ले गयी और उसके कानों में कुछ फुमफुमायी। मिल्विया के प्रसन्न मुख पर हल्की सी लाली छा गयी। जब वह नीचे उतर गयी तब मनिया न नटपट लडकी की तरह तनना से इगारा करते हुए कहा— 'दखना इसमें काइ चूक न रहने पाब। जब मैं लौटकर आऊँगी तब अपने मन की बात पूगी हुई न पाऊँगी तो तुमसे बहुत गुस्ता हूँ।'



सिल्विमा के मुख पर यद्यपि स्निग्ध मधुर मुसकान छायी हुई थी, तथापि उसके मुख की लालिमा गाढ़ से गाढतर हो चली थी। उसकी उन लालिमा से मुझे यह समझन में दर न लगी उसका इंगित किस आर है। निश्चय ही फादर जेरमिया को भी समझ म काई भ्रम नहीं हुआ होगा। फादर जेरमिया न जब गुड़-बाई कहने लिय मनिया की आर हाथ बटाया तब मनिया न अपना भी हाथ बटा अत्यंत दुष्टतापूर्ण कटान से उनकी ओर दन्वते हुए कहा—“मैं आगा क हूँ जब मैं तौटकर आऊँगी तब आपका बदल हुए रूप म पाऊँगी।”

बन्वास भला आदमी अक्बका कर रह गया। मैं दल रहा था उनका कान तन नाल हा आया था। मुझे मनिया की वह दुष्टता तो भी पसन्द नहीं आयी। मैंन था तरेरते हुए उस आगे और कोई दुष्ट की बात कहन के निय मना किया।

अपन का उस सक्वचपूर्ण स्थिति से मुक्त करन का प्रयत्न करत फादर जेरमिया न कहा—‘अच्छा अब चनता हूँ। मैं आगा करत तुम लागी की माथा बहन सुन्द रहगी।’ यह कहकर वह मरी ओ और मुझमे हाथ मिलाकर नाचे उतर गये।

गाड़ी धीर म चलने लगी। बाहर ताना न “बियरियो !” का हम लागी की आर रमाल हिलाना आरन कर दिया। मनिया स उज्वल प्रीला स तीनों का आर हाथ जोडे रही। मैं मुख पर प्रेम मुसकान नदकान की चपटा कग्ना हुआ बवल उन लोगों की आर दे रहा। जब गाड़ा प्लटफाम छाडकर आग निकल गयी तब हम दाता ही सीट पर बठनर विडकी से बाहर क्षण-क्षण बदलने वाली दुनिया दृष्य दलन लग।

दो दिन और दो रात के चक्कर से बहुत थक जान के बाद जब तीसरे दिन हमारी गाड़ी हवडा स्टेगन पहुँची तब चारा और से कालाहन मुनवर मनिया क अनान जसे चौक उठे। उसके चेहरे से पता चलता था कि वह घबरा मैने मीठी मीठी बातों से भरसक उसे आश्चस्त करन का प्रयत्न क्रेके मे सब सामान निकलवाकर ठले म लदवाकर ठेनेवालो को पता बतलाकर मै मनिया का हाथ पकडकर, धीर मे भाड के से उसे बाहर ले गया जहाँ टक्सिया की कतार लगी थी। थगल- "बाबू जी, कुली चाहिये ?" साहब रिक्शा चाहिये ?" "बाबू की चाहिये ?" आदि प्रश्ना की झडी लग गयी थी। पास ही बस थलग शोर मचा रखा था। एक टक्सी बुलाकर मैने मनिया को ओतर बिठा दिया और फिर स्वय भी उसकी बगल मे बैठ गया। मे म जो तत्काल आवश्यक सामान रखा था उसे मैने कुलिया क लावा लिया था। उसे टक्सी के पीछे रख दिया गया। टक्सीवाले ने कहा कि सीधे ग्रेट ईस्टन होटल ले चले।

होटल के दरवाजे पर जब माटर ठहरी तब हम दोना उतर गय। परी-क्लक से पूछन पर पता चला कि हम रोगो क सौभाग्य से एक अच्यो मा कमरा खाली है। अपना नाम धाम लिखाकर हम धारी नौकर के साथ लिफ्ट पर चक्कर ऊपर गय। कमरा खुलने के भीतर प्रवेश किया। कमरा वास्तव म साफ-सुधरा और सुगुण था। रोगानी और हवा की कोई बमी वहाँ नहीं थी। कमरा की तरफ खुला था और काफी अच्छी हवा आ रही थी। दा सिंगल बेडगा पर मोटे गद्दे बिछे थे। फर्श पर कार्पेट बिछा हुआ था। ओर एक किनारे पर नीले लहरदार कपडे ग मढी हुई दा गद्दे राम बुसियाँ और एक कीट करीने से रखे थे। उनके अलावा दो फिस चेरन तीन बाना म रखे थे। पश्चिम की ओर एक ड्रेसिंग र एक बहुत बडा गीगा लगा हुआ था। स्थान-स्थान पर छोटे-छोटे टेबिलो पर जालीदार कपडा बिछा था।

मनिया स्पष्ट ही बहुत थकी हुई थी। जले और माडी उतारकर

श्रीर एक बार गाने में अपना मुरझाया हुआ चेहरा देखकर २४५  
वह चौंकर पर लट गयी। मैं भी उसकी बगल में एक सोफा

पर गठ गया और एक मिगरेट जलाकर धुआ उड़ान लगा। बाहर से  
मोटरों के भापुआ की आवाज, बसा की घड़घड़ाहट, गाड़िया की खड-  
खडाहट और कुछ दूर से ट्रामा की गडगडाहट और पाव धटिया का शब्द  
निरन्तर बिना तनिक भी विराम के कानों में गूँज रहा था। मनिया तो  
ऐसी पस्त पड़ गयी थी कि उसने दोनों आँखें मूँद ली थीं। वह कुछ भी  
बोल सकने की शारीरिक और मानसिक स्थिति में नहीं थी।

मैंने धीमे से कहा— 'क्या कुछ चाय-बाय पिओगी ?'

वह उत्तर में बुँठ नहीं आती। मैं जानता था कि उसे नींद नहीं आयी  
है, क्योंकि रात में वह काफी सो चुकी थी। पर उसका मौन स्वाभाविक  
था। नामान नीतर रखवा दिया गया था। एक बार इच्छा हुई कि  
कपड़े उलटकर उठा लिया जाय, जिससे शरीर में कुछ फुर्ती आ जाय। मैं  
भी दो दिन और दो रात की यात्रा से कुछ कम थका हुआ नहीं था।  
इसलिये आलस्यवश बठा ही रहा।

घोड़ा दर बाद एक बरा आया। बोला— "साहब के लिये चाय  
लाऊँ"

मह मनचाहा प्रश्न उसने पूछा था। मैंने कहा— "हाँ, ले आओ,  
दो आदमियाँ के लिये।"

मनिया में करवट बटली। मैंने अनुमान लगा लिया कि चाय के नाम  
से ही उमम करवट बदलन की फुरती आयी है। मैं मन-ही-मन हँसा,  
पर बाना बुँद नहीं।

चाय आयी। एकदम चाँदी से चमकत हुए एक चाँद ट्रे पर काम  
किया हुआ चीना सेंट बट करीब से रखा हुआ। दा तश्तरिया में टोस्ट  
भी रम थे और एक बत्तार में मक्खन भलग। बरा ने बड़ी सफाई से उसे  
एक मज पर रख दिया और फिर दो कुर्सियाँ भी मेज के सामने लाकर  
रख दा।

"चाय के साथ और कुछ लाऊँ सरकार ? ग्रामलेट, फ्रेंच बटलेट या  
और कोई चीज ?"

मैंने केवल सिर हिलाकर जता दिया कि और कुछ नहीं चाहिये। धनुष टकार रोग से ग्रस्त व्यक्ति की तरह गरीर झुकाकर उसने सलाम किया और कहा—“जा हूवुम !”

उसके चले जाने पर मैंने जानबूझकर कुछ जोर से प्याली को घन नाना घुंर किया और दोना प्याली में ‘पाट में चाय उँडेलकर दूध डाल कर चम्मच से चीनी मिलाने लगा। चम्मच भी मैंने कुछ जोर से खनकाया। मनिया न फिर करवट बदली। मैं फिर भी कुछ नहीं बोला। मुझे बड़ा रस मिल रहा था। मैं जब कुछ नहीं बोला तब उसने बस कर एक अँगड़ाई नी और कृत्रिम जम्हाई लेने की आवाज मुह से निवाली। मेरे लिये हास्य को अधिक दवाना असंभव हो गया और मैं “हो हो” करके हँस पड़ा।

मनिया उठ बठी। बोली—‘बड़ी हँसी प्रा रही है तुम्हें ! कलकत्ता तुम्हारा बड़ा प्रिय शहर मालूम हाता है क्या ? इमीलिय इतने मगन हो रहे हो !’ कहकर वह मेरी बगल में कुर्सी पर आकर बठ गयी।

‘सचमुच कलकत्ता मुझे बहुत प्रिय है। यहाँ के जीवन की व्यस्तता, बोलाहल, भीड़ भ्रमंड ठेलमठेना ये सब जीवन में एक दूसरे ही—घोर यथाथवादी—पहलू से परिचित कराते हैं। आधुनिक युग के यथाथवादी जीवन के दो सिरे—गोपक और गोपित—के बीच मुठभेड़ के अलावे कलकत्ते की ही तरह क बड़े शहर हात हैं। वह भी एक महान दस्य होता है। आकस्मिक मृत्यु की घटनाभा, अकारण और मकारण हत्याभा, जीवन-संधप के अग्निबुएड में निद्रद वृदन वाले अपराधियां, साहमी अथवा दुस्साहसिक व्यक्तियों, प्राणिकारियां, अथा और समाज के विरुद्ध विद्रोह करने वालों का जो ताता यहाँ प्रतिक्षण लगा रहता है, इस युग के जीवन का चरम विकसित रूप वहाँ है।’

मनिया धीरे से चाय पीती हुई बड़े ध्यान से मेरी बातें सुन रही थी। मैंने सूत्रों में आज पहली बार जिस दुनिया की तस्वीर उमके प्राग रूपने का प्रयत्न किया था वह उसके लिय एक बिलकुल ही नय और अनाविष्ट रहस्य का विषय थी। जीवन की इस सामूहिक यथाथता का असत्य उमत्त लहरों से उच्छ्वमित महासागर उसने ममूरी अथवा उसके प्राग

पास के पहाड़ी वातावरण के भीतर सबद्व और सीमित २४७  
जीवन की क्षीण पहाड़ी धारा से किसी प्रकार का भी मेल

नहीं खाता था। पर हवड़ा स्टेशन पर उतरने के समय से ही इस विराट, तूफानी जीवन के अस्पष्ट गहन, चीत्कार और क्रन्दन का मम्मिलित, उत्ताल महारव एक नयी भरवी महामाया का महामन उसके सुबुमार प्राणों में अनात ही रूप से फूँकने लगा था, ऐसा मुझे लगा। इसलिये उस अज्ञात किंतु अनवरुद्ध जीवन का जा स्फुट परिचय मैं उसे दो चार विस्फोटक वाक्या द्वारा देने का प्रयत्न किया उसी जस उसके मन के उस स्तर पर कपन उत्पन्न कर दिया जो अभी तक न जान कितन युगा से जड़ अयम्या में अछूता पड़ा था। स्पष्ट ही वह न तो मेरी वाता को ही कुछ ठीक से समझ पा रही थी, न अपने भीतर के उम कपन को ही। केवल एक सुगभीर कुतूहल भरी मार्मिक दृष्टि से मेरी आर दख रही थी।

मैंने आगे उस विषय की कोई चर्चा फिर नहीं की। वह भी चुप हो रही। धूट धूट करके चाय पीती हुई गौर बीच बीच में एक टुकड़ा टास्ट का मुह में डालती हुई जैसे भीतर ही भीतर उस रहस्य को मुलमान का अमभव प्रयत्न कर रही थी जिनका मभवत अपनी आर छोर हीन वाली काली कुंडलिया में आज सुबह से ही उनके मन को सहस्र छाया-पागा में लपट-सा लिया था।

उस अप्रिय और अनचाहे मौन का कुछ दर बाद मैं ही मग किया। एक टोस्ट पर चाकू से मक्खन लगाते हुए मैंने कहा—“तुम अभी अपने पहाड़ी नीड के स्वप्न सभार से अचानक एक अज्ञात तूफानी नमुद्र के किनारे भा सडी हुई हो। इसलिये यह एकदम अपरिचित वातावरण अपनी दूसरी अज्ञानि में अभी कुछ समय तक तुम्हारे मन को ऋक्भागता रखा। पर मेरा विश्वास है कि दो ही-चार दिन बाद जब इस समुद्री किनारे से तुम्हारा नाम मात्र का भा परिचय हो जायगा तब तुम भी मेरी ही तरह उमम रस लेने लग जाओगी। उसकी अपार रहस्यमयता से एकदम अपरिचित रहने पर भी उम रस में कोई कभी नहा जाने पायती।”

मनिमा पूर्ववत् मौन ही रही। केवल अपनी झूझली आंखों में जिज्ञामु दृष्टि से मेरी ओर देखती रही।

चाय पी चुकने के बाद मनिया गुसलखाने चली गयी ।

प्राय बीस मिनट बाद नहा धोकर कपड़े बदल कर जब

आयी तब एक आश्चर्यजनक ताजगी उसके मुख पर चमक रही थी । न  
 वहा क्वाचित्ति का कोई लेश बतमान था न चिंता और न भय की कोई  
 रेखा । सहज स्वाभाविक रितम्भ मुसकान से उसका चेहरा खिल गया  
 था । बोली—“अब तुम भी जल्दी नहा धो ला । रास्ते की सारी थकान  
 दूर हो जायगी ।”

मैं तत्काल उसकी आज्ञा का पालन करने के लिये उठ खड़ा हुआ ।  
 कपड़े उतारकर एक लुगीनुमा बड़ा तौलिया पहन कर गुसलखाने में  
 जाकर बरहा गया । नहाने के बाद मैंने सचमुच अपने की तरौताना  
 पाया । बाहर निकल कर दखा मनिया कमरे में नहीं थी । कपड़े बदल  
 कर बाहर बरामदे में गया । मनिया एक कुर्सी पर बठी हुई बाहर सड़क  
 का दृश्य दखन में तल्लीन थी ।

मैंने परिहास के स्वर में कहा— ‘तुम्हारा जी तो यहा अभी से रमने  
 लगा है ।’ वह सचमुच अयमनस्क हो गयी थी और न जाने किन स्वप्नों  
 अथवा दु स्वप्नों में भग्न थी । मरी आवाज सुनकर चौंक-सी उठी, बोली—  
 ‘सचमुच बड़ा ही विचित्र गहर है तुम्हारा यह कलकत्ता ।’

यह आदिप्लार तुमन किस बात से किया ?

दतनी माटरें, यमें लारियाँ और गाडियाँ उलटी दिशाओं को घहने-  
 वाली नो धाराओं की तरह चली जा रही हैं पर रास्त में पदत चलने  
 वाले स्त्रा पुरपा का उनसे कुछ भी भय नहीं मानूम होता । वे उन मोटरो  
 की ओर से इस तरह उपासीन लगत हैं कि एक बार आँव उठाकर भी  
 उनकी ओर दगन की चेष्टा अपनी तरफ से नहीं करते । अपने आप वे  
 उनकी आखा के सामन आ जायें तो पल भर के लिये अत्यत उपेक्षा स  
 उनकी ओर दखकर तत्काल आँखें फेर लेते हैं । उनका एकदम पीछे में  
 और दगल सं भापुओं की काना के पर्दे फाड डालने वाली, मन का दहला  
 देने वाली आवाज गूजती रहती है पर वे कभी एक क्षण के लिये भी  
 न तो नौटकर उनकी ओर दखत हैं, न भीत होते हैं । बडे घम से बाइ  
 आर एक आध कल्प वेमानूम हटकर चलते ही रहते हैं । और कितो

नगत हूँ पदल चलने वाले से बड़े लोग । उह न ता

२६

न-बगल और अपने सामने का कोई दृश्य देखने की

है, न किसी से एक सेकेण्ड के लिये भी बान बरने की । केवन  
अनात लक्ष्य की ओर बढ़े चलना ही जम उनके जीवन का एकमात्र  
है । ”

उसकी बातों के ढग स मुझे काफी आश्चर्य हुआ पर प्रकट न उस  
परिहास के रूप में ग्रहण करता हुआ मैं बोला—“इतनी ही न म  
कलकत्ते की एक सड़क के इम साधारण में दृश्य न इतना बड़ा  
निक बना डाला । अब तो मानागी कि कलकत्ते का कितना बड़ा  
प है ।

“तुम मरी बात का कनो ही हँसी म क्या न उजाआ उससे उनका  
ख कभी नष्ट नहीं होता । और वह फिर मडक की आर द्यने  
।

मैं न कहा—“इम बरामद न सडक का दृश्य देखते रहने से कलकत्ते  
विोपनाया का बगलमात्र नान भा तुम्हें नहीं हो पावगा । चला, बाहर  
लें । कुठ घूमो से मभव है याडान्ना अदाज तुम लगा पाया ।’

‘ मुझे इस समय कही जान की इच्छा नहीं है । तुम चाहा ना घूम  
या, मैं यहीं बटे-बटे दखती रहूंगी ।’

मैं कुठ खीभ उठा । बोला—‘ तुम पाल हो । हम लाग क्या बल-  
ने इस तरह बटे रहने के लिये आय हैं ? कनो उठो । जदा का ।’

मने हठ करन पर वह उठी । सहमा बगल वाले बमरे स एउ पगन-  
भारतीय महिला—जिनकी आयु तीस पतीस के करीब हाी—बाहर  
न आयी और दटे कुतूहन मे हम लागों की ओर द्यन नाी । मनिया  
प्रार दखर व एक विचित्र ढग मे मुखरान लगा । स्पष्ट ही  
नकी बगमूया उहें अप-नु डेट’ नहीं लग रही थी । समस्त कलकत्ते  
घेट इन्न हाटन म ठहरने वाला की तरह न ता उनका हाव भाव  
उह लग रहा था और न गायद बातचीत का ढग ही । मनिया न  
कुतूहली दृष्टि से उनकी ओर दया । वह भी उन पगनवाली महिला  
किसी खू म रमे गये एक विचित्र जीव की अथवा अधिक महत्व

नहीं दे पा रही थी। महिला ने बरामदे में ही अपना कमरे की धार एक झिलि भरी मुसकान से दया। तत्काल सूट चूट और हैट धारी एक हिन्दुस्तानी साहब बाहर निकल आय और महिला की ध्यग भरी मुसकान का अनुसरण करते हुए उठान हम लोगों की ओर देखा। पट की दोनों जेबों में हाथ डालते हुए वह हलक नीले रंग के चश्मे से हम लोगों की ओर ऐसी विचित्र दृष्टि से दपने लगे कि जान पड़ता था जस केवल दृष्टि मात्र से जलाकर हम भस्म कर देंगे। मैं भी पन्टे में उनकी ओर क्रुद्ध दृष्टि से देखा और फिर मनिया से कहा— 'चलो, यहाँ बठना बकार है।'

भीतर जाकर मैंने फोन द्वारा क्लक को आदेश दिया कि हम लोगों के लिये एक टक्की मंगा दी जाय। प्रायः दस मिनट बाद बरा न सूचित किया कि टक्की खड़ी है। उसके बाद ही एक दूमरे बरा ने आकर बताया कि ठेलवाले सामान ले आये हैं। मनिया तयार हो गयी थी। मैं पहले ही से तयार बठा था। नीचे जाकर मैंने क्लक को ठेले का सामान ऊपर हमारे कमरे में पहुँचाने का भार सौंप दिया और उसके पास एक सप्ताह के अग्रिम भाड़े के घलावा सी रुपया घलग से जमा कर दिया। वह मनिया कि ठेलेवाला को उचित मजदूरी दे दें।

उसके बाद हम दोनों टक्की पर जा बटे। टक्कीवाला एक पगड़ी धारी पगवी था। उसके प्रश्न के उत्तर में मैंने कहा— 'हम लाग सर करन के इरादे से आये हैं, तुम्हारा जिपर जी चाहे ले चला।'

उसने फिर कोई प्रश्न नहीं किया। उसने चौरगी की धार टक्की मोड दी। चौरगी से भवानीपुर हाना हुआ वह बालीगज की धार ले गया। वहाँ भील के पास ले जाकर टक्की एक जगह खड़ी कर दी।



ये । हम दोनों उतर गये । मनिया न इसके पहले भीतर नहीं दखी थी । देखकर वह मुग्ध हो गयी । बच्चा की मिनट हाकर बोली— 'एक बार पदल चलकर पूरी भील का गाया जाय ।' मैंने कोई आपत्ति नहीं उठायी, यद्यपि मैं पदल गान की स्थिति में अपने का नहीं पा रहा था । दा एक जगह कल्हार के फूला को देखकर उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न पानी— "पानी में कमल खिलते हैं यह मैंने सुन भर रखा था, आज देख रही हूँ ।" गहर के कालाहल से यहाँ का अपवाहनावरण उसे स्वभावतः प्रिय लग रहा था । काव्यमय वातावरण जो युवन-युवतियाँ वहाँ भ्रमणाय आय हुए थे वे दडे गौर और देख रहे थे । यद्यपि उसके पोशाक-पहनावे में कोई नया या विनातीयता नहीं थी, तथापि उनकी आकृति और ऊपरी बका, न जान क्या, विशेष कौतूहल-वधक लग रही थी ।

दूर तक चक्कर लगान के बाद मैंने भील के किनार एक बेंच पर बैठने का प्रस्ताव किया । मनिया न मेरी बात मान ली । तब तब बह भील की ओर अनमनी आँखा में देखती थी— 'क्या यही आस-पास में कोई मवान निराये पर नहीं मिल सकता, पता नहीं क्यों, मेरा जी घबडाने लगता है ।'

वह— "बिना पता लगाये मैं कुछ बता नहीं सकता । पर जैसी स्थिति है उसे देखते हुए ऐसी आशा नहीं हानी कि कोई जाली मिलेगा ।'

कोशिश करके देखना चाहिये, हो सकता है, भाग्य से मिल जाय ।" मैंने कोशिश में कोई कमी नहीं करूँगा, विद्वाम रखा ।' मैंने

के एक ही स्थान पर बठ रहने में कोई विशेष सुख नहीं मिल रहा था । दूर तक मौन बठे रहने के बाद मैंने चलने का प्रस्ताव किया । अनिच्छा से, बहुत धीरे से उठी । हम भाग बढ़ना ही चाहते थे । आलीगान रोड्स रोड्स बार की रात का दिन हमें एक

किनारे खड़े हो जाना पड़ा। 'कार' सहसा ठीक हमारे सामने खड़ी हो गयी और भीतर से किसी ने आवाज दी—

“हलो नृपद्र !”

मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कलकत्ते आकर वालीगज की भील के पास किसी परिचित व्यक्ति से भेंट होना ही कल्पना में स्वप्न में भी नहीं कर सकता था। मैं अत्यन्त आतुरता से उस व्यक्ति के उतरान की प्रतीक्षा कर रहा था, जिसका चेहरा भी मैंने अभी ठीक सप्ताह देखा था।

कुछ ही देर बाद मैंने देखा, एक किंचित स्थूलकाय गौरवपूर्ण युवक, गरम कृता और धोती बगाली ढग से पहने परम प्रेमपूर्ण मुसकान मुख पर झलकाते हुए मेरे सामने खड़ा हो गया और आते ही एकदम मेरे गले से ही लिपट गया। मैं तो दग था। युवक बोला—‘यार, तुम तो बहुत बदल गये हो ! पर इतने वर्षों बाद आज अचानक तुमसे भेंट होने पर भी मैं तुम्हें पहचान लिया। शायद तुमने मुझे पहचाना नही ? तुम्हारी आँखों से ऐसा ही लगता है !’ फिर एक बार कनखिया से मनिया की आँर देखकर धीरे से उसने पूछा—‘बहू क्या तुम्हारी वाइफ है ?’

मैंने केवल मिर गिलाकर उसके इस प्रश्न का उत्तर दिया। मैं अपनी स्मृति पर यह जानने के लिये दबाव डाल रहा था कि आखिर वह युवक कौन हो सकता है। पहले तो मुझे उमका चेहरा एकदम अपरिचित लगा था, बाद में धीरे धीरे यह अनुभव होने लगा कि ओठा के इद गिद खेलने वाली वह मुसकान और बोलने का यह ढग निश्चय ही पूर्य परिचित है। पर उसका नाम क्या है ? कब कहाँ उससे परिचय हुआ था ?

वह ऐसा प्रसन्न था कि उसकी आँखों के कोनों पर एक हलकी सज लता भी छा गयी थी। मेरे स्मृति भ्रम से वह स्पष्ट ही अच्छे बिनाद का अनुभव कर रहा था। बोला—‘अभी तक पहचाना नहीं ?’

मैंने कहा—‘चेहरा पहचाना हुआ तो लगता है, पर

‘पर नाम घाम माद नही आता ? अरे यार, अब तुम बड़े आदमी हो गये हो। आखिर हम गरीबों की स्मृति को कब तक अपने भीतर

सचित्त क्रिय रहते ! फिर भी दिमाग का—माफ करना  
 मन्तिष्क का—क्याकि तुम उदू शब्दों में चिढ़ते हो—कुछ  
 कष्ट दन की कृपा करो !'

२५३

सहमा त्रिजला के वेग स मेरी कुडलिनी जमे जगी । "ओ हो !  
 अब पहचान गया ' मैं परम प्रसन्न होकर पूरे आवेग के साथ बोल उठा ।  
 "पर मित्र तुम यहां कहीं ! ' कहकर मैं उनके कंधे पर हाथ रख  
 लिया ।

' अच्छा पहचान गया हा तो मेरा नाम बताओ ! ' उमन पुनरित्त  
 होकर कहा ।

'अर भाइ अब अधिक न भेंपाओ ! 'पार्सिंग गो' को झूलकर मैं  
 यों ही काफी बडा अपराधी बन चुका हूँ ।'

'पार्सिंग गो' के नाम स वह मुक्त हास्य कर उठा । अबकी मकी  
 दाना प्रांचे प्रनन्नतानिरक मे निकल हुए आमुष्ठा के कारण स्पष्ट चम-  
 बन लगी ।

वह था वीर द्रकुमार । दुनिया के निय वह कुवर वीरेन्द्रकुमार सिंह  
 था, पर मर लिय वह था तो केवल वीरेन्द्र था या 'पार्सिंग गो'—जिस  
 प्रकार मैं उसके लिय केवल नृपद्र था, कुवर नृपद्ररत्न सिंह नहा । हम  
 दोना 'राजकुमार कानेन' म साथ ही पट्टे थे । हम सब म उपद्रवी  
 लडका यही वीरेन्द्र था । दिन रात वह होन्टल मे लघम मचाया करता  
 था । उसक लघम मचान के तरीके भी विचित्र रहा करते थे । उनक  
 'व्यावहारिक परिहाना के मार सहपाठिया की नींद हराम हा गया थी ।  
 कभी वह किसी लडके की अनुपस्थिति म उसके दान वाले कमर में  
 दीवार क ऊपर 'स्काइ लाइट' वाली बिन्धी या दरवाना खालकर वहां  
 पर मुन मूह वाना एक विशेष प्रकार का भापू रख देता था और उन  
 पर खर की नती का कनेकान जाटकर आधी रात म, जब दूमरे कमरे  
 वाना लडका सोता होना, दगल वाले कमर म खर की नती पर जार मे  
 फूक मारता । उसकी प चजय गल की-मी धावाज मे लडका चौंकर उठ  
 बठता । फिर दूमरी बार फूक मारने पर तिरौह लडका ठीक अपन सिर के  
 ऊपर वह भरव घोप मुनकर हडबहाता हुमा उठकर जब कमरे की बिजली

जलाता और वही किसी को न पाता तब उसकी धवगहट की कल्पना आसानी से की जा सकती है। वभी उसी रजर की नली का पानी से भरी हुद एव चरती फिरती टकी ('मागर') क मुह म लगाकर आधी रात म पेंच खोल देता और बगल के कमर म अरुत्मात अप्रत्या- गित रूप म जो प्रबल प्रवाह हान लगता उसका प्रभाव भी अनुमानातीत नहीं है। एक धार उसने एक विचित्र पेंचदार कुर्ती तयार करवायी थी। जब कभी किसी छात्र को परिहास-पात्र बनान की इच्छा उसे होनी तब वह बड़े आदर से उसे उस कुर्ती पर बिठाता। उमवे बाद पीछे जाकर चुपके से कुर्ती का एक विशेष पेंच ढीला कर देता। तरफाल कुर्ती बढने बाल को जीवित मनुष्य की तरह जकडकर अपनी बाहा म ऐसा बस लेनी कि फिर उस प्रेमालिगन से छुटकारा पाना उसके लिय अमभव हो उठता। चारा धार से ठहाके लग जाते। कवल छात्रा को ही नहीं अध्यापकों को भी बवकूफ बनाने से वह बाज न आता। 'पासिंग गो' नाम उसका इस- लिय पडा था कि स्त्रिया क प्रति वह विमुख-सा रहा करता था। जब कभी रास्त म, पाक म, मिनेमा म या मले टले म मित्रगण उसका ध्यान किसी मुदर युवती की ओर आकर्षित करते तो वह उपेक्षा का भाव जतात हुए कहता—“अर म्या हटाओ भी, यह केवल पासिंग शो है। ऐसे न जाने कितने 'पासिंग गो' प्रतिदिन प्रतिपल गुजरते रहते हैं। इस सवध म सबसे मजे की बात यह थी कि वह 'पासिंग शो' सिगरेट का बडा प्रमी था। उसके साथी ६६६ नंबर की स्टेट एक्मप्रेस या उसी की कोटि का बन्धिया और कीमती सिगरेट पीते थे, पर वह भरसक 'पासिंग शो' के अनिश्चित दूसरी कोई सिगरेट पीना पमद ही न करता।

मनाक-पसद वह भले ही हो, पर हृदय की जितनी बडी उदारता उसम भरी हुई थी उतनी अपन कालेज के किसी दूमरे लडक म मैंने नहीं पायी। किसी भी सक्डप्रस्त व्यक्ति को—चाह बर उमी की श्रेणी का हो, चाह नौकर हो, चाह भगी हो—मुहमांगी आर्थिक सहायता देने म उसका हाथ वभी पीछे नहीं हटता था। केवल आर्थिक सहायता ही नहीं, दूसरे के हित के लिये वह कोई भी श्रमसाध्य काय करने से भी नहीं हिचकता था। हमार मेम के महाराज को होस्टल के अहाते म ही रसोईखाने की बगल

म, दो कमरे रहन के लिये दे दिये गये थे, जिनम वह अपने

२५५

परिवार के साथ रहता था। एक दिन उसकी बारह साल की एक लडकी किसी एक विचित्र रोग से दो ही दिन के भीतर मर गयी। डाक्टर ने कहा कि प्लेग से मरी है, हालांकि मुझे पूरा विश्वास है कि वह प्लेग नहीं था—मेनिंगजाइटिस या इसी तरह की काइ दूसरी बीमारी रही होगी। कोई आदमी उस लडकी को घाट पहुँचान को तयार नहीं हुआ। वीरेन्द्र ने जब सुना तो उसने अपने नौकर का अच्छा सा आर्थिक प्रलाभन दकर राजी किया और उसका साथ लेकर स्वयं महाराज के यहा जा पहुँचा। वह अपनी कार पर लडकी को घाट पहुँचाकर उसकी णह क्रिया कर आना चाहता था। पर महाराज का संस्कारप्रस्त मन इस प्रस्ताव के लिये राजी नहा हो पाता था। फलत वीरेन्द्र न सामान मँगाकर अर्था तयार करवायी। उसके बाद महाराज से और अपने नौकर से कहा कि वे आग की तरफ अर्था का कंधे पर सँभाले रह और स्वयं अकेले उसन पीछे का भार अपने कंधे पर सँभाल लिया। उसक बाद राम-नाम की महिमा का नारा लगाते हुए श्मशान म लडकी की दाह क्रिया शास्त्रीय विधि से करके होस्टल वापस आया। उसकी दान-शीलता, उदारता और साहस की और भी बहुत सी घटनाआ से मैं परिचित था।

। कालेज म जब वह पढता था तत्र वह तगडा जरूर था, पर इम कदर मोटा नहीं था। मैंने कहा—“यह तो बताओ मित्र, कि तुम किस खुगी म इस कदर फून उठे हो ? इतने मोटे तो तुम पहले नहीं थ ।”

फिर एक बार वह मुक्त भाव से ठहाका मारकर हँस पडा। फिर धीरे से बाला—“पर यार, बात तुमने पते की कही है। सचमुच मरा शरीर खुगी से ही फूना है। तुम्हें पता नहीं है, कालेज छाडन के बाद बीच मे मैं बहुत डुबला हो गया था। डाक्टरा ने मुझे ‘घाइसिस’ तक बता दिया था, हालांकि ऐसी कोई बात नहीं थी। बाद मे जब मेरी गादी हुई तब दिन पर दिन मैं मोटा होता चला गया। वास्तव में इट वाज ए बेरी हैपी मरिज ! इस शादी के पीछे भी एक किस्सा है, तुम्हें पीछे बताऊंगा। पहल धलो तुम्हारी बहू से तुम्हारा परिचय करा दूँ। वह

मोटर में बठी आश्चय म पडी होगी कि रास्ते में मोटर रोक कर किस आवारगर्नी के चक्कर में मैं पड गया ।”

मैंने कहा—“परिचय अवश्य कराओ, पर देखो, मेरे साथ चालाकी करन से तुम फिर बाज नहीं आ रहे हो । वह मेरी बहू कस हा गयी ? भाभी क्यों नहीं हुई ?”

इस बार वह इतने जोर से “हो हो !” बरके हँसा कि अगल बगल स होकर गुजरनेवाले भ्रमणार्थी स्त्री-गुरूप बड़े गौर से हम लागा की आर देखन लगे ।

अट्टहास का फिट' हलका पडन पर बीरेन्द्र बोला—“पर यार, तुम हो बड़े धूत । मेरी कोई भी चालाकी तुम से कभी छिपी न रही । अच्छा भाभी ही सही अब चलो ।”

मैं उसके साथ मोटर तक गया । मोटर के भीतर जो महिला बठी थी उनकी ओर मैंने जब एक बार पूरा दृष्टि स देखा तब अप्रत्यागित आश्चय से मैं चकित रह गया । घुप अधेरे में चलते हुए जब विसा सच साइट की राशनी ठीक आखो पर आ टकराती है तब सहसा आखा म चकाचाध लगन के साथ ही एक हलका सा धक्का भी लगता है । ठीक वही हाल उस महिला को निकट से देखत ही मरा हुआ ।

बीरेन्द्र न मोटर के भीतर का आर मुह करत हुए कहा—‘शोभना, यह देखो तुम्हारे लिये रास्ते में पडा हुआ एक देवर खोज लाया हूँ । इसका नाम है कुंवर नूपद्ररजन, मेरा कालेज का घनिष्ठतम साथी । रजन यह है शोभना मेरी धमपत्नी और तुम्हारी भाभी ।’

मैंने महिला की ओर हाथ जाड़े और उ-होने भी प्रत्याभिवादन किया । अत्यंत शालीनता स, सुसयत मुसकान मुख पर भलकाती दृइ बाला—“बडी प्रसन्नता हुई आपसे मिलकर ।”

“अर भाई, बहू को भी तो ले आया । उनसे हम लोगो का परिचय कराया । मैं तो उ-ह भाभी ही बनाना चाहता था, पर जीन तुम्हारी ही हो गयी ।” कहकर फिर एक ठहाका उसने लगाया । फिर बोला—“अच्छा जाओ उ-हें ले आओ ।”

बीरेन्द्र क छुट्टा ठहाका के चक्कर में पडकर मैं मनिया को जते

भूत ही गया था। जाकर उसे लिवा लाया। जेठानी दब २५७  
 रानी आपस में बड़े ही प्रेम से मिली। बीरेन्द्र से भी मैने  
 मनिया का परिचय करा दिया। बीरेन्द्र में अब तक मेरी जो बातें हुई  
 थीं उनसे मनिया निश्चय ही यह समझ गयी होगी कि वह मरा घनिष्ठ-  
 तम मित्र है। इसलिये उसके प्रति भी उसने आतिथ्य गृह्यतापूर्वक  
 हाथ जोड़े।

पारस्परिक अभिवादन का पक्ष जब समाप्त हो गया तब बीरेन्द्र ने  
 गंभीरतापूर्वक प्रश्न किया—“अच्छा, यह तो बताओ तुम कलकत्ते में  
 कब से हो और वहाँ ठहरे हो ?”

मैं उसके प्रश्न का उत्तर देने के अतिरिक्त यह भी बता दिया कि  
 बालीगज की ओर जान का हम लोगों का कोई विचार नहा था और  
 टक्सी वाल का इस बात की पूरी छूट दे दी गयी थी कि वह ज़िब्र चाने  
 उधर ले चले। यह काकताली ही थी कि वह बालीगज की भौल दिखाने  
 हम ले आया और वहाँ सौभाग्य से बीरेन्द्र से भी भेंट हो गयी।

सब-कुछ सुन चुकने के बाद बीरेन्द्र की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं  
 था। उसने कहा—“यह सब अच्छे ही व लिय हुआ है। अब तुम वाना  
 मेरे घर चलो, पास ही है मरा मकान—यही बालीगज ही म। उमके बाद,  
 दोपहर में, हाटल से तुम्हारा सामान यहाँ उठा लायेंगे।”

मैं एक बार मनिया की ओर देखकर हँसा। वह भी मेरी हँसी का  
 अब समझ कर ससकाच मृदु-मद मुसकरान लगी।

“तुम लोग क्या हँस रहे हो।” नटखट बीरेन्द्र ने पूछा।

मैंने कहा—“यो ही। पर सच बात बताऊँ ? देखो भाई, रंगरेनी  
 में जा यह कहावत है कि 'दृष्य इज स्ट्रेंजर दन फिशन वह प्राय प्रत्यक्ष  
 घटने जा रही है। अभी अभी मनिया ने मुझसे कहा कि अगर इसी मील  
 के आस-पास कोई मकान किराये पर मिल जाता तो बड़ा अच्छा होता।  
 उसे यहाँ का अपना-कुन शांत वातावरण बहुत पसंद आया। शहर के  
 बोलाहल से यह बहुत प्यारी-सी हूँ है। मैंने उत्तर में कहा कि आरम्भ  
 पक्षी स्थिति है उम्में कोई मकान वाली मिल सकेगा इसकी आशा मुझे  
 नहीं है। इसने कहा कि वास्तव करने केवल में कोई हज नहा है। इस

वातपीत के कुछ ही मिनटों बाद तुम आ गये। और मने की बात यह कि तुम्हारा मकान इसी 'एरिया' में है। मैं बताओ, इस 'बोर्डिंग' में क्या जाय या सौभाग्य-चक्र ?"

वीरेन्द्र की आँखा में परिपूर्ण पुलक छलन उठा। बोला—“तब तो अब तुम लोगो से कम सबंध में अधिक आग्रह करने की कोई आवश्यकता ही नहीं रही, क्योंकि वहाँ अत्याधिक आग्रह करने से तुम अपनी इच्छा के विपरीत कोई बहानवाजी न करन लगा। चला, भीतर चला। भाभी—माफ करना—वहाँ, भीतर अपनी गैठाली की बगल में बैठ जाओ।” मनिया मरी आर दगल लगी।

वीरेन्द्र तत्काल बोल उठा—अरे अब उसकी ओर क्या दपती है? वह भाई का कहना मानोगी या छोटे भाई का? उसकी अनुमति की अब कोई आवश्यकता नहीं। सब जागा तो हमी आ गयी। मैं क्या कि इनके बड़े प्रेमाधिकार की अचना करने की शक्ति स्वयं प्रज्ञा में भी नहीं हो सकती। आँखा के इशारे से मैं भी मनिया से बैठ जान के लिये सह दिया। वह भीतर जाकर शांति भाभी की बगल में बैठ गयी। वीरेन्द्र ने मुझ को धीरे बठने का आदेश दिया। मैं कहा कि मैं आगे बैठ जाऊँगा, पर वह चिढ़ी आदमी, भला मेरी क्या सुनता। पलकपूर्वक मेरा हाथ पर ड उमल धीरे से भीतर बठेन दिया, और स्वयं आगे बैठ गया।

दरवाजे के पास पहुँचकर मैंने उसे हथेली भाँटा देकर विदा कर दिया। वीरेन्द्र का मकान सचमुच बहूँ ही निकट था। मकान काफी बड़ा था। गहारा भी गरीब नगी या और चारा और रसिग से घिरा हुआ था। नीचे का दरवाजा काफी चौड़ा था। उगने चारा ओर बड़े करीन से तरह-तह-तह के बिलासती फूलों के समूह रहे हुए थे। कुतियाँ भी बड़े बड़े नगी हुई



थी। जब हम लाग मोटर से उतरे तब मैं वीरेन्द्र और गोमना २५६  
भाभी का अनुसरण करता हुआ बरामदे की ओर बढन लगा।

इतने में पीछे से किसी न मरा काट पकडकर हलवा-सा भटका दिया। मैंने लौटकर देखा तो मनिया न आँखों के इशारे से मुझे बुलाया। वह कुछ दूर हटकर एकांत में जाकर खड़ी हो गयी। मैंने धीमे से पूछा—“क्या बात है?”

उमन उससे भी धीमे स्वर में उत्तर दिया—‘तुमने इन लोगों को यहाँ ठहराने का निश्चय तो कर लिया है, पर इन लोगों को अभी तक यह सूचित भी किया है या नहीं कि हम लोग ईसाई हैं? इन लोगों के बीच तुम भन ही रह लो, मेरे लिए तो असम्भव होगा।’

उमकी यह गवा स्वाभाविक थी। मसूरी में एक हिंदू लडकी के घर निमंत्रित होकर वह अपने प्रति लडकी के परिवार वाला का घणा-मूचक व्यवहार और उसके साथ बठकर चाय तब न पीने की बात अभी तक नहीं भूनी थी, और वह भूलने की बात भी नहीं थी। इसी कारण उसकी यह सावधानी थी। मैं अगर अकेला होता तो मेरे मन में कभी यह कल्पना ही न उठनी। मैं वीरेन्द्र को जानता था और उसके सम्बन्ध में इस तरह का कोई शक नहीं कर सकता था, इसलिये मैं मुस्कराने लगा। पर तत्काल मर घमान में यह बात आयी कि वीरेन्द्र के सम्बन्ध में मैं भन ही निश्चित हूँ, गोमना भाभी के सम्बन्ध में मुझे क्या जानकारी है? इस बात की पूरी सम्भावना है कि हमारी ईसाइयत की सूचना मिलने पर हम अनिश्चित रूप में अपने यहाँ रहने में उह आपत्ति हो सकती है। इसलिये मैंने मन ही मन मनिया की सावधानी के लिये उसे धन्यवाद दिया। बाला—“अभी हमारे यहाँ रहने की बात पक्की नहीं हुई है। अभी तो मैं केवल गिप्टाचारवश वीरेन्द्र के साथ चला आया हूँ इसलिये तुम निश्चिन्त रहो।’

‘अरे, तुम लोग यहाँ सडे-मडे एकांत में क्या परामर्श कर रहे हो एक टाए का और एक बालिस्त दूरी का भी बिद्युत्ता तुम्हें स्वीकार नहीं?’

वीरेन्द्र के इस परिहास से मनिया सबुचिन्त हो उठी और एक बालिस्त मुगवान ने उसकी ओर देकर उसने आँसु नीची कर ली। प्रेमपूर्वक मुस्कराने लगा।

“चलो नूपेद्र, चलो यहू, वरामदे म आकर बंठो, चाय आ ग्ही है।”

मैं मुडा और वीरेन्द्र के साथ चुपचाप वरामद म जाकर एक कुर्सी पर बठ गया। मनिया भी सशक्ति पगा से हम लागो का अनुसरण करती हुई चली आयी, मुभसे एकदम अलग हटकर एक कोनेवाली कुर्सी पर बठ गयी। शोभना भाभी भीतर गयी हुई थी। कुछ ही देर बाद वह कपड़े बदलकर, एक चिट्ठी-सी जरीदार साड़ी पहने हुए अत्यन्त स्निग्ध मुसकान मुख पर झलकाती हुई, अपने चारा और एक अवलुनीय माधुय सिखेरती हुई हम लोग के बीच म चली आयी, और धीरे से मनिया के पास जाकर बठ गयी। मनिया सकोच से जैसे अधिक गिमिट गयी थी। फिर भी उसने सलज्ज मुसकान से उनका स्वागत किया।

मनिया का स्वाभाविक सकोच जिस कारण स कई गुना अधिक बठ गया उससे परिचित होने पर भी वीरेन्द्र के आगे स्थिति को स्पष्ट करने म मैं अपन भीतर उत्साह का अभाव पा रहा था।

चाय आयी। मनिया ने व्याकुल दृष्टि से मेरी ओर देखा। मुभसे रहा न गया। यथासभव अपनी बात को परिहास का रूप देने का प्रयत्न करते हुए मैंने वीरेन्द्र को लक्ष करके कहा—“मनिया मुभसे पूछ रही थी कि मैं अपने ईसाई होने की सूचना तुम्हें दी है या नहीं।”

मैंने भय स मनिया की ओर देखा। निश्चय ही मेरा सूचना देने का ढङ्ग अस्वाभाविक था। वह आँखें तरेरकर मेरी ओर देखने लगी।

वारेंद्र न वास्तव म आश्चय भरी दृष्टि से मेरी ओर देखते हुए कहा—“सच ? तुम ईसाई बन स हुए ?” और, जस अपने प्रश्न का उत्तर पाने के लिये वह मनिया की ओर देखने लगा।

एक बार बात के मुह स निकल जाने पर मेरा सवाच दूर हो गया था। मैंने स्वाभाविक स्वर म उत्तर लिया—“अपन विवाह के सिल सिले मे।”

“ओह, यह बात है ! मैं समझा ! मुझे यँ जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि यहू का रीव तुम पर विवाह के पहले हाँ स गालिब रहा है।” और वह परम प्रेमपूर्वक खुलकर हँसने लगा।

वीरेन्द्र की तरफ स ता मैं पहले ही से निश्चित था । मैं गौर कर रहा था गामना भाभी की ओर । पर जब मैंने देखा कि वह वीरेन्द्र के परिहास से अत्यन्त प्रसन्न होकर कछुए की तरह दुबकी हुई मनिया की ओर पहले से भी अधिक म्लिग्ध—वल्कि पुलकित—दृष्टि से देख रही हैं तब मेरी सारी व्यथ की दुश्चिन्ता जाती रही ।

साहम पाकर मैंने भाभी जी की ओर देखकर कहा—“मनिया को यह शका हा रही थी कि कहीं आप लोग की चाय उनके छू जाने से भ्रष्ट न हा जाय ।”

वीरेन्द्र “हा हा हा !” करके सार मकान को कँपाता हुआ श्रद्धा हास कर उठा । मनिया न एक बार क्रुद्ध दृष्टि से मेरी ओर देता और फिर मिर नीचा करके कुर्मी पर नाथून से कुछ लिखन लगी ।

भाभी जी का मौन पहली बार भंग हुआ । सकोचहीन, स्वाभाविक शालीनता भरी दृष्टि से मेरी ओर देखते हुए उन्होंने कहा—“इस जमान में तो कट्टर स कट्टर परिवारा में भी इस तरह की आपत्ति नहीं उठायी जाती, फिर हम लाग तो अपने विधर्मी आचार-व्यवहार के लिये यो ही बदनाम हैं !”

किसी सधे हुए वादक द्वारा अप्रत्यागित रूप से वीणा के तार जैसे सहसा भकार उठे हा—एसा लगा उनका सहज कठम्बर । किसी प्रकार की जडता और म्लिभक् का लग भी उसमें नहीं था । मैं विस्मय विमुग्ध होकर बुतूहल भरी दृष्टि में उनकी ओर दक्षता रह गया । मनिया भी इस बार मिर उठाकर प्रसन्न भरी दृष्टि में उनकी ओर दत्तन लगी । उसके मुख के भाव से मुझे विश्वास हा गया कि वह उस नय ओर अपरिचित वातावरण में पूणन आश्वस्त हा चुकी है ।

भाभा जी की बात में पहली का जो बाडा-बहुत आभास था उसे स्पष्ट करना हुआ वीरेन्द्र वाला—“तुम्हें मैंने अभी यह नहीं बताया कि गामना ग्राह्य परिवार की लडकी है ।”

मुझे सचमुच आश्चर्य हुआ । मैंने कहा—“ग्राह्य तो अधिकतर बगाली ही हुआ करत हैं ।”

“तो क्या तुम अभी तक गामना को मद्रायी लडकी समझे हुए थ ?”

२६२ वहकर वीरेन्द्र ने फिर ठहारा लगाया । "वह बगाली ही तो है ।"

"सच ?" मैंने अकृत्रिम आश्चर्य से पूछा—' पर मह तो हिंदी मानया मे भी अच्छी बोल नेती हैं ।'

"भागलपुर म इसका जन्म हुआ था, और विवाह के पहले का जीवन उसका एक प्रकार स वही बीना ।"

"तभी ।" और मैं फिर एक बार गौर स आभना भाभी की ओर लेया । वास्तव मे आश्चर्यजनक था उनका वह सौन्दर्य—सूर्यास्त के समय सुदूर पश्चिम दिशा मे जलने हुए मण्डल की तरह । जितनी बार भी मैं उनकी ओर देखता था उतनी ही बार उनकी उस अनिवचनीय रूप-छटा की ज्वलित आभा एकदम नयी और अपूर्व लगती थी । कुछ देर देखकर मैं प्रांग फेर ली और मनिया की आर दखन लगा । स्पष्ट हो वह नही समझ पायी थी कि ब्राह्म लोग किस जाति के मनुष्य होते हैं, और बड़े चबनर म पडी हुई थी ।

मैंने उसके बौद्धत्व निवारण के उद्देश्य स उरा प्रताया कि ब्राह्मो को कट्टर हिंदू लोग ईसाइया की तरह ही विधर्मी समझत हैं । ब्राह्म लोग हिंदुओ के देवी देवताओ को नही मानते । वे एकमात्र ब्रह्म की ही धनत, धनादि और शाश्वत सत्ता स्वीकार करत हैं और केवल उमी की उपासना करने हैं । मनिया न प्रश्न किया कि 'ब्रह्म क्या चीज है । मैंने संक्षेप म उसे समझाने का प्रयत्न किया । मैं कह नहीं सकता कि वह अपनी बुद्धि और सस्वार के अनुसार कितना समझ पायी और कितना नही, पर इतना मैं अवश्य जान गया कि इस जानकारी स वह और अधिक आश्चस्त हो गयी कि शोभना भाभा हिंदू नहीं हैं ।

वीरेन्द्र ने चाय क प्याले का पहला घूट गटवन के बाद एक बार मरी और और फिर एक बार मनिया की ओर देखत हुए कहा— 'यदि बहू मुझे बहुत कुतूहली न समझे तो मैं एक बात जानन क निय उत्सुक हूँ ।'

बहू की तरफ से मैं ही उत्तर दिया—' बहू ता समझ चुकी है कि तुम मेरे बड़े भाई हो, इसलिये तुम्हारे किसी भी प्रश्न का कोई प्रयथा अथ बहू नहीं लगावेगी, इसका विश्वास मैं तुम्हें मिलाता हूँ ।

मनिया चाय का प्याला हाथ में लिये बीरेन्द्र की ओर  
 लाज के एकदम भीन पदों में झानती हुई मद मद मुस्कराने  
 लगी। उसका मनाब का आवरण बात कुछ हट चुका है यह जानकर  
 मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

२६३

बीरेन्द्र वाला—“मैं यह जानना चाहता था कि तुम्हें ईसाई होने की  
 क्या जरूरत आ पड़ी? वहाँ ईसाई परिवार में पदा हुई, तुम दाना का एक-  
 दूनर में परिचय हुआ, दोना एक-दूसरे को चाहने लग, और अंत में  
 विवाह के बंधन में बंधन की स्वामात्रिक इच्छा तुम दाना के मन में उत्पन्न  
 हुई यह सब ठीक है, इतना मैं बड़ी आसानी से समझ सकता हूँ। पर  
 इसके लिये तुम्हारे ईसाई बनने की आवश्यकता क्या आ पड़ी? क्या तुम  
 वास्तव में ईसाई धर्म में इन हृदय तक विश्वास करने लग हो कि बिना  
 ईसाई बने तुम्हारी आत्मा का तृप्ति न मिलती?”

मैंने दया कि बीरेन्द्र के मुह का भाव अत्यंत गंभीर था थाया हूँ तो  
 सहज स्वाभाविक परिहास का मुद्रा एकदम लुप्त हो गयी है।

मैंने कहा—“सच बनाऊँ?” और यह कहकर एक बार मनिया की  
 ओर गया। उसके चेहरे पर धत्रराष्ट्र का बार्द चिह्न न दिखायी दिया,  
 बल्कि एक निश्चिन्त दन्ता उमकी आँखों में उमकी नफ़ा मुख-मुद्रा में  
 आ गयी थी। मैं अनुमान लगाया कि ईसाई धर्म का चर्चा मान न उन  
 उमन अपन भीतर का इतनी देर तक खायी हुआ दन फिर प्राप्त कर  
 लिया है।

यह जानते हुए भी कि मनिया का मरी स्पष्टोक्ति प्रिय नहीं लगी,  
 मेरे लिये यह अमभव था कि मैं स्पष्टवादी और अक्पट-हृदय बीरेन्द्र के  
 आगे कोई झठी बात बनावर कहता।

मैंने बीरेन्द्र की ओर देखकर कहा—“असत्यत यह है कि किसी  
 भी धर्म पर मरा बाद विश्वास नहीं है। मर लिये मैं हिंदू धर्म हूँ  
 बना ही इसाई धर्म जैसा इस्लाम वैसा ही जानता हूँ। मैं ईसाई हान पर  
 तो इसाई नहीं हूँ (और न हिंदू ही) दन बात का विश्वास तम्हें दिलान  
 में दर न लगेगी, क्योंकि तुम एत तो छात्र-जीवन में मेरे स्वभाव से  
 परिचित रह हो (मरे उम समय के स्वभाव से आज के स्वभाव में कोई

नी विशेष अन्तर नहीं भाया है), दूसरा कारण यह है कि तुम पुष्प हा और भावुकता तुम में बहुत अधिक नज़ है।

पर यह सब हान पर भी मैंने ईसाइ धर्म का पट्टा अपने लिए पर ध्या निर्या लिया इसके पीछे एक तवा इतिहास है और कुछ रहस्य भी। वह इतिहास क्या है और वह रहस्य कैसा है यह तुम्हें एक दिन तुम्हारी वह स्वयं ही समझायगी (यह कहते हुए मैंने एक बार फिर तिरछी दृष्टि से मनिया की ओर देखा—वह अविचलित भाव से ध्यानपूर्वक मी बातें सुन रही थी। उसकी आँखों में जब एक चुनौती का भाव भरा हुआ था।) मैं इस समय तुम्हें केवल इतना ही संकेत दे सकता हूँ कि बिना ईसाई धर्म का अपनाव मेरा विवाह नहीं हो सकता था।

‘मिथिल मरिज मैं आप लागा वो क्या आपनि थी?’ सद्मा गानना भाभी स्पष्ट हा अपना कौतूहल दमन न कर सका के बावजूद मुन्च पूछ बैठी और मनिया की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगी।

मैंने कहा—‘मिथिल मरिज तब बनव हाती जब हम लोगों यह स्वीकार करने का तयार हात कि हम किसी भी धर्म को नहीं मानते।

श्रोह तब यह कहिय कि बहू बट्टर धार्मिक है।’ शानना भाभी ने यह भरी दृष्टि से मनिया की ओर देखते हुए कहा।

मनिया का मुह सद्मा प्रगाढ़ रूप से गमार हो आया था। उन्का उत्तरी दर तब करवस देवाया हुआ आवग सहसा फूट पड़ा। किञ्चित् रोम भर स्वर में वह बोली—‘किसी धर्म का स्वीकार करने पर उस पर प्राण्य न रखे और उसके सिद्धांतों का पालन कट्टरता से न करने की बात भरी समझ में नहीं आती। नीतरी विश्वास न हान पर भी जो व्यक्ति अपना धर्म परिवर्तन करने का तयार हो जाता है वह कदम अपने ही प्रति विश्वास घात नहीं करता बल्कि दूसरा को भी धागे के जाल में फसाने का अपराधी हाता है।’ और उत्तन प्रायः फनफनाते हुए चाय का प्याला उठा लिया जिस शानना भाभी ने नय सिर से भर लिया था।

उन्का आज का रूप मरे निचे भी एकदम नया था। मुझे पहले ही से आनवा कि मेरी या कि आज की स्वीकारोक्ति की जो प्रतिनिध्या मनिया के मन पर हागी वह निश्चय ही प्रिय नहीं होगी। पर वह अप्रियता

सहमा यह रूप धारण कर सकती है इसकी कल्पना मैंने नहीं की थी।

२६५

कुछ क्षणों के लिये सारे वातावरण में अचत अशोभन सनाटा छाया रहा। भीतर-ही भीतर अत्यंत भीत होने पर भी मैं बाहर से अपनी सान धीरता को कायम रखे रहा। अत्यंत सयत स्वर में अविचलित भाव में मामी को लपक करके बोला—'आप लानो को यह मुनकर आश्चय हागा कि हम दोनों न साथ-भाय ईसाई धर्म स्वीकार लिया।

मामा जा और धीरे-धीरे अहनिम आश्चय में मेरी धार देखते रह गये।

'यह तुमने बड़ी विचित्र बात सुनायी।' धीरे-धीरे बोला।

'इसमें कोई बिगड़ विचित्रता भी नहीं है, मैंने कहा 'मनिया को एक ऐसा वातावरण मिल गया था, जो उनकी भावुक और साथ ही जन्मजात धार्मिक प्रवृत्ति के विकास के लिये सबका अनुकूल था। ईसा के निःस्वार्थ त्यागमय जीवन, दीन-दर्शिता, पतिता और लाट्टिता के प्रति अकपट प्रेम, और समस्त अधिक उनके जीवन के कार्यात्मक अन्त में सब-वित्त परिस्थितियों और घटनाओं ने इसके भीतर ऐसा गहरा प्रभाव डाल दिया कि अपन (और मरे भा) जीवन के उच्चतम विकास की पहली सीढ़ी के रूप में उन्हें ईसाई मत का स्वीकारण अनिवार्य रूप में आवश्यक लगा। मैं उसका विरोध भी किया था, और उसकी कोई आवश्यकता नहीं माना थी। पर उसने अपना मत किसी भी हान्य में नहीं बदला और बार-बार मुझे यह समझाती रही कि ईसाई मत का अमानने में ही दोना का सम्भाव्य निहित है। न्यति की अनिवायता दगकर मुझे ईसाई बनने के विवाय दूसरा कोई चारा ही नहीं दिखायी दिया। पर मुझे हम वान की तनिक भी रनाति नहीं है कि मैं अपना जन्मजात धर्म त्यागकर एक दूसरा धर्म ग्रहण कर लिया। मरे लिये दोनों ही समान हैं।

मनिया इस बार कुछ नहीं बोली। उसका वह क्षणिक आश्चय अपना भाव वितान हो गया था। "भाई, अपनी अपनी परिस्थितियाँ हैं

हम किसी भी धर्म पर विश्वास नहीं करते । न सिविल मरिज में  
ई रुकावट पड़ी न हमारे मन में ।

१२

तो क्या आप सचमुच किसी धर्म पर विश्वास नहीं  
करती भाभी ?" मैंने पूछा । ' वीरेन्द्र के बारे में तो  
मैं जानता हूँ, वह जन्म का नास्तिक है । एक बार  
वेज में इस विषय पर डिबेट हुआ था कि 'क्या ईश्वर की कोई आव-  
श्यकता है ?' तब वीरेन्द्र ने अपने भाषण में कहा था—ईश्वर की कोई  
आवश्यकता नहीं है । यदि है तो केवल उतनी ही जितनी गंगा नहाने  
के लिए घाट के पड़े की, जिसके पास नहान के पूव अपने बपू सुगमित  
जा सकें, नहान के बाद कुछ देर आराम किया जा सके और चदन  
गुंजार में वृक्ष हान के बाद जिसे कृपणतास्वरूप कुछ शक्ति प्राप्त  
जा सके । इसके अतिरिक्त उसकी और कोई आवश्यकता नहीं है ।

वह पुरानी बात की याद दिलाये जाने पर वीरेन्द्र अट्टहास कर  
' भाभी भा खूब हसी और मनिया भी खुाकर हँसन लगी ।

मैंने भाभी जी को लक्ष करके कहा—“इसके घाटवाले दृष्टान्त का  
अर्थ क्या था यह तो मैं न तब समझ पाया न अब समझता हूँ,  
घाट वह बड़ा मजेदार इसमें शक नहीं । पर जितना नास्तिक यह  
न का बताता था उतना नास्तिक सचमुच में था नहीं । एक दिन मैंने  
स्नानात इसके कमरे की सिडकी से भीतर की ओर झाँककर उस एकांत  
स्थान परते हुए पकड़ लिया । अपनी चोरी पकड़े जान में यह इस-  
से लाज और शर्म से गडने लगा था कि मुझे अपनी जासूसी पर  
होने लगा । फिर भी झुनता तो निश्चित ही है कि किसी धर्म विशेष

आपने। प  
धर्म पर  
'ने  
आप म्वा  
मन्त्र  
जय हु  
लाग ए  
आपका  
भी बने  
उसके  
नेवादि  
मन वा  
का ने  
पुनव  
अवसर  
अपने  
विक्रम  
मुप हा  
आपकी  
अपिड  
आप  
आप पर  
को निरव  
विद्वाना  
के साथ





के निपमाचार के बंधन को इना कभी स्वीकार नहीं २६७  
 किया—न भीतर से न बाहर से। पर मैं पूछ रहा था  
 आपन। मुझे यह जानने की उत्सुकता है कि आप भी क्या मन्त्रमुच विमो  
 घम पर विश्वास नहीं करतीं? और न ईश्वर पर?

‘मेरा तो यही विश्वास है कि विमो घम पर विश्वास न करने की  
 बात शोकार करने में कोई झूठ धान नहीं कही थी।’ भाभी जी ने  
 सहज भाव से मरी आर देखते हुए कहा, ‘ब्राह्म परिवार में मरा  
 जन्म हुआ है, जहाँ धार्मिक आचरण बहुत अधिक नहीं रहता। ब्राह्म  
 लोग एकमात्र ब्रह्म की मत्ता स्वीकार करते हैं, पर उस अद्वितीय ब्रह्म की  
 उपासना के राग सामाजिक रूप से करना अधिक समझते हैं और वह  
 भी बड़े आचरण के साथ। उपासना के इन सामाजिक और सांस्कृतिक रूप  
 में मुझे मन्त्र चिन्त रही है। पर एकात्म न भी कभी मेरे अन्तर में उस एक-  
 मेवाद्वितीय ब्रह्म के प्रति पूर्ण विश्वास के साथ नस्तिभाव उभरा है। ऐसा  
 मुझे याद नहीं आता। यह ठीक है कि जब कभी घोर मन्त्र मर घामे  
 खाता है जाता है या मन्त्र मन्त्र विचो वारण्ड म अन्तर्हीन पीडा का  
 अनुभव करने लगता है तब किसी अज्ञात शक्ति से प्रायना करने का जो  
 अवसर चाहता है। पर उस अज्ञात शक्ति की न तो कुछ भी स्पष्ट या  
 अस्पष्ट आराम में कभी कर पायी हूँ, न कभी उसके मन्त्र में एकात्म म  
 विना करने की कोई प्रवृत्ति ही मेरे भीतर आती है।’

‘गमना भाभी की इस सरल, निरङ्गन स्वीकारोक्ति में मैं मन ही-मन  
 मुग्ध हो उठा पर मन्त्रिया इन्ने जैसे कुछ समझ ही नहीं पा रही थी। वह  
 मरमायी माँगा से उनको आर देखती रह गयी, जैसे अपनी बात का और  
 अधिक स्पष्ट करने की प्रायना कर रही है।’

‘गमना भाभी ने सिन्धु-अधुर मुन्तरान मुन्त्र पर मन्त्राने हुए बड़ ही  
 पीठे मन्त्र म मन्त्रिया से कहा— मुझे पूरा विश्वास है कि आपके भीतर  
 का निश्चय ही मन्त्रमुच का शक्ति नाव जाता था। अनुभूति की वह  
 विद्वानता निश्चय ही बड़ी धार्मिक हारी होती, जसा कि मन्त्रा व चरित्तों  
 में पना पना है पर मैं चाहते पर भी उसका अनुभव नहीं कर पाती।’

“आप एक बार प्रभु ईसा का चरित्र मन लगाकर पढ़िये,” मनिया बोली, “वह स्वर्गीय आत्मा आपके भीतर निश्चय ही भक्ति, श्रद्धा और विश्वास जगा देगी।”

“मैं पढ़ चुकी हूँ,” अत्यंत शांत और सयत स्वर में भाभी जी ने कहा। “मन लगाकर ही मैंने पढ़ा है। एक बार नहीं कई बार। पढ़कर उस महापुरुष के महान् प्रेम, महान् त्याग और अपार साहस का परिचय पाकर मेरे मन में उनके प्रति श्रद्धा और आदर का भाव अवश्य उत्पन्न हुआ है, पर इससे अधिक और कुछ नहीं।

मनिया के मुख पर सहसा एक काली छाया घिर आयी, जिस पर प्रगाढ़ शोभ और निराशा के चिह्न स्पष्ट अंकित थे। बोली—“आप क्या प्रभु को केवल एक महापुरुष ही मानती हैं, इसके आगे और कुछ नहीं?” यदि वह केवल पुरुष ही थे तब तो वह ‘महा भी नहीं थे, साधारण मनुष्यों के और उनके व्यवहार में कोई अंतर नहीं था वत्कि प्रत्यक्ष में कई मामलों में वह साधारण मनुष्य से भी अशक्त और दयनीय थे। पराक्रम का लेश भी उनमें नहीं था। न तो अपने साथ कोई जनबल ही वह एकत्रित कर पाये, न नीचो, दुष्टों और अत्याचारियों से अपनी रक्षा करने में समर्थ हुए। उनके सिर पर धुका गया, जानवरा की तरह उन्हें पीटा गया काँटा का ताज पहनाकर उनके साथ निमग परिहास किया गया और निमग बबरता के साथ शूली पर चढ़ाया गया। मानवता के द्वारा किये गये इस चरम अपमान का न तो वह कोई प्रतिरोध कर सके न कोई उत्तर दे सकें। एक अत्यंत साधारण, दुबला असमय और असहाय व्यक्ति की तरह उनकी जीवन-लीला समाप्त हुई।

उसके मुख से सहसा इस तरह की अविश्वसनीय बात और अनुमानातीत तक सुनकर मैं स्तब्ध था और भात दृष्टि से उसकी ओर ताक रहा था। वीरेन्द्र और शाभना भाभी उसके आशय को कुछ ठीक से समझ न पा सकने के कारण प्रश्न भरी दृष्टि से उसकी ओर देख रहे थे।

मनिया की मुद्रा अत्यंत गंभीर हो आयी थी। आँसुओं से जस चिनगारियाँ निकल रही थी जो आँसुओं के रूप में पिघलने ही को था। उसकी वह प्रालेय मूर्ति सचमुच मेरे लिये भी एकदम नयी और अपरिचित

त्याशा कर रही थी। पर दोनों मौन थे और जिनासु

से उसकी ओर देख रहे थे। मुझ स्थिति की गभीरता महसूस हुई। यह जानने में देर न लगी कि यदि मनिषा के उस भावावेग को कोई सतम मिला तो भीतर-ही भीतर उसके विस्फोट का अच्युत परिणाम ही होगा। जा चर्चा चली थी उसके तार का एक क्षण के लिये भी टूटने में त्वाली नहीं था।

अतएव उन दोनों की ओर से मैंने उत्तर दिया—“ईसा ने जो धोर आदर, अपमान और अत्याचार बिना किसी भी प्रतिरोध के शांत भाव सहन किया और बिना किसी शिकायत के शूलों पर चढ़ गये, वही उनका महापुरुषत्व था। ‘जो तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मारे की ओर अपना दूसरा गाल भी बला दो’ इस उपदेश को चरम तक की परिस्थिति में कार्यान्वित करके उन्होंने एक महान् आदर्श तार के आगे रखा है।”

‘मनुष्य चाहे कितना ही लघु हो या महान् वह कभी मानवता को खाने वाले इतने बड़े अपमान को सहन नही कर सकता,’ मनिषा ने डा, “उसके विरोध की आवाज वह किसी न किसी रूप में अवश्य आवेगा” उसका एक एक शब्द मनीषानान की गोली से भी अधिक ठिन, लचीला और दृढ़ था।

मैं हैरान था।

“तुम्हारा आशय यह तो किसी भी हानत में नहीं हो सकता,’ मैंने हा, “कि महात्मा ईसा साधारण मनुष्य से भी गिरे हुए थे?”

“हां, इस तरह की बल्पना मैं कभी मन में ला ही नहीं सकती। तो एक सीधी-सी स्पष्ट बात कहन जा रही थी। वह यह कि प्रभु तो मनुष्य नहीं थे। वह साक्षात् ईश्वर के अवतार थे—उसी धर्म में मनिषा तुम्हारे टूटने अवतार मान जाने हैं। यही कारण था कि वह मानवता का बलवित करने वाले उस दूर अपमान को, उस भावुक विष को धुपचाप पी गये, और उस बबर हत्या का अत्यंत गंभीर भाव से उन्होंने स्वीकार कर लिया। अपनी उस कारुणिक मृत्यु

वा नाटक उ-होने स्वयं रचा था। यदि वह न चाहते तो मृत्यु-लोक में एक भी प्राणी ऐसा बलवान नहीं था जो उनका बाल भी बाँटा कर सनता। गंध मस्त्रासा से घिरी हुई, पापमग्न मानवता में अपना गठोर पीठन, निर्यातन और मरण द्वारा वह प्रायश्चित्त का बीज बो जाना चाहते थे, जिसकी धीमी-रिंतु धभी १ बुझने वाली—आँच में वह परवर्ती कई पीलियो तक दग्ध होना रहे। इसी एतमाय घञ्चूक उपाय से मनुष्य जाति के भीतर के अमानुषिय विकार गल पिघल कर माफ हो सकते थे और उसका भीतर का सारा मोना गिपर सनता था।

मैं इस बात पर गौर कर रहा था कि उसका मुख की प्रगाढ़ गभीर मुद्रा धीरे-धीरे एक अलौकिक रामाच के अनात स्पग से एक अपूर्व तेजोमय प्रकाश में बदलकर दिप दिप करने लगी थी। शोभना भाभी और बीरेन्द्र विमूर्त भाव से विग्नित नटि में उसकी ओर एकटक देख रहे थे। स्पष्ट ही उन दोनों के भीतर मरी ही तरह यह धारणा जम गयी थी कि अन्तर के जिस गहन और अश्वनीय विश्वास में प्रेरित होकर मनिया ने अपना मत प्रकट किया है उगक सम्बन्ध में किसी तरह की गहस करके उसके मत को बदलन का प्रयत्न अशोभन के अतिरिक्त एकदम निरथक भी सिद्ध होगा।

कुछ देर तक सार वातावरण में एक गम्भीर सन्नाटा छाया रहा। मनिया ने जिस मामिकता में अपने धार्मिक विश्वास का उघाडकर रख लिया था उसके बाद फिर १ तो किसी दूसरे विषय की चर्चा जम सकती थी, न उसी विषय को घाग बडाने का साहस किसी में रह गया था।

प्रायः ढाई मिनट के अशोभन मौन के बाद गहसा शोभना भाभी ने मनिया का हाथ पकड़ते हुए कहा—“बलो बहन भीतर चलें। तुमने तो अभी हमारा मकान भीतर से देखा ही नहीं। हम ग्वालिया के यहाँ जय नहीं बहू घर में घाती है तब उस घर की नदमी मानकर मकान की मर चीजें दिखायी जाती हैं और भडार की बुजी उगे सोंप दी जाती है।” बत्कर भाभी जी ने स्नह सित्त बटास से मरी ओर देखा। चांस्तक में उन्ने बटांग में भी एउ ऐसी मोहक गालीगता थी जा किसी भी हालत में उपेगणीय नहीं हा सकती।

एक क्षण म मनिया का सहज रूप लौट आया। वह २७१  
 वास्तव म नववधू की तरह सजुचाती हुई लाज मधुर भुमकान  
 से सार मुख को रंगती हुई भाभी जी के साथ वीर से उठ खड़ी हुई।

४३

जब दोनों भीतर चली गयी तब वीरेन्द्र की जवान  
 लुली। तब तब वह स्तब्ध बठा हुआ था। धीर से  
 बोला—“घार, तुम्हारी बहू सचमुच एक असाधारण  
 नारी ह। जितनी ही भावुक है उतनी ही दृढ भी। और उसकी बुद्धि भी  
 कुछ कम साधारण नहीं लगती। ऐसा विचित्र, पर साथ ही प्रभावोत्पा-  
 दक तब मैन पहले कभी नहीं मुना। किसी घम प्रवर्तन के दबत्य पर ऐसा  
 आतंरिक तार अवपट विश्वास मैन किसी भी घम क कट्टर से कट्टर  
 अनुयायी म भी कभी नहीं पाया। यह ठीक है कि यह विश्वास जीवन  
 की अम्वाभाविक परिस्थितियों और शिक्षा की एकागीयता के कारण ही  
 उत्पन्न हाना है, पर है यह बडा ही ममस्पर्शी और घार अनिश्चामी और  
 अधार्मिक के भी प्राणो को छूनवाना।”

मैन प्रसन्न होकर कहा—“अब तुम समझ गय मित्र, कि मैं क्या  
 ईसाड बना ?”

निस्संदह मैं मानता हूँ कि इस विभूति को किसी भी मूल्य पर  
 प्राप्त करना, चाह पम बदलकर हा या प्राणो की बाजी लगाकर  
 यह मोदा अभी घाटका नहा हो सकता।”, भावुकता के आवेग म बडी  
 गभीरता के साथ वीरेन्द्र ने कहा।

मैन बहुत धीमी आवाज म मनिया के जीवन का सारा इतिहास  
 कह सुनाया। वीरेन्द्र एकाग्र चित्त म सुनता रहा। उसके मुख पर  
 विम्मय, करुणा और श्रद्धा के भाव एक साथ भनक उठ थे। जब मैं  
 पूरा निरुगा मुना चुका तत्र वह बोला— इतने कम शर्म के भीतर

जीवन के इतने अधिक उलट फेर आश्चर्यजनक ता हैं ही,

पर सबसे अधिक आश्चर्यजनक है उसकी बुद्धि और मनाभावो

का ऐसा द्रुत विकास । तुम्हारी बातों से ऐसा लगता है कि जस एक ही दिन में उसने विकट दुस्वप्नों से भरे हुए अपने पिछले जीवन की सारी केंचुली उतारकर फेंक दी हा । यह बात केवल परिस्थितियों के बदलने के कारण संभव नहीं हो सकती । इसके लिये मन के बहुत भीतर छिपे हुए किन्हीं विशेष मूलगत संस्कारों का हाना आवश्यक है ।'

वीरेन्द्र का वह प्रशंसात्मक श्रद्धामूलक मनोभाव ऐसा गभीर था कि उसके बाद फिर उस पर किसी तरह के विनोद या परिहासपूर्ण मतभय की गुजाइश नहीं रह गयी थी । इनलिये मैंने भी गभीर मुद्रा बना ली ।

हम दोनों मौन बठ थे । वीरेन्द्र ने मासूम जीवन के किस रहस्य के सम्प्रघ में गम्भीर चिन्तन में डूब गया था और मैं भी न जान अपने भीतर की किस अस्पष्ट उलझन को सुलभान में मग्न था । सहसा बाहर सड़क पर कुछ सम्मिलित कठों का चीत्कार सुनकर हम दोनों का अंतर ध्यान भंग हो गया और बाहरी इन्द्रियाँ सजग हो उठी । चीत्कार निकट से निकटतर होता जाता था और स्पष्ट से स्पष्टतर । कुछ ही क्षणों बाद हम लोगों ने देखा, सामन से होकर एक जलूस चला जा रहा था । जलूस के आग आने कुछ लोग लाल झडियाँ लिये हुए थे । जनता अत्यंत उत्तेजित जान पड़ती थी और सब लोग मिलकर पूरी ताकत से, कामरों को दहला देनेवाले सम्मिलित स्वर में नारे लगा रह थ । उन नारों में से खबल दो ही बातें सुनायी देती थी— 'नाश हा !' और 'जिंदावाद !' लगता था जैसे एक प्रचंड आवेग की विजली— हजारों बाल्ट वाली—सारे जनसमूह की नसा में एमी तेजी से दौड़ रही है कि उनमें से किसी एक का भी छूते ही छूनेवाला तत्काल मृत अवस्था में गिर पड़ेगा । सबसे मुह झडिया की तरह ही लाल हो आय थे, जैसे एक चरती फिरती आग की लाल-लाल सपटें सहसा लपलपाती हुई जीमों को बाहर निकालकर सारे युग को घस कर चाट जाने के लिये अघोर हो उठी हा ।

जलूस हमारे सामने से हाकर निकल गया । पर 'नाश हो !'

‘जिंदावाद !’ के नारे जन्म के आँखों में ओम्न हो जान  
 के बाद भी कुछ देर तक हमारे कानों से आकर टकराते  
 रहें और आवाज बिलीन हो जान के बाद भी वे गद काफी देर तक  
 मेरे बाहरी और भीतरी कानों में गूँजते रहें ।

२७३

बीरद्व बोला—“प्राग्ने वाले युग की जलनी हुई जिंदागी वाली  
 तुमन ? इधर कुछ समय में कलकत्ते का वातावरण बहुत ही गरम हो  
 उठा है । एक भी दिन छाया नहीं बीतना जब कहीं-न कहीं उपद्रव उठ  
 न होना ही । दस पाँच व्यक्ति प्रायः प्रति दिन घायन हो जाते हैं और  
 दस-बार आदमी मर भी जाते हैं । चारों ओर अज्ञान और अज्ञानता की  
 लहर फैली हुई है जो किसी भी हालत में जन्मों के मरने की आशा  
 में नहीं करता । केवल कलकत्ता ही तक यह लहर सीमित नहीं है, चारा  
 और यह वही तर्ज से फैल रही है । निकट भविष्य में आनवाली प्रबल  
 बाट को रोक मरने की शक्ति किसी व्यक्ति या समूह में है, एना विद्वान  
 में नहीं करता । कहा बाढ़ और कहीं दावाग्नि—इसी का दुःखनीय  
 प्राकृतिक उपद्रव के ताड़व से विछले युग की न जान जिन्नी इमारतों  
 ढहकर बह जायेंगी, न जाने शताब्दियों से जम हुए कितने प्रतिष्ठान  
 राख हो जायेंगे । यह अच्छा हाता या बुरा यह प्रश्न विचकून बनना  
 है । जो लोग इस प्रलय-परिवर्तन के लिये तयार नहीं रहेंगे उनकी समाप्ति  
 बड़े गोचनीय रूप में होगी यह निश्चित है ।”

‘तुम क्या उन परिवर्तन के लिये तैयार हो ?’ सहना मेरे मुँह से  
 निकल पड़ा ।

“दया रतन, एक बात तुम्हें बताना है । सामन्त-व्यय में मरा जन्म  
 हुआ है, यह ठीक है, पर मर भीतर के सस्वार जन्म जन्म से ही  
 प्राग्नेरियन रूप हैं । चूँकि तुम मेरे स्वभाव से भला भाँति परिचित हो,  
 हमन्त्रि तुम्हें मेरी इस बात पर विद्वान बनने में दर न लगेगी ।  
 एद्वय के बीच में पत्तन पर नी मैन अभी ऐद्वय का उपयोग  
 विद्वानता की दृष्टि में नहीं किया । अपनी सामाजिक स्थिति का और न  
 मातृदिश मता का ही कभी मैन जन्माधारण की सत्ता में प्रता महमूस  
 किया । यह ठीक है कि मेरे पास एद्वय मोन के सारे उपकरण

वतमान हैं और बाहरी रूप से मैं उनका उपभोग भी किसी हद तक करता ही हूँ, पर वह उपभोग मेरे भीतरी चित्तत्व को कभी छू तक नहीं पाता। किसी भी क्षण मैं अपने उस बाहरी मुखे का उतारकर फेंक सकता हूँ—बिना लेगामात्र भी श्वेद या ग्लानि के। मैंने गौर में उसकी आर देता और मेरे मन में सचमुच इस सब में तनिक भा मन्ह न रहा कि वह अपने आपको नहीं ठग रहा है, और एक भी बात बतकर नहीं कह रहा है।

तब तो तुम किसी दिन सक्रिय रूप से जन आदालत में भाग लेने को भी तयार हो सकते हो। मैंने कहा।

“मैं बहुत दिना से इस तरह की बात सोच रहा हूँ। पर सच बात यह है कि मेरे भीतर के प्रोलेतेरियन मस्कार कसे ही प्रबल क्या न हो, आखिर बूजुबा मस्कार किसी-न किसी रूप में वतमान तो रहेंगे ही। जात की बधिया घीकात का घोडा, 'तुम नहीं तो थोडा थोडा।' कह कर वह हँसा, पर फिर तत्काल गभीर होकर कहने लगा—“इस लाकोक्ति में तनिक भी अत्युक्ति नहीं है। न चाहने पर भी मैं बहुत-सी ऐसी बाहरी सामाजिकता में फँसा हुआ हूँ जो मुझे मुक्तभाव से मदान में बूद पडने के लिये रोकती रहती है। उन सुदृष्ट सामाजिक बधनों के विकृष्ट विद्रोह करने के लिए मेरे अतर्प्राण सब समय छटपटाते रहते हैं। इस द्वन्द्व से तो आग उत्पन्न होती है वह मुझे प्रतिभण दग्ध करती रहती है। ऊपर में मैं बडा ही निद्रा हास्यप्रिय और छिछरी प्रकृति का आत्मी लगता हूँ पर मेरे भीतर क्या तूफान मच रहा है इसे मैं नहीं समझ पाऊँगा।

मैं चुपचाप चञ्चित भाव से उसकी ओर देख रहा था। जिस मार्मिक गभीरता से आन उसने अपने भीतर की अगाति का परिचय मुझे दिया था, उसके बाद कोई भी साधारण प्रश्न व्यर्थ और बमल सिद्ध होगा, यह मैं जानता था। फिर भी बुनूहल न दबा सका।

तुम किस तरह के सामाजिक बधनों की बात कर रहे हो क्या मैं जान सकता हूँ ?’ मैंने पूछा।

‘बताता हूँ। चलो जरा ज्ञान में टहला जाय।’ कहकर उसने मरा



हाथ पकटा। हम दोनों उठकर बाहर विस्तृत लान में टहलने लगे। उत्तर की ओर एक एकांत कोन में स्थित एक बेंच पर

२७५

मुझे बिठाकर वह स्वयं भी बैठ गया, उसके बाद उसने अंतिम प्रश्न के सूत्र को पकड़ते हुए धीरे से कहा—

“उदाहरण के तहत मैं वैवाहिक बंधन को ही ले लो। मेरा विवाह किन परिस्थितियों में हुआ, पहले इसका संक्षिप्त इतिहास मैं सुनाता हूँ। शोभना एक बहुत बड़े घर की लड़की है। इसके पिता पटना के एक नामी बरिस्टर थे और बंगला के एक प्रसिद्ध साहित्यकार भी। शोभना की पिता-जीमा में किसी भी सामूहिक पहलू में कोई कमी न रहने पाय, इससे तब वह बराबर प्रयत्नशील रहे। दुर्भाग्य से जब वह बी० ए० में पढ़ रही थी तब अचानक एक दिन हाट फेन हुआ जाने में उनकी मृत्यु हो गयी। शोभना में मरी घनिष्ठता उनके जीवन-काल में ही हाँ चुकी थी। मैं उनका यहाँ आया-जाया करता था। शोभना के पिता—अभयकुमार सरकार—में साहित्य-क्षेत्र पर बाद विवाद किया करता था। शोभना भी कभी-कभी विवाद में भाग लेती थी। पर वह बड़े अत्यंत स्वभाव के आदमी थे। मुझे पूरा विश्वास है कि इस बात पर उनका ध्यान ही कभी नहीं गया कि शोभना के और मरे बीच घनिष्ठता दिन-पर-दिन बढ़ती चली जा रही है। पहली गंदा से उनका एक लड़का था जिसका नाम था शालद्रकुमार। शोभना की माँ उनकी द्वितीय पत्नी थी। शोभना का जन्म ज्ञान के कुछ ही महीने बाद उसकी माँ भी चल बसी थी, फिर कोई विवाह धन्य बाबू न नहीं किया। हम दोनों की घनिष्ठता से शालद्रकुमार (जो स्वयं एक बकील थे) तनिक भी प्रसन्न नहीं थे। पर बाहर से मरे साथ उनका प्रेम-व्यवहार बराबर बना रहा। शालद्र बाबू का मन तब से कायरा की तरह सरकार-परिवार में कतराकर अलग हो जाना चाहता था, पर शोभना सब-कुछ जानते हुए भी बड़ी ठोस न जाने बरबस मरा हाथ पकड़कर अपने परिवार में मुझे बाँधे रहीं। मैं बीच में कुछ दिनों के लिये उन लोगों के यहाँ जाना बंद कर दिया था। शोभना एक दिन मेरे यहाँ आ गयी और मरायी हुई आवाज में बोली—‘बाबूजी आपके साहाय्य के बिना इस तरह हो

चुके हैं कि एक दिन के लिये भी अगर आपसे साहित्यिक चर्चा

बद हो जाती है तो उन्हें खाने की ही रूचि नहीं रह जाती। पर

आप तो अचानक और अकारण हम लोगों से ऐसे नाराज हो उठे हैं कि आज चार दिन से एक बार भी आपने हमें सागा के यहाँ पधारन की कृपा नहीं की। हम लोगों से आप नाराज रहें, इसकी कोई शिकायत मैं कभी नहीं करूँगी, पर बाबूजी ने आपका क्या विगल है? और उमका अभिमान भरा स्वर सहसा आसुओं के रूप में फूट पड़ा। तुम समझ सकते हो रजन उन आसुओं की उपेक्षा सहज में संभव नहीं थी। तब तक मैंने उससे बाबूजी के साथ अपने हलमेल का साधारण मन्त्री के रूप में लिया था, जो मुझे प्रिय थी। पर उन आसुओं ने उस मन्त्री का जो मार्मिक रूप भरे सामने रखा वह मेरे लिये एक नया था। मैंने फिर सरकार महाशय के यहाँ आना-जाना आरंभ कर दिया। उसके बाद एक दिन जब संध्या के समय हम सब लोग साथ बैठकर चाय पी रहे थे तब सहसा सरकार महाशय के शरीर में एक विचित्र प्रकाश की ऐठन-भी गुरू हुई और कुछ ही देर बाद वह मृत अवस्था में नीचे गिर पड़े। शांभना ने सिरपीट पीटकर सारा मकान सर पर उठा लिया। मैं डाक्टर लान दौन— यह जानते हुए भी कि सब व्यर्थ है। डाक्टर ने आकर क्षण भर के लिये देखा और दुःख प्रकट करता हुआ बिना फीम लिये वापस चला गया।

‘तब से उस मकान की सारी स्थिति ही मूलतः बदल गयी। वहाँ पाँव रखते ही एक निराला—श्मशान का सा—सनाटा छाया हुआ मालूम होता। घर की मारी श्री ही जैसे नष्ट हो गयी थी। इतने दिना तक केवल एक ही व्यक्ति के तेज से सारा मकान जगमगा रहा था। शांभना तो सूखकर एकदम काटा हो गयी थी। मेरे निरामा देन से कोई लाभ उसे नहीं हो रहा था। और सब बात यह थी कि शलेन्द्र बाबू का स्वप्न दखते हुए मैं उस अच्छे हृदय से दिलासा भी नहीं दे पाया था।

उसी प्रकार एक वर्ष बीत गया। एक दिन मुझे जाड़ा लग कर बड़े ज़रूरी में ज़रूर आ गया। टम्परेचर १०६ डिग्री तक चढ़ गया। रात भर मुझे हाँस नहीं रहा। सुबह आँख खुलाने पर जब मैंने अपने को देखा तो पाया तब देखा कि शांभना भरे सिरहाने बठी हुई मर माये

पर अपना हाथ रखे हुए था। मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं

२७७

था। मैंने पूछा— 'तुम किस समय आयी? तुम्हें कमे खबर  
लग गयी? जब क खुमार में मैं उसे 'तुम' कहकर संबोधित कर बैठा  
था। वह मद-मद मुस्करायी। धीरे-से बोली— चुपचाप आराम करो,  
आपका इतनी सब बानें जानने की जरूरत क्या है? डाक्टर ने ज्यादा  
बोलने में मना किया है।' और वह तटाल उठकर थर्मामीटर ले आयी।  
उस घाबर, पादकर भयंकर मेरे हाथ में देती हुई बारी— 'लो, जरा  
मूह साजाता। मन मूह खाना और उसने एक हाथ से मेरी छुड़ी  
धीरे-से पकड़कर दूसरे हाथ से मेरे मुह के भीतर थर्मामीटर का लिबला  
भाग 'फिट' कर लिया। उनके बाद अपने बाएँ हाथ में घड़ी देखती रही।  
जब तक वह घड़ा दब रही थी तब तक मैं पूरी तन्मयता में उनकी आर  
एक्टन देखना रहा। एक अप्रसन्न स्निग्धता मेरे भीतर छा रही थी। अक्-  
लुप कृतज्ञता का एक माह-भयुर भाव मेरे हृदय में छलक उठा। तुम  
ता जानने ही हो मेरा मैं मेरे छुटपन में ही चल बसी थी और किसी  
बहन के स्नेह का भा शौभाग्य मुझे कभी प्राप्त नहीं रहा। पिताजी बहुत  
अधिक स्नेह करते थे, पर अपने स्वभाव के अनुरूप गुरु-गभीर ङग से।  
जो भा हा, उस दिन जब के कारण अपनी परास्त अवस्था में गामना  
को देखकर मुझे ऐसा लग रहा था जस लाखों युगों के दीर्घ व्यवधान के  
बाद मर पिछले जन्म के समस्त स्नेह-मवधियाँ की आत्माएँ गामना के  
रूप में मधुक्त होकर मुझे नव-जीवन प्रदान करने के दिव्य मर मिरहाने  
का विराग हैं। मरी आँखें भर आयीं। जब गोमना थर्मामीटर निकालने  
के लिय नीच झुकी तब मेरा सजल आँसू दसकर अत्यन्त कदण भाव से  
बोली— आपका क्या बटन दद मात्रम हा रहा है? मैं केवल मिर  
हिला लिया— बोलने से मर रुँधे हुए गले से निकली दूँ आवाज मेरी  
भीतरों थमजारी का वहीं और स्पष्ट न कर द इन मय में।

"वह और अधिक जठिन हा उठी। बोला— दद कहीं हा रहा  
है मिर में? मैं फिर मिर हिलाकर बताया कि मिर ही में दद हो  
रहा है। उनमें एक क्षण में थर्मामीटर दसकर उस धोकर खोल में बंद  
कर लिया और फिर मेरे मिरहाने बैठकर धीरे धीरे अपनी म्निष्ण कामल

चुके हैं कि एक दिन के लिये भी अगर आपसे साहित्यिक चर्चा  
 बढ़ हो जाती है, तो उधे खाने की ही रुचि नहीं रह जाती। पर  
 आप तो अचानक और अकारण हम लोग में एम नाराज हो उठे हैं कि  
 आज चार दिन से एक बार भी आपने हम लोग के यहाँ पधारन की कृपा  
 नहीं की। हम लोग स आप नाराज रहें, इसकी कोई गिवायन में कभी  
 नहीं कहेंगी, पर बाबूजी ने आपका क्या बिगडा है? और उनका  
 अभिमान भरा स्वर सहसा आसुओं के रूप में फूट पडा। तुम समझ  
 सकते हो रजन, उन आसुओं की उपेक्षा सहन में संभव नहीं थी। तब  
 तक मैंने उसके बाबूजी के साथ अपने हलमल को साधारण मन्त्रा के रूप  
 में लिया था जा मुझे प्रिय थी। पर उन आसुओं ने उस मन्त्री का जो  
 मानिक रूप मेरे सामने रखा वह मेरे लिये एकदम नया था। मैं फिर  
 सरकार महाशय के यहाँ आना जाना आरंभ कर दिया। उसका बाद एक  
 दिन जब सध्या के समय हम सब लोग साथ बैठकर चाय पी रहे थे तब  
 सहसा सरकार महाशय के शरीर में एक विचित्र प्रचर की ऐंठन-भा शुरू  
 हुई और कुछ ही देर बाद वह मत अवस्था में नीच गिर पडे। शाभना न  
 सिरपीट पीटकर मारा मकान सर पर उठा लिया। मैं डाक्टर लान दौग—  
 यह जानते हुए भी कि सब व्यथ है। डाक्टर ने आकर क्षण भर के लिये  
 देखा और दुःख प्रकट करता हुआ बिना फीस निय वापस चला गया।  
 “तब से उस मकान की सारी स्थिति ही मूनत बढ़ गयी। वहाँ  
 पाँव रखते ही एक निराला—इमशान का सा—सफ़ाटा छाया हुआ मालूम  
 होता। घर की सारी श्री ही जैसे नष्ट हो गयी थी। इता दिना तक  
 केवल एक ही व्यक्ति के तेज से सारा मकान जगमगा रहा था। शाभना  
 ता मूखकर एकदम काँटा हो गयी थी। मेरे जिनामा देन में थोड़े लाम  
 उसे नहीं हो रहा था। और सब बात यह थी कि गले में बाबू का रख  
 देतने हुए मैं उस मन्त्र हृदय से दिलासा नी नहीं द पाता था।  
 ‘इसी प्रकार एक बप बीत गया। एक दिन मुझे जाडा लग क  
 वडे जोरा से ज्वर आ गया। टेम्परेचर १०६ डिग्री ता चर गया  
 रात भर मुझे होन नहीं रहा। सुबह थोख छुताने पर जब मैंन धपन क  
 होन में पाया तब देखा कि शाभना मेरे गिरहाने बटी हुई मेरे म

पर अपना हाथ रखे हुए थी। मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। मैं पूछा— 'तुम किस समय आयी? तुम्हें कैसे खबर लग गयी?' ज्वर के छुमार में मैं उसे तुम कहकर संबोधित कर बैठा था। वह मद-मद मुस्करायी। धीरे-से बोली— 'बुपचाप आराम करो, आपका इतनी नव बानें जानने की जरूरत क्या है? डाक्टर न ज्यादा बोलने से मना किया है।' और वह तत्काल उठकर थर्मामीटर ले आयी। उसे घाकर, पोंड्रकर भटकाकर मेरे हाथ में दनी हुई बारी— 'लो, जरा मुह खाली ता।' मैं मूह खाना और उसने एक हाथ से मेरी छुट्टी धीरे-से पकड़कर दूसरे हाथ से मेरे मुह के भीतर थर्मामीटर का निचला भाग 'फिट' कर दिया। उसके बाद अपने बाएँ हाथ में घड़ी देवती रहा। जब तक वह घड़ी दख रही थी तब तक मैं पूरी तय्यारी से उसकी आर एक्टव दखता रहा। एक अप्रूप निग्यता मेरे भीतर छा रही थी। अन-लुप वृत्तता का एक मात्र-मधुर भाव मेरे हृदय में छनने लगा। तुम तो जानते ही हो, मेरा मैं मेरे छुटपन में ही चल बनी था और किसी बहन के स्नह का भी नौभाग्य मुझे कभी प्राप्त नहीं रहा। निताजी बहुत अधिक स्नह करत थे, पर अपने स्वभाव के अनुप गुण-गभीर डग से। जो भी हो, उस दिन ज्वर के कारण अपनी परास्त अवस्था में शोभना का देखकर मुझे ऐसा लग रहा था जम लाख युगों के दीर्घ व्यवधान के बाद मैं पिछले जन्म के नमस् स्नह-वर्धिया की आत्माएँ शोभना के रूप में नयुक्त होकर मुझे नव-जीवन प्रदान करने के लिये मेरे मिरहाने का विगर्ती हैं। मेरा मैं भर आयी। जब शोभना थर्मामीटर निकालने के लिये नीचे झुकी तब मेरा सगल अस्ति देखकर अत्यन्त करण भाव में बोली— 'आपका क्या बच्चा दद मान्म हो रहा है? मैं बवल सिर हिला लिया—बोने से भर दँधे हुए गले से निकली हुई आवाज मेरी भौंतरी कमजारी का बही और स्पष्ट न कर द इस मय में।

"वह और अधिक उत्कटित हो उठी। बोली— 'दद कर्ता हा रहा है मिर में? मैं फिर मिर हिलाकर बताया कि मिर ही में दद हा रहा है। जमन एवं क्षण में थर्मामीटर दखने में थमन लाल में बद कर लिया और फिर मेरे मिरहाने बैठकर धीरे धीरे अपनी निग्य को

हथेलियों से मेरे कपान पर हाथ फेरने लगी। वसा सुख,  
वसी शानि जीवन म मैंने और कभी पायी है, मुझे स्मरण

हीं आता। कुछ देर बाद वह बोली—‘अब कुछ प्रच्छा हुआ दद ?  
ने फिर सिर हिलाकर जताया कि हाँ प्रच्छा हा रहा है। उसके बाद  
रे—वहुत धीरे—से उसन मेरा सिर उठाकर अपनी गाद म रख  
या। बोली—‘तुम्हारा तकिया भी तो ठीक मे नही तगा हुआ है।  
र दद का यह भी एक कारण हो सकता है। टम्पेचर ता इस समय  
लकुल नही है। और फिर धीरे धीरे सिर पर, कपाल म और गाला मे  
रे धीरे अपना स्नह सुतामल हाथ फरती रही। जब मरा विश्वस्त  
र पुराना नौकर लखन आया तब भी उसन अपनी गोद पर स मेरा  
र नही हटाया। पूर अधिकार के साथ बोली— लखन तुलनी और  
ली मिच डालकर बढिया-सी चाय बनाओ दाबू क निय। दूध ज्याग  
लना। दूध की ओर स मुझे एकदम अरुचि हा गयी थी। मेरी जवा  
हुत दर बाद खुली। मैंने कहा— नही नही दूध बिलकुल न डालना।  
दी चाय।’ वह बोली— तुम चुपचाप लट रहो तुम्ह बोलना मना है।  
ओ लखन, दूध काफी रह।’ जो कुम सरकार। कहकर लखन  
जा गया। मैं चुपचाप तिल्ली की तरह दुबका हुआ लेटा रहा। कुछ  
बाद जब चाय आयी तब शोभना ने धीरे न अपने घुटा का महारा  
ने हुए मुझे उठाया। मैं स्वय उठ सकता था पर उसके सहारे उठने म  
के अधिक सुविधा मालूम हो रही थी। गीश के ग्लास म एकदम सफेद  
थाय जब मैंन दखा तो मरा जी मितता उठा। मुह किचकात हुए मैंने  
हा— इसे मैं नही पी सकूगा। ‘बाह यही ता आज तुम्ह पीना है, यह  
से हो सकता है। तुम अपन आप नही पीयाग तो तुम्हारे मुह के भीतर  
मच ठूसकर जबदम्ती पिलाना होगा। बोला चम्मच ठूसना पसंद है  
सीधे सीधे पियाग ? सीधे-सीधे पीने के सिवा मर निय दूसरा चारा  
हा था। जब मैं चाय पीकर लेट गया तब वह बोली— तुम अब चुप  
प आराम करो, मैं अभी आती हू।’ उसके जाने क बाद लखन क मरा  
फ करने के लिये आया। मैंने धीरे से पूछा—‘शोभना क्या पली  
ती ? वह बोला—‘नही गुसलखाने गयी हैं।’ मैंन फिर पूछा— वह

क्या आयी थी ? वह मिर खुन्नाने लगा । मैं कहा—  
 'बताना क्या नहीं ।' वह उसी तरह सिर खुन्नाना हुआ  
 बाला—'भया, विटिया रानी ने बताने में मना किया है ।' 'विटिया रानी  
 का कुछ पना न चलगा, तू चुनचाप बना दे । दान निषान्न हुए वह  
 बोला— भया कन गाम का जय तुम्हारी तबीयत बहुत खराब हो गयी  
 और बुझार टनना घट गया कि तुम एकदम बहाग हो गय तब मैं घररा  
 उठा । उसी घरराहट में मैं तार कोश उपाय न दाखर नीचे विटिया रानी  
 के पास चला गया । विटिया रानी ने कहा—मैं अभी तुम्हारा माय चलती  
 हूँ । और अपने नीकर को बताना कि वह रात में गाम पर न लौट  
 पावे, मर साथ चली आयी । मैं पूछा— दाबू क्या घर पर नहीं था ?  
 वह बोला—'य, पर विटिया रानी ने उसे कुछ न कहा और तार का  
 दना दिया कि वह कहा जा रही है । मैं कहा— तुम उठ जाँवर हा,  
 उहें जरा-सी दान के लिये तबलीफ दान की जरूरत क्या थी । मी दान  
 परी भी नहीं हो पायी थी कि महमा जानना भीतर प्रयास करती हुई  
 बोली— क्या खर्चा हो रही है लजन के साथ ? मैं आराम करने के लिये  
 कहा था पर तुम शान्त ने लाचार मानूस हात हा । ताम्रा लजन वाली  
 बना लागा । मैं चुपचाप चादर के नीचे दुमन कर लट गया ।

'दिन में डाक्टर आया । बड़ी तीनी दवा दे गया । गामना के डर  
 से मुझे उठे बरबस गटकना पडा । उन दिन गाम का फिर खबर आ  
 गया—उसी रानी के माय । तासत तिन जवर एकदम उतर गया । गामना  
 दिन रात भर पाप बठी रती । उमर घर से दाना-दान बर बार बुलाने  
 के लिये आया, पर उसने माफ गता न कहना दिया कि 'बारद दाबू  
 की तबीयत खराब है जब तक एकदम अच्छे नहीं हो जाने तक तब मैं  
 न आऊंगी भया से कह दना ।' मैं जानता था कि गामना दाबू पर इन  
 सब बातों का क्या प्रभाव पडगा । मैं एक आध बार उमन चल जान  
 के लिये प्रनुरोध भी किया पर उमन मीठी टोट बनाते हुए मुझसे माफ  
 कह दिया—'आपको हम सागा के बीच में दानन का बार्द अखिबार नहीं  
 है ।' विष्टम दो दिना से बर महज भाषण में मुझे 'तुम बहुत लगी थी  
 और ध्यग या नाराजगी न माय ।

“शलेन्द्र बाबू एक दिन के लिये भी मेरी तबीयत का हाल

जानने के लिये नहीं आये। जब मैं स्वस्थ होकर उठने-बठने

ता तब गोमना अपन यहाँ चली गयी। पर उसी शाम को फिर मेरे

पुनः चली आयी। उसका चेहरा उस कदर मूरभाया हुआ था कि लगता

जैसे किसी ने स्याहा पोत दी हो। अपन आचल से उसने निश्चय ही

संस्थाही का पाछन का बहुत प्रयत्न किया होगा, पर फिर भी उसके

हृदय स्पष्ट वक्तमान थे। आते ही चुपचाप मरे कमरे में एक साफा पर

बैठी गयी—निश्चल पापाण मूर्ति की तरह। मैं जैसे पहला ही मैं उस

व्यक्ति के लिये तयार बठा था। उसके एकदम निकट बैठकर मैंने कहा—

गोमना, तुम्हें क्या हो गया है? भया ने कुछ कहा था? उसने केवल

मेरी हिलाया और चुपचाप गीसू गिराने लगी। मैंने कहा— देखो, मामू

राना बरकार है। तुम अब काफी सयानी और बातिग लडकी हो।

पुनः जीवन के निर्माण के सम्बन्ध में तुम जो कुछ भी कदम उठाना

चित्त समझती हो उसके नियम तुम्हारे आग पुला माग है तुम्हारी इस

सततता में खावट डाल सक्ने का न किसी को अधिकार है न सम

जा ' वह सहवा सीधे बैठ गयी और कहने लगी— पर वार्ड भाई

जैसी बहन के लिये इस तरह के हीनता भरे शब्द कैसे काम में ला सक्ता

मैं यहाँ माच रही हूँ, वीरन्द्र बाबू। जब से पिता जी की मृत्यु हुई तब

मेरी प्रति उनका धार उपेक्षा का व्यवहार चलता आ रहा था, पर

उससे मैं कभी दुःखित नहीं हुई। उनके स्वभाव की इस विप्रेयता से मैं

हलसे हूँ मैं परिचित थी, और उसे सहन के लिये तयार बठी थी। पर

राज उद्दान जिस प्रकार की वाजारू भाषा में गदी से गदी, बटु से बटु

और कठार में कठार बातें मेरे खिलाफ कही और अत्यन्त घृणित लाछन

मुझ पर लगाय उह सहन कर साने की समथता मुझ में नहीं है। मैंने

निश्चय कर लिया है कि चाहे मुझे अनाथालय में जीवन बिताना पड़े,

शह उससे भी गदी जगह में, अपन भाई के यहाँ मैं अब किसी भी हालत

में एक क्षण के लिये भी नहीं रहूँ सक्ती नारीत्व के चरम अपमान से

मुझ उसकी बडी बडी आँखों से आँसुओं की बडी-बडी बूँदें निरन्तर मोती

हुनकाती चनी जाती थी। तब तक मेरे कायर मन ने कुछ भी निश्चय



नहीं किया था। उसकी उस अनिम मर्मोक्ति से मेरी सारी २=१  
कायरता और अनिश्चयता पल म झूमतर हो गयी और

मैंने पूरे अधिकार भरे स्वर म कहा—‘तुम आज से इसी घर की माल-  
किन हाकर रहोगी, गोमना। तुम्ह वही जाने की नाई आवश्यकता नहीं  
है। वह आंचन से चुपचाप आसू पाछने लगी—बोली कुठ भी नहीं।  
पर उनके उम कुठ न वालने से मुझे वतन बडा बल मिल गया। दूसरे  
ही महीने हम दानो का विवाह हा गया। यही सन्धेप म मर विवाह का  
इतिहास है। और धीरे-धीरे ने एक लकी मास ली।

४४

मैं स्तब्ध भाव स, परी तमयता म उसका वह भावु-  
वता के रम म सराबार विवरण मुन रहा था। उमके  
और गाभना भाभी के जीवन के कुछ नय ही पह

लुग्रा म परिचित होने के कारण मैं एक नयी ही दृष्टि स उस दाने  
नगा था। मरी चिंतना का तार ताडत हुए वह बोला—‘किन बार्त म  
किन बात की चर्चा आ पडी भावुनता के बहाव म मैं न जाने क्या-क्या  
बत् गया, मुझे याद नहीं ह। पर चर्चा चल रही थी बघना का लेक।  
अन तुम्हा साचा, जिस निधि का मैंने इतने यत्ना मे एमी मामिब परि-  
म्यनिवा मे प्राप्त किया है उमे भरपूर मनरे म डालकर केवन मात्र  
अपने दा अत्यन्त मुकुमार परा के बल पर खडे होने के लिय, अचिननीय  
सपनों और जटिल उलमनों क बीच टुगम पय पर उस अकेले छोडकर  
कन एग युग की उलटी-भीधी राजनीति की चलती चक्की क बीच म  
बूद प।

मैंने कहा—‘तुम तो जन आन्दोलन मे भाग लने की बात कह रहे  
थे। यह उलटी-भीधी राजनीति की चलती चक्की कहाँ म आ गया?’

मुझे एसा लग रहा था कि जन आन्दोलन म भाग लेन की इच्छा

जताकर वह आज के युग की उसी फशनेविल मनावृत्ति का परिचय दे रहा है जो आजकल के नवयुवक का सामान्योर से पायी जाती है। इसीलिये मैं कुछ खीभकर उससे उसके मन का भाव स्पष्ट स्वीकार करा देना चाहता था। तब मुझे पता नहीं था कि वही कोई एक वास्तविक पीडा उसके प्राणा की भ्रमभोर रही है और अपने तत्कालीन बद्ध, सीमित जीवन के प्रतिदिन के बचि-यहीन धिमे प्रिताये कायकर्म से वह ऊब उठा है। तब तब मैं यह ताड नहीं पाया था कि सेवा और त्याग की जो प्रवृत्तियाँ उसमें छुपान से परिस्पृष्ट हान गयी थी वे अत्र दिशास व लिये चारा और का रास्ता बंद पाकर गये किसी विद्राहात्मक विस्फोट के लिय बचन हो उठी हैं। यह जानना अभी मेरे लिये रोप था कि उमका वह सारा सेवा मूाव मनाभाव पिटले कुछ वर्षों से बंदल एक ही यक्ति की सेवा और सरक्षण के केंद्रीभूत और मामा बद्ध हा उठा है। यह सीमाबद्धता प्रारम्भ से भले ही मन परिपूर्ण आत्म-नौर्य का कारण बनी हो, अब वह प्रतिपल जैसे उन पान रही थी, पर उसकी अतप्रगति की वह अडचन गत्वत सकीरा और माहित हान पर नी हिमालय की भी अपेक्षा अधिक दुःख सिद्ध हा र्ग थी, यह अनर रहस्य तब मरी समझ में नहीं आया था—उन पर मेरा यान ही नहीं गया था।

मेरा प्रश्न सुनकर वह भी जस कुछ तिलमिला उठा। ऐसे स्वर में बाला उस गपनी उत्तेजना को भरसक दमान का प्रयत्न कर रहा था—  
 'जन आन्दोलन में भाग लेना ही तो उलटी सीधी राजनीति की चलती चकती के बीच फूट पड़ता है। इतनी सीधी सी बात तुम्हारी समझ में नहीं आ रही है, भादचय है। इसका कारण पापद यह है कि तुम प्रत्यक्ष में इस युग में जीवन बिताने पर भी वास्तव में उन्नीसवीं सदी के स्वप्नों में डूब रहने ला। अरे भाइ जन आन्दोलन आज के युग में दाद भीषा सा तय नहीं है। पहली बात तो यह है कि जन आन्दोलन के वास्तविक स्वप्न के सम्बन्ध में हमारे दग में एवमत नहीं है। कापेश बाल बहने हैं कि बूबि हम गांधी जी के बताये माग पर चल रहे हैं और विमाना और मजदूरी के वास्तविक हित का चिंतना हमारे प्रमुख ध्यया में से एक

है, इसलिये हमारा पिछला आदालत ही जन आदालत था, २०३

और आज हम उसी आदालत के पूरक रूप का अपनाये हुए हैं—अर्थात् राष्ट्र-संगठन को। समाजवादी कांग्रेस की इस उक्ति का ढांग से भरी और स्वयंभू देगनताओं की चात्रलयाणी बनाने हैं। कहते हैं कि यह उनकी आत्मरक्षा का एक हथकड़ा मान लें। उनका यह विश्वास है कि देग की जनता का वास्तविक उद्धार यदि मच्छे अर्थों में किसी उपाय द्वारा हो सकता है तो वह केवल समाजवादी नायक द्वारा। कम्युनिस्ट समाजवादियों का दावे की अपक्षा भी अपना कट्टर शत्रु समझने हैं। दाना अपने उद्देश्यों में जरूरी दृष्टि में दृष्ट निकट दिखाया दन पर भी एक-दूसरे से कामों दूर हैं। कम्युनिस्टों का यह विश्वास है कि कांग्रेसी और समाजवादी दाना जनघानी हैं और व दाना जनता का धवन अपने नवृत्व की नीव की इट बनान के फेर में हैं और बदनी इह दुनिया के नवसे का जनता की आस्ता से न दखर अपनी ही महवा-का की आस्था से दख रह है।

"तुम्हारा अपना क्या विश्वास है मैं यह जानना चाहता हूँ, मैंने कहा। तुम जिस जन आदान के बीच में बूदन की बात साचा करते हो उसका क्या आदग तुम्हारे सामने है? तुम्हारे उम आदग आदान का अस्तित्व कहाँ है भा या नहीं?"

यह मुस्कराया। वही ही गम्भीर किंतु निगम और कहेण मुस्मान से वह माला—“पहले मरी बातें पूरी ता सुन लो। जहाँ तक कम्युनिस्टों का प्रदन है, व एक विश्व-यापी ममस्या हैं। यह ठीक है कि उनके नीतर व्यक्तिगत नवृत्व या व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा की भावना उन हृद तक बनमान नहीं है किन हृद तक दूधर दना में। उनमें त्याग की भावना दूधर दनवाला की अपना प्रभिन्न है। यह उनका सबसे बड़ा अस्त है। अपने उद्देश्य की उप-सिधि के नियम कोई भी उपाय काम में लान का तयार हैं—अनम प्राणों का बलिदान करने से नैकर दूधर के प्राणा की बलि दन सप। पर राष्ट्रायता में उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। उनका अपने उद्देश्य का तनिक भी धिनाया नहीं है। अंतरराष्ट्रीय प्राततरियन राज्य की स्थापना में महयोग दना ही उनका—हमार भारतीय

४ कम्यूनिस्ट भाइयो का—प्राथमिक ध्येय है। दूसरे देशों के कम्यूनिस्टा के ध्येय में और उनके ध्येय में धीरे धीरे स्पष्ट आता चला जा रहा है, और उनके ध्येय में भी एक न एक दिन आयागा, यह निश्चित है। दूसरे देशों के कम्यूनिस्ट आर्थिक व्यवस्था में मार्क्सवादी सिद्धांतों के अनुयायी होने हुए भी अंतर राष्ट्रीय संस्था के प्रति अपने को उस हद तक उत्तरदायी नहीं मानते हद तक अपने राष्ट्र के प्रति। चीन इसका सुस्पष्ट उदाहरण है। कम्यूनिस्टा ने माटी वाता में मार्क्सवादी सिद्धांतों को अपनाया है, पर विषयों में राष्ट्रीय उन्नति का दृष्टिकोण ही उनके सामने प्रमुख है। उनका यह राष्ट्रीय दृष्टिकोण उन्नीसवीं सदी की सत्राण ब्रजुवायता से एकदम भिन्न है। यावक रूप से वह अंतर राष्ट्रीय जनता पर ही आधारित है—पर अपनी मिट्टी की विनिष्ट सत्ता को कायम रखते हुए। जो सांस्कृतिक तत्व किंसा वग विषय से सब-कुछ हैं और मानव की विश्वव्यापी अंतर और बाह्य प्रगति के मूल में स्वरूप है उन्हें अपनाकर उन्हें एक ऐसा नया प्रगतिशील रूप लिये चीनी कम्यूनिस्ट नेता उत्सुक जान पड़ते हैं जो मानव जाति में निश्चित और वास्तविक उन्नति के अग्र स्तर पर लाकर खड़ा करे। उनका उद्देश्य जनता को उच्चतम आर्थिक और सांस्कृतिक स्तरों पर उठाना है न कि उच्चतम आर्थिक और सांस्कृतिक स्तरों में जनता के स्तर तक नीचे घसीटना ”

यह देखकर चकित था कि राष्ट्रीय और अंतर राष्ट्रीय राजनीतिक, सांस्कृतिक और साम्प्रदायिक समस्याओं के संघर्ष में कैसे आत्म विश्वास के बल पाते करने लगा था।

ने कहा—“उच्चतम आर्थिक स्तर से तुम्हारा आगम क्या है? क्या आदश तुम्हारे सामने है? क्या तुम चाहते हो कि समाज का व्यक्ति पूजोपनि बन जाय?”

वह फिर हँसा, बोला—“तुम्हारा यह प्रश्न बिलकुल बच्चों जसा पूजो का संघर्ष नहीं किसी भी रूप में ही वह समाज की सहज विकास सरल ढोर के बीच में उलझी हुई गाँठें उत्पन्न कर देता है।

श्रीर, फिर, प्रत्येक व्यक्ति पूजीपति हो ही नहीं सकता ।

२८५

एक पूजीपति का भांडार भरने के लिये हजारों—लाखा—

पूजी रहित व्यक्तियों की आवश्यकता है । मेरा आदश यह है कि राष्ट्र की—वर्ल्ड विश्व की—उत्पादक शक्तियाँ का विकास अधिक से अधिक सम्भावना तक पहुँच जाय और उस परिपूर्ण उत्पादन का उपयोग समग्र जनता सम भाव से करे । राष्ट्र की सामूहिक पूँजी का नियंत्रण और सम विभाजन राष्ट्र के सच्चे प्रतिनिधियों की एक विश्वसनीय सन्ध्या करे । जिस दिन सत्सार के सभी राष्ट्रों की जनता इस आदश के महत्त्व से परिचित हो जायगी, उसकी एकांत आवश्यकता का अनुभव करने लगेगी, उसकी प्राप्ति की ओर सच्ची लगन से प्रयत्नशील हो उठेगी, उस दिन उसकी उपलब्धि के लिये उपयुक्त, सहज और सीधे उपाय भी अपने आप उसके आगे प्रकट हो जायेंगे, और फिर कोई भी प्रतिराध उसके उस सामूहिक बल्यारणकारी मार्ग में ठहर नहीं सकेगा ।

वीरेन्द्र न दत्तस मुझे राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं से संबंधित विवाद में जैसे घसीट लिया था । मैं उसकी बातों में, उसके तर्कों में पूरी दिलचस्पी लेने लगा था ।

मैंने कहा—“जिन देशों में इस आदश की उपलब्धि हो चुकी है वहाँ क्या, तुम्हारे दृष्टिकोण से, जनता की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हो गयी है ?”

‘अभी तक किसी भी देश में इस आदश की उपलब्धि नहीं हुई है,’ वीरेन्द्र न दत्त, गंभीर स्वर में कहा, “जिन देशों में ऊपरी तौर से इसकी उपलब्धि हुई मात्राम होनी है वहाँ कई ऐसी नीतियाँ उलभनें उत्पन्न हो गई हैं जो समग्र समाज को सम-मूल्य में बाँध नहीं पा रही हैं । समानाधिकार और सम आर्थिक व्यवस्था के स्वप्न का मय हाना तो दूर रहा, सम भाजन-व्यवस्था की समस्या तक अभी तक कोई देश—रिना हृत्तक रस को छोड़कर—मुलका नहीं पाया है । यह विषमता अंतर राष्ट्रीय संधि का परिणाम है सन्नेह नहीं, पर किमी भी कारण से हा, वह है । इस विषय समन्ध्या का—सम आर्थिक विभाजन का समाधान तभी हो सकता है जब सार विश्व की जनता सम-व्यवस्था के यथाय महत्त्व का

अज्ञानि के मून में अन्तर राष्ट्रीय राजनीतिक और प्राधिक अन्वयवस्था और विपमता ही है, इन ज्वलत तथ्य को स्वयं पूजोपनि भी किसी हृद तक स्वीकार करते हैं। इतनीय इस विपमता का निराकरण नावी विश्व शांति और विश्व मानवता के सामूहिक कल्याण का मून आधार सिद्ध हागा। पर प्रश्न यह है कि किन उपायो से और किस नयी सामा-निक व्यवस्था के रूप में यह उद्देश्य सम्भव हो सकता है

मैं कहता हूँ— अगर इसी उपाय से मानवता का सामूहिक हित होन की सम्भावना है तो इस में इस समस्या का समाधान हो चुका है। जो सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था वहाँ कायम हो चुकी है और परखी जा चुकी है वही सभी राष्ट्रों के लिये अनुकरणीय नानो चाहिये।

मैं मानता हूँ कि यह बात बहुत-बहुत अज्ञात तक सही है। पर यदि यह पूरणतया सही होती तो फिर परेगानी का कोई कारण न रह जाता। जनता का पक्ष लेने वाले उत्पादन के नम विभाजन का अपना आदर्श माननेवाले दला के बीच उम पारस्परिक बमनन्व्य और मतभेद का लेण न रह जाता जो आज बड़े करारे रूप में पाया जाता है। वास्तविकता यह है कि इन में जिन दिन गणतन्त्र की स्थापना हुई है तब से लेकर आज तक बना सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था-संबंधी इतने विभिन्न प्रयोग किए जा चुके हैं कि उनमें कौन भाग समग्र विश्व की दलित, पीडित और गोपित मानवता के उद्धार के लिये यथायथ उपयुक्त है इसका निरण अभी तक आइ नहीं कर पाया है। हम में गणतन्त्र की स्थापना हुए तास वय में अधिक हो चुके। इन तीस वर्षों के भीतर विभिन्न प्रयोगों के बाद आज रूस का वास्तविक स्थिति क्या है? आज भी वह बहुत सी ऐसी भीतरी और बाहरी उलझना में उलझा हुआ है जो उसके पृथ्वी पर स्वर्गीय राज्य की स्थापना के आरण का पूरणतया सफल नहीं होने दे रही हैं। इन उलझना के निवृत्ति जन-सरकार और जन-नता दीपी हैं एना मैं नहीं मानता। इसके लिये भी विश्व-यापी सामाजिक और आर्थिक विपमता ही उत्तरदायी है, जो उसे प्रगति के पथ पर योजना-

नुसार बड़े चतन से रोक रही है। पर कारण चाहे जो भी हा, रूसी व्यवस्था भी अभी सामूहिक मानवीय उन्नति के अनिम सत्य तक नहीं पहुँच पायी है, मुझे ऐसा लगता है हालांकि उसका भविष्य बहुत उज्वल है।”

वीरेन्द्र आयोग के साथ बोल रहा था जिसमे उसका सारा गरीर हिल रहा था। वह बेंच पर बठा-बठा नीचे की ओर खिसक गया था। वह सीट पर स बुद्ध उठकर बेंच की पाठ पर अपनी पीठ ठीक से अडा-कर समलकर पठ गया। मैं इस सारी नीरस चर्चा से ऊब गया था और उत्सुकता स सामने वरामदे की ओर दखता हुआ मनिया और गामना भाभा क नीचे आने की प्रतीक्षा कर रहा था। काफी दर हो चुकी थी पर दाना अभी तक भीतर ही जमी हुई थी। यद्यपि यह सोचकर मुझे प्रस नता हा रही थी कि दाना दवरानी-जेठानी स पहले ही दिन अच्छी पुटन लगी है, फिर भी मेरी अधीरता बढ़ती जाती थी। वीरेन्द्र की बाग्यारा जब कुछ रुकी तब मैंन कहा— ‘अभी तक मनिया और भाभी नाच नहा आयीं !’

वीरेन्द्र न मरा प्रश्न अत्यंत अयमनस्क भाव से मुना। वाना— ‘अभी आती ही हूंगी। लागे वा यह दखकर आश्चय हाता है कि जिन दगा स जननाति द्वारा प्रतिन्रियात्मक गक्तियाँ परास्त हा चुकी है और जन गसन वा आरभ हो चुका है व गणतंत्रीय सिद्धान्ता को अपनात हुए भा अपनी राष्ट्रीय मिष्टी की विनिप्यता की नीव पर ही अपनी नयी-गसन व्यवस्था को आधारित कर रू हैं। चीन इसका सवमे ताजा उदाहरण है। पर मुझे हमस कुछ भी आश्चय नहीं लगता।

मैं इस हद तक ऊब चुका था कि सारी चर्चा को परिहाम स टालने की इच्छा हा रही थी। इसके अतिरिक्त वीरेन्द्र किस प्रकार अतरराष्ट्रीय राजनीतिक प्रश्ना की उत्तमन स उत्तमता चला जा रहा है यह देखकर मुझे सचमुच हैनी आ रणी थी। मन्-मद मुस्कराते हुए मैंन कहा— ‘तुम जिन चरकरा स व्यय के लिए उलभते चले जा रू हा मित्र कुछ समझ स नया आता। भारा जीवन भी अगर इन जटिन गुटियदा को सुलभान क प्रयत्न स बिता दागे तो भी अपन को वहाँ पामागे जहाँ से

२८८ आगे बढ़े थे। इस भूलभुलैया के फेर में पड़कर क्या किजु  
 में परेशान होते हो! यह तुम्हारा क्षेत्र नहीं है, चला भीत-  
 चर्तों।" कहकर मैं उठने लगा।

वीरेन्द्र ने मेरा हाथ पकड़कर एक हलकें भटके से मुझे फिर वि-  
 दिया। मेरी स्पष्टोक्ति से वह निश्चय ही प्रसन्न नहीं हुआ था। मैं  
 भरे स्वर में बोला—“तुम तो हा अखिल नवर के चो। वठा जर  
 इतन वपों बाद तुमसे मेट हो पायी है। मन के भीतर प्रतिनिधि न  
 कितने तरह तरह के विचित्र प्रश्न अनाखी समस्याएँ उठती रहती  
 किसी के आग उहें प्रकट करन का सुयाग ही नहीं मिलता। आ  
 के आग इन विषयो की चर्चा नहीं जम सकती, यह तुम मान ही लें  
 मेरा मित्र मडली बहुत भीमित है। जिन लोगो से मिलना जुलना  
 है उनके आग अपन मन के भीतर द्रुढ़ मचाने वाली घाता का  
 यक्त नहीं किया जा सकता। न उनमें इन सब विषयो का समझन  
 बुद्धि ही है, न रचि। और न मेरे प्रति वे इतने महानुभूतिगीन  
 जी खोलकर उनक आगे अपन विचार प्रकट कर सकू। इसनिय  
 तुम्हें पाकर इतन दिनों से मन के नीचे जमी हूँ वाना का वाँच  
 खान देन की इच्छा होती है। आजकल मुझे न जान क्या हा ग  
 उठन-वठत मान-जामते विश्व व्ययस्था से सर्वाधित इही सन विप  
 माचता रहता ह। एक अचल विचार भूत की तरह मेरे सिरे पर  
 हो गया है। वह विचार अभी स्वयं मर ही आग स्पष्ट नही हो  
 है पर इतना निश्चय है कि मेरी चनमान सामाजिक और  
 स्थिति एक विचित्र स्थिति की कच्ची भावना से विच्छुप्रो की त  
 प्रतिफल डक मारती है। लगता है जस मैं भार अपराधी हूँ, न  
 समाधानी हूँ, और सबडो मरभुवा के मुह का लौर छीनक  
 बना हुआ हू। तब से इस तरह की बात कौड भी समझार या  
 लिय मोघ सजता है। पर यहाँ पर मेरे लिये तब या नि  
 प्रदन नहीं है। यह वो जसे किसी अज्ञात और अदृश्य शक्ति  
 है जो अपने रहस्यमय विचारे में केवल मेरे मन का ही  
 मस्तिष्क की, मेरे शरीर की नसों की भी जकडना चला जा



यह अदृश्य पीडन कैसा निष्ठुर और कसा ममघाती है, यह मैं २८६  
 तुम्हें वैसे समझाऊँ। जीवन में इसके पहले इस तरह की  
 आतकजनक ग्लानि का अनुभव मुझे कभी नहीं हुआ। तब और विवेक  
 मुझे इस अनुभूति से छुटकारा देने के बजाय उसे और अधिक तीखा  
 बनात जात है, जैसे व भी उस अनुभूति के ही अविच्छिन्न अंग बन गये  
 हो। मेरी उलभन को सुलझाने में मेरा विवेक तनिक भी मेरी सहायता  
 नहीं करता। मैं तुम्हारे उस मतव्य की सहायता करता हूँ जो तुमने अभी  
 दिया था। मुझे भी लगता है कि अगर मैं अपना सारा जीवन भी इन  
 जटिल गुत्थियों को सुलझाने के प्रयत्न में बिता दूँ तो और अधिक उल-  
 भना ही चला जाऊँगा, सुलझा कुछ भी नहीं पाऊँगा। पर चाहते पर  
 भी अपनी इस बतमान मानसिक उलभन से छुटकारा पाना मेरे नियम  
 असंभव है यह मैं जान गया हूँ। इसकी परिणति कब, कहाँ किस रूप  
 में होगी, यह मैं नहीं जान सकता। पर रह रहकर एक आशका मेरे  
 मन में भूत की तरह सवार हो गयी है। वह यह कि मैं—चाहूँ पूरे प्राण  
 सपन की स्थिति से अपने को बचाने के लिये, चाहे और किनी कारणों  
 से—एक-एक दिन निश्चय ही प्राण में कूद पड़ूँगा—ठंडे मस्तिष्क से,  
 शांत विवेचना से नहीं, बल्कि किसी अनजान भावावग के घबरे से।  
 पर यह न मैं जानता हूँ न कोई दूसरा व्यक्ति ही अनुमान लगा  
 सकता है कि कौन ज्वाला अपनी बिन लपटा के आलिंगन में मुझे  
 खींच लेगी।”

४५

उसकी दायाँ आँसू जैसे दृष्ट कर रही थी। मुझे तब बाल  
 बिजली के-जैसे प्रकाश से एसा लगा कि प्राण के जिस कूद  
 की, जिस अनात ज्वाला की बात उसने अभी कही है  
 यह बाहर कहीं नहीं, स्वयं उसके भीतर बतमान है। बस्तुरी मृग जिस

२६० प्रकार भ्रमवश बाहर सुगंधि की खोज में भटको लगता है उसी प्रकार वीरद्र भी संभवतः अपने भीतर की आत्मा की खोज के लिये बाहर भटने के लिए उतावला हो उठा है। कुछ भी हा उसका उस समय का घणकता हुआ रूप देखकर मैं दहल उठा। मुबह वालीगन की भील के किनारे जिस विनादप्रिय वीरद्र के अट्टहास से मेरे अपक्षाकृत उदाम मन की अधरी कदाराएँ एक तिराले आनन्द की अनुभूति के साथ गूज उठी थी उस वीरद्र में और इस वीरेद्र में कितना अंतर था! जिस चचा में उब उठा था और जिसे परिहास में टालन का प्रयत्न करते हुए मनिया और गोमना भाभी के बाहर निकलन की प्रतीति में अधीर हा उठा था वह वीरद्र के गहन गभीर रूप से मार्मिक और पानरिक् भावोद्गार में दूसरे ही रूप में मरे सामने आयी। वह जाऊँर नि उमक पातर इधर भावा का जो नया तूफान उठा है अपनी यथाथ सामाजिक स्थिति और अपने भाव जगत में भीतर उत्पन्न नय चेतना प्राप्त युगादेश में बीच जिस प्रचंड मधुप में घात प्रनिघात उसक अंतर में चल रहे हैं व उसके लिय जीवन मरण की समस्या का रूप धारण किये बढे ह। उसका वह अतसमप न तो डाइग्नम के बाद-विवात् से संबंधित है न राजनीतिक मंचों से दिय जानवाते, परस्पर छिद्रावपी महत्वाकांक्षी नेताओं के नापणा में। वह एक दूसरा ही पागलपन है जिसका सबध युग चेतना में होने के साथ ही किसी गहरे अत स्फाट में भी है।

मैं सत्राटा खीच हुए उसके मुख की अभिव्यक्ति पर गौर वरन लागा। कुछ दर अनमने भाव से मीन रहने के बाद वीरेद्र बोला— तुमने भी ता इन युग-समस्याओं पर कुछ सोचा होगा। आक्षिर् तुम्हारी अपनी यथाथ धारणा या विद्वान इस सबध में क्या है? कुछ बताओ, पायद कोई रास्ता मरे मन की सुखिया का सुलभान का निबल आय?

उसकी दृष्टि में ऐसी आतरिक्ता और ऐंगी व्याकुलता भरी हुई

थी कि मैं बड़ी भ्राति के चक्कर म पड़ गया । पर अबकी २६१  
 वार उसके प्रश्न को किसी तरह टाला नहीं जा सकता था ।

मैंने कहा—“मैं जन्म से ही घोर बूजुवा परम्परा के बीच म पला हूँ—तुम्हारी ही तरह । तुम्हारे अनुभूतिगील मन में युग चेतना का गहरा प्रभाव पड़ा है और उन जन्मजात सस्वारों के विरुद्ध विद्रोह जगा है, पर मैं इतना अनुभूतिगील नहीं हूँ । युग आदर्श के सम्बन्ध में मैं कभी विचार ही न करता हाऊँ और युग चेतना के प्रति एकदम उदासीन होऊँ, ऐसा सम्भव नहीं है । पर उसने तुम्हारी तरह मेरे मन को झकझोर कर द्विधा विभक्त नहीं किया है । मैं जब केवल तक की दृष्टि से इस प्रश्न पर विचार करता हूँ तब मैं भी तुम्हारी ही तरह अपने का एसी उत्पत्ति न ऐसा हुआ पाता हूँ कि तब आर उस विषय की चिन्ता को ही त्याग देता हूँ । तब से मैं मानता हूँ कि संपत्ति का सम विभाजन हाता चाहिये और कुछ विविध सुविधा प्राप्त यक्तिया का जीवन की साधारण आवश्यकताओं की प्रति क अतिरिक्त अथ-अथ का कोई अधि-कार नहीं हाता चाहिये जबकि लोगों कराडों व्यक्ति उन विविध व्यक्तिया का भार भरत चल जान के उद्देश्य में निरंतर बजने रहने पर भी वा जून पट भर माया अनाज जुटाने की सुविधा न न पा सकते हा । युग के साधारण से साधारण बन्धि और तेसके साधारण से साधारण राजनीति, साधारण से साधारण छात्र और साधारण से साधारण किसान मजूर तब इस सीधी-सी सी सचार्ई का महसूस करन लग हैं । पर उल-मन तब पदा हाता है जब इस सब-स्थीटन महत्व को कायल्प में परिणत करन के उपाया के सम्बन्ध में तरह-तरह के व्यक्ति और समूह तरह-तरह के माग सुभान लाते हैं और प्रत्येक दल या वग अपने निर्धारित उपाय का अनुकरण धनिवाय रूप में आवश्यक मानकर दूसरे उपायावलवी यक्तिया या दला को अपना और समाज का घोर गन्धु मानन लगता है । फल यह हमन में धाता है कि सपय सा विषय धार्पित रतगों के बीच उनमा नहीं हाता जितना वा विभिन्न उपायावलवी समाजवादिया के बीच । धम्यु-निस्टा और समाजवाधिया के बीच विराध की जितना बड़ी दीदार लगी है उतनी मजदूरी और मिल मालिकों के

बीच भी नहीं पायी जाती, यह बात तुम भी मान चुके हो।  
 सर्वोदयवादी भी अपने को मानवों के समान अधिकार और  
 संपत्ति के सम विभाजन के पक्षपाती बताते हैं। पर इस आदर्श की उप-  
 लब्धि के लिये जो मांग के मुभाते हैं उनसे दम्पूनिस्ट और समाजवादी  
 दोनों का मूलगत विरोध है। इन सब दलों की सारी शक्तियाँ एक-दूसरे  
 का अस्तित्व मिटाने के प्रयत्नों में खच हा रही हैं। यह पारस्परिक सघर्ष  
 ही जैसे सभी दलों का मुख्य ध्येय बन गया है और जो मूल उद्देश्य था—  
 अर्थ और संपत्ति का सम विभाजन—वह गौण हा उठा है। और प्रत्येक  
 दल अपनी महत्ता प्रमाणित करने के उद्देश्य से जो प्रयत्न और प्रयाग करता  
 है उसमें बलि होते हैं अर्थ और भावुक जन साधारण—चाहे वे निम्न  
 मध्यवर्ग से संबंधित हो चाहे प्रालेतेगियत वर्ग से। यही कारण है कि आज  
 सार राष्ट्रीय (और अंतर राष्ट्रीय) चातावरण में अंतर्विरोध, अंतर-  
 वर्ण्य, अ-व्यवस्था, अशांति, असंतोष और उलझनों का तूमार बंधा हुआ  
 है। मानवीय समानाधिकार, आर्थिक सम विभाजन, विश्व शांति और  
 विश्व व्यवस्था की बड़ी-बड़ी, भारी भरकम शक्तें सबत्र सुनन में आती हैं,  
 पर साथ ही सबत्र मानव की दानवीय शक्तियों को जगाने व उद्देश्य से  
 भेरिया बजायी जा रही हैं, और नये खून के मचार से उमत्त और  
 उद्भ्रात व नवोत्थित दानवीय शक्तियाँ बिना किनो स्पष्ट उद्देश्य के  
 आत्मघाती और विश्व विनाशी सघर्ष में बूढ़ने फौदन के निय पागत  
 प्रवेग से छटपटा रही हैं। इस छोटी-सी दुनिया में निवास करनवाली,  
 महाविश्व की तुलना में अति अल्प-मध्यम नगण्य मानवता अपने  
 अत्यल्प ज्ञान, अति सुच्छ विज्ञान और अति विराट अज्ञान के दम से  
 मतवाली होकर आपस में ही द्विप्र भिन्न होन के लिये उनावली हो उठी  
 है। विभिन्न दलों की बिखरी हुई शक्तियों के मगठन और सहयोग से  
 एक ममान-बन्ध्याणकारी लक्ष्य को सामने रखकर मगठिन और  
 सामजत्पपूर्ण उपायों के समप्रयोग पथ को अपनाते की प्रेरणा देनेवाले  
 महापुरुषों और महानेताओं का एकत्र मभाव है। पूजीवादी वा  
 अपनी अत्यल्प सत्ता के स्वाय को सर्वोपरि महत्व देता हुआ अपनी  
 जमीन के नीचे एगभित होने वाली विस्फोटक भूखपी शक्तियों के प्रति

एकदम आँखें। बद किये बठा है और अभी तक विश्व की २६३

गति का अर्थ और इति केवल पूजा की अधिकाधिक वृद्धि ही मानना है। पूजा विराधी वर्ग प्रतिहिंसात्मक प्रवृत्तियों में प्रेरित होकर 'ध्वंस केवल ध्वंस के लिये' इस नीति का अनुसरण करते हुए चल रहे हैं, और ध्वंस के साधना और रूपों के सम्बन्ध में मतभेद होने के कारण आपस ही में लड़ भगड़ रहे हैं। सांस्कृतिक वर्ग इतने दुबल और क्षीण पड़ गये हैं कि विभिन्न राजनीतिक गुटों के नक्काखानों के ऊपर अपनी आवाज उठाने में एकदम असमर्थ हैं और किसी-न किसी राजनीतिक या आर्थिक गुट के साथ अपने का संबन्ध किये रहते हैं। राष्ट्रवादी वर्गों का यह हाल है कि अपने-अपने राष्ट्र की साक्षीण चहारदीवारी के सीमित कूप के बाहर देख नकने योग्य न तो उनकी दृष्टि है न सामर्थ्य और न सुनिधा। हम प्रचार मसार की ममस्त राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियाँ प्रस्त-व्यस्त हैं और शक्तियाँ द्विश्रमिन्। ऐसी हालत में कौन किमका क्या पथ सुझा सकता है? अघेनव नीयमाना यथाथा !"

बारंद्र अत्यन्त मनायाग पूर्वक मेरी बातें सुन रहा था। जब मैंने अपने व्याख्यान का तार स्वयं तोड़ दिया तब उसने एक लम्बी साँस ली। उसके बाद उमका भावावेग सहसा फिर एक बार उमड़ आया। बोला—'तब क्या तुम्हारी राय में भूख से सतायी हुई, त्रिविध ताप से पीड़ित, अयाय-दलित और निर्वातित मानवता के उद्धार के सभी प्रयोग निरर्थक हैं? जड़ता की जिस स्थिति में वह पड़ी हुई है उसी में उसे डूब रहने दिया जाय? जो कमबोर अपना सबस्व त्याग कर अपने प्राणा का हथेली पर रखकर सदियों के पापण से निःसत्त्व, खण और भुभूप जनता में जीवनी-शक्ति का मचार करने के प्रयत्नों में जुट हुए हैं उनकी अमहाय और अवोध अवस्था से लाभ उठाने वाला क विरुद्ध मित्राह की आग भडकाकर नयी चेतना जगा रहे हैं, उनकी साधना का क्या फायदा मूल्य नहीं? समार भर के जन आदालत जिग नयी शक्ति से पुष्ट, नयी संस्कृति के अभिप्रेत में निखरे हुए सावमागलिक, सावमौमिक समाज की स्थापना का बठोर द्रत निय हुए हैं और अपने व्यक्तिगत सुख-दुखा का तिलाञ्जलि देकर, 'गोणित-

महासागर के उस पार—हमी पृथ्वी पर—स्वर्ग की स्वप्नभूमि को सत्य बनाने का बीड़ा उठाया हुआ है वे मात्र क्या माया मरीचिका में भटके हुए मूख सेनानायक हैं और अपने अनुयायियों को भेड़ों की तरह महाविनाश के अतल गह्वर की ओर ढकेले लिये जा रहे हैं? वे लोग सब क्या अध मोह से ग्रस्त हैं और यदि निमल अकलवित् दिव्य-दृष्टि रख गयी है तो वह केवल तुम्हारे और हमारे जैसे निवृत्त आलमी, आत्ममग्न, आत्माराम और आराम कुर्सी पर जमे हुए बूजुवा विचारकों के पास ?'

बीरेन्द्र की आँखें जैसे जल रही थीं। उस समय जैसे उसके सामने उसका भिन्न नपेन्द्रजन नहीं बठा हुआ था। बठा था मूर्तिमान गोपक समाज—अपने विचारों की सम्मत्त सकीर्ण स्वाध्यायरायणता गदगी और सडन लिये हुए। और वह स्वयं जिस बीरेन्द्र नहीं था। वह था सदिपो से सताय और लौहचक्र में पिसे हुए दलित वर्गों की युग युग सचित प्रतिहिंसा का पुजीभूत प्रतीक।

मैं स्तब्ध था।

बीरेन्द्र कहना चला गया—जमा कि नमन अभी स्वयं स्वानार किया है, बूजुवा सस्कारों से तुम बुरी तरह घिर हुए हो और उनसे छुटकारा पाना तुम्हारे लिये प्रायः असम्भव सिद्ध हो रहा है। इसलिये तुम्हारे जैसे बुद्धि विलासी कर्तव्यों का कोई मूल्य नहीं हो सकता। अगर तुम्हें सचमुच कोई नया बर्त्याणकारी पथ सुझाना है तो पहले अपनी सारी संपत्ति, भूठी मध्यवर्गीय और व्यक्तिगत सामाजिकता और व्यक्तिगत सबंधों का मोह त्याग कर समस्त बंधन काटकर मदान में कूट पड़ो। जन-संपर्क में आकर, जनता के साथ एकप्राण होने का प्रयत्न करो। तब तुम जा भी सुभाव रखोगे उसका मूल्य होगा। याद रखो, आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों—एक-एक दिन तुम्हें जनता से संपर्क स्थापित करना ही होगा। यदि अपने हठीले सस्कारों के कारण अपने चतमान भाव-जगत से मुक्त होने में असमर्थ रहोगे तो तुम्हारी सारी सत्ता धार अपमान और अवमनाना के बाद बुरी तरह मिटा दी जायगी।

“अरे ये दोना तो लडन लगे।” चौककर मैंने देखा पीछे गामना

भाभी और मनिया खड़ी थी। सचमुच मैं बीरेन्द्र का वह २६५

ज्वालामय, विस्फोटक रूप देखकर इस कदर आत्म विस्मृत हो गया था कि उन दोनों के आने की कोई चेनना ही मुझे नहीं थी। और बीरेन्द्र तो परिपूर्ण रूप से ग्रावमग्न ही रहा था। गामना भाभी के उक्त विनादपूर्ण छीटे की जस बीरेन्द्र के गहन गभीर, समगोपी उद्गारा वा जादू पल में भग कर दिया। मैं मुक्त भाव से हँस पड़ा। गारेन्द्र भी अपनी मन्त्र स्वाभाविक स्थिति में लाट आया और भावावेग में बहकर मुझे लत करके वह जो बड़ी बातें कह गया था उससे कारण वह कुछ सञ्चुचिन-सा लगन लगा।

मैंने उसे भारी सहारा पा लिया। बीरेन्द्र आनन्दित मन स्थिति में था उससे विस्फोट के घुएँ से मैं एक घुटन का सा अनुभव करन लगा था। इसीलिये बहुत दरसे मैं भाभी की और मनिया की बात जाह रहा था। मैंने प्रमत्त होकर कहा— 'आइये भाभी, बठिये। आया मनिया तुम भी बठ जाया। जा लडाइ हम दाना के बीच चन रहे हँ उमम आप दाना भी गरीक हँ जायँ, तभी उमम गहराड आयगी।'

'पर बात क्या है? किस बात का लकर नाग चन रहा है?' बगल में पठन हुए भाभी जी ने पूछा। मनिया भी आर कहीं म्यान न पाकर चुनचाप बीरेन्द्र की बगल में बठ गया। हम नमय वह बहुत प्रसन्न दिखायी देती थी। मैंने मन-ही मन अनुमान लगाया कि भाभी जान-सना अचछा स्वागत किया होगा।

मैंने भाभी जी की आर मुटकर कहा— 'बात यह है भाभी जी कि बीरेन्द्र आजरत अपन जीवन की बूजुवा परिस्थितिया में बुगी तरह चिग हुआ है। उसके मन में यह विचार बढी गहराई में धर कर चुका है कि किसी भी व्यक्ति को इस बात का कोई अधिकार नहीं है कि वह गामिन धम की अपेक्षा अधिक सुख और सुविधापूर्ण जीवन मिताय। कठार धाम्निविक जीवन की मह जटिल गम-या उसे परगान किच हुए है कि मनार की अधिक-मन्यव जनता जन भरपूर सटन पर भी मानन और धम्य के अभाव से हाहाकारमय जीवन मितान का धाम्य है तब मुट्टा भर साग अपनी आवस्यकता से बटन अधिक धन और अपति

बटोरकर मूछा पर ताव देते फिरें—इस उलटी गति को, इस सामाजिक भ्रमण को उसका पीड़ित मन सहन नहीं कर पा रहा है। इसलिये वह जन आन्दोलन के बीच में कूदना चाहता है, अपनी सारी संपत्ति को जनता के हिताय बाँट देना चाहता है और मुझे भी यही सलाह दे रहा है। चूँकि आप दोनों की राय के बिना ऐसा करना बहुत उचित नहीं होगा, इसलिए आप दोनों की राय इस मामले में परम आवश्यक है।'

मरा परिहासात्मक स्वर और ढग निश्चय ही बीरेन्द्र को अच्छा नहीं लग रहा होगा। उसके गभीर मुख की निश्चल मुद्रा के ऊपर एक अपरिस्फुट-सी तीखी मुसकान झलक रही थी। पर वह बाला कुछ नहीं।

सायद भाभी जी की ठीक समझ में नहीं आ रहा था कि मेरी बात में वास्तविकता कितनी है और परिहास का पुट कितना। इसलिये वह क्षण भर के लिये प्रश्न भरी दृष्टि से मरी ओर दगती रही। उनके मुख का भाव भी धीरे धीरे गभीरतर होता चला जाता था।

अत्यंत शांत और सयत भाव से वे बोली— इनके इस विचार में बहुत दिना से परिचित हूँ। यह कोई नयी बात आप मीने नहीं सुनी। मैं न संपत्ति के जनता में बाँट जान के विरुद्ध हूँ, न जन आदालत के बीच में कूद पडने के। मैं स्वयं भी इनके साथ जन आदोलन में सहयोग देने के लिये तयार हूँ। मैं केवल एक बात के सबध में आश्वस्त हो जाना चाहती हूँ। संपत्ति ऐसी संस्थाओं में बाँटे जिनके विषय में यह निश्चित पता लग जाय कि उनके द्वारा जनता का सच्चा बल्याण होगा और जन आदालत के उम रूप को पकड़ा जाय जिसके सबध में उस वान का निश्चिन प्रमाण मिल जाय कि जनता के सच्चे और स्थायी उदार का वही सर्वोत्तम पथ है। पर जन आदोलन के नाम पर विभिन्न दला द्वारा जसा घोणाला आज मचा हुआ है वह किसी से छिपा नहीं है। इस चलनते में और उमक आस पास घटने वाली प्रणिनि की घटनाओं से इस गोरसंधाँधे के दृष्टान्त मिल सकते हैं। कम्युनिस्टो के छिटफुट प्रयोग भ्रमण चल रहे हैं, समाजवादी भलग अपनी लिचडी पथा रहे हैं तथाकथित प्रातिवारी समाजवादी दल अपने कूटचत्रो का जाल भलग



बिछा रहा है और कांग्रेस का चक्र अलग चल रहा है। कोई भी दल अपने निश्चित सिद्धांतों के मबंध में कोई भी निश्चित धारणा जनता के मन में जमाने में असमर्थ है। प्रत्येक दल की अपनी-अपनी महत्वाकांक्षाएँ हैं। फल यह हुआ है कि सभी दलों के अनिश्चित असंतोष और छिंटफुट प्रयोगों की प्रतिक्रिया से जन आंदोलन का एक नया ही रूप सामने आया है, और वह है आतंकवाद। इस आतंकवाद को अपनाये हुए हैं कुछ अनुभवहीन और उत्तरदायित्वरहित नवयुवक। पटाखों और तनाव भरे बलों की सहायता से वे वर्तमान शासन-सत्ता को भयभीत करके जनसत्ता स्थापित करने का स्वप्न देख रहे हैं। फल हो रहा है उलटा। उन पटाखों और तेजाबी बलों से शासन-सत्ता नहीं, बल्कि स्वयं जनता आतंकित हो रही है, जो इन तथाकथित जन आंदोलकों से विमुक्त होती चली जा रही है। जिस आंदोलन की परिणति भेदाभेद ज्ञान से रहित नवयुवकों की पटाखवाजी और तेजाबी करामातों में हो वह स्वयं अपने ही ध्येय को पराजित करने के सिवा और क्या प्रगति कर सकेगी मेरी समझ में नहीं आता। ऐसी हालत में, जबकि जन-आंदोलन का कोई भी निश्चित रूप देना के सामने नहीं है, और जन-आंदोलक स्वयं आपस ही में एक दूसरे के कट्टर विरोधी बने हुए हैं, उसमें बूढ़ पढ़न का अर्थ मेरी दृष्टि में केवल इतना ही है कि पटाखेबाजों और तेजाबी पणियों की संख्या बढ़ाना।”

२६७

४६

मैंने देखा कि बीरब्र व ससंग में आकर गोभता भाभी राजनीतिक विषयों में काफी गहरी दिलचस्पी लेने लगी हैं और सामयिक राजनीतिक घटनाओं का विलक्षण करने में भी मधेष्ट पटुता प्राप्त कर चुकी हैं। यह उनका बिलकुल नया ही रूप मेरे सामने आया, जिसकी कोई कल्पना उनके अग्रम दृष्टान्त से मैं नहीं करी थी।

पर वीरेन्द्र भाभी जी के इन विस्लेषण से तनिक् नहीं हुआ। बोला— “बुद्ध नगण्य अतन्त्रवादिय सारे आन्दोलन का दूषित ठहराना बहुत बड़ा अत्याय है। प्रत्येक म इस तरह की राभियाँ आ ही जाती हैं। संपूर्ण स्थिति का सकना किसी भी आन्दोलन के मूल नेताओं के बग का बात। गांधी जी के अहिंसात्मक आंदोलन का बलवृत्त करने का वाते हिंसा का की पमी नहीं रही जिसके कारण गांधी जी के प्रायश्चित्त करना पड़ा था।”

मैंने कहा— हिंसावादी कम्युनिस्ट आंदोलन से गांधी जी के अहिंसात्मक आंदोलन की तुलना करना बाना के प्रति अत्याय है।

‘मैं तुलना नहीं कर रहा हूँ,’ वीरेन्द्र ने कहा “मैं कम्युनिस्टों की नीति हिंसात्मक है। पर पटाखों और तेजाब के निर्विचार प्रयोग से कम्युनिस्टों की हिंसात्मक नीति उतनी ही होती है जितना चीरीचीरा-बाइ या दूसरी हिंसात्मक घटनाओं का अहिंसात्मक आंदोलन हुआ था। कोई भी समझदार इस तरह के कायरतापूर्ण और निरर्थक आतन्त्रवाद का अपमान राय नहीं दे सकता।”

‘राय न दे, पर आज का यह आतन्त्रवाद हमारे कम्युनिस्टों के लाल के विचार से रहित असहायिक कारवाइयों का ही तो तुम्हें मानना ही होगा। सोभना भाभी न कहा।

वीरेन्द्र जस कट गया। प्रॉट में रात बितु वास्तव सोभने पर स्वर में बाला— ‘तुम्हारे मुह से इस तरह की नहीं दली गामना जब कि तुम्हारी ही तरह की बहुत सी आन्दोलन में मजबूती लगन से भाग लेती हुई गानिया की गिब गया तुम्हें उनके प्रति तनिक् भी हमदर्दी नहीं है?’

यह ध्यगात्मक मतभेद बड़ा ही छुटीला और मार्मिक था। भाभी का चेहरा एकदम लाल हो गया। उन्होंने कहा— ‘मेरी गाननुभूति नहीं है, मुझ पर यह आरोप लगाकर तुम में भारी अत्याय कर रहे हो। यह मैंने न मभी कहा न सोच

मन्त्री लगन नहीं है। यदि उनमें मन्त्री लगन न होती तो

३६६

वे कभी जानबूझकर अपने प्राणा की बलि देन के लिये

निर्भीकता में मौत के मह में न कूटती। उन पर गोनी खलान वालों की प्रशंसा उनके विराधिया न भी नहीं की है। पर प्रश्न यह नहीं है। प्रश्न तो यह है कि जिस आन्दोलन के सूत्रधार भारतीय परिस्थितियों की वास्तविकता पर गहरा विचार किये बिना ही भारतीय जन आन्दोलन की एक निश्चित और समन्वित रूप रेखा और एक समन्वित ध्येय सामन रखे बिना ही केवल 'आन्दोलन आन्दोलन के लिये' ज्ञाति ज्ञानि के लिये हिंसा हिंसा के लिये' इस नीति को अपनाते हुए उन भाले भाले नवयुवकों और सरल विश्वास-परायण युवतियों का निरर्थक बलिदान के लिये आग बढ़ा रहे हैं व क्या मधुमुक्त जनता के कल्याण का पथ प्रशस्त कर रहे हैं और जन आन्दोलन के महत् ध्येय की ओर बढ़ रहे हैं।

'निश्चित रूप से आग बढ़ रहे हैं' वीरन्द्र न दृष्टता के साथ कहा। 'मैं मानता हूँ कि हमारा जन आन्दोलन आज खिल रहा हुआ है, और जन-सत्तावादी विभिन्न दलों के पारस्परिक मधुप का निर्धारण बना हुआ है। यह भी मैं मानता हूँ कि और भी कई भूना और भ्रातियों को अपनाता हुआ वह बीच-बीच में पथभ्रष्ट भी हो रहा है। पर प्रगति का मार्ग बड़ा ऊबड़-खाबड़ हाता है, यह बात हम सदा ध्यान में रखनी चाहिये। इन्हीं भूना और भ्रातियों से हाइर हमारा जन आन्दोलन निरंतर आग बढ़ता चला जायगा, और एक दिन निश्चय ही ऐसा आयगा जब सभी परस्पर विराधी जनसत्तावादी दल एक महान सम-संघ, एक ही विराट सम ध्येय, का अपनात हुए समान साधनों के प्रयाग द्वारा समान पथ में आग बढ़ेंगे। और तब अपने सगठित और समन्वित प्रयत्न से एक ऐसे स्वर्ग की स्थापना करन में वे समय हागे जहाँ मानव के इतने युगों के सार उद्यम समर्थानि का प्राप्त हो जायेंगे जहाँ मानव मानव में भेद नहीं रह जायगा, सब को सुख उपभाग का समान सुविधाएँ प्राप्त हागी। वहाँ मारा मानव समाज विभिन्न वर्गों दल या गुटों में विभक्त न होकर एक अविच्छिन्न इकाई बन जायगा। प्रत्येक व्यक्ति के निजी सुख-दुःख समस्त

३०० मानव-समाज के सामूहिक मुख दुखों से एक रूप मिल जायेंगे। वल्कि भौतिक दुःख तो तब रहेगा ही नहीं मुख—केवल मुख—की अनुभूति समग्र मानवता के ऊपर समान रूप से छा जायगी। क्योंकि तब सब के सम प्रयत्नों द्वारा भौतिक साधनों का विकास चरम सीमा तक पहुँच जायगा, जिसके फलस्वरूप रोग, शोक, दुःख-दारिद्र्य का कहीं लेश भी नहीं रह जायगा। मैं मानवता के इतिहास की उसी चरम परिणति की प्रतीक्षा में, उसी पुण्य दिन की घोर टकटकी लगाये हुए हूँ। मेरा यह महान् स्वप्न एक न एक दिन सफल होकर ही रहेगा, इस ध्रुव विश्वास के बल पर मैं जीता हूँ। और वीरेन्द्र ने भाव-मग्न हारर अपनी आँखें क्षण भर के लिये बंद कर ली।

इस भावावेग के बाद फिर कोई तक चल नहीं सकता था। गोभना भाभी, मनिया और मैं तोनों कुछ क्षणों तक स्तब्ध, मौन दृष्टि से उमकी घोर देतते रह। मह स्पष्ट था कि वीरेन्द्र के भीतर पीडित दलित और गोपित जनता के उद्धार की लगन भावगत हा चुकी थी पर उसकी न तो कोई सुस्पष्ट और निश्चित रूप रेखा उसके सामने थी और न उस सम्बन्ध में किसी बौद्धिक तक और विवेकपूर्ण विद्वेषण की कोई आवश्यकता ही वह महसूस कर रहा था। वल्कि इस तरह के ताकिक विद्वेषण से वह साफ कतराकर निकल जाना, चाहता था—अपने उसी स्थिर भाव जनित अडिग विश्वास में मग्न हो जाने के लिये।

गोभना भाभी के मुख पर एक विचित्र भय एक अनोखी भ्रांति की-सी छाया घिर आयी थी। जस उन्होंने उम समय वीरेन्द्र का एक मिल कुल नया ही रूप देखा हो। भाष ही मुझे यह भी लगा कि वीरेन्द्र ने उनका जो परिचय मुझे दिया था वह पूरा नहीं था। उसने मुझमें यह बात छिपायी थी कि उन दोनों के बीच कुछ समय से एक विरोध दृढ़ बन रहा है—इसी जन आंदोलन के विषय की लेकर दोनों की तकराली से मुझे उस बात का आभास मिल रहा था कि दाल में वहा कुछ काला पड़ गया है।

सबसे अधिक भ्रांत हो रही थी मनिया। उसने मुख के भाव से मैं स्पष्ट अनुभव कर रहा था कि वह अपने का एक बिलबुल ही विजातीय

वातावरण में पाने लगी थी। सामयिक राजनीति सबधी ३०१

किसी विषय को कोई मनुष्य ऐसे गहन-गभीर रूप में ग्रहण कर सकता है और उसमें अपनी सारी आत्मा को, संपूर्ण यत्नत्व को ऐसे परिपूर्ण रूप से निमज्जित कर सकता है यह अनुभव उसके लिए एकदम नया था। वह निश्चय ही यह अनुभव भी कर रही होगी कि जिस विषय को लेकर पति-पत्नी एक-दूसरे से एसी सरगमीं स बातें कर सकते हैं, और एक-दूसरे की भांति प्रमाणित करते हुए कड़ा-से-कड़ा सब अख्तियार कर सकते हैं, वह कोई साधारण विषय नहीं हो सकता। वह अत्यंत एकाग्रता से वीरेन्द्र और भाभी की बातें सुन रही थी, पर स्पष्ट ही ठीक से कुछ समझ न पाने के कारण अतः दृष्टि से कभी वीरेन्द्र की ओर देख रही थी, कभी भाभी की ओर और कभी मरी ओर।

हमन्त काल की धूप कुछ समय पहले तक बड़ी मीठी लग रही थी, पर भाभी और वीरेन्द्र के बीच की गरम बहस के बाद वह अब, कम-से-कम मुझे, असह्य मासूम होने लगी थी। इसलिये मैं प्रस्ताव किया कि भीतर बठा जाय। सब लोग उठ खड़े हुए।

चलते हुए मैंने वीरेन्द्र से कहा—“तुमने भाभी को राजनीति विद्या में इतना कुशल बना दिया है, यह बात मुझसे इतनी देर तक क्या छिपायी मैं समझ नहीं पाया।”

वीरेन्द्र ‘हा हा’ करके हँस उठा। उसके इस परिचित अट्टहाम से मैं आश्चर्य हो उठा, नहीं तो उसका जा अत्यन्त गुह-गभीर मनाभाव कुछ देर से चल रहा था, वह यदि और कुछ देर तक उसी रूप में कायम रहता तो मुझे शायद अपन को घुटन से बचाने के लिए भागना पड़ता।

वह उसी हँसी की तरंग में बोला—“मैं तुम्हारी भाभी को इस विद्या में कुशल नहीं बनाया है। मुझे लगता है कि वह अपनी माँ की बोख से ही राजनीति सीखकर आयी थी। इसमें छिपान की कोई बात नहीं है। तुम कुछ दिन इसके सपके में रहो तो तुम्हें पता लग जायगा कि इसके हर बोन में, हर घाल में, हर ढाल में, हर सान में राजनीति भरी रहती है। यह ठीक है कि वह राजनीति को राजनीति के लिये नहीं अपनाती,

वाइ न-काई गूड उद्देश्य उसके पीछे रहना है। पर वह उद्देश्य क्या होता है, यह बड़ी समझती है, दूसरा कोई नहीं समझ सकता।

मन भाभी की ओर देखा। उनका मुह अस्वाभाविक रूप से लाल हो आया था।

मरी समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि अपना विवाह का जो सन्निहित इतिहास उसने सुनाया था उसमें भाभी जी का परिचय जिस रूप में दिया था उससे और उसकी इस समय की बातें सब क्या सम्बन्ध हो सकता है। मुझे लगा कि उसके विवाह हान के बाद से लेकर वर्तमान समय तक बीरेन्द्र के अपने भीतर की और बाहर की दुनिया में बहुत सी घटनाएँ घट चुकी हैं। मुझे याद आया कि उसने जन आन्दोलन के बीच में बृहत्पटन में तीन विभागाँ और बाधाभागाँ का उल्लेख किया था उनमें एक वार्तात्मक बंधन भी बताया था। मेरे अनुमान से वही उसका लिये एक प्रमुख बंधन सिद्ध हो रहा था। सम्भवतः यही कारण था कि उसमें उनकी सूत्रधारिणी के प्रति उसका मन के एक गलत भाग में भयंकर विरोध और विद्रोह की भावना उत्पन्न होकर निरन्तर बढ़ती चली जा रही थी। मुझे यह भी याद आया कि अपने विवाह का विस्तृत गुनाह हुए उसने अपने अन्तर के रस का सारा माधुर्य घालकर भाभी जी के स्नह-सरस और संवा-परायण स्वभाव का वर्णन किया था। उस समय उसका स्वभाव में छिपी हुई राजनीति की कोई बात ही उसे याद नहीं आती थी। तब तब वह उस मधुर स्मृति को एक द्वार जगाने के लिये अत्यन्त उत्सुक हो रहा था जिसमें आज के द्वन्द्व का लेश भी नहीं था— जो स्पष्ट ही दोनों के बीच कुछ समय से गहराता आ रहा था। विवाह के पूर्व का उस अवलुप स्नह-स्मृति के जगाने से वह अत्यन्त भाव विभोर हो उठा था। विवाह के बाद समय की गति से जा अनिवाय परिवर्तन मात्र प्रति-मात्र वष प्रति वष दोनों की भावनाओं में आते चले गये होगे उनके तब तब यथावधानी दृष्टिकोण में अपने जीवा का सामञ्जस्य स्थापित कर सकने में यह स्पष्ट ही अपने का अक्षय पा रहा था। उसके तत्कालीन अतन्द्रित का एक पक्ष यह भी था। मैं यह भी अनुमान लगाया कि जन आन्दोलन को लेकर भाभी जी के और उनके बीच जो

सखिन किन्तु नीला विवाद आज चला था वह इसके पहले भी कई बार कई रूपों में चल चुका होगा। और उम विवाद क व रूप चाह कैसे ही बना न रहे हा, मीठे और प्रिय अवश्य ही नहा रह हांग।

३०३

४७

जब हम लाग नीलवाल बरामटे के पाम पहुँचे तब सहमा जैसे वीर-द्र को भूठी हुई बात याद आ गयी।

बोना— चला, महा बठन के पहले तुम्हारा सामान हीन में लेत आवें। तब तक दबरानी-जेठानी को कुछ दर क गिय और घनि उवा बडान का मोका दो। दाना अपन अपन पति के विरुद्ध अपनी-अपनी गिवायतें एव दूनरे स एकात म कहकर अपना जी हतना कर लें।' और वह अपन परिहास पर स्वय ठठाकर हँस पडा।

मैं यह देखकर चकित था कि वह कितनी जल्दी एक मानसिक स्थिति से दूसरी—एकदम विपरीत—मन स्थिति का अपना लेना था। कुछ ही समय पहले तक जा भयावह रूप से गभीर भावुकतापूर्ण रख वह अस्तिपार बिय हुए था—जन आंदोलन की तूफानी लहरा के बीच बूद पडन की अपनी जिस मार्मिक व्याकुलता का परिचय दे रहा था और अपने स्वप्न-क्ल्पित भावी जन राज्य के जिस अपूर्व आदर्श का वर्णन करते हुए भाव-भद्गद् हा रहा था—उम गुरु-गहन मनाभाव से इस घट्टहाम का—दबरानी-जेठानी से सम्बन्धित मीठी चुटकी का—साम्य कहाँ पर हो सकता है, यह मरी समझ म किसी भी रूप म नहीं था पाना था।

मनिया ने उमक उस परिहास का बडे ही मीठे रूप म लिया, यह मैं उत्तर सलज्ज हाभोज्वल मुत्त का भाव दाने हा समझ गया। उनने एव बार निरखी—किन्तु अत्यन्त स्निग्ध—दृष्टि में वीर-द्र की धार दवा

और फिर साकेतिक मुसकान भरी दृष्टि से भाभी जी की

और । पर भाभी जी को वह परिहास बतइ पसंद नहीं

आया, यह जानने में भी मुझे दर तक लगी । उन्होंने एक बार आँख तरे रते हुए वीरेन्द्र की ओर दखा और फिर मुह फेर लिया ।

जब माटर पर सवार हाकर हम दोनों खाना हुए तब काफी दर तक दोनों मौन बठे रहे । भवानीपुर के मोड़ पर जब 'कार' घूमी तब वीरेन्द्र बोला— तुम्हारी भाभी इधर कुछ दिनों से सचमुच मुझसे नाराज रहती है । मेरे भीतर जो पागलपन भूत की तरह सवार हो गया है उसे झाड़ने की बहुत कोशिश करने पर भी वह सफल नहीं हो पाती उसकी खीझ का प्रधान कारण मुझे यही लगता है । और भी कारण हो सकते हैं जिन्हें मैं नहीं जानता पर मुग्ध यही है । उसे अप्रसन्न देखकर मुझे हादिक दुःख होता है । तुम्हें विश्वास हो या न हो, कभी कभी मैं एकांत में यह सोचकर रो उठता हूँ कि गोमना त्नि-पर दिन अकेली पडती चली जा रही है । इतन निष्कट रहने पर भी हम दोनों एक दूसरे से इतनी दूर पड गये हैं और दिन पर दिन और अधिक दूर होते चले जा रहे हैं । इसमें न उसका दोष है न मेरा । मैं न चाहने पर भी उसका साथ नहीं दे पा रहा हूँ । उसके अंतर के स्नेह प्रेम-भय जगत क स्निग्ध, सरल, मधुर भाव में सारा वातावरण मेरे नय उभरे हुए व्यक्तित्व के विकास के लिये जैसे विषमय और मारक सिद्ध हो रहा है । पर मेरा दूसरा व्यक्तित्व उसके अंतर के साथ इस असहयोग के लिये अत्यंत व्याकुल हाकर गुहार मारकर रोना चाहता है । इस खीचतान से मेरा मन छिन्न भिन्न हुआ जा रहा है कि गोमना जैसे त्नि पर त्नि अपने अंतर के सुनेपन में अपने को बुझानी चली जा रही है । और वह सुनापन भी निष्कट भविष्य में वैसा भयकर रूप धारण करेगा इसका मैं प्रत्यक्ष अनुभव कर रहा हूँ । धूय की निस्पद जडता उसका भातर इस तरह छा जायगी कि वह मृत्यु से भी अधिक स्वन्ध, निश्चल और निष्प्राण लगेगी । वहाँ सार्य-सार्य का भी शब्द नहीं होगा और भूत प्रेत भी नहीं जाचेंगे-बूढ़ेंगे ”

उसकी आँखों में भाव से ऐसा ला रहा था जैसे अपनी उस कल्पना



से वह स्वयं आतंकित हो उठा हो। अपने उस दुःस्वप्न में वह जैसे पूणतया निमग्न हो गया था।

३०५

मैं उस फिर से चेतना-लावक में लाने के इरादे में धक्का दगा चाहता। कुछ तीव्र स्वर में मैंने कहा—“वीरेन्द्र, तुम यह क्या व्यवहारी कल्पना करने लगते हो खराब कर रहे हो। तुम्हारे जन्म यथावधान व्यक्ति का इस तरह की बकाय की भावुकता नहीं होने नहीं सुहाती। मार्क्स के अनुयायी और भौतिकवादी होते हैं। तुम चाहे मार्क्स के बहुत अनुयायी न भी होना पर इतना तो निश्चिन्त ही है कि तुम्हारा झुकाव उसी ओर है। तब तुम क्या भाव जगत की फेंकलिया का इस तरह अपनाय हुए हो ? स्थिति का यथारूप स्वीकार करो। न मार्क्स ने और न उनके अनुयायियों ने कभी किसी को यह उपदेश दिया कि जन आन्दोलन में अपने घर के स्नह-वधना को एकदम बाँटकर अपनी पत्नी न या दूसरे सगे स्नह-सम्बन्धियों से बचकर हाँकूदा जा सकता है। यदि ऐसा होता तो न लागू न और मार्क्सवादियों में कोई अंतर ही न रह जाता तो 'नारि मुझे घर सपत्ति नासी भूख मुझाय भय सयासी, या जा जान बूझकर पत्नी और पुत्रों को त्यागकर, सपत्ति का निलागति दूर बराम्य साधन के लिये बाहर निकल जाते हैं। यदि तुम्हें अपनी जगत् पर सच्चा विद्वान है तो भाभी जी का भी अपने साथ घसीटने का पूरा प्रयत्न करा, प्राग्नि अस्फुटता से धबराओ नहीं। और यदि प्रयत्न करने पर भी तुम्हें इन सपत्तियों नहीं मिलती तो भावुकता का अपने मन में तनिक भी स्थान न्यिजिना ही अपने कत-य-य पर चले चना। मायात्मा निन्द्यति, इमं मर्त्यं नानिदं सत्यं को कभी मत भूना।”

दूरे भाषण में वीरेन्द्र जन्म सचमुच कुछ जगा और नमलकर बढ गया। कुछ दूर तक मेरी आर बढे गौर से दखना रहा, उनके बाद बोला—“तुम ठीक कहते हो। माय और द्विधा में दूरे हुए मनुष्य का विनाग निश्चिन्त है, और इस तरह की जो भावुकता मुझे बीच-बीच में पर दवाती है वह भी निश्चय ही घातक है। पर इसमें मैं यह मानने के लिये तयार नहीं हूँ कि भावुकता-मान्य हानिकारक होती है।

मात्रम यदि कवि और भादुक न होता तो वह कभी मानव-समाज के पिछने कभी युगों के आदर्शों और 'येयों

के ध्वनावशेष पर मूलतः नयी व्यवस्था और नये आदर्श को स्थापना का स्वप्न न देख पाता। पौराणिक विश्वामित्र ही तरह उसने एक त्रिलकुल ही नयी सामाजिक सृष्टि की रचना की थी जो यथाथवाही तर्कों पर आधारित होने पर भी पूरित का यात्मक है। एक मूलतः बदली हुई स्थापना के उद्देश्य से उसने नये धर्म की स्थापना की और नये ही देवताओं की मूर्तियाँ गनी " "

धर्म और देवता! मात्रम के नाम के साथ इन दो गानों को जाड़कर तुम क्या उसके प्रति अन्याय नहीं कर रहे हो? मैं नीच ही मैं उसकी बात पाटते हुए कहूँ।

'तुम्हारा चाकना रवाभाविक है अपक्षावृत्त गान भाव से बीरेन्द्र बोला, यह ठीक है कि मानवीय दान में पौराणिक धर्म पौराणिक ईश्वर और पौराणिक देवताओं के लिये का स्थान नहीं है। यह कबत इनलिये कि वे देवता मानवीय दृष्टि में अपना काम पूरा कर चुके। अतः नये युग की नयी परिस्थितियाँ में उन मृत देवताओं को गिलान से काई काम नहीं चलेगा। कोई क्रांति कोई भी विश्व विस्फोटक प्रगति बिना किसी एक धर्म का लिये नहीं चल सकती—फिर चाहे वह धर्म अतीश्वरवादी हो क्या न हो। और जहाँ धर्म रहगा वहाँ ईश्वर और देवता अपने आप प्राकृतिक नियम से आ खड़े होंगे। मानसवादियों का एक निश्चित दान है एक निश्चित आदर्श और जीवन और जगत के सबध में कुछ निश्चित विश्वास हैं, वे सब मिलकर एक निश्चित धर्म का ही रूप धारण करते हैं। और जब धर्म होगा तब उसका कोई ईश्वर भी होगा देवता भी अपने आप आ कूटेंगे, यज्ञ भी होगा और पुरोहित भी होंगे। मन और बलिदान के कुछ निश्चित नियम और विधियाँ भी होंगी। मानवीय इतिहास की अलाचना करते हुए मात्रम ने स्वयं कहा था कि जब-जब मानवता ने किसी मूलगत प्रगति के उद्देश्य से विश्व क्रांति का पथ अपनाया है तब-तब उसके जीवित नायक के बीच में मृत देवता आ खड़े हुए हैं और जीवित नायक ने उन मृतका के मुसड़े

पहन कर तब आग बढ़ना चाहा है। उसकी असफलता का यही कारण रहा है। इसीलिये माक्स ने जीवित नायका के बीच में जीवित ईश्वर और जीवित ही देवताओं को खड़ा करने का बीड़ा उठाया था। चिर-पुराण और चिर भूत को त्यागकर उमने चिर-नवीन और चिर-वर्तमान अथवा चिर-भविष्य को अपने नये वास्तविकतावादी धर्म का आधार बनाया। उस पर ऐसे-ऐसे देवताओं की स्थापना की जो पुराण विद्वेषी और नास्तिक थे। वह नास्तिक ईश्वर स्वयं माक्स ही था, जिसने एक मूलतः नयी सामाजिक व्यवस्था की सृष्टि की और उसके बाद उस धर्म से सम्बन्धित नये-नये देवता और नये-नये अवतार अवनरित होते चले गये हैं। आज उनके जो अनुयायी अपने विश्वास के लिये मर मिटने का तयार हैं, निर्भीक होकर अपने प्राणों की बलि दे रहे हैं उसके मूल में उन्हीं धार्मिक भावना का बदला हुआ रूप है जो ईसाई धर्म के प्रारम्भिक प्रचारक में वर्तमान थी जिन्होंने अपने विश्वास के आगे अपने प्राणों का कोई मूल्य कभी स्वीकार नहीं किया। बात चल रही थी भाबु कता को लेकर। यदि मानवीय आन्दोलन के पीछे एक निश्चित धार्मिक विश्वास द्वारा प्रेरित भाबुकता न होती तो कभी उसे इतना बड़ा प्राण-बल और रक्त-बल प्राप्त न होता जसा कि आज सत्तार में सबय—कही छिटपुट और कही सगठित रूप में—पाया जाता है। कोई भी बड़ी क्रांति केवल ठंडे मस्तिष्क से गणित की कौरी गणना द्वारा ही सफल नहीं हो सकती। उसके पीछे अदृश्य में प्रवाहित भाबुकता उसे बल देती है, और भाबुकता किसी निश्चित धार्मिक विश्वास द्वारा ही उभाड़ी जा सकती है—फिर चाहे वह धर्म नास्तिकवादी ही क्या न "

“तब क्या तुम्हारे भी कुछ निश्चित धार्मिक विश्वास हैं ?” मैंने पूछा।

“निश्चय ही। तभी तो भारत बलिदान के लिये इतनी बड़ी प्रेरणा ही मुझे कम मिलती जो कुछ समय से मेरे मन और मस्तिष्क का इस पूरणा में प्राप्त है कि ऊपर मैं कुछ मोच ही नहीं पाता हूँ।”

‘पर यह बात तुम स्वीकार करो कि किसी धार्मिक विश्वास का अर्थनायक से अर्थनायक या यही कुफल हुआ स्वतन्त्र है जो मुस्लिम विश्वासिया

ने लाखों की संख्या में निरपराध काफिरों की निरथक सामूहिक हत्या द्वारा प्रदर्शित किया था, अथवा जहाद धर्मों ईसाई विश्वासियों न

“कोई भी नयी सृष्टि तभी हो सकती है जब उसके पूर्व प्रलय की सामूहिक विध्वंसक शक्तियों का ताड़व मचे, वीच ही मैं मेरी बात काटते हुए बीरेन्द्र ने कहा, “उस सामूहिक ध्वंस की ही मिट्टी पर नयी रचना संभव हो सकती है। यह ठीक है कि कुछ पौराणिक धर्मों के अंध अनुयायियों ने अपने सभिन्न धर्मावलंबियों की निरथक सामूहिक हत्या की थी। पर हम मासौय धर्मावलंबियों के आगे एक निश्चित योजना है, जो एक सामूहिक और स्थायी कल्याणकारी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की ओर निरन्तर अप्रसर होती चली जा रही है। मैं इस बात पर भी जोर देना चाहता हूँ कि स्थायी शांति ही हम लोग का लक्ष्य है और उसके लिए हम लोग भरसक शान्तिपूर्ण उपाय ही राम में जाना चाहते हैं। पर उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिंसावादी पंजीपति राष्ट्र बिघ्न डालेंगे तो हम लोग उसका सामना करने से पीछे नहीं हटेंगे।”

मैंने इस बात पर गौर किया कि बीरेन्द्र ने आज के सारे वाद-विवाद में पहली बार स्पष्ट शब्दों में यह स्वीकार किया कि वह मानसवादी है। इसके पहले उसने जन आन्दोलन के सम्बन्ध में तितनी भी बात कही थीं वे सब अस्पष्ट और अनिश्चित थीं और सम्बुनिस्ट आन्दोलकों के बटुर पन का उसने एक प्रकार से विरोध ही किया था।

उसकी इस निश्चित स्वीकारोक्ति में मेरे भीतर बहुत दूर तक दवा हुआ भावेंग फूट पड़ा। मैंने कहा—“तब क्या सामूहिक हिंसा और सामूहिक विनाश होकर ही रहेगा? पृथ्वी के इतिहास में जितना मानवीय रक्त अब तक उसकी मिट्टी के ऊपर बह चुका है वह क्या इस हद तक अपर्याप्त है कि फिर एक बार रक्त के व्यासे दवताया का सतुष्ट करने के लिये लाखों मानवीय बकरों का बलिदान होना ही होगा? दूसरे देग की बात जाने दो, पर तुम्हारे देग में तो गांधी के अहिंसावादी शक्ति का आदेश, प्रयाग और परिणाम प्रत्यक्ष हो चुके हैं। तुम लोग परिवर्तन के सिद्धान्त पर विश्वास किया करते हो और स्वनिर्णीतता का निश करते

हो । तब क्यों शक्ति के उही पुराने हिंसात्मक उपाय का ३०६  
ही एक मात्र अवलंबन पकड़े बैठे हो ? केवल इमीलिये कि

माकम ने हिंसा का पथ निर्देशित किया है ? पर यह क्यों नहीं साबित कि  
माकम द्वारा निर्देशित पथ ही वष पुराना हा चुका है और इन सौ वर्षों  
के भीतर ससार का जा मूलतः नया अनुभव हुए हैं व माकम की कल्पना  
म ये ही नहीं । स्वयं मानस के द्विद्वैतमक भौतिकवाद के नियम से हिंसा  
और अहिंसा के बीच क पुरान सघष ने एक तीसरी शक्ति का जन्म दिया  
है—वह है प्रतिरोधात्मक अहिंसा । इस नयी शक्ति का नया प्रयोग क्या  
नहीं तुम्हारे दलबाले करना चाहते ? सब विषयों में तुम साध अपने को  
परिवर्तनशील बनाते हा केवल हिंसा के क्षेत्र में ही स्थितिगत क्या बन  
रहना चाहते हा ? याद रखा हिंसा के जिस अपूवकल्पित पथ को पश्चिमी  
और पूर्वी, दाना परस्पर विरोधी गुट बढी तेनी से अपनाते चले जा रहे  
हैं वह धर्म में दाना गुटा का ही मिटाकर छाड़ेगा । पिछले दिनांक युद्ध  
से जा सबक मिल चुका है उसमें यदि ससार के दो परस्पर विरोधी महा-  
गुटा की रक्त पिपागा शांत होने के बजाय और अधिक भडक उठेगी तो  
यह निश्चित है कि उन ताडव लीला के बाद पूजावात् और माभाज्यवाद  
ता मन्त्र क लिये बिलीन हा ही जायेंगे, पर साथ ही तब माकमवाद भी  
धरातल में एकदम मिट जायगा । इसलिये तुम भारतीय कम्युनिष्ठा के  
ऊपर बल्लुन बडा दायित्व आ पडा है । तुम लोग आर अथ अनुकरण  
की प्रवृत्ति से मुक्त होकर ठडे मस्तिष्क में, गान्त और तटम्य भाव से  
गम्भीर विचार करके एक भौतिक मूत्र द्वारा एक सवमालकारी महान  
उद्देश्य की पूर्ति के निय एक त्रिकुल ही नया साधन को अपना लो तो  
तुम्हारा और तुम्हारे साथ ही सार दग का—वन्धि सारे ससार का—  
कल्याण निश्चित हो जायगा, पर यदि पश्चिमी कम्युनिष्ठा की रीति को  
अपभाव में अपनाकर हिंसा द्वारा ही हिंसा के निराकरण का पथ अप-  
नायागे तो मानवता के निय एक महागन ही सोदन में समय हागे ।”

वीरद्वय्यगपूवक मुम्बराया, बाला— ‘तुम अभी इन सब मामलों  
में बच्चे हो । तुम नहीं जानते कि माकमिय मिदान्ना की विजय यथाय-  
वादी आदेश के साथ एक रूप में जुड़ी हुई है । प्रतिहिंसा द्वारा हिंसा पर

विजयी होकर तब मसार में सुख और गतिमय राज्य स्थापित करना माकमवादिया का ध्येय है। अहिंसा का महत्व माकमवादी खूब समझते हैं। अहिंसावाद का जहाँ एकबार अर्थ नाया नहीं उसके साथ पूजावादी सम्यता व नम्र उपकरण एक एक करके आ जुटेंगे और हम लोग की सारी याचना ही एकदम गुड-गोबर हो जायगी।'

“तो क्या अहिंसा पूजावादी सम्यता से अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई है ? आज मसार के जितने भी पूजावादी राष्ट्र हैं व क्या अहिंसा के सिद्धांत का ही अपना मूलमंत्र माने हुए हैं ? तुम लोग इस ज्वरन्त सत्य के प्रति आखिँ क्या बंद किये हा कि हिंसा व महाअस्त्रा को आज पूजावादी राष्ट्र जिस परिमाण में एकत्रित किय चल जा रहे हैं उस परिमाण में एकत्रित करना न हस के लिय सम्भव है न किसी दूसरे कम्युनिस्ट राष्ट्र के लिये ? हिंसा से हिंसा पर विजय कभी नहीं पाओगे यह नुब निश्चिन है। अधिक में अधिक यह होता नि जाना परस्पर हिंसा रत गुट समान रूप में विनष्ट हो जायेंगे। हिंसा का जो उत्तरोत्तर वृद्धि प्राप्त प्रलयकर रूप इस युग में देखने में आया है यदि माकम उसकी कल्पना कर पाता तो कभी हिंसा को साधन न यता जाता। पर जसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, उसकी कल्पना में यह बात भी ही गही। अतएव मभय आ गया है कि तुम लोग—माकम के नवीनतम अनुयायी—युग की बदली हुई परिस्थितिया को देखते हुए अपने आदेश की उपलधि के लिये एक नये ही साधन का—प्रतिरोधात्मक अहिंसा को—अपनाओ। गांधी द्वारा निर्देणित इस चरम अस्त्र के भीतर अनन्त समबानाए निहित हैं। आज के विश्वव्यापी प्रचंड हिंसात्मक वातावरण में केवल बही गुट अतत विजयी सिद्ध होगा जो इस अस्त्र को पूरी लगन, पूरी तत्परता और पूरे विश्वास के साथ अपना सकेगा। अथवा परिणामहीन, निरर्थक सामूहिक विनाश अवश्यभावी है।

मोटर आदमिया और सवारियों की भीड़ के बीच में घूमती गति से जा रही थी। थोड़ा-सा भी रास्ता पाते ही वीरेंद्र मोटर की चान कुठ बटा देता था, पर थोड़ी थोड़ी दूरी पर रुक रुक कर चलन के लिये बाध्य होना पड़ता था। किसी तरह चौरंगी पार करके हम लाग डलहौजी की ओर मुड़े और ग्रेट ईस्टन होटल के नीचे पहुँच गये।

ऊपर जाकर मैंने अपना कमरा चुलवाया। वीरेंद्र ने कहा—“मन जर से कह दो कि तुम अभी कमरा खाली कर रहे हो और किराया चुका कर, सामान निकलवाने के मजदूरा देने के लिये कह दो। कांड मोटर-टक मिल जाय तो उसमें भी सामान जा सकता है।”

इतनी देर तक वीरेंद्र के साथ जिस विषय पर, जिन तर्कों में वाद विवाद चल रहा था उससे मरे अज्ञान में मरे भीतर मग इगदा बदलन लगा था। मैंने मन्त्रोच का वनपूर्वक भाडकर बड़ी गम्भीरता के साथ कहा—‘देना वारेन्द्र, अगर तुम बुरा न माना और मरी बात का कोई मलत अथ न लगाया तो एक बात कहूँ।’

गायन मेरी गम्भीर मुद्रा और बात कहने का कुछ बदला हुआ ढंग देखकर वीरेंद्र कुछ चौंका। उनके कपाल में और आंखों में कुछ गिद कुछ सिक्कड़न भी पड़ गयी थी। बोला—‘कहते क्या नहीं?’

‘तुममें इतने बर्षों बाद आज अचानक मिलन हो गया, इससे बटकर खुशी इधर मुझे नहीं हुई। मनिया ने विवाह ही जान न जा लुगी हुई थी आज का लुगी अगर पूरी नहीं तो बहुत कुछ उसका निवट पहुँचती है। तुम्हारा मकान भी मैंने देख लिया है और तुमने भी मेरा होटल देख लिया है। इसलिये हम दोनों प्रतिदिन एक-दूसरे से जब चाह तब मिल सकते हैं।’

‘पर तुम्हारा मतलब क्या है, साफ-साफ गलत में कहते क्या नहीं?’ बाकी सीमा भर स्वर में वीरेंद्र बीच ही में बोल उठा।

‘मेरा मतलब—मैं तुमसे यह अनुरोध करना चाहता था कि हम दोनों को हाटल ही में रहने दो। क्या अपने यहाँ रहने का आग्रह करके

अपन मन की वतमान अनिश्चित अवस्था में व्यय की परे  
 जानी मोल लेना चाहत हो ?

वीरेन्द्र का चेहरा क्षण भर के लिये एकदम फीका पड़ गया। दूसरे ही क्षण मन ताना दौ गयी और तीसर क्षण उसने दड स्वर में कहा— 'मैं लखना हूँ कि तुम्हारा मूखतापूर्ण सकोची स्वभाव अभी तक वना ही बना हुआ है जसा कालेज के दिना में था। दूसरे के मनाभावा के सम्बन्ध में तुम्हारे मन में तरह-तरह के निराधार मन्द उत्पन्न होते रहत हैं और उनका अर्थ तुम अपने वहमी स्वभाव के अनुसार विचित्र रूप से लगात रतते हा। पर बाद गया इस बार मैं तुम्हारे मक्डी के जाले में ग्रन्थ नहीं मा का भूत पूरी तरह भाड़े प्रिना मानगा नहीं। मैं भी एक निदी आदमी हूँ, इतना तो तुम भी मानागे। चतो मनजर के पास। तुम नहीं चलते तो मैं स्वयं उसका हिसाब चुका आता हूँ।' और वह चलन ब लिय मुग।

मैंने उमना हाथ पकडने हुए कहा— 'अर भाद, जरा ठहरा भी। कुछ देर मुम्ना निषा जाय। चाय चाय पीन के बाद चल चनेगे जगी क्या है।'

'अच्छी बात है तब जल्दी आडर दो चाय के नित्रे—रत्निका काफी मंगाया।

मैंने घरी का प्रटन दयाया। थोडी देर में एक खटर आ पहुँचा। मैंने उम दो आदमिया के लिये काफी लाने के लिय आर दे दिया। वीरेन्द्र एक साफा पर आराम से बठ गया था। मैं भी उसके सामने एक कुर्सी पर बठ गया।

'आज एक नया ही अनुभव हुआ तुमसे मिलकर, मित्र। मैंने तनिक मुस्करान का प्रान करते हुए कहा।

'क्या नया अनुभव ? उसने उसी तरह आधे लेटे हुए कुछ अनमने भाव से पूछा।

'तुम्हारा एक ऐसा रूप आज मैंने देता जिसकी कपना कालेज के दिना में मैं मरन में भी नहीं कर सकता था। सोचता हूँ कि मनुष्य के जीवन में किहा अज्ञात सम्मिलित कारणों से न जाने क्या क्या



परिवर्तन आ सकता है, यह कोई नहीं बता सकता। एक अच्छे-बुरासे जमींदार का इक्कीता लडका, हास विलास और ३१३ विनोद में जिसका प्रारम्भिक जीवन बीता हो—एक दिन जनजाति के पीढ़े पागल हो उठेगा, यह स्वाभाविक नहीं लगता। पर प्रत्यक्ष देख रहा है, इसलिए उसे असत्य और अस्वाभाविक कहकर टाला भी नहीं जा सकता।”

“एक बात तुम्हें इस सिलसिले में बता दूँ। मामन की आरंभिक धर बीरद्वर वाला, “मेरा जन्म और पालन पापण सामंतवादी परंपराओं में घिर हुए वातावरण में अवश्य हुआ है। पर एक बात का पता तुम्हें गायद नहीं है। कालेज के दिनों में तुम्हें यह बताया जा बोर्ड में भीक ही कभी नहीं आया कि मेरे पिता में सामंतवर्गीय रक्त बीस विम्बा वतमान रक्त पर भी मेरी रंग में पचास प्रतिशत निम्न वर्ग का रक्त वतमान है। मेरी माँ एक कहार की लडकी थी। उसके बाप दाद पुस्ता से हमारे परिवार में दासता का पता अपनाया हुआ था—किसी जबदस्ती या दबाव से नहीं और न किसी कानूनी लिखा पटी के अनुसार ही। स्वच्छता में, स्वाभाविक रूप से, सहज पशु-बुद्धि से, पीढ़ी-दर-पीढ़ी माँ के कुल का प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव कर लेता था कि आजीवन उस जमींदार परिवार की प्राणपण से सेवा के अतिरिक्त और कोई दूसरा कर्तव्य उसका नहीं है। उन कोई वेतन नहीं मिलता था। न कभी वेतन का कोई प्रश्न ही उठता था न उसकी कोई आवश्यकता ही मेरे मातृकुलवाला—मेरे पित्रकुल के दासा—का कभी महसूस होती थी। अनिचाय रूप से आवश्यक कामों के लिये उन्हें खर्च अपने आप मिल जाता था। अपने कौशल के अनुसार वे प्रति परिपूर्ण आस्थावान—वर्तक गव का अनुभव करनेवाले—शिक्षा-सास्कृतिक और बुद्धि-वर्धक वगैरह वगैरह में मेरी माँ का जन्म हुआ। निम्नतम वर्ग के उस गोपित परिवार में मेरी माँ न बसा आश्चर्यजनक रूप में पाया, वगैरह विज्ञान के विम नियम के अनुसार एसा समझ हुआ, यह रहस्य अभी तक ठीक से मेरी समझ में नहीं आया। केवल रूप ही नहीं, शील और गुण में भी वह अद्वितीय थी। उनका सार व्यक्तिव में रूप में रंग में हमन में, बालने में, उठने में, बैठने में,

चलने में, फिरन में, ऐसा सहज-स्वाभाविक आभिजात्य पाया जाता था कि किसी भी अनजान व्यक्ति के मन में यह गवा उन्नत नहीं हो सकती थी कि उसका जन्म किसी कुलीन परिवार में नहीं हुआ है। एक स्निग्ध, सयत मुसकान, जिसमें उमगा घुली हड़ रहनी था सब समय उसके मुख पर छायी रहती थी। वह बहुत धीरे से, बड़ी ही कामल वाली में बोलती थी। तुम मर घटिष्ठतम मित्र हो और मर सब दुगुवा सस्कार (यदि वह कभी किसी मात्रा में मेरे भीतर रह हा तो) धुल पुछ चुक हैं। वसलिय इस सत्रध में अपनी जानी-सुनी बातों को सही-मही बताने में कोई व्यथ का सकीच में तुम्हारे आगे नहीं बहगा। मरे एक विश्रुत बूटे नौतर न जिसन मरे जन्म से ही मुझे अपनी गोद में उलासा था, मरेन के साथ मुझे यह बताना दिया कि मरी मा का प्रेम पिता जी से विवाह व पहले ही स्थापित हो चुका था। पिता जी अपने परिवार में सबसे पहल व्यक्ति थे जिन्होन अपनी कौलिक प्रथा के विरुद्ध खुला विद्रोह करने का साहस किया। वह भी मेरी ही तरह अपने पिता के इक्लौते लडके थे। उनके बड़े दो भाइया की मृत्यु छुटपन में ही हा चुकी थी। इसलिये परिवार के लोग उनसे डरते थ। जब उन्होंने मरी मा के सबध में यह जाना कि वह गभवती हा चुकी है तब उन्होंने निश्चय किया कि वह उसस विवाह करके ही रहगे। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में अपना माँ के आग यह प्रस्ताव रखा। उनकी माँ स उनके पिताजी का भी उनके इराद की सूचना मिली। सारे जमीदार-परिवार में तहलका मच गया। पिताजी का राकन क लिये कोई भी प्रयत्न उठा नहा रखा गया। पर वह चट्टान की तरह अडिग रह और उन्होंने स्पष्ट शब्दों में अपने घर वालों का यह चेतावनी दे दी कि यदि वे उमी महीने मेरी माँ के साथ विधिपूर्वक उनका विवाह नहीं करते ता वह माँ के साथ ईगार्ड बन जायेंगे और इसाई धर्मानुसार विवाह करेंगे। इक्लौते बटे वे उम धर्य निश्चय का पता जब माँ-बाप को लग गया तब उन्होंने और को- चारा न दल कर अन में माँ के साथ पिताजी का विवाह कौलिक विधि के अनुसार कर दिया। विवाह होन के प्राय सात मास बाद माँ न मुझे जन्म लिया। मरे दादा को पिताजी के व्यवहार से ऐसा सदमा पहुँचा कि

तीन ही महीने बाद वह चल बसे। यह तो हुई मेरी सुनी ३१५  
 बात। जानी वान यह है कि मेरे पिताजी गभीर प्रकृति के  
 व्यक्ति थे। सब लोग उनसे डरते थे। मा भी अपवाद नहीं थी। पर उस  
 डर में मा जिस अमीम सुख का अनुभव करती थी। दोना के प्रेम में  
 विवाह के बाद भी तनिफ भी अंतर नहीं आया। मा की मृत्यु तक वह  
 अटूट बना रहा। जब मा की मृत्यु हुई तब मैं केवल नौ साल का बच्चा  
 था। पर बचपन की उस भयुर स्मृति से मैं उसके अंतर को जिस वास्त  
 विक्ता के साथ जान पाया हूँ, यदि वह अधिक जीती हाती तो  
 शायद उस यथाय गान में आज धुएँ के धंवे पड गये होते। उसकी मृत्यु  
 के बाद पिताजी ने परिवारवाला के साथ अनुनय विनय और प्रयत्ना के  
 बावजूद दूसरा विवाह नहीं किया। पिताजी के सबंध में मेरा मनोभाव  
 ठीक क्या था, इसका स्पष्टीकरण और विश्लेषण बहुत कठिन है। यह  
 निश्चित था कि वह मुझमें बहुत स्नह करते थे, जसा कि मपूर्ण स्वाभा  
 विक था। पर अपन उस स्नह का खुनकर व्यक्त करन में जम उन्हें  
 मकाच हाता था। इसलिये बड़े बड़े और उदामीन ढग से वह मुझमें बाते  
 किया करते थे। और उनका वह रखा ढग मुझे कभी पसंद नहीं आया।  
 अपनी किशोरावस्था तक उनके प्रति मैंने अपन मन में कभी प्रतिस्नह का  
 भाव जस पाया ही नहीं। तब तक मेरी बुद्धि इस हद तक विकसित नहीं  
 हुई थी कि मैं उनके स्वभाव के ऊपर की ग्लती और खुरदुरी परत के  
 नीचे छिपी हुई कोमलता का परिचय पा जाता। इसलिये मेर भीतर  
 उनके विरुद्ध जसे एक विद्रोह की भावना-नी धीरे धीरे भरनी चली जा  
 रही थी। आज जब मैं अपने मन का विश्लेषण करता हूँ तब मुझे एसा  
 लगता है कि मेरे उन विद्रोह का सम्बन्ध एक गूढ मनार्थानात्मिक कारण  
 भी था। मेरे पिता उसी वग धीरे उमी वग में समर्पित थे जिसमें पीनी  
 दर पीड़ी मेरे मातृपुत्र वाला को वेदाम का गुलाम बना कर रखा था।  
 जब से इस बात की जानकारी मुझे हुई तब स अपन पितृवृत्त  
 धाला के विरुद्ध मेर मनजान में जस एक विद्रोह का भाव भर उठा था।  
 चूंकि मेरी मा प्रालेतेरियन थी, इसलिये मैंने भी अपन को बराबर प्राले  
 तेरियन ही माना है। अपन पितृवग के बुद्ध सस्वार निश्चय ही मैंने

३१६ भीतर रहे होंगे—और शायद आज भी किसी हद तक बत-  
मान हैं—पर उन पर मैं बहुत कुछ विजय पा चुका हूँ और  
जल्दी ही पूरी विजय पा जाने की आशा रखता हूँ ”

अपनी माँ का किस्सा सुनाकर उसने अपने जीवन का एक नया  
रहस्य मेरे आगे उद्घाटित किया। अपने पितृकुलवाला के विरुद्ध विद्वेष  
की बात बताते हुए अब से उसे उसकी छानी फून रही थी। मैं उसके  
मुख पर चढ़न और उतरन वाले प्रत्येक हलके से हलके रंग पर गौर कर  
रहा था। उसकी आँखों के अत्यंत गंभीर भाव में कहीं वृत्रिमता का कोई  
लक्षण नहीं था। सहज-स्वाभाविक रूप से सरल और स्पष्ट शब्दों में उसने  
मैंसे अपना कलेजा उतारकर मेरे आगे रख दिया था।

ध्वाय काफी लंबा था। मैं दो प्याला में काफी ढालता हुआ जाता—  
‘पर तुमने तो अभी बताया कि तुम्हारी माँ के स्वभाव में एक सहज शाली-  
नता पायी जाती थी। तुम्हारी ही बातों से मुझे ऐसा लगना है कि  
तुम्हारी माँ के भीतर प्रोलेतेरियन वर्ग के संस्कार बतमान नहीं थे

‘ प्रोलेतेरियन संस्कार क्या सभी व्यक्तियों के जीवन में बाहर उच्चरते-  
चूड़ने फिरते हैं ? वे निश्चय ही उसके सचेत मन के भीतर दबे पड़े होंगे ।’

एक टुकड़ा टोस्ट का मुँह में डालते हुए मैं वीरेन्द्र की आँखों द्वारा  
जैसे उसने भीतर खुदा हुआ उसका अतर्जीवन का सारा इतिहास पढ़न का  
अभ्यस्त करन लगा। दो घूट काफी पी चुकन के बाद मेरा खोया हुआ  
साहस जैसे लौट आया। वीरेन्द्र अनमन भाव से काफी पी रहा था।  
टोस्ट के प्रति स्पष्ट ही कोई प्रयोजन उसे नहीं हो रहा था।

मैंने कहा—‘ तो पितृकुल के प्रति तुम्हारे विद्वेष और विद्रोह ने ही  
आज तुम्हारे मन में समस्त उच्चवर्गों के विरुद्ध प्रतिहिंसा की भावना भर  
दी है ?’

‘कम से कम एक बार तो यह अवश्य ही है उसी अनमने  
भाव से वह बोला।

‘कभी-कभी मुझे ऐसा लगना लगता है अंतिम घूट समाप्त करते  
हुए मैंने कहा—‘कि कुछ अवसरवादियों को छोड़कर शेष जितने भी  
नवयुवक कामपणीय नेताओं द्वारा परिचालित आंदोलन में भाग ले

रह हैं उन्हें जीवा म किसी-न किसी कारण से अवश्य ही बोई गहरी चोट पहुँची होगी—विशेष कर उन नवयुवकों

३१७

की बात में कह रहा हूँ जो आज अपने प्राणों का मोह एकदम त्यागन के साथ ही दूसरों के प्राणों के प्रति भी निमम हो उठे हैं। निहान घिना किसी निश्चित सौर सुस्पष्ट ध्येय के 'मरो और मारो'। इस मिडाल के पालन को अपने जीवन का मूलव्रत बना लिया है।'

जा मरने को तयार है, अपने प्राण का तनिक भी मोह जिसे नहीं है उसे दूसरों का मारने का भी पूरा अधिकार है। उसके अधिकार को छीनने की शक्ति इस विश्व में किसी को भी नहीं है। यह कहते हुए वीरेन्द्र सीधा होकर मीना तानकर बठ गया। उसकी जाया में एक अस्वाभाविक प्रकाश चमक रहा था। मैं कुछ डर गया। चुपचाप, सगर्भित दृष्टि से उसकी शोर देखता रहा। वीरेन्द्र कुछ क्षणों तक अपनी उमी जलती हुई दृष्टि से जैसे मेरे भीतर के समस्त कामल मन्वारा को दग्ध करने का प्रयत्न करता रहा। उसके बाद बोला— 'तुम सामूहिक हिंसा के उस रूप की कल्पना कर ही नहीं सकते जा आज के युग में मानव की अस्वाभाविक प्रवृत्तियों और आसाधारण परिस्थितियों की चरम परिणति के रूप में जल्दी ही एक दिन तुम्हारे नामने आयागा। जसा विच्छिन्न, अव्यवस्थित, और नाता विषमताओं में पूर्ण जीवन इस युग में ममग्र विश्व की मानवता विनाश की विवश है उसका 'मबलाइमेशन' केवल सामूहिक हिंसा की प्रलयकारी आग जलाने से ही हो सकता है। और उसकी कल्पना में स्थित उम नावी अग्नि की लपटें जब उसकी दग्धनी हुई आँखा में महानाल की रक्तजिह्वा की तरह लप-लप कर रही थी।

मैं चौंक उठा। नीत घोर भ्रान्त दृष्टि से उसरी आर दसना नुआ बोला— 'तुम इस सबनाशकारी प्रवृत्ति को 'सबनाइमेशन' कहते हो? इस घोर विवृति को तुम चरम मुकृति के रूप में प्रचारित करना चाहते हो?'

'प्रचार का प्रश्न बाद में आता है—मैं तो अपने घातरिक विद्वानों की बात सुनकर बतला रहा हूँ,' उसी सांठ, गम्भीर तथापि सामह्यन रूप से हिम दृष्टि को मेरी आँखों में डालते हुए वीरेन्द्र ने कहा।

मैं अपने सब तक भूलकर वेवकूफी की तरह उसकी ओर  
 देखता रह गया। वह उसी शांत तथापि दृढ़ स्वर में कहता  
 चला गया— 'धीर धीर मैं इस विश्वास पर पहुँच रहा हूँ कि आज के  
 युग के मनुष्य के लिये मरणधर्मो बनने के अतिरिक्त दूसरा रास्ता नहीं  
 है। अन्तर केवल इतना ही है कि आज के अहिंसावादी को सब गलकर,  
 भ्रूख और रोग का शिकार बनकर मरना पड़ेगा और हिंसावादी को अपने  
 प्रतिपक्षियों की हत्या के बाद। जब मौत को बरण करना ही है सब क्यों  
 विवगता से ऐसा किया जाय ? क्या न पूर ममारोह के साथ वह बरण-  
 उत्सव मनाया जाय ? महत्वाकांक्षाहीन उद्देश्यरहित वचिग्रन्थ जीवन  
 बिताते हुए, रोग न्याधि का शिकार होकर सब गलकर विच्छिन्न रूप से  
 मरने को वाच्य होने के बराबर कापुरुषता दूसरी कोई हो सकती है मैं  
 नहीं समझता। सामूहिक रूप से वाजे-गाजे और गान गान के साथ,  
 किसी एक विशेष श्रान्तिकारी राजनीतिक मतवाद के ताल म ताल मिलाते  
 हुए रक्त की होली खेलकर मरने में जो सुख है जीवों की जो साथ-  
 परिणति है, उसकी कल्पना तुम्हारे समान बूजुवा सस्वारा के घोसने की  
 घुनुरमुर्गीय सुरक्षा की सीमा में बंध हुए लाग नहीं कर सकते, जो नाक  
 से नकसीर निकलते ही, रक्त की एक बूँद कही देखते ही घबरा उठते  
 हैं। मानवीय रक्त का महत्त्व अवश्य है पर वह महत्त्व है उसके बहाने  
 में उसके स्वाभाविक प्रवाह की भीतर ही भीतर हँधे रहने में नहीं।  
 यह धरती, जो मानव जीवन का भ्रम इतन युगों में कायम रखे हुए है  
 न जान कर बजर हो गयी हानी उसके सारे जीवन प्रदायक तत्व न  
 जान कर लुप्त हो गये हात, यदि बीच-बीच में राजनीतिक उथल-पुथल  
 और श्रान्तियों के कारण उसकी मिट्टी पर सहत रूप से मानवीय रक्त न  
 बहता रहता। चापक सहार द्वारा महामरण के हाथों में जिसे गये थे  
 ही रक्त बीज फिर फिर जीवन के नये-नये रूपों को पृथ्वी पर प्रस्फुटित  
 करते रहते हैं। मानववादी इस भय को जान में या अज्ञान में समझ-  
 चुके हैं, इसीलिये उनसे लाल श्रान्ति का महत्त्व है। और केवल इसी मर्य  
 को अनुभव करनेवाले ही निरुत्त भविष्य में समस्त विश्व में विजय का  
 साधन बना पहचान की समझना रखते हैं ?

मेरे मुह से धरवम निकल पड़ा—“उफ !” मैं देखा रहा ३१६

था कि वह तब और उपद्रव के एकदम परे ऐसी गहराई में डूब चुका था जहाँ से उबर सकना किसी भी मनुष्य के नियमों ही सम्भव था। कुर्मी पर पीठ झटकाकर पर आगे की ओर फलाकर और दाना हाथ दाना आर पमार कर हताग अवस्था में मैं आधा लेटा हुआ सनाटा खींचन लगा।

बुद्ध देर तक सारे कमरे में मृत्यु मौन सनाटा छाया रहा। सहसा वीरेन्द्र उठ खड़ा हुआ और बोला— ‘बला, अब काफी दूर हो चुकी है।’

मैं भी उठा। नीचे जाकर होटल का पूरा विल चुकान के बाद मैंने अग्ररंज मैनजर को वीरेन्द्र के मनान का पता लिखा दिया और वह दिया कि मेरा सामान वहाँ पहुँचाने का प्रबंध कर दा। जन्सी सामान के तीन बक्से, जिनमें मनिया के कपड़े और गहने और मेरे निजी कपड़े भी थे एक कुली का उपर से जाकर मैं नीचे उतरवा लाया और वीरेन्द्र की माटर के पीछे उह रखवा दिया। उसके बाद हम लाग लौट चले।

मैं वीरेन्द्र की बगल में ही, आगवाली सीट पर बठा हुआ था। वीरेन्द्र एकदम मौन था और मनोयोग से मोटर चला रहा था। माटर जब कुछ दूर निकल गयी तब मैंने कहा— ‘तुम्हारी बातें सुनकर मैं जाने क्या, बहुत घबरा उठा हूँ।’

पदरान का बोई बात नहीं है,” मेरी आर बिना दम ही अत्यन्त गम्भीर भाव से वीरेन्द्रन कहा, ‘तुम और तुम्हारे साथी दूसरे बहुत से सपने लाते ‘मुरझा के तिस टीने पर बठे हुए हैं, वह जानना मुझी के मुहान पर स्थित है इसकी सूचना मिल जाना तुम लागे के नियम बहुत आवश्यक है। इन नियमों से सावधान हो जाओ। पदराने से बार्द लाभ नहीं होगा।’

‘तुम मेरी बात गनत समझ हो। पदराहट मुझे अगन नियम न्तनी नहीं है जिनकी तुम्हारे लिए।’

“हा हा हा !” एक स्वायन्ती, भीतिक हँसी वीरेन्द्र ने मुझ से निकल पड़ी। मैं अतन्त्रित हो उठा। “पारिभाद की विनासपुरी के

गक हाने के ठीक पूव वेस्युवियस की हरी भरी चिपटी चाटी पर खेल-बूद मे मग्न जनता भी यही सोचती थी कि वह सुरक्षा की चरम स्थिति मे है " मोटर को एक घाडागाणी की बगल की आर घुमाते हुए धीरे-धीरे न कहा— अरे मरे लिये घबराने की जा बात तुमन वही उससे यही प्रमाणित हाना है कि या ता तुम भूठे हो या निपट मृत्यु । अपनी अनभावनाओं का विश्लेषण यदि तुम ईमानदारी और ममभंगारी से करने मे समर्थ होते तो कभी इस तरह की बात मुह स न निकालते । सच्चाई तो यह है कि तुम और तुम्हारी ही स्थिति के दूसरे व्यक्ति अपनी विलासितापूर्ण जीवन की जडताप्रस्त गति मे विघ्न पडते देखकर, अपने अलम सुख के स्वप्न के सहसा भंग हाने की आगता स घबराये हुए है । यदि तुम लोग अभी से वास्तविकता के लिय तयार नही रहोग, ता यह निश्चित है कि एक दिन अचानक तुम लोग के ऊपर एसी विजली गिरेगी कि फिर उससे कभी उधरना सम्भव न होगा । इमनिये सावधान । '

उसका बात का और कहने क ढग का एक ऐसा मनावनामिक प्रभाव मरे मन पर पडा कि आग उम विषय की चचा का बटान या तक करन का साहस ही मुझे गही हुआ । मरे मन पर एक अजीब सा त्रासन छा गया, जिसने मरी जवान को जकड सा लिया ।

जय माटर न वीरद्र के मरान क फाटक के भीतर प्रवेग किया तब मुझे याद आया कि मैं अकेला नही हूँ, मरे साथ मनिया भी है—वह भाली भाली पहाडी पछी जा ऊपर अनत नीलाकाग मे एकाकी उडान भरती हुई दिन रात अपने अनजान मे किसी एक नीड की खोज मे भटकती हुई, न जान भाग्य के किस रहस्यमय चक्र से, उस अकूल समुद्र मे एकाकी तरन वाली मरी पालयुक्त नाव स जा टकराई है । उसी पाल पर नीर निर्माण करने के अनिरिक्त और कोई चारा उसके लिय नही रह गया है । वह नाव डूबी ता उसने साथ उसका वह नीड भी मदा के लिय गक हा जायगा ।

यह विचित्र, विभ्रामक कल्पना पल मे मरे अतमन को तल स सतह तक मय गयी और फिर सहसा उसी प्रकार अनत दूय मे विलीन भी हा गयी ।



शोभना भाभी । एक नौकर न वीरद्र को सूचित  
 कि बहूजी का आदग है कि ज्याही हम लौट आवें त्याही हम ऊपर  
 लिया जाय । फलत हम दाना मीठिया स हाकर ऊपर बन गय ।  
 ऊपर किमी भी कमरे म उन लाग का काई चिह्न नही दिखायी  
 । एउ नौकरानी ने आकर बताया कि दाना बहुएँ रसाइ के कमर  
 और वही हम लोगो का बुनाया गया है । वीरद्र के मुह पर आश्रय  
 चिह्न लिखाई दिय ।

वहा क्या कर रही हैं वे ? और हम लोग वहाँ जाकर क्या करें !  
 ना हा गया हो तो डार्निंग रूम मे ले आओ !

नौकरानी के मुह पर कौकूपण मुसकान भलक रही थी । मुसकान  
 और अधिक परिस्फुट करती हुई श्रुतिम लाज भर स्वर मे बोली—  
 तोना मिलकर खाना बना रही हैं !

‘ हो हा हो ! ’ वीरद्र अट्टहाम कर उठा । उस अट्टहाम से मुझे  
 ना कि जा गाडे काले बादल आकाश म घिरते चले आ रह थे वे  
 ना व एउ प्रबल भक्ति से फरकर साफ हो गय ।

‘ चनी नूतद्र, देखें क्या तमांग चल रहा है ।

वह मुझे कई बरामदो म हाकर चकरर खिलाता टुप्पा उत्तर की  
 तर घाल, एउठम अन म स्थित एव कमर म ल गया । दरवाजे पर मे  
 हे हम लाग न दना, एव परान म मँदा गुधा टुप्पा रखा है, एव नौकर  
 ममें म मंग निवालकर टिकिया बनाता चला जा रहा है । मनिया एउ  
 क करक उन टिकिया का उठानी हुई पास ही एक वाली पर रखी हुई  
 ठी का तरह की कोई चीज उठानर उनम भरती चनी जा रही है, एव  
 नौकरानी उन्हें बलनी जाता है और भाभी जी बचौगियाँ तसती जा  
 रही हैं । हा दगन ही दाना चिन्तिलाकर हैंन पनी । वीरद्र भा फिर  
 एव वार अट्टहाग कर उठा और मे भी हूँनी न रोक पाया ।

भाभी जी की धार दगनर वीरद्र बाता— ‘यह अच्छा नाटक तुम  
 लोगो न रचा है । महाराज वहाँ क्या ?

भाभा जी धनिंनचानी हुई बाला—“मान दनर नया य का

लेजर, पहली बार हम लोग के यहाँ आये हैं। आज अपने हाथ से खाना बनाकर खिलाना जाना है, और बहू की बनायी चीज भी चपनी पडती है। इसलिये मैंने महाराज को हुट्टी दे णा है।

'बहुत अच्छा किया, बहुत अच्छा किया।' कहकर बीरेन्द्र ठाण्डर हँस पडा। फिर बोला—'बहू ने कोई खास चीज बनायी है क्या?'

मैंने कहा—'वह केवल एक ही चीज ठीक से बनाना जानती है, और जब कोई विशेष अनिधि घर पर आता है तो उसे वही चीज खिलती है।' कहकर मैं इंगित से मुस्कराते हुए मनिया की आर दखा।

भाभी जी न पूछा—'वह क्या चीज?'

'कुम्हड़े का हनुवा!'

सब लोग जोर से हँस पडे। मनिया स्वयं भी हसन लगी। भाभी जी न बचोनी बाना तक बद कर दिया। हमते हँसते उनकी आँखो म आँसू आ गये थे।

बीरेन्द्र जब कुछ राबला तब उमन भाभी जी से पूछा—'क्या सच मुच यही बात है?'

भाभा जी ने मिन हिनावर बताया कि ठीक वही बात है और फिर बयारिन्याग हँसन लगी। अत्यधिक हमी के कारण उनसे बोला नहीं जा रहा था।

बाफी देर बाद भाभी जी कुछ मँसली और फिर बचोड़ी तलने लगी। उसके बाद नौकर को उहोने आता दी कि वही पर हम दोनो के लिये कानून बिठा दिया जाय। जब हम लोग बालीन पर बठ गये तब दो पीठे बानियाँ रखने के निम्ने हमार आग रख लिये गये। मैं मेज पर खाने का आदी था और मभवत बीरेन्द्र भी। पर वह नया अनुभव मुक बुरा नहीं लगा, बल्कि विशेष प्रिय ही मानूम हुआ। कुछ विशेष प्रकार की तरवारियाँ, मास, मडली, चटनी, रापते आदि के बटोरों और तन्तरियों से बालियाँ और आस-पास की जगह घिर गयी। कुम्हड़े का हनुवा, जिसके ऊपर पिदन बतरकर छोड लिय गये थे भाभा जी न बाली के बीच म सजाकर रख दिया। यह स्पष्ट की उनकी दुष्टता थी।

वीरद्र ने सवने पहले वह हलका ही मुह म डाला । ३३  
 एक की खान ही अत्यंत गम्भीर भाव से बोला—“सच  
 मुच बहुत अच्छा बना है । यह क्या सचमुच बुम्हडे का हलका है ?”  
 मेरी ओर देखकर उसने कहा ।

मैंन थोडा-ना चलकर कहा—“हाँ है ता कुम्हडे का ही ।”  
 “बहुत ही अच्छा बना है ।” उसन अपनी बात दुहराई । प्लेट चट  
 करम भाभी जी सवाला—“ओर दो ।”

‘अर, तब क्या हलक से ही पट भर लाग ?’ भाभी जी न कहा ।  
 “वह भी बनायीं आज के प्रति ममता हाना स्वाभाविक है, पर इस हद  
 तक अच्छा नहा । ओर यह कहकर भाभी जी न, न जान क्यों, एक  
 बार व्यङ्ग्य भरी मुसकान और निरद्वी दृष्टि म मेरी ओर देखा ।

एक प्लेट ता कम म-कम ओर खान दा, उसके बाद टोकना ।”  
 वीरद्र न कहा ।

फिर एक ओर हमी का परिवार छूट पडा । भाभी जी ने दुवारा  
 वीरद्र की प्लेट हलक म भर दी ।

मैं भाभी जी की सली नुई कचौड़ियाँ खाना चला जा रहा था ।  
 मछनी की कचौड़ियाँ थी, जा केवल एक बगानी महिला हा बना सक्ती  
 है । जबस बडी बात यह थी कि बगदोयीय प्रथा की तरह क तल मे नही  
 बनायी गयी थी ओर न बनस्पतीय थी म । त्रिगुड देती थी भाभी जी  
 ने न जान कहाँ से प्राप्त कर लिया था ।

४६

भाजन कर चुवन के बाद मेरा शरीर अतस्तान  
 लगा । एक तो माता की यकावट, उन पर वीरद्र  
 न जीवन मरण सम्बन्धी घण्टा रहन विषम पर  
 लब्धा का विवाद ओर उन पर भी भाजन की गुण्ठा । पर घट्ट घट्ट  
 न जा निश रा भर गया था ।

जो कमरा मुझे दिखाया गया वह माफ-मुयरा और सुसज्जित था। आमन सामने दो स्प्रिंगदार पलंग लग हुए थे, जिन पर दो नीले रंग की झालरदार मुजनिर्वा जिन्दी हुई थी। उत्तर की ओर बीच में एक छान्नी-सी गोल मज एक समानुमा तबड़ी पर खड़ी थी, और उस पर पाले रंग का जालीदार टेबिल-ब्लाय बिछा था। उसकी अगल बगल में दो कुर्सियाँ आमन सामने रखी हुई थी। हर रंग का फग पीरो की तरह चमक रहा था। दो पलंगों के बीच में एक ईरानी कालीन बिछा हुआ था। नौकर ने एक पलंग पर स मुजती हटा ली। मैं हलकी सी रेगमी रजाई के भीतर घुस गया और झालरदार परो के तकिये के ऊपर सिर रख कर चित्त लेट गया।

“और कोई चीज दरवार है बाबू।” चलकतिया नौकर ने पूछा।

“बस और कुछ नहीं चाहिये। बाहर से त्रिवाड फेर देना।”

नौकर चला गया और धीरे से उमने बाहर से त्रिवाड फेर दिया।

मैं परम आराम का अनुभव करता हुआ ऊपर छत की आग देखने लगा, जिस पर रंगीन ‘टाइलो के टुकड़ा से नाना गोलाकार चक्र पट कोण, चतुष्काण और त्रिवाण बने हुए थे। छत की ओर दलत हुए मेरी दृष्टि वाइ ओर की दीवार पर पड़ी जिस पर तीन बड़े बड़े चित्र त्रिवाण के रूप में सज हुए टंग थे। सब से ऊपर काल मावन का शेर की-सी दाड़ी और अयान बाता सुप्रसिद्ध चित्र था वाइ ओर लनित का चित्र था, जिसकी छोटी-सी किन्तु गहन रहस्यात्मक भगोनिमन आँखें जस इस तोर के महास्वप्न की आधी सफलता के बाद भूय और बतमान के इस्वानी पदों का चार कर विसी अनात भविष्य की परिपूर्ण सफनता को अपना लक्ष्य बनाय हुए थी, दाई ओर महात्मा गांधी का चित्र था, जिसमें बिद्व विन्नि मौन गम्भीर, सहज गत, अत्यंत मुसरान भरी अभियञ्जना स्पष्ट भवन रही थी। उसका बाव मैंने दाइ ओर दृष्टि घुमायी। वहाँ भी तीरा उसी आखर का चित्र उसी त्रिवाणात्मक रूप से सामने वाले चित्रा से गामजस्य रतते हुए, टंग था। सबसे ऊपर कण्ठ का चित्र था। चित्र स्पष्ट ही त्रिमी योग्य कलाकार द्वारा अरित्त किया गया था, जो यागिरान कण्ठ के गहन रहस्यात्मक और साय ही बिद्व

म एक निश्चित धारणा रखता है। उसके नीचे  
 आर इसामसीह और दाइ और महात्मा बुद्ध के चित्र थे।

सोचने लगा कि कुछ ही समय पहले मैं जिस हिमावादी आतिथारी  
 में सुन रहा था उसके घर में महात्मा गांधी, कपूर, इसा और बुद्ध  
 के चित्र कैसे नभवं हुआ? बीरेन्द्र के चरित्र और स्वभाव के भीतर  
 आत्मवृत्ता का आभास मुझे छात्र-जीवन से ही मिल चुका था,  
 वह नया और बदला हुआ विकसित रूप आज की बातों में मुझे  
 था और ये चित्र भी उसी का निदान कर रहे थे। एक और  
 भाव्य आर लनिन और दूसरी आर बुद्ध, ईसा और गांधी, इन दोनों  
 के विराधी व्यक्तियों की समान पूजा यह किन्हीं साधारण व्यक्ति  
 भाव की बात नहीं है, यह तथ्य मेरे आगे ज्वलत उकार्पिड की  
 स्पष्ट हो गया।

बीरेन्द्र के विचित्र और जटिल 'यत्तिव' के सम्प्रघम सोचते हुए  
 मेरी आँखें लग गयीं, यह मैं न जान पाया। 'न' आँखें खुलीं, तब  
 गया कि मनिया मर सिरहाने बठी हुई बँगला बणमाला की एक  
 'यय' म नियमनवन अक्षरा को पहचानने का प्रयत्न कर रही है।  
 मैं अँगोठार्ड सेन हुए क्रम स्वर में पूछा—“क्या मैं बहुत देर तक  
 था? क्या बजा है?”

‘नीं बजे हैं,’ मनिया न कही—“अब आज रात तुम ठीक मे सो  
 पाओगे।”

‘यह बँगला-पुतव तुम कहाँ से ले आयी?’ लटे ही लटे उसकी  
 पर हाथ रखत हुए मैंने पूछा।

‘यह मद-मधुर रवर से विल्ल’ करव हँसी, ‘तुम्हारी भाभी ने  
 है। कहने लगी—‘तुम बँगला मीसो, मैं हिंदी सीगूगी। तुमसे हिंदी  
 कुछ पुस्तकों ला दन के लिये उहाने कहा है।’

‘क्या? हिंदी के प्रति अचानक उन्का इतना प्रेम कैम उमट उठा?  
 तुमसे बँगला सीगने का इतना आग्रह वह क्या कर रही है?’

“उनका हिंदी प्रेम कोई नया नहीं है मनिया वाली—

“उन्होंने मुझे बताया कि विवाह के पहले मेरी वृद्ध हिन्दी जानती रही हैं और हिंदी की काफी कितानें पढ़ भी चुकी हैं। पर अब वह अपने हिंदी ज्ञान को अधिक बढ़ाना चाहती हैं। मैंने उन्हें बताया कि तुम हिंदी-साहित्य के अच्छे जानकार हो। उच्च साहित्य से प्रेम है इमीलिय उहोने तुमसे कुछ अच्छी साहित्यिक मुश्किलें ला देने के लिये कहा है। मैंने जब उन्हें बताया कि तुमसे परिचय जान के पहले मैं निपट गेवारा थी और परिचय जान जाने के बाद कुछ ही महीनों के अंदर मैं अपना हिंदी और अंगरेजी भाषाओं का ज्ञान अच्छा बढ़ा लिया, तब उहोने कहा कि तुम बंगला भाषा भी बहुत जल्द सीख सकती हो। मैं भी सोचती हूँ कि एक नयी भाषा का ज्ञान यदि हो जाय तो बुरा क्या है।”

कुछ देर मौन रहने के बाद मैं बोला— मुझे आशा नहीं थी, मनिया, कि तुम भाभी जी से इतनी जल्दी इस हद तक दूरमेल बढ़ा लोगी।”

“क्या ? मेरे सम्बन्ध में तुम्हारे इतने बड़े अविश्वास का कारण क्या है ?

तुम गवाची हो, और किसी भी विजातीय वातावरण में हिन्दी तुम्हारा स्वभाव नहीं है।

जब तुमसे मैं इतनी जल्दी हिल गयी थी तब भी इस सम्बन्ध में तुम्हारी राय क्या बदली ? आँखों में एक सांकेतिक मुश्किल आवाते हुए मनिया ने कहा— जब पहले पहल तुमसे मेरा परिचय हुआ था तब तुम क्या मेरे लिये कुछ कम ‘विजातीय’ थे ?

उमने एक ऐसी मूल की ओर मेरा ध्यान आकर्षित कर लिया जिस पर कभी एकांत से विचार ही मैंने नहीं किया था। सचमुच प्रारंभ में मैं मनिया के लिये जिस हद तक विजातीय रहा हूँगा उम हद तक भाभी जी किसी भी अवस्था में और किसी भी स्थिति में नहीं हा सकती थी। सहसा यह सत्य भी मेरी आँखों के आगे भन्नव गया कि कहीं भी नारी किसी भी वातावरण में किसी भी दूसरी नारी के लिये विजातीय नहीं हो

सबनी । प्रयत्न नारी का सनातन मातृ-हृदय किसी भी दूसरी ३२७  
 नारी के मातृ हृदय के तार का एक क्षण में पकड़ लेना है ।

भाभी जी या भाभी जी, यदि बाइ एस्किमो नारी भी होती तो ऐसी परिस्थिति में उससे मनिया का मौहाना पहले ही क्षण में स्थापित हो गया होता, यह तब पलभर में मेरे आगे सूय के प्रवाह की तरह स्पष्ट हो उठा । पर—मैं तो सोचा—प्रत्येक पुरुष प्रत्येक नारी के लिये प्रथम परिचय के काफी समय बाद तक विजातीय रहता है । मिस्त्रिया का सम्भवन और उसका हृन्मल बन्धन में मनिया का एक दिन का—सम्भवन एक क्षण का—भी समय नहीं लगा, पर मुझे वह काफी दिनों तक मर्ह और शका का दृष्टि से दबती रही । सम्भवन पुरुष प्रवृत्ति की, पुरुष हृदय की यह विजातीयता ही उसके प्रति नारी के आकर्षण का कारण है । यह विजातीयता जहाँ एक ओर उभर पीछे को खलती है वहाँ उसी वेग से उभर करणम सामन की ओर भी टेंबती है । और ठेके जाने की बात निया—वह चुवकीय विचार—कभी-कभी ऐसा प्रयत्न होता है कि उसके लिये अव्यक्त समुद्र में फाँद पड़ने का चहान से टकराकर उस पर अपना गिर पड़ना के लिये भी वह स्वेच्छा में राजी हो जाती है । और उसी प्रकार पुरुष के लिये नारी भी उतनी ही विजातीय है । यही कारण है कि पुरुष एक ओर उसके प्रति अथ वेग में आकर्षित होता है और दूसरी ओर उसके प्रति उतना ही गति रहता है उससे बचता रहता है । युगा का साहित्यिक इतिहास इस बात का साक्ष्य है कि जहाँ एक ओर पुरुष नारी के माहिनी रूप और मातृत्व के सौन्दर्य का मुग्धमान करत-करत नहीं बका है, वहाँ दूसरी ओर उसमें लोल करत, उस पर हीन से हीन अथगुणा को आरोपित करने से भी बाज नहीं आया है । यह विरोधान्तात् मृष्टि का आदिम रहस्य है और यह रहस्य ही पृथ्वी के कठोर सधपमय, अस्थिर और अनामकस्यपूरा जीवन की प्रतिगण हरा बनाय टूट है ।

पल में उल्लास के से प्रवाण में यह सत्य भरी आत्मा में चकारात्त लगा गया । मैं अतमन भाव में बटा—'तुम ठीक कहता हो मनिया, मैं ही गलती पर था । मुझे दुःख है कि मैं तुम्हें अभी तक नहीं समझ पाया । अभी तक तुम्हारे सम्बन्ध में मेरे मन में इस प्रकार की भ्रान्तियाँ बनी

हुई हैं। तुम बहुत महान हो मनिया, तुम्हारी आत्मा के विस्तार का पार पाना मुझ जैसे सबीएण प्रवृत्ति पुरुष द्वारा सम्भव नहीं है। तुम ”

भावुकता के प्रवाह में वहकर मैं न जाने और भी क्या क्या कह जाता। पर सहसा मनिया ने बीच ही में अत्यन्त स्नेह भरे स्वर में टाकते हुए कहा—“अरे, तुम्हें क्या हो गया आज? इस तरह की बातें क्यों करते हो? मुझे लगता है कि आज किसी कारण से तुम्हारा मन बहुत खिन्न है।”

मैंने अक्सर देखा है कि नारी की आन्वयजनक अतदृष्टि के आग व भी नभी सारे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को हार मानना पड़ता है। मेरी खिन्नता का कोई भी व्यक्त कारण नहीं था और न तब तब इस बात की ओर मेरा ध्यान ही गया था कि मैं खिन्न हूँ। पर मनिया के सुभाते ही वह भीना पदा पट पटा जो उम समय तक भरे भीतर की अज्ञात वेदना का मुझने ठिपाये हुए था। मुझे लगा कि मैं सचमुच खिन्न भर खिन्न रहा हूँ और वह खिन्नता मेरे अज्ञान में मरी निद्रावस्था में भी मेरी संपूर्ण आत्मा को छाये हुई थी। मनिया के सुभाते से मैं वेदना उस वेदना के प्रति सचेत नहीं हुआ बल्कि उस दरी हुई वेदना का कारण भी मेरे आगे स्पष्ट हो गया। बीरेंद्र ससुवह मेरी जो बातें हुई थी उन सबका ऐसा सचयात्मक प्रभाव मेरे अतमन पर पड़ा था कि उसने मेरे बहुत भीतर, अणु अणु में एक अजीब-सी वेदनी का मीठा विष मन्वारितकर दिया था। इतनी देर तक उस वेदनी को अपने अज्ञान में भातर ही भीतर दबाता हुआ मैं उसका प्रति उपक्षा का भाव रखता जा रहा था। पर वह विष देना वाला नहीं था और धीरे धीरे अतमन से ऊपर ही उठना चला जा रहा था। मुझे याद आया कि बीरेंद्र की बातों ने मेरे मन की अपेक्षाकृत शांति को कबल आनेवाली प्राप्ति का चेतना में ही नहीं भ्रमभोरा था, बल्कि स्वयं उससे व्यक्तिगत भविष्य के संबन्ध में भी एक ऐसे रहस्यमय आतक का पूर्वाभास मेरी अतश्चेतना में भर लिया था जिससे अत्यन्त अस्पष्ट स्वरूप के सम्बन्ध में कोई निश्चित धारणा करने में मैं अपने को एवदम असमर्थ पा रहा था। ‘घबराने की कोई



बात नहीं है।" वीरेन्द्र न जमे मुझे दिलासा देने के उद्देश्य से ३२६

कहा था पर यह जानना कठिन था कि दिलासा वह मुझे दे रहा था या स्वयं अपने को। उसकी सारी बातों में मुझे लगा था कि कोई अज्ञात किन्तु अनिवाय चक्र उने किसी ऐसी हठीनी की ओर उखस ठेके लिये जा रहा है जिसके नियम पूरी तयारी करने का उपयुक्त समय ही उमे नहीं मिल पाया है। अन्तर का ना अनुपेक्षणीय आद्रण उसे उस अज्ञात और अस्पष्ट तन्त्र की ओर लुब्धते चले जान के लिये मिला है वह ऐसा आकस्मिक है कि उनका पालन जिस ढंग में करना चाहिये यह वह ठीक से समझ ही नहीं पा रहा है, और एव निश्चिन्त भँवरजाल में पड़ गया है। पर इतना वह जम निश्चित रूप से समझ चुका है कि उनका पालन हर हालत में करना है और जदी ही करता है। ऊपर से उमन आनेवाली शक्ति के सन्ध में कर्मा ही बड़ी बड़ी भारी भरकम बानें क्या न कही हों, भीतर में वह स्वयं भी यह निश्चित रूप से समझे बदा है कि वह उसक लिये पूरे तौर में तयार नहीं है और पूरा आत्म-विराग व माय उत और कर्म नहीं बना सकता। पर आत्म विद्वान ही चाहें हों उन और उन कर्म बनाना ही होगा। उनके लिये जा अज्ञान आत्म उन किसी अज्ञात ही लिंग से मिला है उससे मुह माह्न को उन प्रेरित कर एमा शक्ति विन्य म कहीं नी नहीं है। उन आदेश म युग की चेतना का विनया हाथ है और किसी अन्तर्दय अतरीण प्रबलति का चित्तना है, इस पर ठंड बित्त से एकांत में निश्चार करण का अवगाण ही उसे गर्भी है। जो आत्मान धनिष्टि दिगा से आया है उसका अनुगमन एव प्रण बद्ध गतिव की तरफ उन करना होगा, केवल इतना ही वह जानता है। और एसा आह्वान जीवन में दूसरा बार नहीं आया था यह भी निश्चित है।

वीरेन्द्र की ह। बातों से मर आया यह बात भी स्पष्ट है चुकी थी कि उम आह्वान के धीरे मुद्द-धीरे से बृद पडन की अनिम निश्चित निश्चि के बाप जो अत्यंत स्वल्प अवकाश का समय उस मिला है उनत समय में बीते युग में भवगिष्ट मन्वारा की भाङ पटकार कर माफ कर दता होगा। पर व भवगिष्ट तयार इस बदर विपक्षित हैं कि व कवल माह्न-

हुई है। तुम बहुत महान हो मनिया, तुम्हारी आत्मा के विस्तार का पार पाना मुझ जैसे सबीए प्रकृति पुरुष द्वारा

सम्भव नहीं है। तुम ”

भावुकता के प्रवाह में बहकर मैं न जाने और भी क्या-क्या कह जाता। पर सहमा मनिया ने बीच ही में अत्यन्त स्नेह भरे स्वर में टाकते हुए कहा—“अरे, तुम्हें क्या हो गया आज ? इस तरह की बातें क्यों करते हो ? मुझे लगता है कि आज किसी कारण से तुम्हारा मन बहुत खिन्न है।”

मैं अक्सर दवा है कि नारी की आश्चर्यजनक अतदृष्टि के आगे कभी कभी सार मनोबैज्ञानिक विश्लेषण को हार मानना पड़ता है। मेरी खिन्नता का कोई भी व्यक्त कारण नहीं था, और न तब तक इस बात की आरंभ मेरा ध्यान ही गया था कि मैं खिन्न हूँ। पर मनिया के सुभाते ही वह भीना पर्दा फट पड़ा जो उस समय तक मेरे भीतर की अज्ञात वेदना का मुझसे छिपाया हुआ था। मुझे लगा कि मैं सचमुच निराश्रित रह चुका हूँ और वह खिन्नता मेरे अज्ञान में मरी विद्रावस्था में भी मेरी संपूर्ण आत्मा को छाय हुई थी। मनिया के सुभाते से मैं वेदना उस वेदना के प्रति सचेत नहीं हुआ, बल्कि उस दबी हुई वेदना का कारण भी मेरे आगे स्पष्ट हो गया। बीरेन्द्र से सुबह मरी जो बातें हुई थी उन सबका एसा सचदात्मक प्रभाव मेरे अतमन पर पड़ा था कि उसने मेरे बहुत भीतर, अणु अणु में एक अजीब-सी बचनी का मीठा विष मवारितकर दिया था। इनकी देर तक उस बचनी दो अपने अज्ञान में भीतर ही भीतर दबाता हुआ मैं उसके प्रति उपेक्षा का भाव रखना जा रहा था। पर वह विष दबने वाला नहीं था और धीरे धीरे अतमन में ऊपर ही उठना चला जा रहा था। मुझे याद आया कि बीरेन्द्र की बातों ने मेरे मन की अपेक्षाकृत क्षमति को केवल आनवाली शक्ति की चेतना में ही नहीं भकभारा था, बल्कि स्वयं उसके व्यक्तिगत भविष्य के संबंध में भी एक ऐसे रहस्यमय आतंक का पूर्वाभास मरी अतस्चेतना में भर दिया था जिसके अत्यन्त अस्पष्ट स्वरूप के सम्बन्ध में कोई निश्चित धारणा करने में मैं अपने को एवदम असमर्थ पा रहा था। धरराने की कोई

बात नहीं है।" वीरेन्द्र ने जमे मुझे दिलासा देने के उद्देश्य से  
 कहा था पर यह जानना कठिन था कि दिलासा वह मुझे दे  
 रहा था या स्वयं अपने को। उसकी सारी बातों में मुझे लगा था कि कोई  
 अज्ञात किन्तु अनिवाय चर उन्हे किसी ऐसी होनी की आशंका बरबस ठेके  
 लिय जा रहा है जिसके लिये पूरी तयारी करने का उपयुक्त समय ही  
 उन्हे नहीं मिला पाया है। प्रत्यक्ष का जा अनुपेक्षणीय आदेश उसे उस  
 अज्ञात आर अस्पष्ट रूप की आशंका सुकृत चले जान के लिये मिला है  
 वह ऐसा आत्मनिष्ठ है कि उन्का पालन किम डग में करना चाहिये यह  
 वह ठीक में समझ ही नहीं पा रहा है, और एक विचित्र भँवरजाल में  
 पड़ गया है। पर इतना वह जग निश्चित रूप में समझ चुका है कि  
 उन्का पालन हर हाल में करना है और जहाँ ही करना है। ऊपर से  
 उसने अज्ञातवादी आदि के मंत्र में क्या ही बड़ी-बड़ी सारी शक्तियाँ  
 बाँटी हैं न कहीं ही भीतर से वह स्वयं भी यह निश्चित रूप से समझ  
 बैठा है कि वह उसका लिये पूरा तौर में तयार नहीं है और पूरा आत्म-  
 विज्ञान के साथ उन्को कदम नगा बना सकता। पर आत्म विज्ञान ही  
 चाहता है उन् और उस कदम बगाना ही होगा। उन्के लिये जो अज्ञात  
 आदेश उन् किसी अज्ञात ही आदि से मिला है उन्में मुझे माइन को उन्  
 प्रेरित करे एनी शक्ति विश्व में कहीं भी नहीं है। उन् आदेश में दुर्ग की  
 चतुराई का किनासा हाथ है और किसी अज्ञात अतरीण प्रवृत्ति का किनासा  
 है, इस पर ठंड चित्त में एकात्म में विचार करने का अवकाश ही उन् नहीं  
 है। जो आज्ञान अनिष्टि आदि से आया है उन्का अनुमान एन प्रत्यक्ष  
 उन्के ही तरह उन् करना होगा केवल इतना ही वह जानता है।  
 और एसा आज्ञान जीवन में दूसरी बार नहीं आया था वह भी  
 निश्चित है।

वीरेन्द्र की ही बातों से मने भाग यह बात भी स्पष्ट है चुकी थी  
 कि उन् आज्ञान के और मुद्द-मोत्र में कूद पड़ने की अनिमित्त विधि  
 के बीच जो अत्यन्त स्वल्प अवकाश का समय उन् मिला है उतने समय में  
 हीन दुर्ग के अविष्ट मन्वारों की जाह-अन्वार कर गारुड कर दना  
 होगा। पर वे अविष्ट मन्वार इस कदर अविष्ट हैं कि वे केवल आज्ञान-

पटकारने से साफ नहीं होना चाहते। उन्हें धोकर धिक्कर, रगड़कर या किसी रामायनिक प्रयोग से साफ करना होगा।

मैं देख रहा था कि उसकी वर्तमान बचनी का कारण ही यह है कि वह आदेश के पालन के पूर्व पूरी सफाई चाहता है, जो बहुत बठिन मिद्ध हो रही है।

श्रीर उसकी वह बचनी भी विफट थी। मैंने बार-बार इस बात पर गौर किया था कि अट्टहास करने के समय भी उसकी वह भीतरी बचनी उसका पीछा नहीं छाड़ रही थी। उसका अट्टहास भी जने उसके अंतर की विफलता की गूहार थी।

मैंने मनिया से कहा— तुम ठीक ही कहती हो मनिया, मर चित्त में आज गायद अकारण ही एक उदासी सी छा गयी है गायद यह दिन में सोने का फल है क्योंकि इसका आदी मैं नहीं रहा हूँ।

जीजी मैं जब मैंने बताया कि तुम सो रहे हो तब उन्हें भी आश्चय हुआ। उन्होंने ठीक से बताया नहीं, पर मुझे लगा कि वह तुमसे कुछ बातें करना चाहती हैं।

मुझमें बातें करना चाहती हैं? मनिया के इस प्रश्न का आश्चय से दुहराना हुआ मैं उठ पठा, कोई खाम बात या—

'या प्रेमालाप। तुम यही पूछना चाहत थे न? कहकर मनिय अत्यंत दुष्टतापूर्वक खिलखिला उठी।

मुझे उसका यह परिहास बतइ पसंद नहीं आया। उसके इस परिहास में मुझे आश्चय भी कुछ कम नहीं हुआ। उसके पहनने का उसके मुह में प्रेम अथवा स्त्री-गुरूप के द्विधात्मक मन्त्रध विषय किनी प्रकार की चर्चा नहीं सुना थी। मैंने बार-बार उस कट्टर पवित्रता-वादि पाया था। मैंने आज अचानक उसके मुह में ऐसा परिहास सुना जिस में अनुचित मानना था मुझे एक धक्का मालगा।

मैंने उसकी हँसी में तनिक भी योग नहीं दिया। अत्यंत गभीर मुद्रा बनाते हुए मैंने तनिक निरस्वार भर स्वर में कहा— 'इस तरह अनुचित बात मुह में निशालना तुम्हें गामा नहीं देता, मनिया।' नी के प्रति मर मन में श्रद्धा की जा भावना जग उठी है वह तुम्हारे या

और किसी के परिहास से खडित नहीं हो सकती, यह विश्वास मुझे है। फिर भी तुमसे मेरा यह अनुरोध है कि भविष्य में भाभी जी को लेकर इस तरह के व्यंग या विनोद की बात मेरे सामने न किया करना।”

३३१

‘तुम क्या मचमुच नाराज हो गये?’ अपने दाहिने हाथ में मरा गला जकड़ती हुई मनिया वाली, मुझे माफ़ कर दो। मैं तुम्हें पीडा पहुँचाने के लिये ऐसा नहीं कहा था, विश्वास माना। जीजी ने ही मुझे बताया कि दवर भौजाई के बीच प्रेम-संबन्धी परिहास की बातें चलती हैं—इस देश का यह रिवाज है, नहीं तो मैं कभी—”

जीजी की क्या गिफ़त कर रही है? कहनी हुई सहसा भाभी जी भीतर चली आई। मुझे पता नहीं था कि दरवाजा खुला है। मनिया की अभावधानी मुझे बहुत खली।

मनिया को मेरे गले में हाथ डाले हुए देखकर वह सहसा लालचलन ही का थी कि मैंने कहा—“बठिये, आपसे कुछ जरूरी बात करनी है।”

मनिया उठी क्षण हाथ हटाकर पलंग पर से उठ खड़ी हुई और बहूँ सा मुँह बनाकर सामने खड़ा हो गयी। मैं अकेले से उससे भाभी जी के लिये एक कुर्सी ले आने का कहा। मनिया जब कुर्सी उठाने लगी तब तब भाभी जी स्वयं तानर दूसरी कुर्सी उठा लायी। जब दाना अपनी अपनी लायी हुई कुर्सियाँ पर बठ गयी तब मैंने भाभी जी से कहा—“आप अपनी दवरानी के रंग रंग ता देख ही चुकी होगी और अभी वह जा कुछ कह रही थी वह भी पूरा नहीं तो अधूरा ता मुझे हा दिया होगा। दवर भौजाई के समय सम्बन्ध की जा बात आपसे इमे बताया होगी उसका यह कुछ विचित्र ही अर्थ लगाने जा रही थी। मैं जा टोका ता अन्न नाराज हो गयी हूँ।”

मनिया ने एक बार तीखी, मार्केनिक दृष्टि में मेरी ओर देखा, जम यह जताना चाहती हो कि मैं ऐसी बात कह रहा हूँ जो नहीं कहनी चाहिए, और फिर आँसू फेर लीं।

‘अब तो आपसे क्या टोका भरी भाली और भली देवरानी को?’ यह कहकर भाभी जा स्नह से उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगीं।

मनिया अधिक सकुचित होकर श्री कुछ सिमटकर नीचे की ओर देखने लगी ।

“देवर भौजाई के रसमय सम्बन्ध की बात खनाते हुए तुम पति-पत्नी के रसमय सम्बन्ध की बात क्यों भूल गयी वहन ?” मनिया को मनाने का प्रयत्न करती हुई भाभी जी बोली । “लाला की तनिक सी परिहास की बात से तुम नाराज हो गयी ?” और वह फिर धीरे से उमकी पीठ थपथपाने लगी जैसे वह एक नन्हा सी बच्ची हो ।

और मनिया मचमुच नही-सी बच्ची ही थी । भाभी जी कुछ ही घंटा के परिचय से उसे ठीक समझ गयी थी ।

उसने सिर बिना उठामे ही भाभी की बात का उत्तर देते हुए कहा—“वह मरे तनिक से परिहास से क्या बिगड गया !

भाभी जी का स्पष्ट ही इस सरल मान-नीला से अच्छे कौतुक का अनुभव हो रहा था । उनका सुंदर ना गौरा उज्जना मुख चमक उठा था, और घनी बाली बरोनियो के बीच में दा बड़ी-बड़ी नीली आँखों में जम पुलक छत्रक उठा था ।

मरी और देखकर उहाने प्रश्न किया—“आखिर बात क्या हुई थी ?

मैंने अपना आर से बिना कुछ जोड़े घटाये मनिया क और अपने शरणा का ठीक-ठीक दुहरा दिया । जब मैंने मनिया द्वारा अबहूत प्रेमालाप शब्द का उल्लेख किया तब भाभी जी एमी खितखिला उठी कि हमत हैसत उनकी आँखा से आँसू निकल आय । कुछ दर बाद आँसुआ का पोंटनी हुई बाली—‘ तब बाबा, इस सार भगडे में पहला अपराध तो मुझे तुम्हारा ही लगता है । इतना सी बात के लिये वहन से विगन्न की क्या आवश्यकता थी ? बचारी न सरल भाव से एक हलवा ना परिहाम कर दिया तो क्या हानि हो गयी ?

भाभी जी क मुह से निकला हुआ ‘तुम सम्बोधन मुझे इस बन्दर सहज स्वाभाविक और प्यारा लगा कि मैं कतनता मरी आँखों से उनकी स्निग्ध सुंदर छवि की आर देखता रह गया । मुझे लगा कि उनसे मेरा परिचय आज का गही उम दिन से है जब मैं पालन में लेंटा हूँ,

हाथ पाँव नचाता हुआ, परिपूर्ण कुतूहल भरी विस्मित आँखों से अनान विद्व का समझने का प्रथम प्रयास करता रहा ३३३

हूँगा । ता महज स्नेह-मन्त्र उक्त समय उनकी बातों से और व्यवहार से प्रकट हो रहा था वह ऐसा मुक्त लग रहा था कि कहीं कण-मात्र भी अवरोध नहीं दियाईं दता था ।

भानी जी के उस सहज मुक्त भाव और बेतकलुषी का प्रभाव मनिया पर भी पड़े बिना न रहा । वह मिर उठाकर मेरी ओर देखनी हुई बोली— 'सुन लिया तुमन ? मुझे निपट मूख जानकर लगे थ मुझ पर विगडन ! मैंने कौन-सी ऐसी अनुचित बात कही थी ? बड़े आय विपन्न वाले !'

उम भोलेपन पर कौन फिट्टा न होता । मैं पुलकित हाता हुआ भी मद मद हँस पडा और बोला— "अच्छा, अब मैं मान गया कि गलती मेरी ही थी । अब तो माफ कर दो !"

बड़े आय माफी चाहने वाले । पहले क्या डाँटा था ?' और उसकी आँखा स बरबस दा बूँद आसू टपक पड़े ।

'अब, पगली कहा की !' भानी जी ने उमक गल पर अपना बायाँ हाथ जगन्तर उमका सिर धीरे से अपनी ओर करत हुए पुचकार भर स्पर्श म कहा । "यह तो रोने भी लग गयी । गात हा जा ! अब ता भगडे की ताई बात नहीं रही ।" और वह अपने दाँवों त्थ की लम्बी-लम्बी, पतली जगलिया का धीरे—बहुत धीरे—उसके मिर पर फेरन लगी । मनिया न भी, जग किसी अनात रहस्यमय आकषण से अपना सिर उनक दश म दिशा लिया—जसे माँ की ममता की मुगा स दबी हुई भून का पहनी धार तृप्ति पान का अचरित मिता हा । भानी जी की पनी वाली बरीनियाँ स्नेह जल स भाँग कर चमकन लगी थी । मनिया के सिर पर हाथ फरनी हुई वह दूध म्थित किसी अनन्य दिहु की घोर अपनी प्यारी-प्यारी, सुदर, स्तम्भरन आँख गडाये हुए थी । अपनी आँख पाछन के निय उनका एक भी हाथ गानी नहा था ।

मैं भाव मुग्ध हाकर विस्मित आँखा उ वह अपूर्व दृश्य दग्ता

रहा। कुछ देर बाद मनिया ने धीरे से अपना सिर हटा लिया और मृदु मुमकान भरी दुष्टतापूर्ण तिरछी आँखों से वह मेरी ओर देखन लगी। घृष्ठी तरह घुल चुकने के बाद उसकी अभिमानी आँखा में एक ऐसा निखार आ गया था जो मुझे बहुत प्रिय लग रहा था। मैं भी संकेत भरी मुमकान से उसकी सधि सूचक दृष्टि का मौन उत्तर दिया। भाभा जी ने अवसर पाकर बड़ी सफाई से अपनी आँखें पोछ डाली।

“वहूँ मा, चाम यहा ल घाऊ ? कलकतिया नोकर न (जा उच्चारण से त्रिहारी लगता था) त्रवाजे पर से पूछा।

‘नही ड्राइग रूम में ले चला। वहकर भाभी जी हडबडानी हुई उठ खड़ी हुई। उसके बाद भरी आर देखनी हुई वाला— उठो लाला, अब जब तक पलग पर बठ रहाग ? वह बड़ी दर से तुम लागे रा इतजार कर रह हैं। मैं तुम लागे को सूचित करन आयी थी और यहाँ आकर तुम दोनो के बीच के झगडे का फसला करन में सब भूत गयी। चलो उठो ! मैं चलती हूँ। तुम दोनो चने आना नीचे ड्राइग रूम में जल्दी ही। और वह बड़ी तेजी से बाहर निकल गयी।

सचमुच, मैं वीरेंद्र के अस्मित्व का ही कुछ समय के लिये एकदम भूल-सा गया था। भाभी जी ने जब उसकी याद दिलायी तब मैं भी हडबडाता हुआ उठा। कपडे बिना बदले ही, चप्पल पहनकर जब चलने लगा तब मनिया बाली—‘कपडे निकाल लाऊँ ? इस वक में जाघागे ता जेठ जी हमेंगे।

“वह हाँगा इसीलिये तो इस वक में जा रहा हूँ। चलो तुम भी अब अधिक दर न करो।

वह फिर कुछ न बोली और चुपचाप मेरे पीछे-पीछे हो ली।



“हो तुम नबरी बूजुवा, इसमे कोई शक नही !” वीरेन्द्र ने मुझे देखते ही परिचित अट्टहास के स्वर मे कहा ।

“बूजुवा तो मैं हूँ ही, यह तुम्हारा कोई नया आविष्कार नही है,” मैंने हँसते हुए कहा, “और शायद नबरी भी हूँ । पर यह बताओ कि इस समय किस बात से तुम्हारा ध्यान मरी इस विशपता की ओर गया ?”

“पहली बात यह कि जाड़े के दिना मे भी दिन म मोना यह एक टिपिनल बूजुवा का ही गुण है । दूसरी बात यह कि जसी अस्त-व्यस्त वेगभूषा म तुम चाय पाने आय हो वह भी एक बूजुवा की ही विशेषता है—घुघराते बाल आधे त्रिखरे हुए हरे रंग का पुतावर गल पर केवल 'आधा लौटाया हुआ उसके नीचे सिलटी रंग की गरम कमीन, उसके साथ सौ-सौ किबुडनो सहित डिवन के लफलाट का सफ़द, झलझलाता हुआ पायजामा और उस पर पीले रंग का फुदनदार इजारवद नीचे को लटकना हुआ—क्या लगनोवा ठाठ है तुम्हारे !” और यह अपनी ही बात पर दुगुन जार से ठठा कर हस पडा ।

“मैंने कहा न था !” मनिया एक बार मरी और और एन बार वीरेन्द्र की ओर देखती हुई मुझे उलटना देती हुई बोली ।

‘तब तुम्हारा भी यही राय है कि यह पक्का बूजुवा है ? मुझे यकीन खुशी हुई अपनी बात का समर्थन पाकर ?” और फिर अट्टहास ।

मनिया भाभी जी की वगल म बैठ गयी और मैं वीरेन्द्र के पास ।

भाभी जी चारा प्याला म चाय ढालती हुई वीरेन्द्र को संबोधित करती हुई बोली— ‘तुम बात-बात म लाला की हँसी उडायो करत हो, यह अच्छी बात नहीं है । कम मे कम अपनी बहू का तो लिहाज किया बरा । बेचारी मोही सिमटी किबुडी-सी रहती है !” उनके मुख पर एक दबी हुई मुसकान झलक रही थी ।

‘यह बात तुम बहू की अनुपस्थिति म मुझे सुझानी ता इसका कुछ फल भी हाना !’

अबनी अट्टहास की दारी मेरी थी । मैंने मनिया की ओर देखा । इस धार उमरे मुख पर सहज प्रगमना का भाव छनवत हुए देगवर

मैं समझ गया कि जेठ जी के प्रत्येक व्यंग और परिहास को वह सहज रूप में ही ग्रहण कर रही है।

जलपान की चीजों में बागवाजार के प्रसिद्ध रसगुल्ले, भीमनाग के मदेश, रममलाई और समासे (जिह भाभी और वीरेन्द्र 'मिघाडे कह रहे थे) यही प्रमुख थे। घर की बनी कोई चीज नहीं थी।

एक रसगुल्ला मुह में डालते हुए वीरेन्द्र बोला—'रसगुल्ला चाहे बागवाजार का ही क्या नहीं इसमें वह स्वाद ही नहीं सकता जो सुबह कुम्हड़े के हनवे में मिला था।

इस बार उसके चेहरे पर हँसी का लेश भी नहीं था। पर भाभी जी और मैं बिना हँसे नहीं रह सके।

'हँसी की बात नहीं है। सचमुच हनवा बहुत अच्छा बन गया था। मैं तो बहू से यह अनुरोध करना चाहता था कि वह कोई और नयी चीज अपना ही हाथ की बनी खिलावे। पर तुम लाग चकि यह बात हँसी में उड़ा देना चाहते हो, इसलिए अब मुझे साहस नहीं जाता।'

"तुम जरूर अनुरोध करो बहू से, भाभी जी ने कहा, 'मुझे तो इससे लाभ ही होगा। क्योंकि बहुत दिनों बाद कुछ नया पकवान पाने को मिलेगा। कनकत्रिया चीजा से तो अब मुझे भी अच्छी हानी जानी है।

'वह कोई निम्बती चीज बनाकर हम लोग को खिलाओ, वीरेन्द्र ने आग्रहपूर्वक कहा।

मनिया ने सहज प्रसन्नता भरी पूरी दृष्टि से वीरेन्द्र की ओर देखा और तब बोली—'निम्बती चीज तैयार करने के लिए चूबर गाय का पनीर चाहिए—वह भी महीना का सुखाया हुआ। जिना उसने कोई अच्छा निम्बती पकवान बन ही नहीं सकता। और ता और, अच्छी निम्बती चाय भी बिना पनीर के नहीं बन सकता।'

'तब तो गयरस यह पनीर वहीं से प्राप्त करनी होगी।

'वह केवल निम्बती व्यापारिया ही से मिल सकती है। मनिया ने कहा।

"मैं जानता हूँ। दार्जिलिंग में मैं निम्बती व्यापारिया का इन्हे

बेचते देखा है। बहुत दिनों तक मेरी यह धारणा रही कि वे लाग कपडा घोन का साबुन बेचत हैं। बाद मे किसी न बनाया कि वह माबुन नही चेंबर गाय की पनीर है।

३३७

“बही क्या चेंबर गाय की पनीर है? भाभी जी ने एक घूट चाय पीत के बाद पूछा और फिर वाली— अर वापरे! उसकी बनी चीज खान से ता में मोम भ बनी चीज खाना बहतर ममभूगी। उफ!” उहान नाक भी सिक्कोडते हुए इस तरह निर हिलाया जस उनका मारा शरीर सिहर उठा हा।

मैंने भाभी जी की आर दखत हुए कहा—‘मेरी मसुराल की चीज के प्रति ऐसी अहचि जताकर आप भरा अपमान कर रही हैं भाभी जी।’

भाभी जी चाय का घूट गटकती हुई फिक्क करके हँस पनी। बीरेन्द्र ने भी जोर का ठहाका मारा।

‘सचमुच में यह बात भूल ही गयी थी कि निव्वती लोग तुम्हार मसुराल बाने हैं। तब तो उस चीज का मैं निग्मावे रखी साला। अब ता मेरे निय यह जरूरी हो गया है कि मैं कही-न-बही स उम ताहके का प्राप्त करूँ। और जिस दिन मुझे वह प्राप्त हो जाय उम दिन मैं निश्चय ही तुम्हारी मसुराल के दाचार सज्जना का भी निमन्त्रिन करूँगा।’

इम बात पर ऐसा कहकहा मचा कि दो-तीन नौकर धवरावर बाहर से भीतर चले आय। बीरेन्द्र ता स्वय अपन अट्टहास के घन्ने से कुर्सी महिन पीछे की आर गिरत गिरत बचा। मनिया इस बदर लाटपाट हा गयी था कि उसन अपन प्याल म से चाय गिराकर अपनी साठी खगव कर डाली। उम एस मुक्त रूप से हँसत हुए रूमक पहले मैंन कभा ननी दफा पा। मेरा भी बुरा हाल था। भाभी जी वय अपन ही परिहास की घुमनी से अपन का संभाल नहा पाती था।

हैमी का गौर जब बम हुआ तब बीरेन्द्र अपनी चमकना हुई भांवा क भीम बाया का बायें हाथ मे पाछता हुआ वाला—‘आज तुम लाग

३३८      के आ जाने से बड़ा ही सुख मिला भाई । बहुत दिनों बाद  
ऐसा अवसर आया ।”

उसके बाद उसने बायीं हाथ ऊपर उठाकर घड़ी में समय देखा ।  
फिर भाभी जी से बोला—“बतन में चाय हो तो एक प्याला और पिलाओ  
इसा बात पर ।”

सभी लोगों के प्याल दूसरी बार खाली हो चुके थे । इस बीच नौकर  
एक बतन में चाय का पानी और लाकर रख गया था । भाभी जी ने  
एक एक करके सबके प्याला में फिर से चाय ढाली ।

जब सब लोग चाय पी चुके तब बीरेन्द्र ने फिर एक बार प्रपन्न हाथ  
की घंटी पर नजर डाली और सहसा गम्भीर मुख मुद्रा बनाते हुए मुँहसे  
बोला— पाँच वजन का हूँ । मुझे एक आवश्यक काम से जाना है । तुम  
अपनी भाभी और बहू का साथ लेकर चाहे शहर की ओर घुमा लाना  
चाहे भील की ओर । मैं रात में आठ-नौ बजे के करीब लौटूँगा, तब फिर  
मिलेंगे । यह कहकर वह सहसा उठ खड़ा हुआ और दूसरों ही दृष्टि  
बाहर निकल गया । हम लोग भी उठकर दरवाने के पास खड़े हो गये ।  
बाहर उसकी कार खड़ी थी । उस पर बैठकर वह स्वयं ही ड्राइव करता  
हुआ चला गया ।

उसके इस आकस्मिकता से चल जाने पर सारे कमरे में एक गम्भीर  
बानावरण छा गया । हम लोग जब फिर से उठ गये तब भाभी जी ने  
वरवम निकलती हुई लम्बी साँस का देवाने का व्यर्थ प्रयास करते हुए  
कहा— आजकल प्रतिदिन यह किसी गुप्त सभा की बैठक में सम्मिलित  
होना न जान कहीं जात हैं । आज सचमुच यह बहुत दिना बाद हुआ । तुम  
लागा न आज्ञान से आज प्रायः दो वर्ष बाद मैंने देखा इनके पिछले रूप में  
पाया । नहाता पिछले दो वर्षों से मैं यही देख रही हूँ कि विनाद की  
किसी भी बात में रम नहीं ले पाते । घर रहते हैं ता या तो कोई अखबार  
या मासिकवाचक गम्भीर पुस्तक पढ़ने में व्यस्त रहते हैं या अनेक कभी  
कमरे के भीतर कभी बरामदे में और कभी दालान में टहलते हुए अत्यन्त  
गम्भीर भाव से न जान क्या सोचते रहते हैं । मुझे भी जब बातें करते  
हैं तब अक्सर यही कहना है कि ‘हम लुटेरों और डाकूपों का गम्भीर

वन हुए हैं, गोभना । हम कोई अधिकार नहीं है कि इतनी ३३६

बड़ी जमीन पर पूरा हक जमाये रह हैं जब कि लाखों  
वित्तान अपना खून-पसीना एक करके, अपनी हड्डी पसली सुखाकर, हम  
लोगा के सुख के साधन जुटाने में यत्न हैं और स्वयं अपने लिये भरपेट  
माटा अन्न भी नहीं जुटा पाते, इतने बड़े बँगले में राजसी ठाठ से रहकर  
हम दा प्राणी हजारों किमाना और मजदूरों का कौर छीनने में दशव्यापी  
रक्त गोपका का साथ दे रहे हैं, यह तुम समझे रहो । जब-जब तुम  
सुस्वादु व्यजन का एक एक कौर मुह में डालती हो तब-तब यह याद  
करती रहा कि तुम इस देश के उन असह्य श्रमिका के रक्त का स्वाद पा  
रही हो जो जीवन में अपना सब कुछ द दान का विवग हैं, जो अपना  
सब-कुछ गँवाय बँठे हैं, और जिनके उबरने का कोई भी रास्ता आज की  
बूजुबा सरकारें नहीं छोटना चाहती । मैं भी इस पाप में तुम्हारा और  
तुम्हारी और अपनी कोटि के दूसरे लोग का साथ दे रहा हूँ । मेरे पिछले  
जीवन की कुछ ऐसी विपत्ताएँ, कुछ ऐसे मस्कार रह हैं, जो अभी तक  
मुझे इस पाप से मुक्त होने से रोक हुए हैं । पर मैं तुमसे सच कहता हूँ  
कि प्रतिशण मेरी यह विवगता मुझे नौ-सौ विच्छुआ के से डक मारती  
रहता है । एक एक कौर जब मैं मुह में डालना हूँ तो मुझे वह कालकूट  
से भी कच्चा लगता है । बार-बार मरी इच्छा होती है कि अपना सब-  
कुछ खुगवर सबहारा दान जाऊँ और उम सत्र-कुछ गवायी हुई जनता के  
साथ समान स्तर में मिलकर उही क संगठित प्रयत्नों से स्वयं अपनी और  
दूसरे सपत्तियाँ लिया की सपत्ति को जन साधारण में समान रूप से वित-  
रित कर पाऊँ । मैं निवट-अविष्य में ऐमा कर नहीं पाऊँगा । पर रह रह-  
कर यह भावना मेरे मन में हजारों मुझ्याँ चुभाती रहती है । मेरी इस  
भावना का परिणति यहाँ और किम रूप में होगी, मैं कह नहीं सकता ।  
इसी तरह के लेखक वह समय असमय मुझे पिलाते रहते ह ।

भाभी जी के सुन्दर, और प्रकट में सौम्य मुत्त पर एक मम विदारक  
पगल छाया फिर आयी । मैं और मनिया निस्तब्ध और निर्वाण हाकर  
उनकी ओर देख रहे थे । वह कहती चला गया— ' मैं कई बार उनमें बह  
चुकी हूँ कि साया भादमी ऐम ह । अपना अच्छी सामाजिक स्थिति

के लिये तनिक भी ग्लानि का अनुभव नियो बिना भी उच्च  
 प्रादुर्भावों का पालन किये चले जाते हैं और विश्व रन्ध्याण के  
 लिये प्रयत्नशील रहते हैं, तुम भी उही की तरह शक्ति के साथ धैर्यपूर्वक  
 अपने कर्तव्य का पालन किये चले जाओ। मन का इस तरह अज्ञान रखने  
 से न ता तुम्हें व्यक्तिगत सताप प्राप्त होगा न उससे समाज का ही कोई  
 हिन हो सकेगा। पर वह भरी इस तरह की बातें सुनकर या तो गीनार  
 बिना बुद्ध बोले चल देते हैं, या तिरस्कार के स्वर में कहते हैं कि 'तुम  
 मेरा दृष्टिकोण कभी नहीं समझ पाओगी, सबसे बड़ा दुःख मुझे इसी बात  
 का है। तुम्हें समझाना दीवार पर सिर पटकने के बराबर है। सच पूछो  
 तो मेरे जीवन में मर से बड़ी रुकावट तुम्हो ही है। तुम्हारे समाज एक  
 भदनी-सी नारी ने भरे और दुनिया के बीच इतना बड़ा व्यवधान खड़ा कर  
 लिया है कि मुझे आश्चर्य होना है। तुम न होता तो आज मैं विश्व में  
 अचला हान पर भी नारा करौंडा की जनता का एक अनिभाज्य अंग  
 होता। मेरा सब से बड़ा दुर्भाग्य और सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि  
 तुम्हारे द्वारा सहे किये गये व्यवधान को न तोषन की शक्ति अपने में  
 पाना हूँ न तोड़ सकने की। उनकी इस तरह की बात में बुरी तरह  
 तिलमिला उठती हूँ। केवल तीन दिन पहले की बात है सुबह चाय पीते  
 पीते उन्होंने इसी तरह की जली-बटी बात मुझे सुनायी। मैं रह न सकी  
 और उत्तर में बाल उठी—'तुमने क्या इसी लिये मुझमें विवाह किया  
 था कि एक दिन बंधन तोड़ कर निकल जाओगे? तब तो तुम अचल थे  
 और तब भी निश्चय ही इसी तरह का प्रातिवारो विचार तुम्हारे रहे  
 होगा—तब भी तुम्हारी अलमारी में साम्यवाद-मन्त्री पुस्तकें पाठे  
 लगा रहना था। तब क्या उस समय तुमने जानबूझ कर इतनी बड़ी  
 रुकावट अपने सिर पर माल ली? आज जो मैं तुम्हारे और दुनिया के  
 बीच इतना बड़ा व्यवधान खड़ा किये हूँ इसका कारण यह बतायि नहीं  
 है कि आज तुम्हारे राजनीतिक और सामाजिक विचार बदल गये हैं,  
 इसका कारण स्पष्ट ही यह है कि तुम मुझमें उतना गम हो और मुझसे  
 छुटकारा पाने के लिये भीतर ही भीतर बुरी तरह उत्पटा रह हो।  
 मुझमें छुटकारा पाने की इस भावना को दवाने के लिये तुम्हारा मन अपने

आपको धावा देने के लिये यह विश्वास जगा रहा है कि ३४१  
जनानि की आग म फाद पडने मे ही जीवन की एकमात्र

सायकता है । अपने भीनरी भावा का ठीक ठीक विश्लेषण कर पाओगे  
तो समझ जाओगे कि वह ज्ञाति की सच्ची लगन नहीं, बल्कि पलायन  
की प्रवृत्ति का पागलपन है जो भूत की तरह तुम्हारे सिर पर सवार हो  
गया है । मेरी बात सुनकर उन्होंने गायद हंसन का प्रयत्न किया पर  
'उफ ! बह कर दान पीमकर रह गये । फिर वाले—'अग्नेजी की इस  
बहावन से तुम भी परिचिन होगी कि शतान भी अपनी सफाई मे धम-  
पुस्तक के उद्धरण दे सकना है । तुम अपना मवीण स्वार्थ की सफाई में  
मुझे मनापनानिक पाठ पढाना चाहती हो । सचमुच विवाह क पहेले मने  
तुम्ह गलत समझा था । तब मैं यह समझना था कि जिम प्रकार मेरी  
बीमारी म रात रात भर जगहर मेरी परिचर्या करके तुमने मेरे प्राणा की  
रक्षा की है उसी प्रकार तुम बराबर जीवन मरण म मेरा साथ देती  
रहागी । आज युग की पुकार बहुत तीखी हा उठी है । बाना के पदों  
तब का फाड़े डालनबानी उस पुरार क प्रति तुम रहरी हा ता दूमरा भी  
बहरा र, यह सोचकर तुम चितना बडा आयाय मरे प्रति कर रही हो,  
यह अभी तुम नहीं समझ पाओगी । पर जल्दी ही एक दिन आयगा जब  
वास्तविकता निराकरण रूप म तुम्हारे आग लडी हो जायगी । तुम जान-  
बूझकर तथ्या का ताड मरोड कर उनका विकृत अर्थ लगा री हा ।  
जानती र्ही भी यह नहीं जानना चाहती हा कि अगर केवल तुमसे निकल  
भागन " लिये ही मुझे कोई उपाय ढढना हाता ता उनके लिये अपन भीतर  
ज्ञानि का विस्फोट उत्पन्न करने इतना बडा आडवर रचन की आवश्यक  
बता हा क्या थी ! बडी आगानी से मैं ऐसा कर सकता था । मरी इस  
सुस्पष्ट गहदयता और ईमानदारी का कुछ दूमरा हा अथ लगानर तुम मेर  
साथ चितना बडा आयाय कर रही हा यह बात एक दिन तुम्हार  
आग वच्य के प्रवाण म गाफ हा जायगी । तुम अपन स्वभाव के एक  
ऐस पहेलू का परिचय मुझे दे रही हा जो इतन दिना तक मुझ क दिपा  
था । इन बात मे मुझे बडी भारी पीडा पहुँची है—बडी ही मार्मिक—  
पर इनन पर भा मैं तुम्हें चाहता हूँ और तुम्हारे प्रति प्रेम के बचन

को छिटा करने का बल अपने भीतर नहीं पाता। मेरी इस दुबलता से लाभ उठाकर तुम कड़ी से कड़ी बात कहती जागो इसका पूरा अधिकार तुम्हें है। मैं अभी इसका कोई प्रतिकार करने में असमर्थ हूँ।' और मेरा उत्तर सुनने के पहले ही वह उठकर चल गयी। मैं अपने कमरे में जाकर खून रायी—जी भर कर पफक पफककर। सचमुच मैंने तश में आकर उनसे बड़ी अनुचित और कड़ी बात कह दी थी। यह मेरा अत्याय था, यह मैं जानती हूँ। पर तूम्ही बताना लाला मैं क्या करूँ? उनकी जसी मानसिक स्थिति चल रही है उस देखने हुए मैं अपना मन को स्थिर नहीं रख पाती। मर और उनके विचारों और भावों में जमीन आममान का अन्तर आ गया है और दिन पर दिन वह अन्तर बढ़ता ही चला जाता है। हो सकता है मेरी सकीर्ण स्वायत्त बुद्धि ही मुझे उनके विचारों में उनका साथ देने से रोक रही हो। पर मुझे जसी साधारण नारी से इससे अधिक की आशा वह करत ही क्यों हूँ। वैसे वह मुझसे अन्तर कहा करत हैं कि 'तुम अपने को साधारण नारी क्या समझती हो? तुम शिक्षा प्राप्त हो और चाहा तो गहन से गहन आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक विषयों को समझकर उनकी छानबीन करके जनता के प्रति अपने यथायक्त यत्न से परिचित हो सकती हो। तुमसे भी साधारण नारियाँ शक्ति की भाँति मूढ़कर अपने प्राणों की बाजी लगाकर जन आन्दोलन में मूढ़ पड़ी हैं। तुम भी यदि मुक्त हृदय से भरा साथ देने का तयार हो आओ तो मेरे भीतर के सब द्वन्द्व सभी मानसिक उलझनें दूर हो जायें। पर मैं चाहूँ पर भी अपने भीतर न तो इतना बड़ा बल पाती हूँ न यह विश्वास ही मेरे भीतर जग पाता है कि शक्ति—वैश्व शक्ति जिसके छिटपुट नमूने मैं आजकल चलते की सड़ना में देख रही हूँ, सच्च अर्थों में जनता का कल्याण के पथ पर ला पायगी। हो सकता है—मेरे मन की इस रकावट का कारण वे सकीर्ण मन्वारे हैं जिनमें मैं बचपन से पली हूँ। पर कारण चाह जो भी हो मेरी स्थिति की वास्तविकता यही है जो मैंने अभी बताया है। आज तुम बड़े मौक से आय हो, लाला। मैं पहले ही परिचय से सम्भ गयी थी



कि आज मुझे ऐसा व्यक्ति मिला है जिसके आग में अपना ३४३

जी खालकर २२२२ दिनों से जमे हुए भार को हटका कर  
सकती हूँ। वह तुम्हें अपने मग भाई से बटकर मानते हैं यह मैं पहले  
ही क्षण जान गयी थी। इसलिए तुम्हारे आग न वह अपनी बाई वान  
द्विपायेंगे न मैं ही छिपा पाऊँगी। मरा भाग्य अच्छा था कि मुझे वह न  
भी ऐसी मिनी है जिसके स्वभाव में महदयता कूट कूटकर भरी हुई है।  
इसलिए तुम दोनों के आग जी हटका करके मुझे जो प्राप्ति मिल रही  
है उसका मैं वरण नहीं कर सकती। तुमसे मरा एकांत अनुराध है  
लाला, कि मुझे कोई ऐसा रास्ता सुझाओ जिसमें वर्तमान भाग्यिक  
संकट से ऊपर गऊ—

एक बूढ़े आसू टपक कर उनके ऊपरी आठ तक चला गया था तब  
भी उन्होंने उस पाछा नहीं। मरी कृतव्यविमूढता की भी स्थिति हो रही  
थी। यदि मैं किसी उपयाम या कहानी का नायक हूँ तो स्पष्ट गदो  
में या तो यह कह देता कि "तुम भी अपने पति के पथ का अनुसरण  
करता हूँ आग पीछे की बाई वान सोचे बिना ही मगन में कूट पडा?"  
या यह कहता कि "अपने पति को भरमक समझकर उन्हें हम रास्त पर  
चलने से विरत करो और इतने पर भी वह न मानता उम्का मग ही  
त्याग दो।" पर जीवन की वास्तविकता विचकुल भिन्न होती है। मैं इन  
दो में एक भी बात की सलाह भाभी जी का नहीं द गवता था। जहाँ तक  
जन प्राप्ति का प्रदन था, मैं स्वयं इतने अधिक विरोधी सम्भारा से जकडा  
हूँ था कि भाभी जी उसकी कल्पना तक नहीं कर सकती थी। जन  
प्राप्ति के पहले उनके अनुकूल मन प्राप्ति की आवश्यकता थी। और वह  
केवल गम नताओ द्वारा ही संभव ही सकती थी जो पापण-कीट की तरह  
कठोर कर्मठता की ब्यक्त शक्ति अपने भीतर रखने व साथ ही-माय प्रात  
द्रष्टा महामनीषी भी हा, जो केवल नारेवाजी, छिटपुट पदमत्र की  
वारवाइया और निरथक हिंसावाडा तक ही अपने कृत्य का गामिन न  
रखकर अपने निराट स्वयं के अनुकूल ही ध्यापक दृष्टि भी रखने हों,  
मानव-जीवन व भूत, वर्तमान और भविष्य की भीतरी और बाहरी  
पथ रेखा जिनकी गहरी अन्तर्दृष्टि के आगे मुन्दप्ट हा चुकी हो, जो दग-

काल के अनुसार यथाथ के प्रति पूरा सजग रहकर क्रांति के महारथ के संचालन की योग्यता और समर्थता रखते हैं। पर दंग म ऐसे महानेताओं का निपट अभाव मर आगे सुस्पष्ट हो रहा था। मैं देख रहा था केवल उन अधकचरे नेताओं को जो केवल बाहर से उधार लिये हुए नारा की चिनगारियां के बल पर एकदम हरी लकड़ियों से महाकाल की आग सुलगाने का स्वप्न देख रहे थे जिन्होंने फलस्वरूप यत्र-तत्र केवल ऐसा धुआँ उठता दिखायी देता था जिससे आँखों में धध ध्यान और आँखें पिराने के सिवा और कोई फल देखने में नहीं आता था। स्वयं वीरेंद्र भी अपने अतमन में इस वास्तविकता का अनुभव कर रहा था उसकी उलझी हुई याता से यह तथ्य मरे आगे सुस्पष्ट हो चुका था। इन पर भी वह जा परिपूरण आत्म बलिदान के लिये छटपटा रहा था इसका काइ दूसरा ही रहस्यमय कारण था जिसका स्वरूप मरे आगे पूरी तरह से स्पष्ट नहीं हो पाता था। उसके पीछे निश्चय ही कुछ तात्त्विक गतिगत मनोवैज्ञानिक कारण थे (जिसका कुछ-कुछ संज्ञान वह स्वयं भी दे चुका था) और कुछ सामूहिक। भाभी जी ने खींक के आदेश में उसमें मनोभाव का जा विलेपण किया था उसमें सत्य का कुछ अणु था या नहीं और था तो किस हद तक था यह मैं अभी तक नहीं जान पाया हूँ। पर प्रश्न यह था कि मैं भाभी जी को क्या पथ सुभाता? वीरेंद्र की बचनी के मूल कारण चाहे कुछ भी रहे हैं पर वह भी ज्वलत सत्य, इतना भाभी जी भी समझे हुए थी और मैं भी। यह भी स्पष्ट था कि वीरेंद्र की उस बचनी ने भाभी जी आगे जो समझा सही कर दी थी वह किसी भी हानत में उपेक्षणीय नहीं थी। यह उनके नियमित जीवन मरण की समझा थी जिम्मा समाधान एक-एक रूप में शोना अनिवायत आवश्यक हो उठा था। पर मुझ जैसे दुर्बल व्यक्ति से उद्दान हम मन्त्र में सहायता की आशा क्या साचनर की थी?

मैंने कहा—“भाभी जी मैं समझ नहीं पाता कि आपको क्या सलाह है। वीरेंद्र ने आज सुबह मेरे आगे जा विचार प्रकट किया है उस इतना मैं निश्चय समझ चुका हूँ कि जिग घने धँधेरे में दब हूँ पथ की ओर काम बतान का निश्चय उसने किया है उसमें उभे दिग्गज का गति

किसी म नहीं है। उसकी बकली बनावटी नहीं है। जो प्रेरक गति उसे किसी अनात दिना की ओर ठेले लिये जा रही है वह आवे रास्ते में उसे छोड़ देगी, ऐसा संभव नहीं है। आप अपनी ममयता और विश्वास के अनुसार जिस हृद तक उसका साथ दे सकती हैं उस हृद तक दें और उनके बाद किसी भी प्रत्यागित या अ-प्रत्यागित परिस्थिति के लिये अपने का तैयार रखें।

३४५

मर गदा म जा एक अत गहन-गभीर उदानी मरी हुई थी उसका छुट्टा प्रभाव भारी जी पर निश्चय ही पड़ा होगा। मैं देख रहा था कि उनके महज-मुत्तर गारे-उतले मुख पर मगममर पत्थर की-सी एक निस्तब्ध गडना छा गयी थी। कुछ दर तक वह एकटक, निश्चल और विमूर्त भाव में मरी ओर देखती रही। उनके बाद एक लंबी सास खींच-कर धीरे से बानी—'इधर कुछ दिना से रह रहकर एक अजीब-सी आवाज आगत और मान म मरा गना पकड़ती रहती है। जब मैं अकेली जाता हूँ तब मुझे अपने चारों ओर हाय हाय।' का-मा मीन स्वर सुनायी पाना है। दिन-दहाड़ मुझे लगता है कि कुछ विचित्र-सी छायामूर्तिया—जा जितनी ही भयावनी लगती हैं उतनी ही दयनीय भी—मर जाना व आन-वास प्रतिक्षण सद आहें भरती रहती हैं। मनुष्य-गरीर का ठठरिया के जा चित्र और माडल मैन उठे हैं उही की तरह वे छायामूर्तिया लगती हैं। वे क्या मुझे घेरे-रता हैं, किसक या किन्क लिय हाय हाय करती हैं इमना बार्द आनास मैं नहीं पाती। एक ठंडी निम्न रत् रत्कर मेरी रीं व भीतर दौड़ जाती है। जब वह बहा चले जान हैं और मैं कमर म अकेली पुत्र सोचन लगती हूँ तभी मन तरह का बत्पना प्रत्यक्ष सत्य की तरह मुझे धर दबाती है। वभी-वभी मैं इत बदर डर जाती हूँ कि अपनी नोकरानी को पुकारकर उस आने पाम मिठा लेनी हूँ और उमने कहती हूँ कि क्या अपने और अपनी सह-निया के बचपन व और ब्याह व किस्म सुनाय। वह बड़े चाव से सुनानी है और मैं ना उन ही चाव से सुनती हूँ। उन किस्मा को सुनकर अपने बचपन की और उस अवस्था म मन में उठन वाले मुदर सुनहरे गपना की याद करके मैं उन भयावनी छायामूर्तियों का किसी मत्र में

भगाने का प्रयत्न करती हूँ। तुम लोगो के आ जाने मे कितना बल मिला है यह मैं ही जानती हूँ। आज बहुत ज़िना बाद

मुझे यह अनुभव हुआ है कि मैं मनुष्या के बीच म हूँ। खाना, तुम लाग मेर भाग्य से अचानक एमे आ गये हा जसी पुरानी कथाओ न कहा गया है कि द्रौपदी की करण पुकार सुनकर भगवान स्वय आ पहुँच थे। अब तुम लागो से मरी यह एकात प्राथना है कि डम हालत म मुझे— हम लागो को—छाडकर कही न जाना। यह तुम्ही लागो का घर है। वह तुम्ह गपन सभ भाई से भी बटकर मानते हैं और तुम भी उह एसा ही मानते हा यह मैं दख चुकी हूँ। इतना बडा मजान है और हम केवल दो प्राणी हैं। न कोई पीछे वाला रह गया है न कोई आग है। आगे की कोई आगा भी नही रह गयी है। वहन न मुझे बताया है कि अभी तक तुम्हारा भी करीब-करीब यही हाल ह—हालाकि आग की उम्मीद है (यह कहते हुए भाभी जी के विपाद म्लान मुख पर मुनकान की एक क्षीण रेखा भलक पडी)। जो भी हा, इतना स्पष्ट है कि तुम्हार निय कोई बघन नही है। इसलिये मैं तुमस—और वहन से भी—यह अनुरोध कर रही हूँ लाला कि तुम लाग अब हम न छाडना। अब तुम जाओगे ता मैं निश्चय ही दूसरे ही जिन पागल हो जाऊँगी।'

अंतिम वाक्य पूरा होते-न होत भाभाजी का गला रुँध आया और उसके बाद वह सहसा अचल स मुह ढाँपकर पफक पफककर राने लगा—नम हिंटीरिया का दौरा आ गया हो।

उन्के उस अप्रत्याशित आवग स मैं अत्यत विचलित हा उठा। मरी बुद्धि इस बदर चकरा गयी थी कि मैं कुछ साच ही नहा पाता था कि उस परिस्थिति म मरा क्या बनव्य है। बल के पुतले की तरह मैं दखा कि मनिया सहसा उठ खनी हुई और भाभी जी की बुरसा के पीछे जाकर बडे स्नह स उनकी पीठ पर हाथ फेरती हुई पुचकार-भरे स्वर म बोली— 'न पबराओ जीजी हम तुम्ह छाडकर कही नही जायेंगे। तुम मरी बघी अच्छा जीनी हो, तुम्हारे साथ रहने मे बडकर सुख और हम क्या होगा! शांत हा जाओ। न रोओ।''

३४७

और कोई समय होता तो मुझे भोली मनिया को अपने  
 यक्षकान स्वर में बड़ी बूढ़ियों की तरह सात्वना देते हुए देख  
 कर निश्चय ही हँसी आ जाती। पर भाभी जी के अंतर से जो निद्रारण  
 मम वेदना आत नन्दन के रूप में फूट पड़ी थी उसने एक ऐसा भयावह  
 वानावरण उत्पन्न कर दिया था जिसमें किसी भी बात पर हास्य के लिये  
 बिंदु मात्र स्थान नहीं रह गया था। बल्कि मनिया के नारी हृदय से जो  
 महज-स्वाभाविक समवेदना उभल उठी थी उसने मेरा हृदय गन्गद् हो  
 उठा और मैंने उसके प्रति आतिरिक्त वृत्तता का अनुभव किया, जमे वह  
 भाभी जी की नहीं, बल्कि स्वयं मुझे सात्वना दे रही हो। सात्वना देते  
 हुए स्वयं मनिया की आँखें छनछना आयी थी। पर उन गीली आँखों में  
 मैंने देखा कि एक अप्रुव दृष्टता, एक स्वस्थ, सबल साहमिकता भलक  
 रही थी। कल्याण और साहस का ऐसा सुंदर सम्मिश्रण केवल एक स्वस्थ  
 मातृ हृदय में ही संभव हो सकता है। मुझे सबसे बड़ी प्रमत्तता यह दल  
 कर हुई कि मनिया ने मेरा हृदय जानने की तनिक भी परवाह न करके,  
 मेरे सवन की तनिक भी प्रतीक्षा किए बिना ही, स्वयं अपने भरोसे अपने  
 ही ऊनरदायित्व पर भाभी जी का आश्वासन दिया। यदि वह ऐसा न  
 करती तो उस सकटपूर्ण क्षण में मेरी क्या दगा हुई होती यह मैं ही  
 जानता हूँ।

भाभी जी का पफवना धीरे धीरे कम होता जाता था जस मनिया  
 के चुबकीय स्पर्श ने उनके भीतर जमे हुए हाहाकार को लीहकणों की  
 तरह बाहर खींच लिया था। वह अभी तक आँचन से अपना मुँह ढाँपे  
 था। उन्हें कुछ गात हाने दखनर मनिया ने ध्यान मग्न-सी हाकर दाहिने  
 हाथ की तजनी में उनका सिर का ऊपर अत्यन्त दट रखाभा से एक कल्पित  
 दास चिह्न अंकित किया। सब प्रकार की मानसिक भीति और बाधाभा  
 को दूर करने का रामबाण उसके परम विश्वासी हृदय के लिये एक  
 मात्र बही प्राप्त चिह्न था। जब-जब वह अपने या किसी दूसरे के ऊपर  
 प्राप्त चिह्न अंकित करती थी तब-तब वह मग्न हो जाती थी। लगता  
 था जैसे उसकी संपूर्ण धारणा उसकी दास्य द आँखों के भीतर समा गयी  
 हो। उस समय उसका प्रगात रूप अत्यन्त सम्मोहक, आश्चर्यजनक और

आकषक लगता था और देखने वाले के हृदय में अगाध अन्धकार और सभ्रम का भाव जगाता था। मध्ययुग के इनाई सता और सन्यासियों के चित्रों में उनके मुख पर जो अलौकिक रोमांच का भाव पाया जाता है ठीक वसा ही भाव ऐसे अवसरो पर मनिया के मुख पर अभिहित पाया जाता था। इस वार भी मैं मुग्ध दृष्टि से उनकी मुखश्री की उस अपूर्व मुदर अभिव्यक्ति को निहार निहार कर पुलकित हो रहा था। प्रास का चिह्न अंकित कर चुबन के दाद भी मनिया कुछ देर तक उसी ध्यानावस्था में आँखें बंद कर रही। इस समय उसके मुख पर सहज भोदोपन और वचकाने भाव का लेश भी नहीं दिखायी देता था। लगता था जैसे मातृदीय पान और भावनाओं का विकास का जागरण स्वरूप ही सबता है उसे इस आश्चर्यमयी नारी ने नहीं रहस्यमयी शरीरिक सूत्रों से अपने भीतर समाहित कर लिया है और उसी की अतिच्छाया एक शिथिल मयत रूप में उसके मुख पर विभंगित हो रही है।

कुछ देर बाद जब मनिया ने आँखें खोली तब ठीक उसी समय भाभी भी न भी एक भ्रष्ट से अपने मुख पर न गाँठे नील रंग की साड़ी का अंकित हटा लिया। तब किसी टलीपथिक तार द्वारा दोनों के मनाभाव एक दूसरे में अविच्छिन्न रूप में जुड़ गया था। मनिया पीछे खड़ी थी और भाभी जा उसे दृग् नहीं सकती थी। केवल उसके हाथ के (और गायद मन के भी) स्पर्श का अनुभव कर सकती। मैं आश्चर्य में देखा कि भाभी का मुख पर कुछ ही क्षण पहले घिर हुए त्रिपाद और नरस्य के घन वाले बादलों के स्थान पर एक प्रगात हागानाम भलक रहा था। उनका आँसू और बरीनियाँ अब भी गीली थी—जस क्वार के महीन में एक आकस्मिक झटके का बाद आसमान एकदम साफ़ होकर निखर आया था और प्रभात की सोन की पीली धूप में पेड़ों की पत्तियाँ न गिरने वाले अविच्छिन्न वर्षा-वण मानी की बूँतों की तरह चमक रहे थे।

इस सम्बन्ध में मुझे तनिह भी मदेह न रहा कि यह मनिया के ही पुम्बव-स्पर्श का जादू द्वारा संभव हुआ है। मुझे यह तनि फिर एक बार याद आया जब मैं अपने हिप्रोटिक प्रभाव में इस आश्चर्यमयी

नारी के विद्रोही जिप्सा-हृदय को बाधकर अपनी ओर खींचने में सफलता पायी थी। तब की मनिया म और आज की मनिया म आकाश-गताल का जो अन्तर आ गया था उसकी याह मापन की गति मुझ में नहीं थी।

३४६

भाभी जान सहज स्निग्ध भाव से मृदु मृदु मुसकान से मेरी ओर देखते हुए कहा—“क्षमा करना लाला, मेरे पागलपन को। उस समय मुझे जान क्या हा गया था। मैं अपन को रोक न पायी।

उनकी बात से मेरी भावमग्नता भग हुई। मैंने कहा—‘नहीं भाभी, उसमें पागलपन की कोई बात नहीं थी। वह एक साधारण-नी बात थी। अब उठो हम लोग वहीं घूम आवें। घर में बड़े बड़े अक्सर जी उचट जाता है और अकारण ही घबराहट मासूम होन लगती है। उठा। चलो मनिया तुम भी कपड़े बदल लो।’

भाभी जी चुपचाप उठीं और हम तीनों ऊपर अपने अपने कमरे में जाकर कपड़े बदलन लग।

कपड़े बदल चुकन के बाद जब हम लोग नीचे उतरे तब भाभी जी ने ड्राइवर को पुनारा। वीरेन्द्र छोटी कार ले गया था। बड़ी ह मीटा वाली कार मराज म थी। कुछ देर बाद ड्राइवर उमे ड्राइग-रूम के सामन वाली बरमाती म ले आया। जब हम तीनों पीछे बठ गय तत्र ड्राइवर ने बगला म भाभी नी न पूछा—‘कहाँ जाना होगा?’

‘भील की तरफ चलें, क्यों बहन!’ मनिया से, जो हम दाना के बीच बठी हुई थी, भाभी जी न पूछा।

मनिया ननकाच मुस्कराती हुई वाली—‘मुझे तो इस नयी जाह के चार म कुछ नी पान नहीं है। आप लाग जहाँ ले चलेंगे वही चनी चलूंगी।’

घर म नील की तरफ चनन की ही बात तय हुई।

जब हम लोग भील से लौटकर आय तब पता चला कि वीरेन्द्र अभी तक वापस नहीं आया है। काफी देर तक हम लोग उमका इन्तजार करते रह। अतमभाभी जी ने कहा, "लक्षणा से प्रकट है कि वह आज रात में बहुत देर में लौटेंगे और तब तक उनकी प्रतीक्षा में बठे रहना बकार है। उहाने हम लोगों से आग्रह किया कि हम लोग खाना खा लें और आराम करें। मुझे यद्यपि उनका यह प्रस्ताव नहीं अच्छा, तथापि उनके बार बार आग्रह करने पर मैंने अधिक विरोध करना भी उचित नहीं समझा। मैंने और मनिया ने प्रायः अनिच्छा से थोड़ा बहुत खल लिया। भाभी जी ने हमारा साथ नहीं दिया। वह वीरेन्द्र के लिये ठहरी रही। खाना खाने के बाद भी हम लोग काफी देर तक बठे रह, पर वीरेन्द्र नहीं आया। अतमभाभी जी की आना से हम दोनों अपने कमरे में आराम करने चले गये।

जब हम अपने कमरे में जाकर अपने-अपने पलंग पर लेट गये तब मैं अपने सफरी बग से एक पुस्तक निकाल कर पढ़ने लगा। दिन में काफी सो चुका था, इसलिये नींद नहीं आती थी। मनिया धीरे से आकर मेरे पलंग पर बठ गयी और मेरे बालों पर हाथ फेरती हुई धीरे से बोली— 'मैं एक बात तुमसे पूछना चाहती हूँ।'

पुस्तक आँखा के आगे से हटाकर उसकी ओर देखते हुए मैंने कहा—  
"कहो क्या बात है ?"

"जेठ जी के बारे में आज जो बातें जीजी ने बतायीं उहें मैं ठीक से समझी नहीं। अपने सबंध में जा देगव्यापी रक्तशोषका का साथ देने की बात उहाने बतायी उससे उनका आशय क्या है ? मेरी इच्छा होती है कि अपना सब कुछ लुटाकर सबहारा बन जाऊँ और सब कुछ गँवाया हुई जनता के साथ मिलकर स्वयं अपनी ओर दूसरे सपत्तिगानिया की सपत्ति को जनता में समान रूप से वितरित कर पाऊँ यह बात भी मेरे आगे स्पष्ट नहीं हो पायी है। जिस जाति का हमारा पीढ़ी बार बार द रही थी उसके सम्बन्ध में भी कोई जानकारी मुझे नहीं है।

मैंने कहा—'यह सब समझाने के लिये क्या विस्तृत विवरण



तुम्हें सुनाना होगा। फिर कभी सुनाऊंगा। इस समय आराम करो।' ३५१

'न! अभी समझाओ।' प्रायः बालक की तरह भचलत हुए मनिया न कहा।

मैं उठ बठा। भरसक सन्धेप में और क्यासभव मरल रूप में भावन-वादीय सिद्धान्त की व्याख्या उसके आगे करने का प्रयत्न किया। उसके बाद बताया कि आज की विश्वव्यापी आर्थिक विपन्नता के कारण ससार में सबत्र कभी आशाति मची हुई है और अमनाप छाया है। इस आशाति और अमनाप का दूर करने के लिये एक बहुत बड़ा अंतरराष्ट्रीय दल नगी मूर्खी जनता की और कमविनष्ट और अभाव-ग्रस्त मजदूरा का सपनिगानिया क विरुद्ध विद्राह करने के लिये उकसा रटा है। कलकत्ते में जा उपद्रव प्रनिदिन होत रहने हैं व भी किसी हद तक उमी विद्राह में सम्बन्धित हैं। बीरेन्द्र भी ज्ञानि के पथ पर है।

मैं मानता हूँ कि मैं अपनी बात को ठीक से समझाने में असमर्थ रहा। समझा मरना सम्भव भी नहीं था। पर मनिया अत्यत ध्यान पूर्वक मेरी बातें सुन रही थी। उसके मुख पर एक गहन गभीर छाया घिर छापी थी। लगता था जम वह विद्वज्यापी विनाग के आनन्द विस्फोट की कल्पना में अत्यत चिन्तित हो उठो हो। मन्भवत उतन ही से उमने अपने मन में मारी विद्वज्यापी राजनीतिक और आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में एक विगप धारणा बना ली थी।

एक लवा मीन मरती हुई वह बोली—'क्या इस समस्या के हल का दूसरा बाइ उपाय नहीं है? क्या हिंसा के बिना इसका उचित समाधान संभव नहीं है?'

'जिन दल से बीरेन्द्र सम्बन्धित है वह कई उपद्रवों में विनक्त है। उनमें से एक उपद्रव का यही विश्वास है कि हिंसा के बिना बलाग अपने सदय में एक कदम भी आग नहा बना सकन। हालांकि, जहाँ तक मैं जान पाया हूँ, स्वयं बीरेन्द्र का एका विनाग नहीं है, बाहर से बहुत मले हा कभा-कना उग्र विचार प्रकट कर बठता हा।'

एसे गलत विश्वास का बे लाग क्या अपनाये हुए हैं ? प्रेम और अहिंसा को बे लाग रुकावट क्या मानते हैं ?”

‘इसलिये कि उनकी राय में प्रेम और अहिंसा उस तरह जमी हुई आर्थिक दीवार को भेदने में असमर्थ हैं जिसे कुछ मुट्टी भर लागाने अक्षय कवच की तरह अपने का सुरक्षित कर रखा है—बहुसंख्यक जनता का हर तरह से वंचित करके ।

‘मुझे विश्वास नहीं होता । यह ठीक है कि प्रेम और अहिंसा अपनी प्रारंभिक अवस्था में दुबलता की ही लक्षण सलगते हैं । पर निरंतर प्रयाग करते रहने से अंत में उनकी विजय अनिवाय है । प्रभु ईसा के जीवन का उदाहरण हमारे सामने है ।’

“पर प्रभु ईसा के सिद्धांत की विजय को जितना समय लगा उतने समय तक सत्य, प्रेम और अहिंसा की विजय की प्रतीक्षा करने का धैर्य आज के व्यस्त युग में पीड़ित और विद्रोही जनता में नहीं है ।’ मैं एक सूखी हसी हसते हुए कहा ।

मनिया कुछ क्षणों तक मौन भाव से गभीर चिंता में मग्न-सी मेरी ओर देखती रही । उसके बाद बोली—‘अच्छा एक बात मरी समझ में नहीं आती । जब संसार में चारों ओर आर्थिक विषमता और राजनीतिक अधिकार प्रसारिता के कारण घोर असाताप भावना और अव्यवस्था हुई है, और समार भर गधारण की बाहरी व भीत की आग मुलगा रहा है तब व मुट्टी भर सारी आर्थिक शक्ति बटारकर का इस और आपम

कुछ क्या

५५ ६,

का

९

अपनी गुजर अच्छी तरह कर सकता है। कई दगा पर राज ३५३

नीतिक अधिकार प्राप्त करने की महत्वाकांक्षा रखने वाले महानता के नियम बवल एक माधारण सी कुनिया और छाट-मे बालक का क्षेत्र पर्याप्त है। तब क्या य नाग अपनी गैप मारी मपनि का अधिकाधिक मपनि-मचय की प्रबन्धि का, अपनी क्षत्र प्रनार की याजनाया का सामूहिक हित के लिये त्याग नहीं दत्त ? बलाग पडे लिखे अवश्य हामे और उनकी दृष्टि गति इम हद तक क्षीण नहा हा मक्नी कि विश्व-जनता के त्रमतोप, विश्व व्यवस्था म फनी हुई गडबडी, और विश्व-न्याया विध्वंस की जो विराट याजनाए स्वय उही म द्वारा या उही के वाग्य चल रही हैं उह दव ही न पाते हा। तत्र सद् कुल जानन और समभन पर भी व आधिक और राजनीतिक गति म अधिकाधिक मचय का मोह छाड क्या नहीं पात ? वह क्या नहीं साच पात कि इस माह की स्थिति म ब स्वय मय काल के लिए मुरक्षित नही रह पायेंगे ? यदि व लोग शानिपूर्वक स्थिति की यथायथा पर विचार करे और एत त्ति अपन द्वारा पु तिन अथ और सचित राजनीतिक गति का विश्व-जनता म समान वितरण करन के नियम सम्मिलित रूप मे तयार हा जाय, तब राना रान पृथ्वी पर के नारदीय जीवन की विपमता स्वर्गीय समता म परिणत हा जाय, और मच्चे अर्थों म विश्व-न्याया शानि और व्यवस्था बायम तान व साथ म व स्वय व्यक्तिगत रूप म भी अपनी बनमान स्थिति की अपगा कई गुना अधिक सुख और गानि म रह सकेंगे। इतनी बडी समस्या का इतना सरल समाधान हा मक्न की इस सभावना की और क्या उन लागे का ध्यान नहीं जाता ?

मैं दग रह गया मनिया के उस निपट भानपन से नर हुए किन्तु माप ही मापिक रूप से चुभत हुए समाधान पर। बक्न परिपूर्ण रूप म निश्चय और सम्यता व कुमन्धारा का वाग्निमा से एकदम रति त, सवधा गुड और निर्दोष अत-प्रता से ही इउ प्रकार का मुभाव निक्न मक्नता था। कुल दर तक मैं मक्नपट विन्मय और थदा नरी दृष्टि म उगकी और दक्षता रहा। उमरे बाद एक लकी तीस भरता हुआ दादा— तुमन गम-या का जा हन मुनाया है यह निश्चय ही

बहुत सरल, सुन्दर और सच्चा है मनिया, पर मानव-स्वभाव वडी ही विचित्र अटिलताया से भरा है। जोक की तरह वह वक्रगति से चलता है, यद्यपि जल (सबत्र समतल और समान होता है। उदाहरण के लिये दूर क्या जाती हो, मुझी को लो। मैं निश्चय ही थोड पूँजीपति नहीं हूँ और न मेरे पास इतनी वडी संपत्ति है जो किसी विशेष गणना में आ सकती है। पर कुछ लाग्य रूपयो का ठिनाना मेरे पान अवश्य ही है और यह तुम भी मानोगी कि इतना धन हम दो प्राणियो के निवाह के लिये आवश्यकता में सक्डा—वन्कि हगारो—गुना अधिक है। फिर भी क्या मैं उस उन लाग्य में वितरित करने के निय तयार हूँ जा निपट अभाव से ग्रस्त हूँ और उन अभाव के कारण अत्यत दयनीय दुःखापूण जीवन वितान के लिये बाध्य हूँ ? स्वयं तुमन कभी इस बात के लिए मुझ पर विश्वास जार नहीं डाला भले ही कभी भावुकतावण इस तरह का सुभाव मेरे आग रख दिया हा। जब मुझ जस एक अदन से धनी 'यक्ति का यह हाल है तब जो लो' विराट संपत्ति व सचय की माह माया का स्वाद पा चुके हैं उनसे यह आगा पस की जाय कि व सब सम्मिलित रूप से अपनी सारी सचित अथ शक्ति त्याग दन का निश्चय करें ? व तब तक उन महामाह के फदा से अपने का और दूसरा को जकडे रहूँ जब तक वे यथाय ही कारणों से उह खालन के लिये विवग न हागे। विश्व-यापी वद्ध मानवता की व्यापक मुक्ति सरल उपाया से सहज रूप से कभी सम्भव न हागी यह निश्चित है। गिना बाहर के भीषण आघाता के मानवाय व्यवस्था के गति मदस भत्त टके-दारो की अतरतम चेतना जाग्रत हा सकेगी ऐसी कोई सम्भावना मुझे नहीं दिखाई दती।

तब क्या अत म हिंसात्मक गतिया की—मानवीय आत्मा के भीतर घर की हुई दानवीय प्रवृत्तिया की—विजय होकर ही रहेगी ? ईमा, बुद्ध और गांधी के सत्य, प्रेम और अहिंसा के महामन्त्र युग युग में अरण्य रादन की तरह निष्फल होत रहूँगे ? अत्यन्त हताग भाव से मनिया ' वहा।

' नहा, वे निष्फल नग हागे। पर यन् भी ठीक है कि इतन महान् आदान जल्दी सफल भी नहा हागे। मानवता आज तक की तथ्यावधित

वैज्ञानिक प्रगति के बावजूद कभी शंकाव्यवस्था का पार नहीं कर पायी है। मानव प्रकृति के भीतर महान प्रवृत्तियों

३२५

के जो बीज निहित हैं उनके विकास के लिये सभ्यता के दस हजार वर्षों का काल दस वर्षों के बराबर भी नहीं है। जब तक वे बीज पनपकर विकास की प्रौढावस्था पार नहीं कर लेते तब तक उनका कोई फल देखने में नहीं आया। उसका यह लडकपन अभी और चलता रहेगा, जब तक वह विविध अनुभवा से परिपक्व यौवन की स्थिति प्राप्त नहीं कर लेगी। जानिया को अत्यंत धय से उस महास्थिति की प्रतीक्षा करनी होगी। जब तक वह स्थिति नही आती तब तक पगवरी और महापुरणों को शूली पर चढ़त रहना होगा।”

मनिया तब तक आँखें मूंदकर ध्यानावस्थित हो चुकी थी। अपने आगे आस का एक कल्पित चिह्न बनाकर उसने अत्यन्त भक्ति और श्रद्धा पूर्वक शून्य की ओर दोना हाथ जाड़े। कुछ देर तक वह उन्मी भावमग्न अवस्था में बठी रही। उसके बाद अपने पलंग पर जाकर पीछे से लेट गयी। मैं ऊपर वाली बत्ती बुझा कर अपने पलंग के पास रखा हुआ टेबिल लप जलाया और अपने बकम से एक पुस्तक निकाल कर लेट लेटे पढ़ने लगा। प्रायः पन्द्रह मिनट बाद मेरी आँखें झपके लगी और मैं बत्ती बुझाकर सा गया।

दूसरे दिन तड़के जब मेरी आँखें खुली तब कमरे की बत्ती जली हुई थी। मनिया पश्चिम पर माता मरियम और शूली पर लटके हुए ईसा के दो फ्रेम में बंधे हुए चित्रों की रखपर उनके आगे सिर झुकाये घुटन टेके हुए, हाथ जोड़े ध्यान मग्न बठी थी। मैं तनिक भी विघ्न डालना उचित न समझकर धीरे से दरवाज़ा बदलकर आँखें बंद किये रहा।

काफी देर तक मैं उन्मी अवस्था में लेटा रहा। जब मनिया ने स्वयं, मुझे जगाने के उद्देश्य से, पुकारा तब मैं आँखें खोली। उठकर मैं स्नानादि के लिये चला गया, लौटकर बपट बदलकर जब इतमीनान से अपने कमरे में बठ गया और मनिया से तनिक कायन्तम के सम्बन्ध में बातें करने लगा तब सहसा भाभी जी ने भीतर प्रवेश किया। उनके पीछे एक नोकर एक 'ट्रे' में चाय लिये चला आया। मैं प्रस्ताव किया कि

वीरेन्द्र की भी जगावर झाड़ूग रुम म साथ ही च  
जाय । भाभी जी न बताया कि वीरेन्द्र रात म कुछ  
के साथ प्राय दो बजे लौटकर आया था और काफी देर तक व  
आपस म बहुत धीमी आवाज म—प्राय कानाफूसी के रंग पर-  
वरते रह । उसक बाद जब लडके चल गये तब वह चुपचाप पल  
लेट गया । मुश्किल से दा घटे सा पाया होगा कि उठकर हाथ मुह  
वह फिर बाहर निकल गया । भाभी जी स केवल इतना ही कह ग  
वह किसी आवश्यक काम स जा रहा है वारह बजे तक लौटेगा ।

हम तीना वहीं पर चाय पीत बठ गये । चाय पीत हुए भाभी  
उदास भाव से कहा— इधर कुछ दिना म उनका यहा रुम रहत  
बल सुबह १ जान उह कस मेरे साथ चलकर भील की सर कर  
अवकाश मिल गया ।

मैं चुपचाप चाय पीता रहा । मनिया भी कुछ न बोली । वार  
अनुपस्थिति म मन कुछ भारी भारी सा लग रहा था ।

चाय पी चुकन के बाद मैं मनिया का भाभी जी के साथ छ  
अकेला, निरुद्ध्य भाव स निकल पडा । यमा घोर ट्रामा का  
पकडना हुआ वालीगज स भवानीपुर, वहाँ स धमतला, वहा स  
क्यावर और फिर श्यामबाजार तक जा पहुँचा । प्रत्येक स्थान पर  
वर या तो किसी पाक म कुछ समय के लिये विराम कर सता स  
दूर तक फुटपाथ पर पदल चलकर गहर के व्यस्त जीवन का प्रव  
करन लगता । लौटत हुए बालोज स्ववापर म पुस्तका की एक दुन  
पता गया और मनिया क आग्रह के अनुसार कुछ पुस्तकें मरींगी ।  
सभी पुस्तकें विन्व-माननाप्रा से सम्बन्धित थी । कुछ तो गांधीवादी  
कोल स लिगी गयी थी और कुछ माकमवादी दृष्टिकाल स ।  
लौटकर घर पहुँचा और मनिया के हाथ म सारा बडल रख नि  
उसन तत्काल उसे खालकर एक बार सभी पुस्तका की उन्ड पु  
रखा, उसक बाद एक विद्यय पुस्तक को चुावर उमी क्षण बटे न  
न पढ़न लग गयी ।

तब म मनिया न नियमित रूप से उन पुस्तका का अध्ययन

कर लिया। सुबह दिन में, सध्या को रात में, जब भी उसे  
 श्रवकाग मिलना वह पढती ही रहती। मैं भग्मक उसके  
 अध्ययन में बाधा न पडने दना। धीरे धीरे उन पुस्तकों में उसकी दिल-  
 चस्पी इस हद तक बढ़ती चली गयी कि सध्या का भी वह बाहर निक-  
 लना नहीं चाहती थी। दो एक दिन मैं हठ पूर्वक उसे मन्ना को बाहर  
 घुमाना गया, पर बाद में जब उसका घर ही पर अध्ययन करने का  
 हठ बढ़ना गया तब मैं भी आग्रह करना छोड़ दिया।

३५७

उधर गीरद्वीप का यह हाल था कि २४ घंटा में प्रायः १८ घंटे वह  
 घर में बाहर रहता था। पहले दिन वह कुछ घंटा का समय मुझे वैसे  
 दे पाया, इसी बात पर मुझे आश्चर्य मान लगा। इसका एक कारण  
 सामान्य यह था कि अपने मन में भरी पडी जिन भावनाओं और विचारों  
 को वह खुलकर भाभी जी के आगे भी ठोक स-सक्त नहीं कर पाता था  
 उहूँ किन्हीं ऐसे निरन्तर व्यक्ति के आगे खालकर रखने की इच्छा उसके  
 मन में बड़ दिना से गौर मार रही थी जो उसकी मनावेदना के प्रति  
 सहृदय हान के साथ ही उसके विचारों का समझ भी सकता था। जो  
 भी हाँ दूमर दिन से उमन फिर अपना कोई विचार मेरे आगे प्रकट नहीं  
 किया। उमने लिये श्रवकाग ही जस नहीं मिलता था। सुबह उठते ही  
 वह चल दना था। किस समय लौटकर आयगा, उसका कोई ठिकाना  
 नहीं था। बारह एक, और कभी-कभी दो भी बज जात थे। इसलिये  
 उमन साथ खाना खाने के लिये ठहरे रहना हम लगा के लिये प्रायः  
 अनभव हो उठा था। आकर जन्दी से दा कीर मुह में डालकर दा एक  
 साधारण बातें भाभी जी के साथ करके वह फिर हडबडी के साथ बार  
 में बटनर चल दना था। यहाँ जाता था और क्यों, इसका पता लगाना  
 प्रायः अनभव था।

इस प्रकार वीरेन्द्र अपने गुप्त काय चला म चस्त  
था और मनिया अपने अध्ययन में। फलत इच्छा

से हो या अनिच्छा से, गोभना भाभी का और मेरा  
संपर्क बढ़ता चला गया। महा तक कि सध्या को भी अक्सर मुझे उनके  
साथ अकेले घूमने को जाना पड़ता था।

प्रारंभ में कुछ दिनों तक माय भ्रमण के समय मनिया के साथ न  
रहने से मुझे बड़ी खिन्नता का अनुभव होता था पर बाद में धीरे धीरे  
उसकी अनुपस्थिति की आदत भी पड़ने लगी। वस भाभी का निकट  
संपर्क मुझे पहले ही से अच्छा ही लगता था। उनका मुझ की सुंदरता में  
सब समय जा एक ताजगी रहती थी वह मुझे बहुत प्रभावित करती थी।  
घनी काली बरोनियो से आवृत्त अपनी बड़ी-बड़ी आँखा की भाव विह्वल  
दृष्टि से जो बिजली की-सी चंचल प्रकाश देता शायद न चाहने पर भी,  
वह मेरे प्रति फँसता रहती थी उससे कुछ दिना तक मैं सहमा सा रहा।  
बार बार उस त्रिजली से सामना होने पर मैं अपनी चिलमिलाती हुई  
आँखा को फेर देता था और इस प्रकार उसका प्रभाव से बचने की  
काशिश करता था। पर धीरे धीरे जब आत्त बनती चली गयी तब मैं  
ढिंढाई के साथ उस विद्युत् दृष्टि का सामना करने लगा और वह मुझे  
अच्छी लगने लगी।

पर कई लोगों से जानने का प्रयत्न करने पर भी मैं यह न जान सका  
कि भाभी उस अथ में किसी भी हद तक मग्न प्रभावित हैं और मेरे प्रति  
आकर्षित हैं जिस रूप में वीरेन्द्र के व्यक्तित्व का प्रभाव उनके जीवन पर  
पड़ा था। यह स्पष्ट था कि मेरे प्रति उनके मन में एक सहज त्रिबास  
का भाव धर निय हुआ था और मैं वीरेन्द्र से वर्षों पहला से घनिष्ठ भाव  
भाव में बंधा हुआ हान के कारण ही इतनी गीघ्रता में उनकी आत्मा  
के निकट आ पाया था। पर हम दोनों की आत्मा की निकटता कभी  
कि-हीं भी परिस्थितियों में अथवा रूप धारण कर सकता है हमारी  
कोई कल्पना न मेरे सचत मन में एक क्षण के लिये भी कभी जगती  
थी न उनके मन में जगने की ही कोई सम्भावना दिखाई  
देती थी।



पर इतना मैं जान गया कि शाभना भाभी भूलत कवि ३५६  
हैं। उनके स्वभाव की कायात्मकता केवल उनके सुंदर मुख

की सृज स्निग्ध सरसता और सुकुमार भावाभिव्यक्ति के द्वारा ही प्रकट नहीं जानी थी। वरिष्ठ उनके उठन बैठन, चलन फिरने, बोलन चलने की प्रत्येक छाटी से छोटी क्रिया द्वारा भी अनायास ही प्रस्फुटित होनी रहती थी। उनकी बाहरी और भीतरी प्रकृति की इस कायमयता का भाव मुझे अपनी अतः प्रज्ञा द्वारा उनके प्रथम दर्शन के प्रथम क्षण में ही हो गया था—जब बालीगज की भील पर अध्वानक वीरेन्द्र से मेरी भेंट हुई थी और उसकी 'कार' पर मैंने उह बैठे देखा था। मेरी अतः प्रज्ञा ने मुझे ठगा नहीं था, इसका प्रमाण मुझे त्याग्यो अधिकाधिक मिलते गये ज्यों ज्यों भाभी के निवृत्त स निवृत्तर सपथ में मैं आता गया।

एक दिन मया को जब भाभी और मैं 'कार' पर बैठे हुए भील के चारों ओर चक्कर लगा रहे थे तब चारों ओर पूरणप्राप्त चंद्रमा की स्पष्ट चिदनी छिटक रही थी। भील पर उठन और गिरन वाली हिलारों टूट टूटकर आनाक रक्षात्रा के रूप में बिखर बिखर पड़ती थी। भाभी मौन भाव में भारी बगल में बठी हुई थी। सहसा जस उन्माद ध्यान भंग हुआ और उन्होंने प्रस्ताव किया कि नाव पर भील की तरफ की जाय। उनकी इस इच्छा में यद्यपि अस्वाभाविकता का लक्षण भी नहीं था, तथापि मुझे उसकी आवृत्ति ने क्षण भर के लिए अस्मिन्मूलना कर लिया। पर दूसरे ही क्षण मैं संभल गया। शोकर न बार रोकी और हम लाग उतर-बर नावा के अट्टे पर गये। बाद में पता चला कि केवल बलय के सदस्य को ही नाव मिल सकती है। भाभी ने बताया कि वह और वीरेन्द्र उसके नियमित सदस्य हैं। यद्यपि उम सदस्यता से वे वष में केवल एक ही आष वार लाभ उठा पाते हैं। कुछ समय यह प्रमाणित करने में बीत गया कि हम लोग नाव पर सक्ने के अधिकारी हैं या नहीं। कलव के एक परिचित सदस्य की मध्यस्थता से अतः हमें एक नाव मिल गयी, हम दाना उम पर बैठ गये।

भील का चारों ओर स घेरन वाली सड़क पर जलनी हुई बलिया की कतार का सम्मिलित प्रतिदिम्ब, नाव के दीर्घों का दृशाक दृशाक साद,

रूपहली लहरा की एक दूसर को आलिगनपाश म बद्ध करने की आतुलता सब मिलकर जीवन के एक दूसर ही स्वरूप का मेरी—और गायद भाभी की भी—आखो के आग रख रहे थे। ज्यो ज्या नाव आगे बढ़ती गयी त्यों त्यों किनारे पर प्रतिबिम्बित कृत्रिम प्रकाश हटता चला गया और बिखरी हुई बिगुल रूपहली माया प्राणा के तारा का नय नय न्वराघाता से भट्टत करन लगी ।

सहसा अदृश्ट कलकठ स भाभी बोल उठी— कितनी सुदर रात है !

उनका भावमग्नता का छुतहा प्रभाव मुझ पर भी पडा । मैं भी जीवनानन्द की स्वग और मत्प व्यापी लहरी-लीला दल-दलकर भील की उद्वेलित तरंगा की तरह ही पुलक विह्वल होने लगा । लगता था कि जीवन की ममस्त विच्छिन्न और विखरी कडिया उस एक भाव म समाहित होकर जुडती जा रही हैं ।

‘सचमुच बहुत सुदर है । मैंने कहा ‘आज वर्षों बाद मुझे लग रहा है कि जीवन म अभी तक कुछ भी पुराना नहीं पडा है । सब-कुछ नया है सबत्र ताजगी है ।”

भाभी चुप रही । कुछ देर तक वह भाव विभोर दशा म चक्रेरी की तरह पूरव की आर स स्तिग्ध, उज्ज्वल हास से पृथ्वी के निवासियो पर आगीर्वादि विखरन वाले चन्द्रमा की ओर एकटक देखती रही । उसके बाद एक लम्बी उसांस भरती हुई बोला— अरुदा लाना, यह सब क्या धोखा है कवन सपना है ?

“क्या ? अनमने भाव स मैंने पूछा ।

“यही सब— विश्व क कण-कण म लहराती हुई अप्रुव सौन्द्य-तरंगों, चेतना के अणु अणु म नाचने वाली फेनिल स्वन्निल हिलारों । इन सबका मानव-जीवन स क्या सचमुच कोई सम्बन्ध नहीं है, जसा कि जीवन की मयापना पर जोर देने वाले लोग कहा करत हैं ? सत्य जो कुछ है वह केवल जीवन की हाय गाय म, परम्पर विराधी स्वार्थों के हिंसात्मक मघप म और राजनीतिक बूट-चत्रों के दाँव पचों म ?

‘जीवन की मयापना पर जोर देने वाले लोगों से तुम्हारा इगित

ठीक किन धार ह यह मर जाती स्पष्ट न होत पर भी प्रती ३६१

में अवश्य जानता है कि इस तरह का लक्ष उपस्थित करने  
वाल मूर्खों की दुनिया में कभी नहीं है। पर साथ ही यह बात भी हमें  
नहीं भुलानी होगी कि जीवन का यथार्थता पर महत्व को ध्यान में रख  
वाल कुछ एन लो भी इस मयार में है या इस कोर यथायथा को इन-  
नान के बावजूद हम स्वतः स्फुट मौन्दन की रहस्यान्त अनुभूति को हमने  
उपमा की दृष्टि से नहीं दखत और न इस गीत मद्रव ही प्रत्यन करत  
है । ”

“सुम्हें वा मानुम हा गीत कि प्राय के मानवकी भाँति गीत-  
किमी भा सामाजिक कल्याण की मयाग मनोवृत्ति बहक शक्य प्रत्यन  
निया करत है और कवन जन-शक्ति उगतने वाले साहित्य वा गीत मद्रव  
दते हैं। जिस स्वजनमयी अनुभूति से मैं हम समय अनिष्टन वा जी है  
वह उतना दृष्टि म कवन बूबुवा विज्ञान है। उनके मत से इस प्रती  
की अनुभूति मून जावन स किशा भी प्रचार सम्बन्धित नहीं है, बल्कि  
बाह्य सायिक कारणा से उत्पन्न एन विरोध वा वा एक लिये शिष्ट  
मन स्थिति का परिचायक है ।

शानता नामी का यह तार्किक रूप मुझे पकड़न नया था रहा था,  
जिससे मर भीतर हम वा बढि ही हो रहा था ।

“मैं इस मत का अनुयायी नहूँ हूँ” मैंने कहा, ‘पर साथ ही यह  
बात आपका प्रती है, भाभी ! जीवन की यथायथा के प्रति स्पष्ट जिज्ञा  
मनापियों व सम्बन्ध में मैंने अपनी आपका बताया कि व मानव ही मनु-  
मया प्रवृत्ति और रहस्यमय अनुभूति व प्रति वनिक ना उदासीन नहीं  
है, उनका विद्वान्त है कि सामाजिक अनुभूतियों के मून शानों वा उन्मुक्त  
करन क पहले यथाय जावन की विकट विषमताओं का निवारण अत्र-  
व्यक्त है। तभी तब मानव सम मात्र न न्य विकसानी मौन्दन के अन्त  
रहस्यताक म उन्मुक्त लक्ष सुकन वा सुविधा और अवगाण वा सुकने  
वा भीतरा चेतना-लाक स उमट कर बाहरी चेतना-गन्तु को छाता रखा  
है और बाह्य चेतना क दायन स नातरी-चेतना मान म कपन  
पना करता रहता है। उनक नियम म् वी-प्राप्तुति वृत्तिम उपायों से

उत्पन्न ब्रजुवा विलास तक ही सीमित नहीं है, बल्कि आदि काल से विश्व-चेतना के मूल में निहित सत्य है।

अवश्य है कि ब्रजुवा समाज ने यथाथ जीवन के क्षेत्र में गतादिवा के सघन व बाद अपने लिए कुछ ऐसी विशय परिस्थितियाँ उत्पन्न कर ली हैं जिनके फलस्वरूप उसे उस मूल सौंदर्य चेतना का अनुभव करने में अपेक्षाकृत अधिक सुविधाएँ प्राप्त हो गयी हैं। पर जिन वर्गों का यथाथ की चक्की में दिन रात बवल पिसते ही रहना होता है उनके लिये इस विनोद रसानुभूति के द्वार अभी तक एकदम बन्द पड़े हुए हैं। इसलिये जो सच्च तत्त्वार्थ हैं उनका यह कहना है कि यथाथ जीवन के विकास को सामूहिक रूप से ऐसे स्तर तक पहुँचाना होगा जहाँ सभी वर्गों का सम सुविधाएँ प्राप्त हों जिनसे सबका उस सौंदर्य-चेतना के अनुभव के लिए समान अवसर मिल सके। यही कारण है कि वे पहले उस सामूहिक सम स्थिति को लाने पर जोर देते हैं। हम स्थिति के बिना शोषित वर्गों को तो स्वयं अभी इस सौंदर्य चेतना के रुद्ध द्वारा का अपना लिये लाल पाया न हमसे को—आप और हम जैसे लोगों को—उसके पास उप योग से लाभान्वित होने देना चाहेंगे। प्रत्यक्ष ही स्वयं न सीजिये कि आप और मैं इस समय उस मूल सौंदर्यानुभूति का आभाम पान पर भी उत्तम प्रगतियाँ मग्न नहीं हो पा रहे हैं। यदि हम लोग उसमें पूर्णतया मग्न हुए हों तो उसने सम्बन्ध में इस प्रकार तक न करते बवत उमका अनुभव ही करते। वास्तविकता यह है कि आपके मेरे और हमारे ही वर्ग के हमारे यत्तियाँ के भीतर यह ग्लानि अज्ञात में घर विद्य हए है कि विगुद्ध आनन्द और अवलुप सौन्दर्य की इस अनुभूति में दिव्य जनता की एक बन्त बड़ी सभ्या को वृत्रिम और अस्वाभाविक रूप में मगठिन उपायाँ द्वारा बचित किया गया है। यह ग्लानि हम लोगों को जान मया अनजान में सब समय बचाटती रहती है और उस दिव्य अनुभूति के पूर्ण उपभा में विघ्न डालनी रहती है।”

इठलाती, परस्पर भठलेलियाँ करती हुई चादिनी से धुली लहरें नट सट बालाभा की तरह आँख मिचौनी खेल रही थीं और फलबन मिल खिल गद में एक-दूसरे को गुदगुदा रती थी।

भाभी जी अपना आवरकोट समेटकर ठीक से बैठ गयीं। हम दाना मीन थे। हमारे चारो ओर जो रूप मांगर लहरा रहा था उत्तम मन के भीतर उमड़ती हुई भाव धाराएँ मिलकर एकाकार हो के लिये आकुन हो रही थी। उस अस्पष्ट आकुलता का केवल अनुभव ही किया जा सकता था, वाणी उनके अनुभव में विघ्न ही डालती। शायद इसी लिये हम दोनों में से किसी का मुह खौनन की प्रवृत्ति नहीं जाना थी। दाँवों के छपाछप-छपाक गद के ताल में ताल मिलाते हुए मन के भी किसी अज्ञात काने में एक मीठा नन्दन उठेनित हा उठता था। मीठी मीठी मर्दों से उत्पन्न हान वाली निहून मन के भीतर बहुत दिना से उपेक्षित तारा को मनमना देती थी। शायद उसी सिहरन के कारण भाभी एक अस्फुट मीत्कार मुह से निकालती हुई फिर एक बार मौन कर गयी। फनस्वल्प उनके आवरकाट का छोर मेरे घुटनों का छू गया।

“धच्छी सर्दी पड रही है।” मैं अत्यन्त धीम स्वर में कहा, भाभी चुप रही।

नाक झाल व बीच में धा पड़ेची, जहाँ तरंगों का हाहाकार मरा स्वर पूरा तीव्रता से कानों में धा रहा था। लट रण था जमे अकूल समुद्र में किसी अनजान लिंगा की धार हमारी जीवन-नीका बड़ी चली जा रही है। ममस्त विद्वान् लुप्तप्राय है। बेचन है, नीच असीम कामना-मांगर का गत गत उच्छ्वसित तरंगों का मन कनराल और उधर अनत गगनज्यापी चान्नी की मूक मुक्कान। बीच में पृथ्वी और आकाश के मध्य अशुभ अमिनार के माक्षी-म्य हैं केवल हम दो प्राणी।

मैं दगी हुई जवान में कहा—“भाभी !”

“नौ ! प्राय होंगे हुए गले से अत्यन्त क्षीण और अस्पष्ट स्वर में भाभी ने उत्तर दिया।

‘मर्दों क्या ज्यादा मासूम हा रही है ?’

“नौ !”

फिर सन्नाटा।

तरंग व भावेग की तीव्रता के कारण ‘अन-अप’ के स्थान पर अथ

'गुड गुड गुडम' का-सा शब्द होने लगा था। तरगावग के उसी बन्ते हुए अनुपात में मन के भीतर उमड़ने वाली धाराएँ भी प्रखरतर हो उठी थी। भाभी का कोट छूने के लिये मेरा हाथ बग़्दन बढ़ा ही था कि उहाने 'उफ !' कहकर एक लम्बी मास भरी। न उहान मेरा हाथ बढ़ने हुए देखा था न मेरी उँगनियाँ उनक प्रावर काट का स्पश कर पायी थीं। पर ठीक ऐसे क्षण पर उनके मुह से 'उफ !' निकला कि लगता था जैसे वह मन की आँखा स सब कुछ दख चुकी है और स्पश का अनुभव भी कर चुकी है। मैंने सहम कर हाथ पीछे का हटा लिया।

जब नाव भील क दूसर छार के निकट पहुँची तब किनारे पर खड़े नवयुवका के एक दल के अट्टहास क गद् से भाभी का ध्यान भग हुआ एमा लगा।

"कितने प्रमत्त हैं य सब लाग !" भाभी न अस्पष्ट स्वर म कहा।

आज की रात ही ऐसी है कि रोता हुआ मन भी प्रसन्न हुए बिना नहीं रह सकता और हँसता हुआ मन भी निमी अजानी मीठी ध्याकुलता म राय बिना नहीं रह सकता।' कहते हुए मैं स्वय अनुभव करन लगा कि मरी इतनी दर तक की भाव मग्नता भग हाकर 'यग के रूप म अपन को मिटाने लगी है।

नाव लोट खली थी। भाभी न भरी वात का कोई उत्तर नहा दिया। फिर कुछ दर तक सप्ताटा छाया रहा।

सहसा भाभी बाल उठा— 'अच्छा साता, कभी बहन के साथ भी नाय म बठने का सुयोग तुम्हें मिला है ?

'नहीं, क्या ?

'मा ही पूछ रही थी। अच्छा बहन जितनी भली और भाली है

उनकी ही सुखी भी है, यह मानना होगा। क्यों ? तुम्हारी  
क्या राय है ?

३६५

उनके उस आकस्मिक प्रश्न के भीतर कोई उद्देश्य निहित है या नहीं  
मेरा समझ में नहीं आ रहा था।

‘सुखी है या नहीं, यह तो उसी से पूछने पर मालूम हो सकेगा।’  
मैंने उदासीनता का भाव जताते हुए कहा।

‘अच्छा, भाली तो है ? इतना तो तुम मानोगे ?’

‘भोली का अर्थ यदि मूर्ख या अनजान है, तो मैं यह मानने को  
तयार नहीं हूँ।

‘उसके मूर्ख हान की बात तो मैंने कही, न उसकी मूर्खता के  
सम्प्रयम कोई अनुभव ही अभी तक मुझे हुआ है। शायद वह ही  
सकता है। पर मेरा आशय था उसके स्वभाव की सरलता से। हम  
लागो का उसने बिना तनिक भी आपत्ति जताये चादनी में नौका विहार  
करने की छुली छूट दे रखी है। तनिक भी ईर्ष्या का भाव उसके मन में  
नहीं जगा, न तनिक भी मदेह किसी प्रकार का उसे हुआ। इसे क्या तुम  
उसके मरल स्वभाव का परिचायक नहीं मानते ?’

नाभी की धातु का यह ढग आज बिलकुल नया था। जिस बात की  
जवाब किस ढग से करके किस प्रकार की बात परीक्ष रूप से मुभायी जा  
सकती है इस जला में नारी भाग की सहज निपुणता से मैं थोड़ा प्रहृत  
परिचित पत्थर ही में था। इसलिये मैंने कुछ सचेत हो जाने का प्रयत्न  
किया—‘मैंने आशय से कि न जान उनकी किस बात की लपट में आकर  
मैं क्या कहूँ बूढ़।

मैंने कहा—‘यदि स्वभाव की सरलता का अर्थ आप हृदय की उदा-  
सता मानें तो मैं आपका बात से सहमत हो सकता हूँ पर मैं उसे  
अनजान किसी भी हानत में नहीं मानूँगा। मनिया ने हम लागो को  
दुःख घूमने फिरन का जो छुली छूट दे रखी है वह इसलिये नहीं कि वह  
इस मनावना के प्रति धार्मिक बंद किये हुए है कि हमारे इस एकानिष्ठ  
दुःखोपन के पलक्ष्य में हम दोनों के बीच घनिष्ठता आवश्यकता से बहुत  
अधिक बढ़ सकता है। वहाँ तक मैं उस जानता हूँ, मुझे पूरा विश्वास है

कि वह इस सभावना से तनिक भी अपरिचित नहीं है पर जानत हुए भी उसने इस घनिष्ठता के बढने में कोई रुकावट नहीं डाली, इसका अर्थ मैं तो यही समझता हूँ कि मानवीय दुबलताओं के प्रति उसके मन में अनंत क्षमा और सहनशीलता का भाव भरा है, जो केवल एक सच्ची इसाइ नारी में ही संभव है।

‘तुम क्या सचमुच उसे इतना महान मानते हो लाला, या बन रहे हो।’

भाभी के इस प्रश्न के भीतर तीसरे विद्रूप की सभावना बहुत अधिक थी। पर उनके स्वर से उसका तनिक भी आभास नहीं भल-कता था। फिर भी उनके प्रश्न के ढंग से मेरा आवेग पूरा मात्रा में उभर उठा।

मैंने कहा— ‘मैं शपथ खाकर कह सकता हूँ भाभी, कि मैं उसे सचमुच महान मानता हूँ। वह सच्च अर्थों में ईसाइ है। इसा की आत्मा में निहित आत्म-बलिदान की प्रवृत्ति, पीड़ितों के प्रति आंतरिक समवेदना, पापियों के प्रति करुणा और दुबलों के प्रति क्षमा भावना—सब गुण उसके भीतर वतमान हैं। भविष्य की बात मैं नहीं कह सकता। न जाने कब किस घटने से, या जीवन की किन कठोर परिस्थितियों से उसकी मानसिकता में अंतर आ जाय, यह कोई नहीं जान सकता। आखिर वह भी मनुष्य ही है। पर आज तक उसका स्वभाव की जो विशेषताएँ मेरे सामने आयी हैं उन्हें देखते हुए मैं दृढ़ता के साथ कह सकता हूँ कि उसका आध्यात्मिक स्तर साधारण मनुष्यों से बहुत ऊपर उठा हुआ है।

भाभी कुछ क्षण तक धुप रही, जैसे मेरी बात को ठीक से समझने का प्रयास कर रही हो। उसके बाद बाली— पर किसी को पापी या दुबल मानने का क्या अधिकार किसी को हो सकता है? क्या पाप है और क्या दुबलता, इनका निर्णय काइ मनुष्य कर सकता है? यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को पापी या दुबल मानकर उसका प्रति करुणा या क्षमा का भाव प्रकट करता है तो इनका अर्थ यह है कि वह अपने व्यक्तित्व का दूसरा क व्यक्ति को ऊँचा समझता है और इस प्रकार अपने अहंभाव का (चाहे वह आध्यात्मिक अहं ही क्या न हो)



तुष्ट करता है। इस प्रवृत्ति को तुम महान् मान सकते हो, पर ३६७  
 मैं ता उसकी कायल नहीं हूँ।”

भाभी के स्वर में आश्रय का तीखापन, शायद उनके न चाहने पर भी, स्पष्ट भलक उठा। मैं स्तब्ध था। उनका एक और विलकुल ही नया रूप मेरे आग उभर उठा। मुझे याद आया कि वह वीर-द्र की पत्नी हैं, जो अपन का साम्प्रदायी माता है। नातिकारी कारवाइया में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेने के सम्बन्ध में वीर-द्र के विचारों से उनका विचारों का मेल भले ही न बढता है, पर नीति अनिति, पाप पुण्य, क्षमा और कर्णा के सम्बन्ध में स्पष्ट ही वीर-द्र से उनका मतव्यभिन्न नहीं था। उनकी वान का क्या उत्तर दूँ, मेरी समझ में नहीं आया। वास्तविकता यह थी कि इस दृष्टि से मैंने कभी विचार नहीं किया था। और सबसे बड़ी बात यह थी कि भाभी के तक में सार था, उसे या ही नहीं उढाया जा सकता था। पर मनिया के सम्बन्ध में यह सोचना भी मुझे असंगत लग रहा था कि वह साधारण मनुष्या से किसी भी रूप में अपन का ऊँचा उठा हुआ समझती है। वस मूढम मनोवैज्ञानिक विरलेपण से कुछ भा प्रमाणित कर सकना सम्भव था। इसलिय मैं कुछ सहम गया। पर मनिया के प्रति परोक्ष रूप से किये गये इस प्रकार के आक्षेप के प्रति मैं निरुत्तर भी नहीं रहना चाहता था।

मैंने कहा— ‘यह अनुमान आपने कस लगा लिया कि मनिया पापिया और दुवना से अपने को अनग मानकर बहुत ऊँचे से उनके प्रति कर्णा और क्षमा की भावना प्रदर्शित करना चाहती है? जहाँ तक मेरा अनुभव है दुखलना में अपन को उसके साथ पाकर ही उसके मन में दूसरों के प्रति समवेतना और समग्रनुभूति उमडती रहती है। क्षमा कर्णा और उदारता में मद हैं मनिया के नहीं। मेरा तो यही विश्वास है कि यह अपन का किसी भी तनिक भी ऊँच स्तर पर नहीं मानती, बकि उसका मन मय समय सबके ही समान स्तर पर विचरण करता रहता है। इसी नियम वह सबके सुख में समान सुखी, और दुख में समान दुखी अनुभव करता है। विचारों के अन्तर दूसरों के प्रति न्याय करने की भावना उनके मन में नहीं जगती। किसी अपराधी के प्रति जब वह

३६८ आत्मीयता का अनुभव करती है तब स्वयं अपन को अपराधीनी महसूस करके ही वह ऐसा कर पाती है। दूसरा के प्रति उसकी अनुभूति में एक अंतर अवश्य है, यद्यपि स्वयं उस अंतर से परिचित नहीं है। वह यह कि ससार में अधिक-यक्ति ऐसे पाये जाते हैं—चाहे उका दृष्टिकोण सद्भाविक रूप से कितना ही प्रगतिशील क्या न हो—जा ठीक उसी तरह के अपराधा-लिय दूसरा को क्षमा नहीं कर पाते जिन्हें वे स्वयं करते रहते हैं अपने अपराधा को वे अपराध नहीं मानते न अपनी दुबलता को दुबलता। पर दूसरों में इन्हीं प्रवृत्तियों का पावर वे अमहानशील उठते हैं। पर मरिया इस सब में सब समय सचेत रहती है कि उस दूसरों की तरह ही मानवीय दुबलताएँ बतमान हैं इमलिये किसी के प्रति उसके मन में न कोई शिकायत है न विद्वेष, अमहानशीलता।'

भाभी चुप रही। उहोउ मेरी बात पूरे मन से सुनी थी या न इसमें सन्देह है। वह चकोरी की-सी तन्मयता से ऊपर पूणचन्द्र के उज्वले गाले की ओर देख रही थी।

तुम ठीक बह रहे हो लाला। पर तुम चाह जो भी कहो, तुम्हारे मनिया सचमुच बहुत सुखी है। उसने भीतर इस तरह का कोई भी दर्द नहीं है।'

'इसका कारण यह है कि वह उस पीड़ित और दलित वर्ग के बीच में जीवन के प्राणों में उतरी है और उसी वर्ग की ग्लानि-हीन अनुभूतियों का लवर उस प्राणों से सीढ़ी-दर सीढ़ी ऊपर को उठती चला गयी है। इमलिये जिस जीवनानन्द का क्षणिक अनुभव हम लोग इस समय आधे हृदय में और आधी बुद्धि में कर रहे हैं वह उसका अनुभव सब समय परिपूर्ण—अविभाजित—आत्मा से करती रहती है। उसके नियम सब समय सब कुछ लाजा है, सब कुछ नया है धार प्रत्येक नया अनुभव नये रसियात्मक आनन्द से भरा है।'

कुछ क्षण चुप रहकर भाभी ने कहा—'सचमुच बड़ी ही

सीमाभ्यशालिनी है वह।" कहते हुए उनके स्वर में एक ३६६  
गद्गद् रमविह्वलता टपक रही थी।

'पर इमका अर्थ यह न लगाइयगा, भाभी, कि उसके दिन सदा परि  
पूरण मुझ में बीते हैं। जीवन के जैसे ममभेदी कठोर और कठवे अनुभव  
उसे हो चुके हैं उसकी कल्पना न आप कर सकती हैं, न मैं ही—तथ्या से  
परिचित हान पर भी—ठीक से कर सकता हूँ।

"जैसे ?"

मैंने मझेप में मनिया के जीवन का इतिहास—मुझमें मिलन से पहले  
तक का—भाभी को सुना दिया। मैंने अनुमान लगाया कि भाभी सुनकर  
एक अवगुणीय आतक की अनुभूति में मिहर उठी। इन अनुमान का एक  
कारण यह भी था कि जब मैं मनिया की माँ द्वारा उसके पिता की हत्या  
था किस्सा सुना रहा था तब भाभी अपने स्थान से सरक कर मेरे एक-  
दम समीप आकर बैठ गयी। यहाँ तक कि उन्होंने अपना बायाँ हाथ मेरी  
पीठ पर रख दिया। उसके बाद मैंने मनिया से अपने प्रथम मिलन से लेकर  
विनाह तक का किस्सा सुनाना आरम्भ किया। जब नाथ किनारे पर जा  
लगी तब किस्सा बीच ही में रोक देना पड़ा।

नाथ में उतरकर जब हम लोग ऊपर चल आये तब भाभी ने प्रस्ताव  
किया कि वही एकांत में किसी बेंच पर बैठकर दास्तान पूरा किया  
जाय। फलतः हम लोग किसी बेंच की खोज में चक्कर लगाते लगे।  
काफी दूर तक चलने के बाद एक खाली बेंच मिल पाया। हम दोनों उसी  
पर बैठ गये। मेरा उत्साह तब तक ठंडा पड़ चुका था। पर भाभी ने  
अत्यंत आग्रह भरे स्वर में कहा—“हाँ, ता फिर क्या हुआ। फलतः  
मुझे सुनाना ही पड़ा। और जब सुनाना आरम्भ किया तब पूरा विस्तार  
के साथ—मनिया की एक-एक बात और एक-एक अनुभूति का विस्तार  
करते हुए—सुनाया। मेरे निकट आन स और सिन्धिया के नाम में रहने  
से उनकी अतन्विनाशा का विनाश किम रूप में होता चला गया उनके  
विचारों में कैसे परिवर्तन और विवर्तन हान चले गये, इमका वर्णन भी  
मैं विस्तारपूर्वक साथ करता चला गया।

साथ-साथ मुझे सुनने के बाद भाभी ने आवगुणीय चला अपनी हथेली

मे मेरी बायी हथेली पकड़ ली और फिर तत्काल ही अपना हाथ हटाते हुए एक लकी सास भरकर कहा— 'लाला, तुम सबकुछ महान् हो !'

मैं उनका दान सुनी अनसुनी करके कहा— "मैं बताना यह चाहता था कि मनिया का जीवन का चक्र एसा रहा है कि अतद्वद्धो से वह भी मुक्त नहीं रही है। पर उसके अतद्वद्धा मे और हम लोगो क अतद्वद्धो म बड़ा अंतर है। अपने बूजुवा मस्कारो के कारण हम लाग जिस प्रकार के अतद्वद्धा के शिकार हैं ये हमार जीवन के मूल पथ का ही रुद्ध किय हुए हैं पर मनिया उनमे सबया मुक्त है और इसी तिय ध्यत्तिगत जीवन का बडवे से बडवे अनुभव भी उसके विकास का पथ और गति को रोकने म समय नहीं हैं बाकि उसका पथ को व और अधिक प्रशान्त करने म ही सहायक सिद्ध हा रह हैं।"

"ठीक है !' भाभी ने फिर एक बार लकी सास भरते हुए कहा, "पर एक बात मैं तुम्ह बतानी हूँ लाला। तुम जानकर या अनजान म बूजुवा मस्कारा क जो इजेक्सन उसे देने चले जा रहे हो, उसके परिणाम-स्वरूप उसका विचारा और मनोभावनाओ की परिणति अत म कहीं जाकर हागी, इस सबध म अभी से कुछ नहीं कहा जा सकता है।'

'आपका आशय मैं अभी ठीक से समझा नहीं किस प्रकार के इज्जानो की बात आप कह रही हैं ?

'उत्पाहरण क लिय, उसकी धार्मिक भावना को बढावा देते रहन म तुमन काई बात उठा नहीं रखी है। वह धार्मिक बीज पापपर अत म क्या रूप धारण करेगा, उसकी क्या विचित्र प्रतिक्रिया उसके भीतर अलक्ष्य मे होती जा रही है इस और तुम अभी उदासीन हा पर —

'मरा यह विश्वास है" भाभी की दान काटने हुए मैंने कहा 'कि बूजुवा मस्कारों स रहित उसका मन धार्मिक भावना के भी गुड और स्वस्थ रूप को ही अपनायगा। और यह स्वस्थ धमभावना उस विवृत और सीमित स्वार्थ से दूर ही रहेगी।'

'अभी त्रात चले जाओ, लाला ! अभी स कोई भविष्यवाणी इस

सबष मे न करो," व्यगात्मक ध्वनि से भाभी ने कहा । ३७१

"इसी मिलसिले म एक और बात की और भी तुम्हारा ध्यान खीच दना चाहती हूँ । बुरा न मानना । मुझे तो लगता है कि तुमन अपन व्यक्तिगत स्वाय के लिये उसके भीतर इम धार्मिक भावना को पनपन दिया है । उसने धार्मिक भावना म डूबे रहने का एक प्रत्यक्ष लाभ तुम्हें यकी है कि तुम्हारे प्रति वह बराबर वफादार बनी रहेगी । तुम्हारी अनुपस्थिति म भी 'प्रभु ईसा' के चिन्तन म मग्न रहकर वह भ्रमलेपन का अनुभव नहीं करती, और व्य प्रहार तुम्हारी स्वतन्त्रता म विघ्न नहीं डालती । नहा तो तुम इस बंदर निर्दिचन हाकर किसी दूसरे की पत्नी के साथ रात्रि-भ्रमण और नौका विहार करते हुए घटा के लिय घर से गायब रहने का साहस न करत । एक धार्मिक पत्नी प्राप्त करके तुम बर्हादिक बधन का भी मुक्त उठात हा और स्वतन्त्रता का भी, और उम अगालि सबच हुए हो जिसका कटु अनुभव तुम्हें उस हानन म प्रतिष्ठि हाता रहता जस तुम्हारा विवाह किसी एमी स्त्री से हुआ हाता जा इम तरह धार्मिक भावनाप्राप्त प्राप्त प्राण न हानी और जो नारी के अपिचारा के सत्रष म पूण्यतमा सचत हाती । यह 'प्रभु ईसा' की बड़ी कृपा तुम्हारे ऊपर है ।"

'प्रभु ईसा' का उल्लेख करत हुए भाभी के मुख पर व्यग की भवक स्पष्ट हा उठी । पर मैं चकिन या उनकी टिठाइ के दूर ही रूप पर । 'दूतार की पत्नी के साथ रात्रि भ्रमण और नौका विहार वाली बात वास्तव मे बडो हा तीखी और चुटीली थी । इतनी देर बाद उनके मुह से इम तरह की बात निकलेगी इमकी कल्पना मैंन नहीं की थी । साथ ही एक दूरर दारण से भी मैं तिलमिला उठा था । उनका तीखे व्यग की गहराई म मुझे सबाइ का आभास मिनन लगा था—उम सबाई का जिन इतन दिनों तक मेरा सचन मन मुताय हुए था ।

मैं इम बंदर हनयन हा गया था कि काई उतर ही मर मू से नहीं निरान पाता था । मुझे चुन रहने दखरर भाभी न कावना मुक्त दिया— 'सबच चुन क्या हा जाना ? स्वाकार क्या नहीं करत कि 'प्रभु ईसा' की शिष्य कृपा है तुम पर !'

“हां है !” मैंने सहसा आवेग में आकर कहा, “पर यह बताइये कि वीरेन्द्र पर किसकी कृपा है ? उसे भी तो आपने खुली छूट दे रखी है। जहां तक मैं जानता हूँ उम भी अपनी पत्नी के आग इस बात की जवाबदेही नहीं करनी पड़ती कि वह चौबीस घंटों में अठारह घंटा घर से बायब बयो रहना है। और उसकी पत्नी के सबध में मरा यह विश्वास है कि वह नारी के अधिकारों के सबध में पूणतया सचेत है।”

पलटे में इस प्रकार का जवाब पाने के लिये शायद भाभी तयार नहीं थी। वह भी तश में आ गयी। बोला—“यह ठीक है कि उनकी पत्नी नारी के अधिकारों के सबध में पूणतया सचेत है। यह भी सही है कि उन्हें जवाबदेही नहीं करनी पड़ती। पर इसका कारण यह है कि उनकी पत्नी जानती है कि वह किसी दूसरे की पत्नी के माथ रोमास की बातें बरने के उद्देश्य से बायब नहीं रहते। दूसरी बात यह है कि वह भी अपनी पत्नी से कभी कोई जवाबदेही नहीं चाहते। उन्होंने भी अपनी पत्नी का यथेच्छ विचरण की खुली छूट दे रखी है।”

मैं चकित था। मुझे लगा कि कुछ ही दिन पहले जिस शोभना भाभी का बहणा-वातर रूप में देख चुका था वह आज की भाभी से सबधा भिन्न थी। तब क्या उनका करण रूप कृत्रिम था ? नहीं वह भी इतना ही—बल्कि इससे भी अधिक—सच्चा था, यह मैं शपथपूर्वक कह सकता हूँ। तब क्या उनका नया रूप बनावटी था ? नहीं, वह भी यथाय था। उसमें भी किसी प्रकार की कृत्रिमता का तनिक भी आभास मुझे नहीं दिखायी देता था। उनकी उलटी-सीधी बातों से मेरी बुद्धि चकराने लगी थी।

सहसा मैंने बिना किसी विचार के ही, अपने बांय हाथ से भाभी के दाहिने हाथ की ठथेली पकड़ ली। इसके बाद भावाकुल हाकर मैंने कहा— ‘भाभी आज आप क्या सचमुच मुझमें नाराज हैं ?’

‘नहीं तो ! हाथ हटाने का तनिक भी प्रयत्न न करते हुए भाभी ने स्वर में तनिक कोमलता घोलते हुए कहा।

‘तब आप मुझ पर इम तरह के व्यग कयो कम रही हैं ? इम तरह के कहे उत्तर क्या दे रही हैं ?’ मेरे स्वर से निश्चय ही मेरी विन्नता व्यक्त हो उठी होगी।

से कहा—“मुझे क्षमा करना, लाला । आजकल न तो मेरा चित्त ही स्थिर है न दिमाग ही दुष्ट । किस समय किस कारण से मैं क्या यह बैठती हूँ, बाद में वह स्वयं मुझे याद नहीं रहता । विश्वास मानो, मेरा इरादा न व्यग्न करने का था न किसी भी रूप में तुम्हारा जी दुखान का ।”

माभी की इस बात से पहिली और अधिक जटिल हो उठी । मैं चुप रहा । इसके बाद फिर हम दाना के बीच बौर्दे बान जम नहीं पायी ।

“माभी उठिय दर हो गयी है ” मैंने कहा, “अबले में मनिया का जी धररा रहा हागा ।”

माभी उठ लठी हुई । मेरी ओर एक विचित्र दृष्टि से उल्लान दखा । सुस्पष्ट चाँदनी में उनकी उम दृष्टि की तीक्ष्णता से विजली की तरह मेरे प्राणों में एक जलन की-सी कणन दौड़ गयी ।

“मनिया के अनेकपन के खयाल से तुम सचमुच क्या इतने विवकल हो, लाला ?” मोटर की ओर चलते हुए माभी ने कहा ।

“हाँ !” कहकर मैं फिर चुप हो गया ।

जब हम दोनों माटर में बठ गये, तब एक अनोखी उदामी की-नी अनुमति ने मेरे प्राणों को जमे बफ में भी ठंडे कुहर से छा दिया । मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि केवल भाज की मारी सध्या ही नहीं बल्कि मेरा सारा पिछला जीवन भी एक रहस्यमय भ्रमजाल से ढका रहा है, और जिस दिन यह भ्रमजाल फट जायगा उस दिन अपने जीवन की सारी व्यथता मेरे प्राण सुस्पष्ट हो जायगी ।

पर पहुँचने पर कार से उतरते ही मैं सीधे तेज बरस रहता हुआ ऊपर चला गया । मनिया का कमरा भीतर से बंद था । मैंने उँगला में दरवाजा सदखटाया । दरवाजा खुलत ही मनिया का जा दगन मैंने किय तो मेरा सारा भवसाद पन में काफूर हो गया । अनेक समतमाय हुए चेहरे पर एक एही उहीँ और उल्लसित भाभा भन्क रही थी जिसन मेरे भीतर बढी सधनता से अने हुए कुहर का काढकर एक अशुभ प्रकाश और धौंठा गरमी से सार मन और प्राणों को गुग्गुना दिया । मैं शक्ति का उस आश्चर्यमयी नारी को देखकर जो अनेके में अपने प्राणों

के भीतर स जीवन के मूल आनन्द के बीज-कणों का इस हृद तक विकसित और प्रवागित करने का क्षमता रखती थी कि अपने आम-पान के मार्ग वातावरण का मन दिव्य ग्रामा ने आनन्दित कर दती थी।

“किस ओर तब थ ? अपने म्निग्ध और मनुर मुनरान मुख पर मनकाते हुए मनिया न प्राय पुलक-गन्ध स्वर म पूछा।

‘बन मिया की दीड मसजिद तक !’

किस मसजिद म गय थे ? आन्मा का मसजिद के भीतर जाने देते हैं क्या ?

स्पष्ट ही मरी बान का मनिया न गादिव अथ में प्रणु किया था। मैं ठठाकर हँस पडा। साथ ही मुझे इस बान पर आश्चय हुआ कि इस अत्यन्त प्रचलित लालोक्ति स वह अपरिचित है। मैंन जन उस मका अथ समझाया तब वह स्वय अपनी भूत पर हसन गी।

मैंन पूछा कि वह अकेल म धननी प्रमन्न क्या था। उदा पुस्तक के भीतर स उन आनन्द की अनुभूति प्राप्त हुई है या ‘बान स’ उमन बताया कि दाना बारणों म।

भाभी न हम लागे का दार्शनिक-मम म बुनाया। धीरन्द्र अभी नहीं आया था। पहले भाभी का दगदा बारन्द्र के त्रिय ठडर रहन का था। उन्होंने हम दोनों का अनुमति दे दी थी कि हम नाग का लें क्याकि बारन्द्र का काइ ठिकाना नहीं था कि एक बजे आया था दा बज, पर बाद म मर आग्रह करने और समझान पर कि अनिश्चित मियति म रहकर वह अपना खाना बकार म मिट्टा न करे वहाँ हम लागे क साथ ही बठन क त्रिय राजी हा गया।

जब हम ताना एक टडिल पर खान बटे तथ भाभी न मनिया से कहा— बहन तुम्हें ककते आय इनन दिन हा गय पर तुम एक दिन भी बाहर नहीं निकलीं। एक नये गटर म आयी हा घूमन फिरन देखन-मुनन की काई इच्छा तुम्हार मन म नहीं जगती, यह आश्चय है।

मचमुच ! मुझे स्वय भी इस बात पर आश्चय हाता है औजी, कि क्यों मुझे यहाँ घूमन और शहर की सर करने की इच्छा नहीं



होती। इतने बड़े शहर में पहली बार आयी हूँ। यहाँ ३७५

सभी कुछ मेरे लिये नया है। पर, जाने क्या, मुझे यहाँ का भीड़-भाड़, चहल-पहल, कुछ भी अच्छा नहीं लगता। यही जी चाहता है कि जिन भर भरेले भीतर बैठी रहूँ, दिन भर या ता बाईं अच्छा पुस्तक पढ़ूँ या अच्छी अच्छी बातें सोचूँ या प्रभु का ध्यान करूँ।”

“मुझे तो यदि एक दिन के जिन भी दिन भर घर में बंद रहना पड़े ता मरता ता दम ही पुट जायगा,” भाभी न बहा। “ना भी हो कल तुम्हें हम लोग के साथ बाहर निकलना ही हाता, यह अभी मे कहे देती हूँ।”

“अच्छी बात है,” महज जिनय भाव में मद-मद मुम्बरानी हूइ मनिया बानी, “आपकी जग इच्छा है तब मैं अवश्य चलती।”

यै मोन भाव स मनिया के मुह की ओर लप रहा था और भर गरीब में, मन में और प्राणा में एक अतीविक पुनव निहरन ली रही थी। जा अप्रव अनिवचनीय छाभा एक मग पर भातर रही थी, जगमे जगवा मौस्य लप नयी महिमा ने न्दुभासिन हा रहा था। उम दय लपार में भाव लपद् हा रहा था।

जब हम लाग लाना जा चुक तब मनिया और मैं अपने कमर में घन गम और भाभी भवन कमर में। दा-लीन जिन न बीरद म लपाम मिलता हा नता हा रहा था। इगना मुक्त तु ग था और रात में जगतर भी लपम मिलता चाता था। पर पलों पर लपकर जग एक पुनव हाव में गतर में पन लता तब दूर पृष्ठ तब पट्टेन-न-पट्टेने मगी भनिं भपन लता और मैं पुस्तक मज पर रगतर, कगट बगतर मा गया। मनिया अब साथी यह मैं जान ही न पाया।

दूगरे दिन सध्या को भाभी मनिया और मैं  
'कार' पर बठे तब भाभी ने प्रस्ताव किया कि  
के बीच स होकर चला जाय। चूकि मनिया

शहर नहीं देखा था इसलिये वह चाहती थी कि कलकत्ते के बहिरंग स्व  
का कुछ अभाम उसे मिले। भवानीपुर होकर हम लोग चौ  
पहुँचे। वहाँ एक दुकान के आगे 'कार' रूक्वा कर भाभी हम लोग  
दुकान के भीतर ल गयी। वहाँ श्रृङ्गार प्रसाधन की कुछ चीजें खरीदी  
हम लाग फिर 'कार' पर बठ गये। भाभी न शोफर से बालेज रूक्वा  
की तरफ चलन के लिय बहा।

सीनट हाल के पास जब कार पहुँची तब सहसा एक ऐसा को  
हृय मचा जा गायद कलकत्ते की तत्कालीन स्थिति मे भी असाध  
था। द्रामे और वस्त्रें रूक् गयी थी और उनके यात्रिया म भगदड मच  
थी। तबयुवका का एक दल सम्मिनित कठ से चिल्ला चिल्लाकर  
कह रहा था जा समझ म नही आ पाता था। कुछ ही देर बाद  
पता लगा कि नवयुवको के दल और पुलिस दल के बीच मुठभेड हो  
हे और नवयुवका का दल उत्तेजित हाकर द्रामा म और वस्त्रो म  
लगान के लिय कन्ठिद हो उठा है। हमारी कार अप्रत्यागित रू  
एगी बुरी जगह फँस गयी थी कि न पीछे मोडने के लिये कोई स्थान  
गया था न आगे बढ़ने की सुविधा थी, न दायी और घूम सकनी थी  
बायी धार। चारों ओर युद्ध के स नारो की अस्पष्ट दादावली अत  
भाषण स्वर म कानो म बज रही थी।

सहसा पुलिस का एक आदमी कसे हमारी 'कार' के पास  
पहुँचा मैं जान भी न पाया। वह आत्मरक्षा के लिये पीछे हटता  
वहाँ आया था या किमी को हटाने के लिये मैं वह नहीं सकता। मु  
ता कुछ दखन का अवकाश मिला न कुछ समझन का। पल म एक ल  
हृयक घटना घट गयी। मनिया पीछे की सीट पर बायी ओर बाले  
म बठी थी। अचानक एक दगी बम की तरह की कोई चीज हम  
कार के निचले भाग स आकर टकरायी। विस्फोट के फलस्वरुप  
सुई की तरह के तीखे बग छिटककर कार के भीतर भी चले आ

एक वरुण गायद मनिया के हाथ पर भी जा लगा । मनिया  
“उफ !” भी न कह पायी थी कि उसी क्षण, पलक मारते

३७७

न मारते, तेजाब से भरा एक बल्ब ‘कार’ की खिडकी के आधे खुले  
शीने से आकर टकराया और सहसा मनिया एक ममभेदी, अस्वाभाविक  
स्वर में चीखती हुई दोनों हाथों से मुह ढाँपकर परकटे पम्पी की तरह  
मेरी गोद में आ गिरी । मैं भी प्रायः उसके स्वर में स्वर मिलाता हुआ  
आतंक से चिल्ला उठा । और भाभी तो घाड़ मारकर रा ही पड़ी ।  
स्पष्ट ही हमारी ‘कार’ के पास खड़े पुलिस के आदमी को लक्ष्य करके  
किसी ने वह तेजाब भरा बल्ब फेंका था । यह बात बाद में मेरे अनुमान में  
आयी । उस समय मुझे यह सोचने का अवकाश ही नहीं था कि किसने फका  
और क्या फेंका । उस समय तो मैं खिडकी के बाहर मह करके गला  
फाड़ फाड़ कर केवल यही चिल्लाता रहा कि “एक महिला का मुह तेजाब  
गिरन से जल गया है आप लोग पीछे में हटिये, कार’ को नीटने का  
रास्ता दीजिये । जल्दी ! जल्दी ! नहीं तो उसके मर जाने का खतरा  
है ।” आदि आदि ।

राम्ता मिला, ‘कार’ पीछे की ओर हटी और उसके बाद धीरे धीरे  
भीड़ से अलग होकर बाहर निकल आयी । मैं ‘गोकर’ से सीधे मेडिकल  
कालेज के अस्पताल में ‘कार’ का ले चलने के लिये कहा ।

मैं सोचा था अस्पताल में जाते ही तत्काल कोई डाक्टर उसका  
उपचार आरम्भ कर देगा । पर ऐसा नहीं हुआ । लाल फीते के  
चक्कर से पार होते-होते काफी समय लग गया । मनिया अपना  
जला हुआ मुह साड़ी से ढँके थी और दाँत पीसती हुई अमह्य वेदना  
को पूरी शक्ति से दूराना चाहती थी, पर बीच-बीच में बरबस कराह  
उठती थी । मैं दुःख, अधीरता और अस्पताल वालों की दिनाइ और  
अव्यवस्था पर काय के कारण आप में नहीं था । कभी कन्क को डाँट  
बनाता था कभी उन डाक्टरों और कालेज के छात्रों को जो रूप्टी पर  
आये हुए थे । पर वे लोग मनिया और दूसरे आहत व्यक्तियों  
या मरीजों के प्रति एकदम उदासीन होकर, अत्यन्त शांत भाव से  
सदे, या तो आपस में गपगप कर रहे थे या बिना मतलब के इधर-उधर

चक्कर लगाते हुए वातून बघार रह थे । मैंने देखा कि त्रोध से काम नहीं चनेगा और गिना खुशामद के निस्तार नहीं है । इसलिये एक सफेद अचकन पहन हुए सज्जन के आगे, जो या तो स्वयं डाक्टर थे या डाक्टरी का कोम समाप्त करने जा रहे थे मिलकर मैं अनुनयपूत्रक अपनी दयनीय स्थिति प्रकट की और प्रार्थना की कि किसी योग्य डाक्टर द्वारा तत्काल मनिया के इलाज की व्यवस्था करवा दें । उन्होंने कहा कि सब कुछ कायदे से होगा और धैर रखन की मलाह दी । भीतर ही भीतर काध से जलते हुए भी बाहर से मैंने शांत भाव से प्रार्थना की कि कृपया मुझे बता दें कि कायदे के अनुसार चलने के लिये मुझे पहले किसक पास जाना चाहिये और फिर किसक पास । उन्होंने कुछ बताया, जिस में ठीक से ममभा नहा और फिर वह थड़ी सी से दूम्ने बाड की ओर चने गये । अत म एक भले आदमी की राय से मैं सीधे हाउस सजन के पास पहुँचा । उन्हें स्थिति की गभीरता ममभायी । उन्होंने ठठे हृदय से, किंतु शांत भाव से सब-कुछ मुना और तब मनिया का प्राइवेट बाड के एक खाली कमरे म भरती करवाया गया । वहाँ स्वयं हाउस सजन ने उम देखा । अपन हाथ से भरहम पट्टी करने के बाद उन्होंने बताया कि मनिया का अभी दो चार दिन अस्पताल ही में रखना उचित हागा ! उसके लिय चौबीस घंटे डाक्टरी परिचर्या की आवश्यकता है । उरा कष्ट की हालत म मनिया मेरे साथ से भी बचिन रह यह प्रस्ताव मुझे पतइ नही जचा । मैंने प्रार्थना की कि मुझे उसे घर ले चने की आज्ञा दे दी जाय । चाह जितना भी रुपया लगे मैं घर ही पर उसका इलाज करना पसद करूँगा । उन्होंने बताया कि चाहे जितना ही रुपया खच क्या न किया अस्पताल म जो डाक्टरी सेवा मुनभ हा सनेगी वह घर पर कदापि सम्भव नहीं है । लाचार होकर मन मार कर मैं उनकी बात मान ली ।

‘पर वह क्या इस कमरे म अकेली रहेगी ? कोई व्यक्ति उमके साथ नहीं रह सकता !’ मैंने पूछा ।

‘एक दाई आप को दे दी जायगी, वह चौबीस घंटे इनक ही साथ रहेगी । उमका वेना आपको देना होगा ।’

मैंने एक लड़ी ससि ली । मनिया को सारी स्थिति मम-  
 ङ्गीय, उसने कराहना बंद कर दिया था । मरहम पट्टी के  
 बाद वह पथर की तरह निश्चल और मौन पटी हुई थी । मरी बात  
 सुनकर उसने अपनी आँखें खोली, जो च्यवन मुनि की तरह बल्भीव म ढके  
 दो छिद्रा-सी दिखायी दती थी । अत्यंत करुण और बदना-श्याकुन दृष्टि  
 से एक बार मरी और देखकर क्षीण स्वर म बोली—“वह ठीक कहते  
 हैं । इलाज के त्रिय मरा यही रहना आवश्यक है । मरी कोई चिंता न  
 करो । मैं अकेल ही यहाँ रह जाऊँगी ।”

डाक्टर ने बानाया कि छ बज चुके हैं, और उस समय के बाद  
 हम लोग का कमरे म रहना उचित नहीं है । राज चार और छ के  
 बीच म आकर हम लाग मनिया से मिल सकते हैं ।

अत्यंत खिन्न होकर मैं धीरे से मनिया की हडली पकड़ी और  
 कहा— ‘ता इस समय जाऊँ मनिया ? दद क्या है ?’

‘ठीक है । कुछ चिंता न करो । तुम इम समय जाओ । कल समय  
 पर आ जाना ।’ कहकर उमन अपनी तीव्र बदना से विद्व दृष्टि को  
 भुमनान से उज्ज्वल करने का अत्यंत क्षोण, और करुण प्रयाम किया ।

मुझे रनाई था रही थी । केवल ‘अच्छा !’ कहकर मैंने धीर से  
 उसका हाथ छोड़ लिया और फिर माभी मे चलन का सवेत बरक मैं  
 अनिश्चित पगा म कमरे से बाहर निकल आया ।

माभी के साथ जब मैं मकान पर पहुँचा तब अपने भीतर और बाहर  
 एक अतल-न्यापी, असीम गूयता के अनुभव से मुझे सवत्र केवल भायें  
 भायें गद क अनिश्चित और कुछ भी नहीं सुनायी देता था । न किसी  
 से कुछ बालन की इच्छा होती थी न अपन मन मे कुछ साधने की ।  
 केवल रह रहकर एक तीव्र तजायी जलन की अनुभूति से मारा तन  
 और मन चुन चुन कर रहा था ।

माटर पर स उतरकर मैं हताग और निराधार भाव से डाइग-रूम  
 के एक कोच पर लेट-ना गया । माभी मौन साधना वा-मा भाव मुह  
 पर लिय हुए मर पास ही एक सोफा पर बट गयीं । क्या मनिया के

कराहने का शब्द जाना मैं 'री री !' करके बज उठता था,

कभी उस ममघाती पीड़ा के बीच में भी उसकी बरहण मुम्बकान मेरे अतरतम प्रदेश के किसी रहस्यमय छिद्र से भाँकने लगती थी ! सारी घटना और मेरी सारी भावना की पृष्ठभूमि में जो सामूहिक रूप से प्रचंड हिंसक या प्रतिहिंसक प्रवृत्तियाँ फेनायित हो उठी थीं उनके गजन के प्रति मैं उस समय जान बूझकर अपने भीतर के कानों को बंद किये हुए था । अतमन की जिस खिडकी से उस आतङ्गजनक दृश्य के दिखाई देने और गजन-स्वरा के सुनायी देने की संभावना थी उसे मैंने बंद करके भीतर से चिटखनी लगा दी थी । पर खिडकी को इस मजबूती से बंद करने के बावजूद उस युद्ध के सँख घाप और तुमुल कोलाहल की आवाज डिंवा-दर डिंवा बंद किये हुए रेडियो की आवाज की तरह दबे हुए, तथापि सुस्पष्ट स्वरो में, मेरे कानों में आ रही थी ।

मैं असह्य मानसिक पीड़ा से छटपटाता हुआ बीच पर अपनी स्थिति और मुद्रा बदलता जाता था । भाभी दायें गाल पर हाथ रखे मौन भाव से कभी मेरी ओर देखती थी कभी फटाकी ओर । स्पष्ट ही उनके मन पर भी आज की घटना का बड़ा ही मानसिक प्रभाव पड़ा था । मुझे लगा कि बड़ सात्वता के रूप में कुछ कहना चाहती हैं, पर कहने के लिये जैसे न तो कोई शब्द ही उन्हें मिल रहा था न स्वर ।

मेरी मनोपीड़ा जब बढ़त-बढ़ते मरुट की स्थिति का पहुँचन लगी तब मैंने अपने भीतर से प्रतिरोधात्मक विचार धारा को उत्पन्न करना प्रारम्भ कर दिया । अपनी पीड़ा का क्रोध मैं बदलकर मैं उठ बैठा ।

कितनी बड़ी मूर्खता है ! ' सहसा मेरे मुँह से निकल पड़ा ।

भाभा की अयमस्वता भग हुई । वह कुतूहल और प्रश्न भरी दृष्टि से मेरी ओर देखने लगी ।

मैंने कहा— 'इन शानिकारियों में न तो सहज बुद्धि रह गयी है न आनुपातिक विवेचन । वे या तो भेडा की तरह दूसरों की बुद्धि से परिचालित होकर काम करते हैं या उन हिंसक गिहारी जानवरों की तरह जो अपने गिहार की हत्या करने के बाद फिर उसे सूघते तक नहीं, गिद्धा और मियारा के लिये उन्हें छोड़ आते हैं । सामन

आये हुए किसी भी व्यक्ति की हत्या होनी चाहिये, ताकि ३८१

हिंसात्मक वातावरण बना रहे, उसकी असडता में कोई व्यक्ति न होने पावे, यह है उनका उद्देश्य । किसी भी युग में, किसी भी देश में, किसी भी क्रांतिकारी दल द्वारा इस प्रकार की निरथक हिंसात्मकता का कोई दृष्टान्त नहीं पाया गया । केवल बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध काल में भारत में ही इस प्रकार के दृष्टान्त सामने आ रहे हैं ।

“हा सकता है,” एक लंबी साँस भरकर भाभी ने कहा, “पर यौन जान ! इस निरथकता के पीछे भी प्रकृति का कोई साधक उद्देश्य छिपा है ! यह अश्रमव्यवस्था नहीं है कि इस प्रकार के निरथक हत्या-चक्रा द्वारा आज के युग के विश्वव्यापी हिंसात्मक वातावरण की अस्वाभाविकता की चेतना विश्व-मानवता के भीतर जग उठे ! हिंसा भावना के भीतर छिपी हुई समस्त कुरूपता और बीभत्सता का नया रूप इसी प्रकार के भेदाभेद रहित निरथक हत्या-कांडों द्वारा सुस्पष्ट तथा परिस्फुट होगा, और तब उसकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप जो नव-चेतना जनना के भीतर जगगी, बहुत संभव है वह आज के सैनिक शक्ति-प्रभक्त राष्ट्रों की आँखें खोलने में समर्थ हो !”

भाभी के उस आगावादी दृष्टिकोण का कोई प्रभाव मेरे मन पर नहीं पड़ा । मेरे कानों में मनिषा के बराहण का शब्द अभी तक उसी तीव्रता से गूँज रहा था और कोई भी पारमार्थिक उपदेश मुझे सात्वता देने में असमर्थ था ।

“बेचारी मनिषा !” अत्यंत विचल भाव से, तनिक रँधे हुए स्वर में मैंने कहा, ‘मुझे क्या पता था कि हम लोग ऐसे चक्र के बीच में जा फँसेंगे । इतने दिनों बाद वह आन बाहर निकली, और आज ही यह कांड हुआ गया ! किस आशा में, किस उल्लास से मैं उस मसूरी में यहाँ लाया था ! उसकी इच्छा नहीं थी, मैं ही उस पर जार चलाया था । और आज उप !”

मेरी आँखें डबडबा आयीं । मैं सुकुमार हृदय त्रिषा की तरह भावुकता के बहाव में बह गया ।

‘छि साला !” भाभी ने सात्वता के स्वर में कहा, “इस तरह

३८२      घबरा उठोगे ता कसे काम चलेगा !” और वह अपने स्थान से उठकर कौच पर मेरी बगल में आकर बठ गयी और अपने अचल में धीरे में मेरी गीली आँखें पोछने लगी ।

‘ मैं सचमुच में इतना दुबल-स्वभाव नहीं हूँ भाभी जसा कि इस समय दिखाई दे रहा हूँ । बड़ आघाता को सहन करने की शक्ति मुझ में है । कबल मनिया के कारण ही मैं नहीं घबराया हुआ हूँ । मेरी इस घबराहट के पीछे और भी बहुत से कारण हैं । मैं देख रहा हूँ सारे युग की अस्त-व्यस्तता । जन आंदोलन का प्रति मेरे मन में महानुभूति है । पर मैं दब रहा हूँ जनता की अध अनुकरण प्रियता अध विद्वेष, और अध विद्रोह । यदि कोई ऐसी सुसंगठित, सुयोजनात्मक सुनियमित शक्ति इस आंदोलन के पीछे होती जिसने दस काल पान का ध्यान रखकर, पीड़ित विश्व के महान पार्थिव और आध्यात्मिक कल्याण के सुस्पष्ट ध्येय को सामने रखकर चलन की प्रेरणा पायी होती तो भविष्य की उस बहुत सामूहिक हित-सभावना से बल पाकर मैं बतमान की बड़ी से बड़ी व्यक्तिगत हानि का हँस हँसकर सटन करता और समस्त स्वयं भी इस आंदोलन में कूट पडता । पर उसका जो उच्छल, अयवस्थित असंयोजित रूप मैं इस समय देख रहा हूँ उसकी पीडा असहनीय हो उठी है । ’

“फिर भी निराग न होना लाला अत तन भागा न छोडो, देखत चले जाओ । कौन जानता है ! प्रकृति अपने लिये न जाने किन शूलमुलया के बीच से होकर, किन वीहड जगला और दुगम पवता के बीच से पथ बताती हुई भटकी हुई मानवता को निश्चित लक्ष्य तक पहुँचाने की क्या योजना बनाय हुए है । धैर्यपूर्वक देखते चले जाओ ।

मुझे याद आया कि एक दिन भाभी स्वयं विजल हाथर, अपने चारा और हाहाकार भरा निराशात्मक वातावरण देखकर किस कदम घबरा उठी थी और मनिया ने और मुझमें उद्दान प्रार्थना की थी कि हम उन्हें किसी हालत में न छोड़ें । और आज जब मुझ पर और मनिया पर आ पड़ी तब उनका सारा दृष्टिकोण ही जैसे बदल



गया। प्रत्यक्ष सक्कट न उनके हृदय में एक अभूतपूर्व बल, ३३३  
 साहस और आत्मावादिता का संचार कर दिया। मनुष्य  
 का यह गृह्यमय मन कब कहीं से बल बटोरता है, कहा नहीं जा  
 सकता।

बुद्धि से मैं भी मामी की बात की ताईद कर रहा था। पर फिर मैं  
 मर मन का अवसाद और रह रहकर उठनवाली टीम किसी प्रकार में  
 कम नहीं हानी थी। मामा से छुट्टी लेकर मैं अपने कमरे में जाकर ब  
 हा गया। पलंग पर चारा सान चित्त लटककर चित्त का स्थिर करने व  
 प्रयत्न करने लगा। पर कोई फल नहीं हुआ। मैं उठ बैठा। इच्छा हु  
 कि कोई ऐसी पुस्तक पढ़ी जाय जो वर्तमान की मारी पीना को भी  
 भविष्य की संपूर्ण निराशा को भुतान में सहायक हो और मुझ जीवन  
 मूल केंद्र में लाकर रखे। ऐसी पुस्तक कौन हो सकती है, यह माय  
 में काफी समय लग गया। महामा एक रिजली-भी मर प्राणा के भी  
 बोध गयी। वीन पुस्तक मेरे लिये उन समय की मन-विधि में उपयु  
 त्त हो सकती है इस अवधि में लेनामात्र भी सदहू मेरे मन में न  
 गया। मैंने सोचा कि जिस पुस्तक में मनिया के प्राणों में वह आत्मा  
 जनन बल-नकारित किया था कि असहनीय शारीरिक जलन और मा  
 मिक विवर्णता से ऊपर उठकर वह मर अस्पताल से लौटने समय प्रेम  
 मुमधुर, निगम मुसकान मुस पर भनवान में समय हुई थी, उसी  
 क्या न पढ़ा जाय। छात्र जीवन में मैंने दो एक बार बाइबिल धन  
 पढ़ी थी, पर उसके बाद फिर कभी उसकी घोर में आकर्षित न हुआ  
 और उसकी मर बातें मुझे बच्चों के उपयुक्त हितोपदेश से भरी लगी  
 मनिया के बाइबिल प्रेम को भी मैं धाज तक उसकी निर्णय बचक  
 प्रणता मानकर दुलराता भा रहा था। पर धाज मकट के शणु  
 सब बानें मेरे धाग एक दूसरे ही प्रयाग में धान लगी, जिनकी व  
 प्रपष्ट स्मृति मेरे मन में गेप रह गयी थी।

मनिया जिन पुस्तकों का अपने साथ लायी थी उन्हें उगने एक  
 पर सजाकर रख दिया था। उन्हीं में से चमड़े की वाली त्रिन्द में मड़ी  
 नयी बाइबिल की नयी छपी हुई पुस्तक मैं उठाया और पर्वग पर।

कर खोलकर पढने लगा । एकांत चिंत से, पूर्ण मनोयोग से, एक एक वाक्य, एक एक शब्द के मूल अर्थ पर बड़ी बारीकी से विचार करता हुआ पढता चला गया । सूक्त द्वारा वर्णित ईसा के जीवन, उनके उपदेश और कार्यों के क्रम का वर्णन पढते पढते मैं उस स्थान पर आया जहाँ स्वार्थी, ढांगी भ्रष्टाचारी और नकील-मन धम-वज्रिया के प्रलोभन के फेर में पडकर जुडास इस्कारियट ने चाँदी के तीस टुकड़ों के लिये ईसा के साथ विश्वासघात किया था और उन्हें उस अर्थ युग के धार्मिक और नतिक रक्षा के ठेकेदारों—हिंसक कुत्ता और भेड़ियों के हाथ सौंप दिया था । मैं तमय होकर पढ रहा था उस महाप्राण की ऊर्ध्वतम आध्यात्मिक मन स्थिति की बात जिसने जुडास की आँखों में विश्वासघात का स्पष्ट आभास दखने पर भी उसे क्षमा कर दिया था । वह अकेला पायत्र युग के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक नतिक और धार्मिक पतन और युग की रग रग में समायी हुई मोहाघता में कितना ऊपर उठा हुआ था ! मैं पढ रहा था उस अनंत क्षमाशील और अद्भुत सहनशील महात्मा की बात जो बाटा का ताज पहनकर घण्टिन और लोलुप अंध पिशाचों के धम के नाम पर मानवता का रक्त और प्राण गोपण करने वाले श्मशान के चाडालों के निमम उपहास का पात्र बनकर भी अत्यंत न्यिर और शांत भाव से अविचलित हृदय से सारी परिस्थिति को स्वीकार किये चला जा रहा था । मैं अपने मन के अणु अणु में अनुभव कर रहा था उस मनुमानव की कठोर शारीरिक पीडा को जिसके हाथ और पाँव बड़ी-बड़ी नुकीली कीलों के जरिये लकड़ी पर जड दिए गए थे, जिस उमत्त जनता ने और अविवेकी शासनाधिकारियों ने घण्टितम अपराधी मानकर दूली पर लटकाकर अमानुषिक पीडा पहुँचा कर कुत्तों की मौत मरने के लिये छाड दिया था । मैं कल्पना कर रहा था उस अति-मानुषी अतीन्द्रिय गति-सम्पन्न लोकोत्तर महापुरुष के आश्चर्यजनक आत्मवल की जिसने अपनी असहनीय मम-पीडा के बीच में भी यह प्रायना की थी कि 'हूँ भर पिता, इन लागों को क्षमा कर दो, क्योंकि वे यह नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं ।'

मेरी माँता स वय से आँसुओं की झड़ी लगनी शुरू हुई थी, मैं जान

नहीं पाया था—ऐसा तमय हो गया था उस महान आत्मा  
के जीवन-वत्तम ।

३८५

रात में प्रायः दस बजे किसी ने बाहर से मेरा दरवाजा खट-  
खटाया ।

“लाला, क्या सो गये हो ? भाभी की आवाज सुनायी दी ।

मैंने दरवाजा खोला । मैंने देखा, भाभी के पीछे बीरेन्द्र तीन लड्का  
के साथ खड़ा है ।

य लोग तुमसे क्षमा मागने आये हैं,” बीरेन्द्र ने अत्यन्त कामल स्वर  
में कहा । और कहते ही वह उन लड्का के साथ भीतर चला आया ।

कुछ न समझते हुए भी मैंने कहा—“आइये, बठिये ।”

भाभी मनिया के पलंग पर बैठ गयीं, बीरेन्द्र ने पलंग पर जा  
बैठा और दा लड्के दा कुर्सियों पर बैठ गये । एक लड्का खड़ा ही रहा ।  
मैंने उनसे भी अपने पलंग पर बैठने को कहा, पर वह हाथ जाड़ता हुआ  
अत्यन्त विनयपूर्वक खड़ा ही रहा । भाभी उठकर बाल वाले कमरे से  
एक कुर्सी उठा लायी । वह लड्का उस पर बैठ गया ।

मैं बीरेन्द्र की बगल में बैठ गया । उसकी ओर दृष्टि देते हुए मैंने कहा—  
‘ किंग बात की क्षमा य लोग चाहते हैं, मैं कुछ समझा नहीं । ’

“भाज बालेज स्वामीपर मैं जा दुषटा हो गयी, जिनके पलम्बरूप  
वह था मुह तेजाय से जल गया, उमी के लिये य लाला क्षमा मागने  
आये हैं ।’

मैंने सरसरी तीर से एक बार तीना लड्का की ओर परीक्षात्मक  
दृष्टि से देखा—यह अनुमान लगाने के लिये कि इनमें कौन लड्का इस  
प्रकार की खूबी मनोरत्ति वाला हो सकता है । पर तीना में से किसी को  
भी चंद्र की अभिव्यक्ति में हिमा और भ्रमानुषिक श्रुत्या का कोई  
प्रमाण मुझे दिखायी नहीं दिया । तीना शांत, सरल-स्वभाव और सहृदय  
लगते थे ।

स्थिति को अधिक स्पष्ट रूप से मनन के उद्देश्य में मैंने बीरेन्द्र को  
पूछा—“क्या इनमें से किसी लड्के ने यह तेजाय भरा बन्द फेंका था ?”

“नहीं,” दृढ़ स्वर में वीरेन्द्र ने उत्तर दिया, “य लोग जानते भी नहीं कि किमा बल्ब कौका।”

“तब य किनकी तरफ से क्षमा माँगने आय हैं ?” अत्यंत आश्चर्य से मैंने पूछा।

‘इनके दिल में जो चढ़ उतरदायित्वहीन व्यक्ति घुस गये हैं और बिना किमी भेदभाव के, अपराधी और निरपराध सब पर निर्विचार भाव में आक्रमण किय चले जाते हैं उनके लिय य स्वयं अपने का दापी मानते हैं—उसे अपन मगठन की कमी मानते हैं।’

“ओह, समझा।” कुछ कुछ समझत हुए और एक ठड़ी आह भरते हुए मैंने कहा— फिर भी मैं इसमें कोई तुक नहीं देखता कि दूसरा के अपराध के लिय य क्षमा माँगें। और फिर क्षमा करने वाला मैं कौन हाता हूँ। जिस लोका की भूलता का शिकार बनना पडा है उससे जाकर क्षमा माँगें मैंने खीक भर स्वर में कहा।

‘वहू के पास य लोग हो आये हैं। तुम्हारे चले आने के बाद ही य लाग गये थे। कमर में जान में इन्हें रोका जा रहा था, पर किमा तरह नम में अनुनय विनय करके दो मिनट के लिय वहू से मिनन की अनुमति इन्हें मिन गई थी। वहू ने प्रेमपूर्वक इन तीना के गिर पर हाथ फेरा और प्राणीवाद दन हुए कहा कि ‘इस घटना में गनन रास्ते पर न चलन की शिखा ग्रहण करो।’ मैं भी गया था। मुझमें वहू न कहा कि मैं तुम्हें जाकर धेय दूँ।’

‘तब छीर है।’ उसी रखाई से मैंने कहा— अय य लाग जा सकते हैं। मरा जा ठीक नहीं है, मैं जरा आराम करना चाहता हूँ।

सत्का क चहरा पर एक उलाम, निराग मोन-छाया फिर आयी थी। वीरेन्द्र के चहर से पता चलता था कि वह भी मर यवहार से विभ्र है। पर उसन फिर कुछ नहीं कहा और लडा का साथ लेकर कमरे से बाहर चला गया। भाभी भी चुपचाप चली गयीं।

५५

दूसरे दिन मैं भाभी के साथ जब मस्जिद पढ़ी तब मनिया चादर झाड़े बाइ करवट लेटी हुई थी सारा सिर पट्टी से ढका था। हमारे आने की आशंका के वक़्त तक नहीं पहुँची थी। यह सोचकर कि वह सोयी है, मैं दोना उसके पलंग के पास चुपचाप खड़े रहूँ। उसके बाद मैं धीरे से पलंग वाली एक निपाई उठाकर भाभी के बठने के लिये रख दी। न चाहते ही भी कुछ खटकन की आवाज हो ही गयी। मनिया न आँखें खोली। उसके आगे मुह में केवल दा आँखें और नाक पट्टी से ढकन से बच गयी थी। हम देखत ही उसकी आँखा में एक स्निग्ध किरण मुसकान भाव गयी। पट्टी से ढका हुआ उसका चेहरा विचित्र दिखायी दे रहा था और हालत में उसकी वह मुस्कान अत्यंत दयनीय रूप में मेरे सामने आयी। मेरे भीतर क्रन्दन का राल उमड़ उठा। मैं बरबस उसे दयापा।

‘केनी तरीयत है, मनिया?’ भर्रायी हुई आवाज में मैंने पूछा।

‘ठीक है भव अच्छी है, सहज, स्निग्ध और ग़ात स्वर में मनिया ने कहा।

‘रात नाद आयी थी?’

‘गन ना नहीं सो पायी, पर सुबह आँखें लग गयी थी,’ स्निग्ध किरण मुसकान के साथ मनिया बोली, ‘तुम्हें नींद आयी कि आयी, यह बताओ, मैं चिंता छोड़ो।’

मुझे डर लग रहा था कि जिन आँसुओं का मैं बरबस दबा रहा था वे भय उमड़ ही आयेंगे। पूरी इच्छा-शक्ति के प्रयोग में मैंने इन्हें रोक रक्खे। भरमक आवाज की स्वाभाविक बनान का प्रयत्न कर रहा था—‘मुझे भी कुछ देर के लिये नींद आ ही गयी थी। केना है?’

‘ठीक है। पट्टी जब खाली गयी थी तब कुछ जगमगावत मामूली थी, पर पट्टी बंध जान के बाद फिर सब ठीक हो गया। चिंता न करने की सलाह है—धीरे डाक्टर भी। मैं जल्द आँधी हा जाऊँगी। डाक्टर ने कहा है कि एक सप्ताह बाद मैं घर वापस जा सकूँगी। बठ जाओ। तबके क्यों हो? जीजी, पर का हाव सर ठीक ता है?’

३८८  
जो भी भाये थे कल—तुम लोगों के चने जान के बाद

तीन लडके भी उनके साथ थे। मुझने क्षमा मांगते थे।  
नोल-स मामूम बच्चे थे—बड़े ही प्यारें लगते थे विश्वास उठी ही  
कि वे इस तरह की हिंसात्मक कारवाइया में भाग ले सकते हैं '

स्पष्ट ही वह बड़ते बोलने की मन स्थिति में थी। एक दूसरी लिप  
उठाकर उस पर बठते हुए मैंने कहा—' तुम्हारी धारणा ठान है। स  
लडकों ने भाग निमा भी नहीं था

तब के क्या क्षमा मागने भाय थे? परगानी भरी दृष्टि में मति  
ने पूछा।

'उनका विश्वास है कि उठी के दल के कुछ उत्तरदायित्वही  
लडकों ने तैजाव स भरा वह बल्व फेंका था

पर उनके भाफी मान के डा से ता पना चलता था तम व स्व  
अपन अपराध के लिये लज्जित हा। उठने तनिक सकेत में भी ना  
वताया कि उस जाड के लिय वे अपराधी नहीं हैं '

भाभी ने कहा—' यही ता आज के मुग की विशेषता है। इस मु  
मे एक भार दलात भावना इतनी प्रबल पायी जाती है कि दल का को  
भी व्यक्ति दल के दूसर व्यक्तियों की किसी भी कारवाई से अपन को बंध  
हुमा मानता है, दूसरी ओर एक ही दल के भीतर एम व्यक्ति पाय जा  
हैं जिनके अन्तर्विग्रह एक-दूसरे के विलकुल विपरीत हैं। कल जो ती  
लडके भाय थे व स्पष्ट ही क्रांति के हिंसात्मक रूप पर विश्वास नहीं  
करते, पर उठी के दल के जिन लाला ने हिंसा का पय पकडा है उन  
व अपन को अलग नहीं मानते—उनके साथ वे एक ही इकाइ में बंधे हुए  
हैं। यह विचित्र विराधाभास सारे मुग पर छाया हुआ है। पन यह देखने  
में आता है कि नगी दला के राजनीतिक आदर्शों और मतिविधियों के  
कारण एक पना कुहरा छाया हुआ है और किसी दल की को  
नीति सुस्पष्ट और सुलभे हुए टा में किसी व मामन नहीं आ  
रही है।

भाभी के इस प्रवचनारम्भ वाक्य का भाव मनिया किता ममती  
और विनता नहीं समझी, यह मैं नहीं बना सकता। गाय उतरा

सात्पर्य ठीक से समझन का प्रयत्न करती हुई, वह कुछ देर तक मस्तिष्कमय दृष्टि से उनकी ओर देखती रही। उसके बाद बोली— 'बड़ा विचित्र युग है यह—अनोखी भ्रान्तियों से भरा हुआ। मैं प्रभु ने प्रायना कर्णों कि सब को सम्मति द, सब की बुद्धि को अच्छे माग म ले जावे " उसने अपने हाथ से अपने हृदय के ऊपर 'त्रास' का एक साकेतिक चिह्न अंकित किया और फिर दोनों हाथ गूँथ की ओर जोड़कर ध्यान-मग्न हो गयी।

३८६

पीछे से एंग्लो इंडियन नर्स ने, जो एक जवान मुद्गर और स्वस्थ-सी लड़की थी, आकर कहा— "आप लाग रहें बहन बाता म न लगाइये। इन्हें पूरा विश्राम चाहिये। ज्यादा बातें करने से गरीर पर और मन पर जो ज़र पड़ेगा वह नुकसान पहुँचायेगा।"

उसके बाद पेनिमिलीन की पानी में भिगायी हुई छोटी सी थूबनुमा शीशी को बाहर निकाल कर उसने इजेकान तयार किया और फिर मनिया को पुकारती हुई बोली— "इजेकान ल ला।"

मनिया न आई खाली। नन को देखकर प्रेम भरी मुस्कान उसकी आँखा में झलक उठी। "अब और कितने इजेकान दागी, बहन?" उसने अँगरेजी में कहा, 'बापी ता हो गय।'

"अभी कहाँ काफी हुए।" नन ने भी उसी प्रेम से मुस्कराते हुए कहा, "क्या इजेकान तुम्हें पसंद नहीं?"

"नहीं।"

"क्या?"

'दद जो होता है। बच्चा की तरह मचलती हुई मनिया बोली।

"आह यह बात है? पर तुम्हीं न तो कन मुझमें कहा था—'प्रभु ने गूँथी पर चढ़ने की पीड़ा का हमपर सह्य, उस पीड़ा के भाग यह पीड़ा तुम्हें है।' तब मे जलने की पीड़ा का तुम हँसकर कहने कर गयीं और अब इजेकान की मुझे स दिन तरह कतराती है। साधो, एक अच्छी लड़की की तरह बायीं हाथ दा ' अंतिम वाक्य नन ने पुनः-पुनः कर भरे स्वर में कहा।

‘चलो, तुम बड़ी नटमट हो !’ उसी मचलते हुए स्वर में मनिया न कहा और फिर धीरे से उसने अपना हाथ बढा लिया ।

बायी बाँह पर इजेकान दवर और फिर स्पिरिट से भीगी हुई रुई से इजेकान लगे स्थान को पछकर नस चली गई । खाड़ी दर बाद एक छाटी-सी शीशी म बोर्डे दवा लाकर मनिया का पिला गयी । मनिया के सिरहाने के तकियो को ठीक से सजाकर मनिया को बिना उठाय ही बिस्तर ठीक से बिछाकर और चादर ठीक से ओढाकर उसकी पीठ को प्रेम से हाथ से थपथपाती हुई बोली—‘तुम बहुत बहादुर लडकी हो । जल्दी ही अच्छी हो जाओगी ।’ और फिर चली गयी ।

नस के चले जाने के बाद दाई एक गिलाम म गरम-गरम दूध लेकर आयी । दूध देखते ही मनिया मुम्बराती हुई भी मुँह बिचवान लगी । ‘ऊँ हू ! मैं दूध नहीं पिऊँगी !’ पहले की ही तरह मचलता हुई बोली ।

‘नहीं बिटिया एमा न करो । मुह न बिचवात्रा । दूध ही ता तुम्हारा एक आधार रह गया है—खाना-पीना बन ही स तुम एक तरह स छाड चुकी हो उठो मरी भली बिटिया पी लो !’ दाई ठेठ हिन्दी बोल रही थी, बाद म उसी स पूछने पर पता चला कि वह मिर्जापुर की रहने वाली है । कलकत्ते आय उमे बीम बप हा गय हैं और अस्पताल म दाई का काम करत हुए दस बप ।

मैंने और भाभी न भी मनिया पर दूध पी लेन के लिय जात डाला । दाई स्नहवग हठ करती हुई उसका दायाँ हाथ पकडकर उस धीरे से उठान का प्रयत्न करन लगी । मनिया कुछ दर तक मचलती हुई आपत्ति जताती रही । उसक बाद अपने आप ही उठ बठा और गिलास हाथ म लेकर पीन लग गयी ।

अब वह दूध पी चुकी तब दाई गिलास ले गयी । थोड़ी दर बाद एक प्लेट पर चार मुमरिया ल आयी । प्लेट को निपाइ पर रखकर और पास ही एक छोटी सी मेज पर रखे हुए शीश के रस-बग का उठाकर धान के निय ले गयी । फिर मोट आयी और एक मुसवी उठाकर रस-बग पर उस बसकर रस निकालने लगी । पर, इस कना में वह



विशेष पट्टु नहीं जान पड़ी। रस ठीक से नहीं निकल पा रहा ३६१  
था। भाभी ने उसके हाथ से रस कड़ा ले लिया और स्वयं

रस निकालन लगी। जब सब भुमबिया का रस निकाल चुकी तब स्वयं  
अपने हाथ से मनिया के मुंह में गिलास लगाकर उसे रस पिलाने का  
प्रयत्न करने लगी।

“जाग्रो जीजी, मैं कोई दुधमुही बच्ची हूँ।” बच्चा की तरह ही  
हँसकर मनिया बोली, और उठकर स्वयं अपने हाथ में गिलास लेकर  
धीरे धीरे पीने लगी। दा घूट पी चुकने के बाद वाली—“पर सब-कुछ  
मैं ही पिये जा रही हूँ, तुम लोग या ही बठे हो। जाग्रो दाई, आठ दस  
भुसम्बी और ले जाग्रो और इन दोनों को रस पिलाया।”

“हम लोग कई चीजें पीकर आय हैं और घर जाकर और पियेंगे,  
भाभी न बहा “य सब भुसम्बियाँ और सन्तरे केवल तुम्हारे ही लिये मैं  
लायी हूँ। इनका रस तुम्हारे लिये दवा का काम करेगा।”

मनिया फिर बच्ची की तरह मचलती हुई हठ करन जा रही थी कि  
इतने में बीरेन्द्र उही तीन लडका के साथ आ पहुँचा जिन्हें वह पिछले  
दिन मेरे पास लाया था। बीरेन्द्र का देखने ही मनिया एवदम गम्भीर  
बन गयी। उसके प्रति वह आतंरिक श्रद्धा और आदर का भाव रखती  
थी यह बात कई बार पहले भी मेरे आगे प्रमाणित हो चुकी थी। एक  
घूट में शेष रस समाप्त करके, गिलास तिपाई पर रखकर चादर ठीक से  
सपेट कर वह फलेंग के सिरहाने वाले डडा के सहार बठ गयी।

बीरेन्द्र के बठने के लिये काँच तिपाई खाली नहीं थी। मैं उठकर  
मनिया के फलेंग पर पतान की आर बठ गया, और बीरेन्द्र से अपने  
स्थान पर बठने के लिये मैंने आग्रह किया। लडका के बठने के लिये कोई  
तिपाई खाली नहीं थी। भाभी ने अपनी बान्नी तिपाई खाली कर दी  
और दाई ने वे दोनों तिपाइयाँ खाली कर दी जिन पर चीजें रखी हुई थी।  
कुछ दूर तब तन्त्रुफवाजी खली। अतः मैं भाभी मेरे साथ ही फलेंग पर  
बठ गयीं और बीरेन्द्र और दो लडके तिपाइयाँ पर बठ गये। एक लडका  
सदा ही रहा।

‘ब्या हाल है बहू ?’ बीरेन्द्र ने पूछा।

“ठीक है, अब मैं अच्छी हूँ।” मनिया शांत स्वर में वाली तीनों लडके अत्यन्त उत्सुक और विस्मित दृष्टि से मनिय की ओर देख रहे थे। उन्हें निश्चय ही वह एक आश्चर्यजनक जीवनी लग रही होगी—केवल पट्टी से चारों ओर से ढके हुए चेहरे की विचित्र आकृति के कारण ही नहीं बल्कि तीव्र शारीरिक पीड़ा की स्थिति में भी अत्यंत शांत, समत और प्रसन्न मनाभाव प्रकट करने के कारण। तीनों लडका की उम्र बीस और बाईस के बीच की होगी। तीना म से एक भी शारीरिक दृष्टि से हूट-पुट नहीं दिखायी देता था पर तीना के मूला पर विचार-गलता और बुद्धिमत्ता की छाप थी। तीनों की आंखा में एक तीव्र रहस्यमय प्रकाश भलक रहा था। साथ ही उस तीव्र प्रकाश के अंतराल में एक हलके और अद्वय्यक्त मुकुमार भाव की अस्पष्ट नाई भी बतमान थी। तीना सुंदर सुनहली गीली मिट्टी के बच्चे घड़े लगते थे, जिन्हें काठ पट्टे कुम्हार अब भी जिस रूप में चाहता बदल सकता था जिन नये साँव न चाहता नये सिरों से गढ़ सकता था। जो लडका रंग था, वह सम्भवतः तीनों में उम्र में बड़ा था। वह अपनी सुंदर अधमुदी में आंखा का घनी वाली बरोनिया के भीतर से एक ऐसा प्रकाश प्रसारित कर रहा था जो एकम’ निरणा की तरह पास बैठे हुए अपरिचित—अथवा नव परिचित—पत्निया का बाहरी भावरण भदकर उनके भीतर की दाम्निप्रकृता का ठीक ठीक पता लगा सके। वह एक बार मनिया की ओर अपने उस अतप्रकाश की विरणा को फेंकता था और एक बार मेरी ओर। वह हम दोनों के भीतरी व्यक्तित्व को कहाँ तक जान पाया, मैं कह नहीं सकती पर उसके मुख की गम्भीर किंतु तीनी अभिव्यक्तता में लगना था तब वह हम दोनों के भीतर बहुत दूर तक अपना मचल-इट’ फेंक चुका है।

सब मौन थे। सहसा बाया और बठा हुआ लडका लहलहाती हुई हिंसी में बाल उठा— बहन जी हम लोग फिर एक बार आपसे क्षमा माचना करने आये हैं। हम लोग इस बात के लिये अत्यंत लज्जित हैं कि हम सागा की गतनी में एक निरपराध व्यक्ति को शारीरिक क्षति पहुँची। पर अपना यह सौभाग्य व्यक्त किये बिना भी हम नहीं रह पाते

कि इस अशासन कांड के कारण हमें एक ऐसी चीज रमणी, ३६३

एक एसी महान् आत्मा के दान का सौभाग्य प्राप्त हो गया

जिसके अपार धय, असीम शक्ति और अनन्त क्षमा भावना में कठोर से कठोर गान्धीय पीड़ा से भी कोई अंतर नहीं आ सकता—जिसके विनाल हृदय में अपने पीड़कों के प्रति लेनामत्र भी आक्रोश की भावना उत्पन्न नहीं हो पाती। हम लोग बगाली हैं और बगाली बड़े भावुक हात हैं, यह बात आपसे छिपी न होगी। भावुकता के आवग में हम ला आततायी और अत्याचारी की हत्या तक करन में नहीं चूकते और उनी भावुकता की ही प्रेरणा से हम कठोर से कठोर आत्म-वर्तिदान करा के लिय उद्यत हो उठते हैं। यही भावुकता हम जहाँ एक ओर महिषासुर मर्त्तिनी, बाली वराहिननी की पूजा के लिय प्रेरित करती है वहाँ दूसरी ओर आत्म सम-पणगील गान्धि-स्वर्णपिणी प्रेमाराधिका राधा के प्रति भी हमारा हृदय श्रद्धा और प्रेम के आभास सगद्गद् हो उठता है। या दवी सब-भूतपु रद्र रूपण सस्थिता, उसके घाग हमारा हृदय जिस कदर झुक जाता है, या दवी मवभूतेषु गान्धि प्रेम क्षमा रूपेण सस्थिता उसके आगे भी हम उतनी ही भक्ति से अवनन हो जाते हैं। यह विरोधाभास हमारी नम-नस में बतमान है। आज उनी गान्धि, प्रेम और क्षमा रूप में नस्त्रित मागान् देवी व गान्धन हम हुए हैं। उनके प्रति हम अपनी अकपट श्रद्धा निवर्तित करन आये हैं।

उस दुसरे पत्तले औरतनिक नाट से लहवे न अप्रत्यागित रूप से एक अच्छा-ग्यासा नाटकीय भाषण दे डाला। और कई अवसर होना ता मुझे ईसी आना, पर मैं ध्यानपूर्वक दख रहा था कि उस निष्कपट-हृदय लड़के के मुख की अभिव्यक्ति में नाटकीय कृत्रिमता का कोई आभास तक बतमान नहीं था, बल्कि सच्चे हृदय में, अतरात्मा से निकली हुई निरद्वन्द्व श्रद्धा भावना ही उसके मुख पर गाड़े रंग से अंकित हो रही थी। यह ठीक है कि जाने जा कुछ कहा था वह अपने विनाबी जान के आघार पर ही कहा था, पर उस विनाबी जान के अतराल में उनके अंतर का जरा जर्ग बाल रहा था। यहाँ तक कि उसकी आँसों के काय भाव-विद्वलता का कारण भीग गया।

लडके के भाषण के बाद कुछ क्षणों के लिये एक घनाक्षा सत्राटा सारे वातावरण में छा गया। मनिया स्तब्ध और

भाव मुग्ध-सी उसकी ओर देखती रह गयी। मं कह नहीं सकता कि वह लडके के सस्त्रतर्गमित वाक्या का अर्थ और भाव कितना समझी और कितना नहीं। उसकी पलकों भी गीली हा आयी थी और पट्टी के भीतर से चमक रही थीं। भाभी भी चकित दृष्टि से लडके की ओर देख रही थी। वीरेन्द्र की दृष्टि में व्यग, परिहास और भावाकुलता का एक विचित्र समिश्रण मँने पाया। लडके के दो साथी—एक बड़ा हुआ और एक खड़ा—अत्यन्त गम्भीर और स्थिर दृष्टि से एक वार उसकी ओर और एक वार मनिया की ओर देख रहे थे। जो लडका खड़ा था उसके मुख पर क्रुद्ध घणा और उपशा का-सा अस्फुट आभास झलक रहा था। स्पष्ट ही वह अपने माथी के भाषण से सतुष्ट नहीं था।

उस अशासन मौन को भंग करती हुई सहसा मनिया बोल उठी—  
“भाई मरे, तुम बड़े भोले और भले हो। प्रभु निश्चय ही तुम्हारा मला करेगे। मैं कोई दबी नहीं प्रभु की एक साधारण पुजारिणी हूँ। मैं सदा ऐसी नहीं थी। बड़ी गुस्सल, चिडचिडे स्वभाव की और हठीली थी। पर जब से प्रभु ने अपना प्रेम भरा हाथ मरे सिर पर रखा है तब से सचमुच मरे स्वभाव में बहुत बदलाव आ गया है। मैं किसी भी बात से नाराज नहीं हो पाती हूँ—चाहने पर भी नहीं। वहकर वह जते अपने परिहास पर स्वयं ही हसने लगा।

जिस लडके ने भाषण दिया था उसके मुख का गहँगा रंग मनिया की बात सुनकर पुलक से तिल उठा और उसकी आँख जस भाव-गदगद होकर चमकन लगा। पर जो लडका खड़ा था उसके मुख पर एक घणा रमक छाया सुस्पष्ट रूप से परिस्फुट हो उठी। उसने दोनों बड़े हुए लडका म से किसी एक को सम्बोधित करते हुए थँगला म कहा—  
“निगीध, अब चलो।”

दानी लडके उठ खड़े हुए और मनिया की ओर हाव जानकर, “नमस्कार कहकर जाने। समे। वीरेन्द्र बोला—“ठहरो मैं भी चलता हूँ।” फिर हम लागी की ओर मुँह धरके उसने कहा—“घाटा, इस

समय चलता है। इलाज तो ठीक ही चल रहा है न ? किसी ३६५  
 बात की शिकायत तो नहीं है ?" कहकर उसने मनिया की  
 ओर देखा ।

"सब ठीक चल रहा है, शिकायत की कोई बात नहीं है ।" मनिया  
 ने कहा ।

"तब ठीक है । अच्छा अब चलता हूँ ।" कहकर वीरेन्द्र लड्डको के  
 साथ चला गया ।

मैं और भाभी वीरेन्द्र के जाने के एक घटा घाद तक वहीं बटे रह ।  
 जब नस न बताया कि समय हो गया और हम लाग को वापस चले  
 जाना होगा, तब हम लोग भी बाहर चले आये ।

५६

मोटर पर बठकर जब हम लाग वालीगज के लिये  
 खाना हुए तब मेरा मन बहुत हलका हो चुका था ।  
 पिछले दिन दुधटना के बाद से दुःख और आतंक की

जिम भयावनी भावना ने दुस्सह पापाण भार की तरह मरी छाती का  
 दबा कर रखा था वह हट गयी थी । मनिया के सहज गान और प्रसन्न  
 भाव का छुनटा प्रभाव मुझ पर भी पड चुका था । यह ता मैं जानता  
 था कि उसकी शारीरिक पीडा अभी बहुत-कुछ बची ही है । स्वयं उनने  
 भी यह सबत दिया था कि पट्टी खोलते समय उन कुछ जलन की पीडा  
 का अनुभव हुआ था । और उसके 'कुछ का अर्थ हम लोगों का 'बहुत  
 है, यह बात भी मुझमें छिपी नहीं थी । फिर भी वह पीडा को हँसती  
 हुई महन किमे चली जा रही है और उपचार साध्यतीय नहीं है, यह  
 जानकारी मुझे बहुत साखना दे चुकी थी । इसलिए मैं प्रसन्न था ।

भाभी कुछ दर तक किमी चित्त म मग्न-नी मौन घठी रही ।  
 मेरा अतमन जान गया कि उनकी उस समय की चित्त मनिया के कारण

३६६ नहीं है, बल्कि कुछ और है। चौरंगी तक वह मौन रही।  
उमके बाह सहसा उन्होंने उन तीनों विचित्र लडका की चर्चा  
छेड़ दी।

“बचारे मासूम लडके! जीवन के अनुभवों में एकदम रहित हैं।’  
उन्होंने कहा।

“जीवन के अनुभवों से भले ही रहित हा पर अनुभूतियाँ उनकी  
बड़ी गहरी और प्रबल हैं।” मैंने कहा।

“यह तुमने कस जाना ?

‘उनके मुख के भावों से और जिस लडके ने बगालिया की भावु-  
कता की बात कही थी उसके भाषण से।’

“बगालिया की भावुकता।’ कहते हुए भाभी के सुंदर गार मुख  
के आर पार व्यग की तीव्र लहर दौड़ गई, यह एक अच्छी किंवदंती  
अभी तक जनता में प्रचलित है। भावुकता क्या बगालिया की मोल ली  
हुई चीज है? मैं भी ता बगाली हू पर मेरे भीतर कभी इस तरह की  
भावुकता नहीं रही जमी तुम्हारे भया के स्वभाव में मैं पाती हूँ ”

उनका आगम स्पष्ट ही बीरेन्द्र में था। मुझे उनकी बात से वास्तव  
में आश्चर्य हुआ। नारी जाति स्वभाव से ही भावुक होती है ऐसी मेरी  
धारणा रही है और नच पूछिये तो भाभी के स्वभाव का जितना कुछ  
परिचय तब तक मैंने प्राप्त किया था उससे भी मैं यह नहीं सोच पाया  
था कि वह भावुक नहीं हैं। मुझे याद आया कि उस दिन जब वह बीरेन्द्र  
के और अपन विचारा में सघष की बात बता रही थी तब अत्यंत या-  
कुन भाव से उन्होंने मुझसे कहा था—‘ मैं तुमसे यह अनुरोध करती हूँ  
कि तुम साग अब हम न छोड़ना। अब तुम जाओगे तो मैं दूमेरे ही दिन  
पागल हा जाऊंगी। क्या कोई भावुकतारहित व्यक्ति इस तरह की बात  
कह सकता है? फिर मुझे याद आयी उस चान्नी रात की बात जब हम  
दोना भील में नौका विहार कर रहे थे। तब भाभी ने यह तर्क छेड़ा  
था कि निपिल प्रकृति में निम्परी उस अपूर्व सौंदर्य राशि को धोखा  
और छलना बनाने वाले प्रगतिवादी कहां तक सही हैं, और क्या इस प्रकार  
की उपादेय सौंदर्य चेतना केवल बूजुवा लोगों के मानसिक बिलास के

अतिरिक्त और कुछ नहीं है? मैंने तभी उनसे कहा था कि ३६७

उस काव्यमयी अनुभूति के क्षण में इस प्रकार का तक छेड़ने का अर्थ ही यह है कि हम लाग उस विगुद सौंदर्य चेतना के यथाथ अनुभव से वंचित हैं। भाभी तब यह समझती थी कि वह चादनी की सौंदर्य-तरंगों में बही चली जा रही हैं, पर यह धारणा गलत थी, क्योंकि उनके भीतर तब वास्तविक बौद्धिक विचारमूलक द्वंद्व मचा हुआ था। इस दृष्टि से देखने पर यही सिद्ध होता था कि वह यद्यपि भावुकता के थपड़ा से वंची हुई नहीं हैं, तथापि भावुकता से भी अधिक बौद्धिक अतद्वंद्व की तूफानी तरंगों ने उनके सारे व्यक्तित्व को बुरी तरह भक्भोर रखा है, इनपर एक ओर जहाँ उनके भीतर भावाच्छन्नास स्वभावतः उमड़ उठता है दूसरी ओर वह स्वयं अपनी ओर दूसरों की भावुकता के प्रति खडगहस्त हा उठती हैं। इस दृष्टिकोण से साचन पर यह विराधा-भास भी मरे आग धीरे धीरे स्पष्ट होना लगा कि वह बीरेन्द्र का अपने से अधिक भावुक बयो मानती हैं। बीरेन्द्र न यद्यपि अपने का उन लोगों की पक्ति के साथ जाड़ लिया था जो भावुकता के विरोधी हैं, तथापि यह भावुकता का ही दूसरा रूप था जो उस युग की दुर्निवार बाढ़ में नवीन प्राणिकारियाँ के साथ बहा ले गया था, सत्य के इस पहलू की ओर मरा ध्यान गया। भाभी का इस सूक्ष्म विदनेपणकारी बुद्धि से मैं चकित था।

मैंने कहा— आपके व्यक्तित्व का एक बिलबुल ही नया रूप मरे आग प्रकट हो रहा है, भाभी।”

पर मरा बात की ओर तनिक भी ध्यान न देकर भाभी बोली—  
“ओर बहन का ही ता। वह बगानी नहीं है, पर क्या वह तनी से कुछ कम भावुक है? प्रभु के प्रति दृढ़ तरह द्विधाहीन भाव न प्रकट विदवाग में समर्पणशील रहने वाली नारी सत्य समय भाव जगन में शक्ति बाद त्रिय किन तरह डूबी रहती होगी, इगदा टाग से अन्तज लगाना कठिन है। यह है असली भाग्येता की मनावलि। मैं फट डनी हूँ लाला, बहन के भीतर एक दिन इस विगुद भावुकता की प्रतिक्रिया का सहरो एा प्रकट वग से मयन उठेगा कि उन्हें रात खना तनी के त्रिय भी समझ न हागा

३६८ "भाभी, आप इस कदर क्यों नाराज हैं बीरेन्द्र से और बेचारी मनिया से ?" मैं अत्यंत शांत और गंभीर भाव से कहा ।

"मैं नाराज नहीं हूँ, कुछ चौंकर भाभी ने कहा । 'मेरी बात का जलत अर्थ न लगाना । और फिर बहन से ! बेचारी बच्चा सी भोली और निश्चल है । उससे भला कोई कस नाराज हो सकता है ! तुम्हारे मन में इस तरह की धारणा ही क्यों जगी मैं समझी नहीं । भला उसके मैं क्यों नाराज हूँगी " कहकर भाभी ने दाँता से अपनी जीभ काटी, जिस काई घोर अपराध की बात मुह से निकल जान के बाद उसके लिये पश्चात्ताप कर रही हो ।

कुछ क्षण चुप रहकर फिर कहने लगी— 'क्या सोचती हुई मैं जान किस बात से क्या कह गयी ! मेरा इस प्रकार का आशय बिल्कुल नहीं था, लाला ! '

' किस प्रकार का आशय ?' तनिव अन्वयने भाव से मैंने कहा ।

'तुम्हारा जी दुखाने का । एसी अच्छी पत्नी का पावर तुम बहुत सुखी हो । सुख के उस गात सरोवर में एक भी डेला फेंकना अशुभ है यह मैं मानती हूँ । मेरे कहने-सुनने में जो कुछ भूल हुई हो उसके लिए क्षमा करना ।

और कहते ही उनका गला जैसे भर आया और आँखें भी कुछ गीली-सी हो आयी । अभी अभी वह भावुकता का इस कदर विरोध कर रही थी और दूसरे ही क्षण स्वयं भाव विह्वल हो उठी । इस पहली को सुलभान में मैं अपने को अन्वय पा रहा था ।

वह भरे अत्यंत निवट बठी हुई थी और उनकी नारंगी साड़ी का बायाँ छोर हवा के वेग से मेरे कौट के साथ अठथेनियाँ कर रहा था । मैं वहाँ अठथेनियाँ देखने में तल्लीन हो गया और मौन बठा रहा । मनिया की तवीअत अच्छी दायवर भर मन में जो एक गुलाबी प्रसन्नता छा गयी थी, उसके ऊपर सहसा एक वाष्प भरी अंधेरी छाया-सी फिर आयी ।

जब बार भवानीपुर होनी हुई वालीगट की ओर मुझे तब दोनः



के बीच के अगोमत मौन को भंग करने के इरादे से मैंने  
 कहा—“भावुकता ऐसी चीज है भाभी, कि कोई भी व्यक्ति  
 चाह उमरे कितना ही घसा करे उससे बच नहीं सकता। अन्तर  
 यह होना है कि कुछ लाग अपन स्वभाव की बौद्धिकता का उम  
 भावुकता का नीच दबान मे सफल होते हैं और कुछ लोग उस  
 भी दबाना पसद नहीं करत। जब भी भाव का आवग उनके  
 उमड उठता है उसे वे गुलकर उमडा देने हैं। इन दोना म से कि  
 धाचरण प्रामनीय है और किसका निदनीय, इसका फसला कर  
 अधिकारी में अपन को नहीं मानता। पर मेरी अपनी यह धारणा है  
 यदि किसी का भावावेग सहज स्वाभाविक रूप म ध्यक्त हो उठे  
 उसमे कोई बुराई नहीं है, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य की दष्टि स  
 अच्छा है। उसग भीतर जम हुए बहुत स विकार धुल जात हैं। भावुक  
 से खराबी तब धाती है जब या ता व्यक्ति उसम इस बदर डूब जाता  
 कि अपन अहम के ऊपर उठ ही नहीं पाता और बरुणा की महज अ  
 उदार मानवीय भावना को आत्म-बरुणा में सामित कर दता है या कि  
 अपनी उस भावुकता को वृत्रिम बौद्धिक उपाया मे फुनाकर एस हवा  
 सामाजिक आदस का रूप दे बठता है जिसका जीवन की वास्तविकत  
 स कोई सम्बन्ध नहा हाता ”

मैं इस तरह बात रहा था जस स्वय अपन आप न कुछ कह रहा  
 होऊँ। भाभी क भीतरी बाना तब मरी बात पहुँची या नहीं मैं बह  
 नहीं सवता। उन्होंने उत्तर म कुछ नहीं कहा और अनमन ढग स  
 मौन बठी रही।

जब बार मवान के अहाते के भीतर प्रवेश करने के बाद रकी तब भाभी धीरे से उतरी और मैं भी उनका अनुसरण किया। उही के कदमा त कदम

मिलाता हुआ चलने लगा। भाभी ड्राइंग रूम में प्रवेश करके एक बीच पर आधा लटने की-सी अवस्था में आराम से बठ गयी। मैं भी उनके पास ही एक सोफा पर चुपचाप बठ गया। कुछ क्षणों तक मन, प्राण और आत्मा का एक अजीब-सी मोहमाया में डुबा देन वाला नशाटा छाया रहा। न जाने पिछले नितन युगा से दबी हुई अस्पष्ट आकाशाएँ और लालसाएँ सध्या के उम प्राया-वकार में मन की किन अंधरी गुफाया से उठ उठकर बाहर भाँकने का प्रयत्न करने लगा। एक मम-पीडक और अनात लाज की सिहरन मेरे सार शरीर और मन के भीतर शीड गयी। उसके लिये प्रत्यक्ष में कोई भी कारण कही नहीं था। न जान कौन अनात टेलीपैथिक तरंग किसके अजानित मन के सूक्ष्म छिद्रों से प्रवाहित होकर मेरे अन्तमन में आकर टकराने लगी थी। मैं एक अनोखी यचनी का अनुभव करने लगा।

भाभी की दा मौन—तथापि मुखर—आवा की रहस्यमयी दा ट में इस समय एक विलकुल नया ही भाव-सदेश भरा था, ऐसा मर अतमन का लगा। उनके गोरे मुख पर एक हलका—बहुत ही हलका—रग चढ आया था जो बडा ही मोहक—और मारक—लग रहा था। न जाने क्यों मेरे मन में सटमा यह प्रवृत्ति जगी कि चुपचाप उठकर बाहर चला जाऊँ। पर पाँवा को जैसे किसी न मनो भारी जजीरों से बांध कर जकड लिया हा।

माहाच्छन्नता की वह स्थिति आधे मिनट से भी कम समय तक यतनाम रही हागी, पर उतने ही असें में उसन मरे भीतर की वह युगो की मर्चिन् और कोई नुई प्रवृत्तिया का उभाडनर गयचान मन से तेजर सचत मन तक एन तूफानी उथल पुथल मचा ग थी।

सहगा भाभी उठ पठी। 'मैं अभी आती हूँ' बहुर वह कमरे में बाहर चली गया। एक बहुत ही हलक, भीटे गुलाबा, रामानी नसे से मर तन में शीर मन में अचानता-सी छा गयी थी। मैं आंगना को

आधा मूँदर सोफा पर और अधिक् आराम से बँठ—प्राय  
सेट—गया ।

४०१

प्राय दस मिनट बाद गाभी लौट आयी । तागा घुली दुइ, चौड़ी नीली गिनारो की एक दूध की तरह सफेद माडी पहने, नाडी व आँबल के एक छार पर चाबी का गुन्दा बाँधे, नये पाँच माद्री की प्रतिमूर्ति सी बह मरे पास आकर खी हो गयी । उनक मुख पर प्रमद हाव भाव म, सपूर्ण गति म सहज-स्वाभाविक चलना और निष्पट सहृदयता भरी हुई थी जो मुझे अप्पम नयी लग रही थी । पर स्वाभाविक तमन पर भी वह मरलता भोलोपन का परिचायक नहीं थी । मेरा अतमन, न जान क्या ऐसा अनुभव कर रहा था कि उनके उस नये रूप और नये वेप की मारी अदृशिमता के अनराल न कृत्रिम नाटकीयता का-मा एर अति अस्पष्ट आभास भाँक रहा है । पर अपनी उस अनुभूति का कोई प्रत्यक्ष कारण मरे पास नहीं था । प्रत्यक्ष म भाभी था वह रूप मुझे कसा प्रिय लग रहा था कि मैं मुख दष्टि स कुछ क्षणो तक उनकी आर देखता रह गया ।

ताला चलो !' अत्यंत स्निग्ध, मधुर आश्रह मरे म्बर म 'गाभी न कहा ।

उनकी आवाज से मैं चौंक-सा उठा । मुझे एसा जगा जस किसी तीसरे ही ध्यक्ति ने अनजित रूप से कमर म प्रबल करके मुझे पुकारा हो ।  
कहाँ ?' मैंन आत भाव स पूछा ।

“रतो, रमाइ के कमरे म । और सब खाना तयार है, फिक कसो रियाँ बलकर पकानी हैं । मैं पकतो जाऊँगी, तुम खात जाधार्गे । चला ।

जा काम नौकर मा रसोइया कर सकना है, और करता आया है, उम तय स्वीकार करके भाभी मेरे ऊपर विनोय कृपा कर रही थी, मह मैं समझ रहा था । उनकी धाना का गिरोपाय करता दूधा मैं बिना किसी तकलुच के उठ लग हुआ ।

रमोई के कमर म जातर भाभी न एक पीड़े पर मुझे बिठा दिया और स्वयं घँगीठी के पास बठ गयी । एन घाली पर माटा पाटी' पीसी

हुई रखी थी, जिसे हल्दी से रंग लिया गया था। नौकर टिकियाँ बनाता जाता था और भाभी उसमें 'पीठी' भरकर बड़े ही नाजुक अदाज से बेलती जाती थी और एक एक करके जलते हुए घी की कढ़ाई में डालती जाती थी।

"बहन ने मुझे बताया है कि तुम्हें मछली बहुत पसंद है" मुख पर मृदु मुस्कान भलकाती हुई, और एक भलक अस्पष्ट अथ भरी सावैतिक दृष्टि से मेरी ओर और फिर कढ़ाई की ओर देखती हुई भाभी बोली। "मैं बहुत दिनों से सोच रही थी कि तुम्हें एक दिन अपना हाथ से पकाकर मछली की कचौड़ी खिलाऊँ। कुछ ऐसे चक्कर आते चले गये कि उससे लिये मौका ही नहीं आया। आज सुबह, जान बूझकर, अचानक मुझे फिर उसी बात की याद आयी। मैं नौकर में रोहू मछली लाकर, उवालकर, पीस रखने के लिये कह दिया था 'कहकर भाभी पहली घान की कचौड़ियाँ छान स उतारने लगी।

चटनी, अचार और तरकारियाँ पहले ही से मेरे आगे बटारो और प्लेटों में सजाकर रख दी गई थी। पहली घान से दो अच्छी तरह तली हुई कचौड़ियाँ छाँटकर भाभी ने मरी खाली में डाल दी।

'चल कर बताओ, कैसी बनी हैं।' कहने हुए उनके मुख पर म्निग्ध सलज्ज और उल्लास भरी मुमनान भलक उठी। उनका गोरा मुख या तो आग की आँच से या और किसी कारण से तमतमा-सा उठा था।

मैं कुछ न समझता हुआ भी जब बहुत-कुछ समझने लगा था। पर उस 'बहुत-कुछ' में स कोई भी बात मेरे आगे स्पष्ट नहीं हो रही थी। केवल एक मीठी-कड़वी, खटमिट्टी अनुभूति से मन भर गया था, जिससे कचौड़ी के स्वाद में भी चरपरे और कसले का एक विचित्र मिश्रण मुझे महसूस होने लगा। यह बात मैं एक सेकंड के लिये भी नहीं भूल पाता था कि मेरे साथ भाभी के उस प्रसाद का चखना में शरीर होने वाला दूसरा कोई नहीं है—धीरे-धीरे भी नहीं।

फिर भी मैं खाता चला गया और काफी खा गया। कचौड़ियाँ वास्तव में बहुत स्वादिष्ट बनी थी। खाते खाते मैं बड़ा—“यह तो मैं पहले ही जान गया था कि आप खाना बनाने की कला में निपुण

पर इस कदर निपुण है, यह मैंने आज जाना । वीरेन्द्र

४०३

यह बात मुझे नहीं बतायी थी ”

जिस प्रकार स्विच बंद होने पर विजली की दहकती हुई भ्रंगीठी मक्कर एबदम म्लान हो जाती है ठीक उसी तरह वीरेन्द्र का नाम सुनते । भाभी के मुस की चमक पल में विलीन हो गयी । वह सिर नीचा किये पचाप कचौड़ी बेलती चली गयी । मैं बड़े सकोच में पड गया । मुझसे ऐसी गलती हुई यह मैं ठीक से समझ नहीं पाया, हालांकि अपने अन्तमन में मैं यह अनुभव कर रहा था कि वीरेन्द्र का उल्लेख मैंने भोके किया है और उसकी मनोवज्ञानिक प्रतिक्रिया पूणत स्वाभाविक है ।

उसके बाद मुझे कुछ भी बोलने का साहस नहीं हुआ, और मैं भाभी की कुछ बोली । उनके मुख का रंग लाल से सफेद और सफेद से स्याह होता चला जा रहा था । कड़ाई से गरम कचौड़ी उतारकर जब वह मेरी शाली में डालने लगी तब सहसा उनकी दायी आंख के एक कोन से एक बूँद आंसू टपक कर मेरी शाली के पाम गिर पडा ।

मैं हैरान था । मेरे हाथ का वीर हाथ ही में रह गया । कुछ क्षणों तक बेवकूफी की तरह उनकी ओर ताकता रहा । वह आंखें नीचे की ओर किये कचौड़ी बेलती जाती थीं और बीच-बीच में बायें हाथ से आंसू तोड़ती जाती थीं ।

“मुझमें कोई बड़ी भूल हो गयी है, भाभी, क्षमा करना ।” अपने हो न रोक सकने पर मैंने कहा ।

भाभी उत्तर में कुछ नहीं बोली । केवल एक बार फिर घुपचाप बायें हाथ से आंसू पाछतर उहनि बेली हुई कचौड़ियाँ बनाई मैं डाल दी ।

कचौड़ी का सारा स्वाद मेरी जीभ में बरेले और नीम के सम्मिलित कटवेपन में बदल गया था । एक घूट पानी पीकर मैंने किंगी तरह उस कटवे पटाप को गले के नीचे उतारा ।

हुई रखी थी, जिसे हल्दी से रंग दिया गया था। नौकर टिकियाँ बनाता जाता था और भाभी उसमें 'पीठी' भरकर बड़े ही नाजुक अदाज से बेलती जाती थी और एक एक करके जलते हुए घी की कढ़ाई में डालती जाती थीं।

"बहन ने मुझे बताया है कि तुम्हें मछली बहुत पसंद है" मुख पर मृदु मुस्कान भलकाती हुई और एक भलक अस्पष्ट अथ भरी साकेतिक दृष्टि से मेरी ओर और फिर कढ़ाई की ओर देखती हुई भाभी बोली। "मैं बहन जिनो से साच रही थी कि तुम्हें एक दिन अपने हाथ से पकाकर मछली की कचौड़ी खिलाऊँ। कुछ ऐसे चक्कर आते चल गये कि उसके लिये मौना ही नहीं आया। आज सुबह जाने वयो, अचानक मुझे फिर उसी बात की याद आयी। मैंने नौकर से रोहू मछली लाकर, उबालकर पीस रखन के लिये कह दिया था "बहकर भाभी पहली घान की कचौड़ियाँ छाने से उतारन लगी।

चटनी, अचार और तरकारिया पहले ही से मेरे आगे कटोरा और प्लेटा में सजाकर रख दी गई थी। पहली घान से दो अच्छी तरह तली हुई कचौड़ियाँ छाटकर भाभी ने मेरी थाली में डाल दी।

"चल कर बताओ, कैसी बनी हैं। बहते हुए उनका मुख पर स्निग्ध सलज्ज और उल्लास भरी मुनवान भलक उठी। उनका गोरा मुख या तो आग की आंच से या और किसी कारण से तमतमा-सा उठा था।

मैं कुछ न समझता हुआ भी जस बहुत-कुछ समझन लगा था। पर उस 'बहुत-कुछ' में से कोई भी बात मेरे आगे स्पष्ट नहीं हो रही थी। केवल एक भीठी-बडवी, खटमिट्टी अनुभूति स मन भर गया था जिससे कचौड़ी के स्वाद में भी चरपरे और कसले का एक विचित्र मिश्रण मुझे महसूस होन लगा। यह बात मैं एक संकेत के लिये भी नहीं भूल पाता था कि मेरे साथ भाभी के उस प्रसाद का चखन में गरीब होन वाला दूमरा कोई नहीं है—बीरेद भी नहीं।

फिर भी मैं खाता चला गया और काफी खा गया। कचौड़ियाँ वास्तव में बहुत स्वादिष्ट बनी थीं। खाते-खाते मैं बड़ा—"यह तो मैं पहले ही जान गया था कि आप खाना बनाने की कला में निपुण

हैं, पर इस कदर निपुण हैं, यह मैंने आज जाना । वीरेन्द्र

४०३

ने यह बात मुझे नहीं बताया थी ”

जिस प्रकार स्विच बंद होने पर बिजली की दहकती हुई अंगीठी बुझकर एकदम म्लान हो जाती है ठीक उसी तरह वीरेन्द्र का नाम सुनते ही भाभी के मुख की चमक पल में विलीन हो गयी । वह सिर नीचा किये चुपचाप कचौड़ी बेलती चली गयी । मैं बड़े सकोच में पड़ गया । मुझसे कौन ऐसी गलती हुई यह मैं ठीक से समझ नहीं पाया, हालांकि अपने अन्तमन में मैं यह अनुभव कर रहा था कि वीरेन्द्र का उल्लेख मैंने बेमौने किया है और उसकी मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया पूर्णतः स्वाभाविक है ।

उसके बाद मुझे कुछ भी बोलने का साहस नहीं हुआ, और न भाभी ही कुछ बोली । उनके मुख का रंग लाल से सफेद और सफेद से स्याह होता चला जा रहा था । कढ़ाई से गरम कचौड़ी उतारकर जब वह मेरी थाली में डालने लगी तब सहसा उनकी दायी आंख के एक कान से एक बूँद आँसू टपक कर भरी थाली के पास गिर पड़ा ।

मैं हैरान था । मेरे हाथ का कोर हाथ ही में रह गया । कुछ क्षणों तक बेवकूफी की तरह उनकी ओर ताकता रहा । वह आँखें नीचे की ओर किये कचौड़ी बेलती जाती थीं और बीच-बीच में बायें हाथ से आँसू पोंछती जाती थीं ।

मुझमें कोई बड़ी झूल हो गयी है, भाभी, क्षमा करना ।’ अपने को न रोक सकने पर मैंने कहा ।

भाभी उत्तर में कुछ नहीं बोलीं । केवल एक बार फिर चुपचाप बायें हाथ से आँसू पाछकर उन्होंने बेना हुई कचौड़ियाँ कढ़ाई में डाल दीं ।

कचौड़ी का सारा स्वाद मेरी जीभ में करेले और नीम के सम्मिलित कड़वेपन में विलीन गया था । एक घूट पानी पीकर मैंने किसी तरह उस कड़वे पदार्थ को गले में नीचे उतारा ।

भाभी ने जब एक और गरमागरम कचौड़ी मेरे मना करवा के बावजूद, हठपूर्वक मरी थाली में डाल दी तब मैंने कहा—“धब पट में

तनिक भी जगह नहीं है भाभी, सब मानो । अब मत दम  
कहकर पेट पर हाथ फेरता हुआ कुछ अस्पष्ट-सी चिं

म मान हा गया ।

‘अभी तो तुमने दा कचौडिया भी नहीं खायी, लाला, अब  
तुम कैसे उठ सकते हो ।’ कहते हुए उहान सहज स्वाभाविक सि  
दष्टि से मेरी ओर देता, यद्यपि उनकी आँखें अभी तक गीली थी  
चमक रही थी । ‘अभी कम ने कम चार कचौडियाँ तुम्ह ओर र  
होगी नहीं तो मैं बुरा मानूँगी ।’ उाकी आँवा म एक दुष्टत  
मुसकान भलक उठा ।

मैं मत्र मुग्ध-मा आश्चर्य भरी दष्टि से उनकी ओर देखता  
पापाण-भूतिवत् जड बठा रहा ।

उसके बाद वह अत्यंत प्रसन्न भाव से मरी वाली म एक एक  
कचौडियाँ टालनी चली गयी और मैं अनमते भाव से बिना किसी वि  
के, खाता चना गया । उनी मन स्थिति म न जाने कितनी कचौडियाँ  
गया । सहमा याद आया कि मैं बहुत खा गया हूँ । ‘अब बस  
भाभी ! मैंने प्राय चिल्लाकर कहा । तब तह एक और कचौडी उ  
जा रही थी । मैंने दोनों हाथा म वाली ऊपर उठा ला ।

भाभी मेरा यह नाटक देखकर खिलखिला उठी । ‘अच्छा, अब  
अब नहीं दूँगी,’ उहोने कहा, ‘ वाली नीचे रख दो । तुम्हारे व्य  
गजन के बाद मेरा साहस भी जाता रहा है ।

चौके स उठपर हाथ धोकर मैं सीधे अपने कमरे  
चला गया । कुछ देर तक पलंग पर चारा खाने वि  
लेटा रहा । उसके बाद सहमा हडबडाना हुआ  
सडा हुआ । रक पर हिन्दी का एक मनोवैज्ञानिक उपमास पडा है



था। एक दिन मैं किसी बुक-स्टाल से उसे खरीद लाया था। ४०५  
तब से वह वसा ही पड़ा हुआ था। मैंने उसे छुआ तक नहीं

था। आज अचानक उस पढ़ने की प्रेरणा जगी। उस प्रेरणा के मूल में  
कौन प्रवृत्तियाँ काम कर रही थी, यह स्वयं मेरे आगे स्पष्ट नहीं था।

मोफा पर अधलेटी अवस्था में बैठकर उपयास का पहना परिच्छेद  
खोलकर पढ़ने लगा। दो पृष्ठ भी पूरे न पढ़े होंगे कि भाभी ने कमरे में  
प्रवेश किया। उनके मुख पर स्निग्ध मधुर मुस्मान के अलावा एक अस्पष्ट  
लात की-सा हलकी—बहुत ही हलकी—रगिनी छाया मलक रही थी,  
एसी भरी धारणा है। या विजनी की वृत्ति के कृत्रिम प्रकाश में मेरी ही  
आँखा को कुछ धोखा हुआ है।

उनके उस अस्पष्ट लज्जामास की छाया जैसे मने ऊपर भी पड़ गयी।  
अपने का उम छाया में मुक्त करण का प्रबल प्रयास करने हुए मैंने  
अपेक्षाकृत दौंगी स्वर में कहा—‘बड़ी भाभी खाना खा लिया क्या?’

हाँ, कुछ ही हुए—म स्वर में भाभी ने कहा, “मर आने से तुम्हारी  
पढाई में विघ्न हुआ इतने लिय मैं दुःखी हूँ।”

“ओफफाह! बड़ा तनखुफाजी सीख गयी हो तुम भाभी। यह  
लपनीवा रग तुम पर क्या से चढ़ा? बड़ी।” कहकर उह विठान के  
उद्देश्य से मैं यत्रवत् उनका हाथ पकड़ लिया और पकड़त ही तत्काल,  
जैसे विजनी के धरने में, हाथ हटा लिया। “बड़ी! मैं फिर बड़ा  
और अपनी बगलवाला कुर्मी की आर मन्त किया।

भाभी क्षण भर के लिय रकी, जम निमी अममान में हा। फिर  
धीरे से बैठ गयी।

कमरे का तारा धातावरण मुझे एक अनोखी, अन्तम अवगादमयी  
अनुभूति में भार-ग्रस्त मा लगने लगा था जिनमें मेरे और भाभी के बीच  
में एक अस्वाभाविक व्ययधान-सा लडा कर लिया था। उने ज्ञान का  
पूरा निरन्तर करत हुए, वातावरण को महज-स्वाभाविक बनाने के उद्देश्य  
में मैंने पढ़ा—‘आज तुमने इतना अपिरे निना दिया, भाभी कि कुछ  
पूछा मत। पढ़ में अब पानी पीने के लिय भी जगह नहीं रह गयी है  
हालांकि यदी प्यास लगी है।’

४०६ "यह तुम्हारा वहम है। डटकर पानी पियो, कुछ नहीं होगा।' कहकर उन्होंने घड़ी का बटन दबाया।

नौकर के आने पर उन्होंने उसे एक गिलास पानी लाने के लिये कहा। पानी आया और भाभी की इच्छानुसार मैं उसे गटक गया।

'देखो जगह निकल आयी न ?' भाभी ने हँसते हुए कहा। मैं भी हस दिया।

"इसी तरह सबके लिये जगह निकल आती है,' एक रहस्यमयी मुसकान मुख पर झलकाते हुए भाभी ने कहा, 'केवल सकीण मन को उदार बनाने की आवश्यकता है।'

'तुम्हारा आंगण मैं कुछ समझ नहीं।' अपनी परशानी को छिपाने का व्यथ प्रयत्न करता हुआ मैं बोला।

'समझन की कोई आवश्यकता भी नहीं है। कहकर वह उठने लगी।

"अरे बठा भाभी अभी तुम ठीक से बठ भी न पायी कि उठने लग गयी। तुमसे एक बहुत जरूरी बात मुझे पूछनी है।"

मरी बात क ढङ्ग से भाभा की आँखा म तीव्र बूतूहल झलक उठा और वह बठ गयी।

"क्या बात है कहो। परशानी की सी मुखमुद्रा क साथ उन्होंने पूछा।

'कोई खास बात नहीं है, केवल'

"अभी तुम कह रहे थे कि जरूरी बात है और अब कहते हो कि कोई खास बात नहीं है। बड़े अजीब आदमी हा भाई।' कहते हुए एक हलकी-सी खीभ का आभास उनके स्वर म व्यक्त हो उठा।

'तुम इस तरह गुस्सा हो जाओ गी ता मरा रहा-सहा साहस भी जाता रहगा।'

अच्छा, लो अब मैं गुस्सा-बुस्सा कुछ नहीं हूँ, जतद बोलो क्या बात है! कहकर वह बूसी पर जमकर बठ गयी। उनके मुख पर इस बार एक ठनिम मुसकान का क्षीण आभास बतमान था और वह अत्यंत बूतूहल मरी दष्टि से मरी ओर दख रही थी।

उनके वृत्तहल को अधिक बढ़ाकर उन्हें परेशान करना ४०७  
 उचित न समझकर मैंने कहा—“बात कुछ नहीं है, मैं केवल  
 यह जानने के लिये तब से उत्सुक हूँ कि—जब तुम मुझे खाना खिला रही  
 थी तब सहसा मेरी एक साधारण बात से तुम रो क्यों पड़ी।”

“ओह, यह बात।” कहते हुए भाभी के मुख पर सहसा एक  
 गाढ़ी धधेरी छाया घिर आयी।

दो एक क्षणों तक वह मेरी शोर अनमनी दृष्टि से देखती रही और  
 फिर आँखें कुछ नीची करके दाएँ हाथ की तजनी के नाखून से बाएँ हाथ  
 के अँगूठे का नाखून खुरचने लगी। कुछ क्षण तक मौन रहने के बाद  
 उन्होंने तजनी में साफा के हत्ये पर नाकेतिक लिपि में कुछ लिखते हुए  
 कहा—“मेरे रोने का कोई विशेष कारण नहीं था—मैं रोयी भी कहाँ  
 थी। तुमन एक छापीली सी बात को बहुत बढ़ा बनाकर अपना मन मर ख  
 लिया है।”

“नहीं भाभी, तुम चाहें कुछ भी कहा, बात वह छोटी वदापि नहीं  
 थी। तुम्हारे के मौन आँसू किसी भी हानत में साधारण नहीं थे—  
 हालाँकि उनका कोई भी कारण मेरे आगे अभी स्पष्ट नहीं हुआ है। मैं  
 केवल अनुमान लगा सकता हूँ, पर अनुमान में वास्तविकता से बहुत अंतर  
 होता है।”

“तुम्हारा अनुमान कभी गलत नहीं होगा यह मैं जानती हूँ।” कहते  
 हुए भाभी ने उमडने का उद्यत आँसुआ को अपनी साड़ी के आचल से  
 पोछा।

“यह ला, तुम फिर रो पडा। अब से मैं वार्द भी प्रश्न तुमने नहीं  
 करूँगा। इस बार मुझे क्षमा कर दो।” मैंने किंचित मान भरे स्वर में  
 कहा।

‘नहीं नहीं ऐसी बात न कहो, जाना। तुम भी अगर नाराज हों  
 जायामें त फिर मरा क्या ठिकाना होगा। तुम नहीं जानते, मैं  
 जानता भी अनजान बन रहना चाहने हा, कि मेरे ऊपर क्या गुजर  
 रही है।’

मैं चुप रहा। केवल ध्यानपूर्वक उनकी ओर देगता रहा।

एक बार फिर आँखें पोंछकर भाभी ने कहा—“देखते ता हो कि सारा दिन बीत गया, इतनी रात गुजर चुकी, पर अभी तक उठ घर आन का प्रवकाश नहीं मिला। पिछले दो वर्षों से प्राय यही हाल है। कभी भूले भटके उठ मरी सुष भले ही आ जाय, पर अधिकतर यही हाल रहा है। आज तुमने कितने प्रेम से मेरे पास बैठकर मेरे हाथ का बनी गरम गरम बच्चोडिया खायी। आज वे दिन मुझे याद आ रहे हैं जब वह भी इसी तरह चौके पर बैठकर मेरे हाथ की बनी गरम-गरम चीं चाँ भ मुख पात ५। पर अब तो उठ अपनी हा सुष नहीं रहती दूसरों की भावनाओं की ओर ध्यान देने का अवकाश उठे कहा। पर मैं गलत कह रही हूँ दूसरा की भावनाओं की ओर उनका ध्यान इतना अधिक चला गया है कि अपनी और अपने स्वजनों की ओर से एकदम विमुख हो गये हैं। सब तो यह है कि व्यक्ति का कार्य मूल्य उनके लिये नहीं रह गया है—ममाज ही उनके लिये सब कुछ बन गया है। पर सभी उनकी तरह अपने-यत्तित्व का इस कदर मिटा सकने में समर्थ नहीं हैं, यह बात उनके ध्यान में नहीं आती। मुझे ऐसा लगता है कि हम दोनों के सम्बन्ध में कहा कोई भूल रह गयी है। कभी कभी तो मैं यहाँ तक साधन लगती हूँ—हालांकि मेरा ऐसा सोचना अशुभ है—कि मुझे किसी कारण से उन्तकर ही वह शापित जनता के उद्धार में सम्बन्धित आगलन के बीच में कूद पड़े हैं। मैं बहुत कोशिश करती हूँ कि इस तरह के विचार को मन से हटा दूँ, पर यह एक रत्न की तरह मेरे अंग में जम गया है। मुझे भय है कि यह रत्न या तो मुझे पागल बनाकर छोड़ेगी या विद्रोह

क्षण भर के लिए उनकी आँखा में एक अस्वाभाविक-सी चमक भनक उठी—एक विचित्र रूप से भयावही सी चमक। मैं डर गया। पर दूसरे ही क्षण वह चमक एक म्लान करण छाया में बदल गयी।

मुझे पता कि रात के उस अपशाशुत सप्ताह में उस जनमानसहीन सुनमान भनान में किम नारी के पास बठा हुआ है उसके भीतर एक दूसरी ही दुनिया का कालाहन मचा हुआ है। उस दुनिया या पृथ्वी के प्रत्यक्ष मध्य विषममम जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। वहाँ का जीवन

कसा ही हवाई और विजातीय क्या न हो, अवश्य ही वह ४०६  
 बड़ा माहुर होगा। उसकी माहुरता का आभास मुझे  
 भाभी की स्वप्नाच्छन्न सी आत्मा की अभिव्यक्ति से लग रहा था। भले  
 ही उनकी आत्मा की वह स्वप्न माया दुःस्वप्न-छाया हो, पर मेरे लिये  
 उसका आकषण आज पहली बार अत्यंत तीव्र और पूणिमा की राशि  
 के समुद्र की तरह उदेलन मिद्ध हो रहा था। अपने व्यक्तित्व को अचानक  
 इस तरह उगमगत देखकर मैं कांप उठा।

मैं एक भी शब्द सात्वता के रूप में नहीं बोला। मुझे स्वयं अपने  
 को समझाने की आवश्यकता आ पड़ी थी। केवल मौन भाव से, जल्मुक  
 जिनासा भरी दृष्टि से उनकी ओर देखता रहा।

भाभी की कुछ देर तक एक अजीब-सी रहस्यमयी जिनासा दृष्टि  
 मेरी ओर देखती रही। उसके बाद सद्मा उचककर उठ खड़ी हुई  
 जिस काई भौतिक छाया देवदर भयभीत हो उठी हो, और बिना कुछ  
 कह बमरे के बाहर चली गयी।

उत्तर चले जाने के बाद मैं पलंग पर लेट गया। मन धका हुआ  
 था और शरीर भी मन का अनुसरण करने की ओर प्रवृत्त हो रहा था।  
 लेटते ही अचानक अपने लगी और मैं सो गया। अल्पकाल और प्रकट में  
 अथहीन स्वप्न देखने के बाद जब जगा तब पहले तो मुझे लगा कि  
 मैं कोई घट सो चुका हूँ और रात बीतने पर हाँ, पर दूसरे ही क्षण  
 मैं समझ गया कि मुझे सोच दा घट से अधिक समय उठी हुआ है।  
 फिर दुबारा मान की तयारी कर ही रहा था कि सरता बाना म  
 पाए ही नहीं बरन हुए बापनिन की मयुर निपाद भरी मूच्छता  
 गुज उठी। मैं नींद की चिन्ता हा भ्रूण गया और एकांत ध्यान-  
 पूर्वक बाना का उमी ओर केन्द्रित किम रहा जहाँ मे वह प्राण-  
 हिन्नाचक स्वर-सहरी तरंगित हो रही थी। पहले लगा कि पास बात  
 किसी भवान ने आ रहा है। पर बाद में मरा भ्रम जाना रहा  
 और यह स्पष्ट हो गया कि उही भवान के किसी कमरे में कोई बापनिन  
 बजा रहा है किमन मैं नाया था।

मूच्छता अभी अत्यंत तीव्र स्वरां में भरन हा रही थी, तब कोई

मला चीरकर रोना हुआ विलाप कर रहा हो, वभी अत्यंत कष्ट-कोमल कल कण्ठ के स्वर में बदल जाती थी।

मेरे भीतर की बहुत दिनों की, बहुत युगों की भूली हुई मीठी वेदनाएँ, और लाखों-करोड़ों वर्षों से प्राणों के अतल में दबे पड़े अरमान अपनी जड़ता त्यागकर एक एक करके उमड़ उठे। मैं उस उमादक संगीत की हवाई स्वर-सहरी में खा गया। किसी के अज्ञात मन से निकली हुई एक किरणों ने प्रत्यक्ष भौतिक जगत् के रोम कूपों को भेदकर उसने अंतराल में छिप हुए एक अप्रूप मनोहारी अतीन्द्रिय जगत् को मेरी भीतरी आखा के आगे उद्भासित कर दिया। लगा कि मेरे पिछले जीवन के सारे अनुभव उसे एक क्षण के अनुभव के आगे अत्यंत तुच्छ और झूठे थे। मैं स्थिर न रह सका। उठ बठा और फिर पलंग में नीचे उतरकर नगे पाव पिछवाड़े की ओर के बरामद में जा खड़ा हुआ। मेरा अनुमान ठीक ही था। आवाज उसी कमरे में—कोन वाले कमरे से जहाँ भाभी सोती थी—आ रही थी। चुपके चुपके, दबे पाँवों में धीरे—बहुत धीरे—उसी कोन वाले कमरे की ओर बढ़ा चला गया। वायलिन के धर-धर-कपित व्याकुल बिह्वल स्वर लंबी सिमकारियाँ भरते हुए प्राणों को आधकाधिक पुलक भरे घफा से हिल चारते चले जा रहे थे।

ठीक भाभी के कमरे की मिडकी के पास खड़े होकर मैंने लखा, कमरे में अंधेरा छाया हुआ था। दरवाजे का एक त्रिवाड खुला था, एक बंद था। एक कदम आगे बढ़कर घड़ त्रिवाड की आड़ में खड़ा हो गया। कितनी देर तक खड़ा रहा, वह नहीं सकता—वायलिन के अप्रूप स्वर-भागर में इस तरह निमग्न हो गया था मैं। मेरी चेतना तब लौटी जब एक अत्यंत तीव्र,

मर्मन्तिक, लवी आकुल झरार मे वायलिन के तारो की तरह मेरे मन के सारे तार एक साथ झलमना उठे। मेरा सारा गरीर एक अजीब-सी पुलक पीढा से धरधरा उठा और मेरे हिलन स त्रिचाड चरचरा उठा।

“कौन ? भीतर से आवाज आयी।

इच्छा हुई कि तुरत भागकर अपने कमर मे चला जाऊँ। पर वह मेरी पट्टी चारी थी और मैं इम कदर हीसदिल ही उठा कि भागने का भी साहम मुझमे न रहा।

“कौन ?” तीखे किन्तु तनित धवरामे हुए स कूठ से फिर आवाज आयी।

“कोई नहीं मैं हूँ—तू-पद ‘मैंन दबी हुई आवाज म कहा।

“कौन लाला ?” कहकर भाभी उठकर बाहर चली आयी। फिर वाली—“क्या बात है ? यहाँ सटे क्यों हो ? उनकी आवाज मे एक अजीब दद भरा हुआ था—जा मय से मिथित या मा विम्मय से मैं कह नहीं सकता।

‘या हो चना आया था,’ मैं अपने स्वर मे वृत्रिम गाम्भीय भरने का प्रयत्न करत हुए कहा, “वायलिन की आवाज बहुत अच्छी लग रही थी। बद क्या कर दिया, मामो, और बजाओ।”

बाई उत्तर न्य बिना हीं भाभी भीतर चली गयी और उन्होंने खट से बत्ती जला दी। जिस स्वप्नमय वातावरण का अत्यय मोहक जान जानो दर तक मेरी चेतना क चारा और तना हुआ था वह बत्ती के प्रकाश मे आघे से अधिक छिन्न हो गया।

“मामो, बठा !” मेरी और बिना दखे हीं भाभी न भीतर स क्षीण किन्तु गभीर स्वर मे कहा।

मैंन अपराधी की तरह बर्षते हुए पग स भीतर प्रवण किया। धामन-नामने दो ऊबे गद्देदार पर्लंग विछे हुए थे, जिन पर दूध की तरह सके दो ताजा धुली हुई चादरें बिछी थी। उन दो पर्लंगों से त्रिरीण चनाही हुई एक भाग बुर्मी दीवार से प्राय सटी हुई पही थी। मैं उसी पर पीर से बठ गया।

४१२ "क्या तुम्हे भी नींद नहीं आती ?" भाभी ने आधी दृष्टि से मेरी आँखें देखते हुए धीरे से कहा ।

'मैं तो बेखबर सो गया था । जब अचानक आँखें खुलीं तो वायलिन का स्वर कानों में गूँज उठा । मुझे पता नहीं था, भाभी, कि तुम इतना अच्छा वायलिन बजा लेती हो । बड़ी ही उमादक स्वर लहरी थी वह ।' मैंने सहज भाव से, अकृत्रिम भावुकता के साथ कहा ।

भाभी मौन गभीर दृष्टि से सामने वाले पलंग की ओर देखती रही । उम स्तब्ध मौन से मेरा भावावेग थम गया । मैंने अनुभव किया कि मैंने भाभी का एकांत भाव निमग्नता में विभ्रन डालकर वास्तव में बड़ा भारी अपराध किया है ।

कुछ क्षणों तक कमर में आधी रात की मृत्यु मौन निम्नबद्धता छापी रही । अपने को उस अगाध स्थिति से उबारने के उद्देश्य से मैंने पूछा— 'क्या बीरद्वार अभी तक नहीं आया ?'

'नहीं । फग की ओर दखते हुए भाभी ने रुखे स्वर में सक्षिप्त उत्तर दिया ।

'बहुत देर हो गयी !'

'आज आयेगे भी नहीं—एक आदमी उनका लिखा चिट्ठा दे गया है वह अब भी फग की ओर दख रही थी ।

क्या लिखा था उसमें ?' मैंने अकृत्रिम उत्सुकता से पूछा ।

उन्हें एक आवश्यक कार्य में अचानक श्रीरामपुर जाना पड़ गया है । दो दिन बाद लौटेंगे । पलंग पर नापून से कुछ लिखती हुई भाभी बोली ।

'निश्चय ही किसी हड़ताल या इसी तरह के किसी मामले के सिलसिले में गया होगा ?'

'हो सकता है । पहल की ही तरह रुखे भाव से भाभी ने उत्तर दिया ।

'अच्छा भाभी, 'रुखता हूँ ।' मैंने सहसा सड़े हावर कहा ।  
'वायलिन तो अब आप बजायेंगे नहीं, मैंने विभ्रन डाला, इसके लिये



सामने म चला आया ।

मेर बाहर जाते ही भाभी न फिर खट-से बत्ती बंद कर दी । बत्ती बंद होत ही मैं फिर ठिठककर मूर्खों की तरह जहा जा तहा खडा हो पा । मेर पाँव अपने आप हिन रह थे और सिर भनभना रहा था । एण भर के निय अनिश्चित स्थिति म खडा रहा और उसके बाद फिर क बंदम भाभी के कमरे के दरवाजे की ओर लौटा ।

'भाभी ! मैं न कांपती हुई आवाज म धीरे से कहा । कमरे के दरवाजे म वह वहाँ पडी था बटी हैं, यह मैं कुछ भी नही देख पा रहा था ।

खट से बत्ती फिर जल उठी । उसके आकस्मिक तीव्र प्रकाश से मेरी आँखें चौंधिया गयी ।

"क्या है ?" दरवाजे के पास आकर भीतर स ही, भाभी न प्रकट हो गान स्वर म, अत्यंत गभीर मुद्रा म कहा । एक झलक म मैंने देखा, उनके गान उजले सुंदर मुख पर, उनकी माहक, चुंबकीय आँखा म, भय और विस्मय का लस भी नही रह गया था । उसम थी केवल शांत, मौन निपाद की एक सहज स्निग्ध छाया ।

"कुछ नहा, केवल फिर एक बार क्षमा चाहता हूँ ।" बहकर मैं उमी शण बडा तेजी से अपने कमरे की ओर लौट पडा । मेर भीतर, जाने कहीं स, यह आवाज उठ रही थी— 'व्यथ है—सब कुछ व्यथ हुआ जा रहा है । सारा जीवन व्यथ चला जा रहा है ।'

मैं कुछ भी नही समझ पा रहा था कि जीवन की व्यथता की याद किम कारण उस विशेष क्षण म मुझे आयी ।

अपन कमरे म जाकर फिर पलंग पर लेट गया, पर नींद नही आती थी । रात भर करवटें बदलता रहा । बाना मे वायलिन के वही हिल्लानक स्वर गूँज रह थे । सबेर होने क कुछ ही समय पूव आँसु लगी ।

"साला उठो !"

घानें गालकर दस्ता तो भाभी सामन गडी थी । निडरियों क सीगा

४१४      से धूप छनकर सारे कमरे में फल गयी थी। मैं दोन हाथों से आँखें मलता हुआ हडबडाता हुआ उठा।

“रात में क्या नींद नहीं आयी ?” सहज स्वर में भाभी ने पूछा।

मैंने आँखें मलना छोड़कर उनकी ओर देखा। एक सहज, स्निग्ध शांति का हलका आभास उनकी दोनों आँखों में छाया था। उनमें न तो पिछली रात का विपाद था न विस्मय, नये प्रातः का हृष्य था न उत्साह, और न डिठाई थी न सकोच। सब-कुछ सहज, शांत, सयत्त और सुंदर था।

‘तुम्हारा अनुमान ठीक है, भाभी। सुबह आँखें लगी और मैं बेखबर सो गया। बड़ी देर हो गयी है      ’

नौकर एक ट्रे में चाय और नाश्ता लेकर आ पहुँचा। ट्रे का एक कोने में रखकर उसने मेरे पलंग के आगे मेज लगा दी और फिर ट्रे को उसी पर रख दिया। सामने की ओर उमने एक कुर्सी भाभी के लिये लगा दी।

“बठो भाभी।” मैंने कहा।

भाभी धीरे से बठ गयी।

‘पर मैं अभी नाश्ता तो नहीं कर सकूँगा। हाँ, चाय जरूर पी लूँगा।’ मैंने ससकोच कहा।

भाभी मुस्करायी। “ठीक है, चाय ही पी लो।” कहकर वह मेरे प्याले में चाय डालने लगी। अदाज से चीनी और दूध डालकर उ हान प्याला मेरे आगे बढ़ा दिया। मैं प्याला उठाकर धीरे से पीने लगा और पीता हुआ भाभी के प्रत्येक हाव भाव, प्रत्येक अंगभंगी पर ध्यान देता रहा। भाभी ने उसी गंजो अदाज से अपने लिये भी एक प्याला बनाकर अपनी न बहून लम्बी न बहुत चौड़ी वायी हथेली पर रख लिया और दाहिने हाथ की पतली (किन्तु बहुत लम्बी नहीं) उँगलियों से उसे उठा कर धीरे से उसे हाँठों में लगा लिया। उसके बाद वह अपनी धनुष की भी भीटा को खींचकर, आँखों की घनी वाली बरोनिया में पर्दों को पूरा उघाटकर, उज्ज्वल तथापि रहस्य की छाया से घिरी हुई, आँखों की ऊँच दृष्टि में बीच बीच में परीक्षण की

तरह मेरी ओर देखती हुई धीरे—बहुत धीरे—घ्राधा

४१५

घ्राधा घूट करके चाय पीने लगी।

‘तुम तो कुछ खा ही नहीं रही हो, भाभी।’ मैंने कुछ कहने के उद्देश्य से कहा।

“तुम क्या नहीं खाते ?”

‘मैंने तो अभी मुह तक नहीं धोया। तुम तो नहा चुकी हो, ऐसा लगता है।’

“इस समय मैं कुछ खाती नहीं।”

क्षण भर के लिय मैं चुप रहा। उसके बाद सहसा बोल उठा—“तुम बहुत महान हो, भाभी।”

“इस समय मैं कुछ खाती नहीं, इसलिये ?” कहते हुए एक व्यग-मिश्रित तीव्र मुस्कान उनके सारे चेहरे पर दौड़ गयी।

‘नहीं भाभी, इसलिये नहीं,’ मैंने गभीर भाव से कहा, “तुम जीवन की गहराइयों के बीच म महान हो।”

‘कहे चले जाओ लाला।’ वही व्यग भरी तीव्र मुस्कान मुझ पर झलवाती हुई भाभी बोली। ‘भूठ क्या बोलूँ, ऐसी बातें सुनने में अच्छी लगती हैं।’ कहकर वह खिल्ल खिल्ल करके हस उठी। उनके हसन म चाय का प्याला छलक उठा और कुछ बूँदें उनकी साडी पर गिर पडी।

मैं झोंपकर रह गया और आँखें नीची करके चुपचाप चाय पीने लगा।

भाभी उसी हँसी के दौर म कहती चली गयी—‘अभी तुम कह रहे हो मैं महान हूँ, कल कहाँगे, मैं पूजनीय हूँ, और परसों न जाने क्या कहन लगान। कहकर वह फिर एक बार खूब जार से हँसी, पर उनकी इस चार की हँसी म कृत्रिमता स्पष्ट व्यक्त हो रही थी।

मैं धीरे से, प्राय मरी हुई घ्राधाज में, कहा—‘अब तुम मरी मान का जमा भी भय लगाओ। मैंने तो एक सीधी-सी बात सहज नाव स कही थी।’

‘तो, अब तुम बुरा मान गय ! मैं यह सब कहा कि तुमने सहज

भाव से नहीं कहा ' पर तनिक दूसरे के दृष्टिकोण से भी तो सोचो ! तुम जैसे बुद्धिमान समझदार, जीवन व गहरे अनुभवा से गुारे हुए 'यक्ति के मुह से मुझ जैसी एक छदती नारी के लिये य शब्द निकलना कि 'तुम जीवन की गहराइया के बीच में महान हो,' आश्चर्यजनक होने के साथ ही दूसरो के 'बाना म किंस कदर हान्यास्पद रग सकता है' इस बात पर विचार करना तुम भूल गये । नहीं खाला, मैं महान नहीं हूँ मैं एक बहुत ही साधारण बलि साधारण से भी गयी गुजरी हुई नारी हूँ । यह तुम अगर अभी तक नहीं जान पाये, तो जरूरी ही जान जाओगे ।

पल में उनका हँसी का दौर एक गहन गभीर भावावेश में बदल गया, पर दूसरे ही क्षण उन भय की भावना जगान वाली गभीरता को सहज भाव में बदलती हुई वह बोली— जाने भी दो इन सब व्यथ की बातों को । जल्दी चाय पीकर नहा धो लो और कपडे पहन कर तयार हो जाओ ।"

'वहाँ के लिये ?' मैंने तनिक आश्चर्य से पूछा ।

'कहीं घूमने निकल पडेंगे । आजकल घर में बठे बठे जी घबरान लगता है ।"

इसके बाद मैंने फिर कोई प्रश्न नहीं किया ।

'मैं ड्राइवर से तयार हो जाने के लिये कह आती हूँ । कहती हुई भाभी चली गयी ।

मैं भी उनकी भाशा का अनुसरण करता हुआ पलंग पर से उठा और कमरे में बाहर निकला । स्नानादि से निवृत्त होने और और कपडे बदल कर तयार होने में पूरा एक घंटा समय बीत गया । इस बची भाभी दो-तीन बार यह

गानने के लिये आयी कि मे तयार हुआ था नहा । आज तक  
 की घूमन के लिये उनकी यह उत्सुकता और हटवडी मेरे  
 लिये नयी बात थी ।

४१७

अतः मैं भी जब स्वयं पूरी तरह तैयार होकर आयी तब मैंने  
 उन्हें सिर से लेकर पावा तक एक सरसरी निगाह से देखते हुए यह  
 अनुभव किया कि उनकी मारी मान-मज्जा और पोशाक-बहनावे में  
 सादगी रहने पर भी कुत मिलाकर एक ऐसा अप्रूप कलात्मक प्रभाव  
 व्यक्ति हा रहा था जो बखान और विश्लेषण के परे था । मैं वह नहीं  
 सकता कि उस दिन किसी अज्ञान कारण से मेरी आँखें ही धावा खान  
 के लिये पहले ही से तयार बठी थी या तत्काल भी मैं व्यक्ति में  
 ही एक ऐसी नयी विशेषता उस समय उभर आयी थी जिनका कोई  
 परिचय उस दिन के पहले मुझे नहीं मिला था । प्रत्यक्ष मैं उनके मुख  
 पर पीढ़र और श्रीम का आधिपत्य दिखायी देता था न उनके बालों की  
 बनावट में ही कोई नया विपत्ता लगती थी । वह हठके वेश्या रंग  
 की एक गानिपुरी साड़ी पहन थी और उसके ऊपर, गंध पर एक  
 काश्मीरी शाल लपटा हुआ था, जो कोई असाधारण चीज नहीं थी ।  
 फिर भी, न जाने कहाँ से, एक अप्रूप माहकता, एक दुनिवार आकर्षण  
 शीलता उनका समस्त व्यक्तित्व ने निम्नर रही थी । वह रहस्यमयी  
 माहकता न पूणत अतीन्द्रिय ही थी और न उसे इन्द्रिय-ग्राह्य ही कहा  
 जा सकता है ।

भीचे कार तयार थी । हम लाग उनमें सवार होकर भीभी की  
 इच्छानुसार भील की धार निवृत्त पडे ।

सर्गे काफी पडे रही थी । मैं सिहरन का अनुभव कर रहा था—  
 जाड़े के सबब या किसी अज्ञात भय से या और किसी कारण से, ठीक  
 बट नहीं सकता । भील के पास पहुँचकर दाना उतर पडे । भीभी ने  
 इच्छा प्रकट की कि भील के चारा धार टहना जाय । मेरे मन में  
 इस काम के लिये तनिक भी उल्लाह नहा जग रहा था । मैं एक स्थान  
 पर स्थिर बठकर अपनी मन स्थिति पर गति भाव से विचार करना  
 चाहता था । पर भीभी के प्रस्ताव का कोई विरोध मैं नहीं किया ।

भील के किनारे ठडी हवा काफी चल रही थी, जिसके कारण मेरे तन म और मन मे सिहरन भी बढ़ती चली जा

रही थी । आज भाभी के साथ चलते हुए मैं पहली बार तनिक सकाच का सा अनुभव कर रहा था । उस सकोच भग्नानि का भी मिश्रण किसी हद तक या या नहीं, वह नहीं सकता । पर उनके एक अपूर्व नये रूप म निखरे हुए व्यक्तित्व का भी आवरण मेरे लिये उतना ही दुनिवार सिद्ध हो रहा था ।

उस दिन सुबह से ही मुझे रह रहकर मनिया की याद आ रही थी । केवल याद ही नहीं, मानसिक टेलीविजन की सी किमी रहस्यमयी क्रिया से अस्पताल के उस सारे कमरे का चित्र भरी आँखा से एक पल के लिये भी हटना नहीं चाहता था जहाँ वह लेटी थी । उसका पट्टी से चारो ओर ढका हुआ चेहरा सुस्पष्ट दिखायी दे रहा था और मैं प्रत्यक्ष उस पलंग पर करवटे बदलते हुए देख रहा था । वाइ ओर करवट बदलन म उसे काफी कष्ट हा रहा था—इतना तक मुझे अनुभव हो रहा था । वैसे मनिया की याद आना और अस्पताल के कमरे का दृश्य करपना की आँखो के आगे उतर आना, यह कोई असाधारण बात नहीं थी—बल्कि स्वाभाविक ही था । पर जिस तीव्रता से, प्रत्यक्ष की सी अनुभूति के साथ, वह सारा चित्र मेरे आगे यत्न हो रहा था उस में साधारण नहीं कह सकता । क्या किसी टेनीपेथिक क्रिया से मनिया को भाभी के उस दिन के उस नये आवरण का ज्ञान हो गया था जिसका प्रबल मोहक प्रभाव पहली बार मुझ पर पडा था । और अपने उसी ज्ञान की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप मनिया न कोई प्रतिक्रियात्मक टेलिपथिक तरंग भरी आर प्रेषित की थी ? कुछ असंभव नहीं है—मैंने मन ही मन साचा ।

साला तुम एकदम गुमसुम बने हा, बात क्या है ? ' भाभी के इस उलाहन से मैं जैसे स्वप्न से चौंक पडा ।

' बात कुछ नहीं है मैंने धीरे से कहा ' सदीं कुछ ज्यादा है !'

सा तो है ही, इसीलिये ता सुनह टहलने म मुग है—जब बाहर और आतर साथ-साथ गिसकारियाँ चलने लगनी हैं ।'

मैंने कुबूहल भरी दष्टि से उनकी ओर देगा । उनके मुग पर एक

व्यग मरी रहस्यमय। मुसकान खेल रहा था। उस मुसकान से छिटकन वाली किरणें बड़े तीक्ष्ण के साथ मरे अंतर में गडन लगी। वह मीठी गुदगुदी नहीं थी, बड़ी तीखी चुमन थी।

मैंने उनकी ओर से आँखें फेर लीं, और चुपचाप चलता रहा।

“यदि तुम्हें आगे बढ़ने का साहम नहीं होता तो यहीं ठहर जाया।” एक बेंच के पाम पहुँचने पर भाभी न कहा।

उनका यह कथन भी मुझे निगड अथ मरी वक्रोक्ति की तरह लगा। उनकी आँखा का व्यगात्मक भाव जैसे मेरे अनुमान की पुष्टि कर रहा था।

‘आप टीक कहती हैं।’ बहकर मैं हडबडी के साथ बेंच की ओर मुड़ा और एक बिनारे पर बैठ गया। भाभी भी मरे करीब ही आकर बैठ गयी।

भील की तरह निर्विकार, निरुद्वेग भाव से वही चली जा रही थी। चारा चार मटमली धुमेली-सी धूप बिगरी हुई थी, जा मन में एक गहरी उदासी का भाव भरती था। मुझे लगता था जैसे मनिया से बिछुड़े हुए युग बीत चुके हों। पर बीते हुए युगों का वह व्यवधान उसकी स्मृति को भुलाने के बजाय और तीखा, और उज्ज्वल, और स्पष्ट कर रहा था।

उम सदी में भी भील के चारों ओर चक्कर लगाने वाले भ्रमणार्थी स्त्री-पुरुषों की कमी नहीं थी।

“बडा मुहावना प्रभात है आज का।”

“यह धुमला, भवनाद और उन्मी से भरा गीत प्रभात यदि आपका मुहावना लगता है तो निश्चय ही यह आपकी महानता का सूचक है।”

नामो विनगिना कर हँस पडीं। नापद ‘महानता का उल्लेख फिर एक चार, विन्दु दूमरे रूप में, हान उ उनर नीतर गुग्गुनी उठे बिना न रही। पर मैं साधन लगा कि भेरा व्यग यह किनी हृद तर समझ पायी हैं या नहीं।

जा भी हा, उनरी मुक्त रिक्तगिताष्ट में मरे भीतर के उम भव-

साद का धुहरा जसे फट गया, जो इतनी देर तक मरे मन के बहुत भीतर तक पहुँचकर मेरी आत्मा के सारे सत्व को

ही जसे चाटता चला जा रहा था।

भाभी ने कहा—“तुम्हारे मन के भीतर घुसा है, इसलिये तुम बाहर भी घुसा देख रह हो। मेरे मन के भीतर उजाला है, इसलिये मुझे बाहर भी सब कुछ उजला और सुहावना दिखायी देता है।” कहकर वह फिर एक बार कुछ अजीब और अस्वाभाविक सी मुद्रा बनाती हुई खिन्नखिन्ना उठी।

मुझे एक धक्का सा पहुँचा। मैं साचने लगा कि आज अचानक भाभी के भीतर इतना उजाला कहाँ से आ गया? उनकी मुत्त खिल खिलाहट से स्पष्ट था कि आज उनके भीतर कवल उजाला ही नहीं बल्कि उल्लास भी भरा हुआ था। उनके पिछले दिन के कारण विषादाच्छाद भाव से आज वे इस उल्लास की सगति नहीं बठती थी? पर सगति बही बठे या न बठे, भाभी का वह भाव परिवर्तन मेरे भीतर भी अपना छुनहा प्रभाव से एक अजीब-सी मोहक, रामाचक और उमगमयी अनुभूति जगा रहा था। मुझे लगने लगा कि सचमुच आज का प्रभात बड़ा ही सुहावना है। मेरे सारे मन में और प्राण में एक सवथा नयी और ताजा उमग भरने लगी—ऐसी उमग जिसका अनुभव वर्षों पहले कभी हुआ होगा। किशोर वय समाप्त होते ही जब यौवन काल का प्राथमिक स्पश बाहर की और भीतर की आँखा में ऐसा सुरमा लगा देती है कि सबत्र जादू-लोक और परिस्तान की सुनहरी माया और रोमानी रंगीनी के भिवा और कुछ भी नजर नहीं आता, वही हाल उस समय मेरे भीतर था हा रहा था।

मैं स्निग्ध दृष्टि से भाभी की आर देखता हुआ, पुलक भर स्वर में बोल उठा—‘भाभी, तुम बहुत भली हो!’

चलो इतने दिना की परछ के बाद अत में तुम जान तो गय कि मैं भली हूँ। कहकर वह फिर खिलखिन्ना उठी।

‘नीरू!’ किमी ने पीछे से बड़े तीव्र स्वर में किसी को पुकारते हुए कहा।